जिनसरस्वती

संकलन

परम पूज्य संत शिरोमणि 108 आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज

के शिष्य मुनि प्रशान्तसागर

❐

प्रकाशक

सर्वोदय साहित्य प्रकाशन

गुना (म.प्र.)

❒ **ग्रन्थ** : जिनसरस्वती

❒ **संकलन** : मुनि प्रशान्तसागर

❒ **संयोजन** : वैभव जैन (पाण्ड्या)

❒ **संस्करण** : दसवाँ, क्षमावाणी पर्व, 2013

❒ **आवृत्ति** : 2200 प्रतियाँ

❒ **न्यौछावर राशि** : 120/-

❒ **प्राप्ति स्थान** :

- सर्वोदय साहित्य प्रकाशन
  आचार्य विद्यासागर दि. जैन पाठशाला आदिनाथ जिनालय
  हनुमान गली, गुना (म.प्र.)
  मो. नं. : 09827311127
- अमर ग्रन्थालय
  श्री दिगम्बर जैन उदासीन आश्रम
  तुकोगंज, इन्दौर (म.प्र.)
  मो. नं. : 09425478846
- विकास गोधा
  45, सेक्टर-एफ, औद्योगिक क्षेत्र, गोविन्दपुरा, भोपाल
  मो. नं. : 09425005624

❒ **मुद्रक** : विकास ऑफसेट, भोपाल. फोन : 0755-2601952

जि
न
स
र
स्व
ती

समर्पण

ज्ञान-ध्यान-तप में
लवलीन वात्सल्यमूर्ति,
परम श्रद्धेय प्रातः स्मरणीय जिनवाणी आराधक
आचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी की परम्परा के उन्नायक, दीक्षा सम्राट
संत शिरोमणि आचार्य गुरुवर श्री 108 विद्यासागरजी महाराज
के करकमलों में सादर समर्पित........

मुनि प्रशान्तसागर

मन्तव्य

''णाणं णरस्स सारो'' ज्ञान ही मनुष्य जीवन में सारभूत है। नेत्रविहीन देह जिस प्रकार शोभा रहित मानी जाती है, उसी प्रकार जिसके पास ज्ञान नहीं है, उसका सारा जीवन अंधकारमय एवं अशोभनीय ही बना रहता है। गुरुवर आचार्य श्री विद्यासागरजी ने लिखा है:-

ज्ञान दु:ख का मूल है, ज्ञान हि भव का कूल।
राग सहित प्रतिकूल है, राग रहित अनुकूल।। दोह दोहन, 26।।

ज्ञान हमारे लिए हितकारी व अहितकारी दोनों हो सकता है, राग को बढ़ाने वाला, राग सहित जो ज्ञान है, वह नियम से संसार पतन का ही कारण बनता है। जबकि राग का क्षय करने वाला, राग रहित ज्ञान संसार दु:खों के अभाव के कारण बनता है। वर्तमान परिवेश में लगभग प्रत्येक व्यक्ति/बालक के मन में ज्ञानोपलब्धि की प्यास बढ़ रही है। इस क्षेत्र में पुरुषार्थ भी किए जा रहे हैं। नित प्रति नए-नए आविष्कार नई-नई तकनीकि ज्ञान विकास का ही प्रतीक है, किन्तु यह लौकिक ज्ञान क्या हमारे लिए पारमार्थिक सुख देने में सक्षम है? जब प्रश्न पर विचार करते हैं तब समाधान नहीं के रूप में ही प्राप्त होता है।

क्या क्यों कितना कब कहाँ, खोज करे विज्ञान।
ये सब किसका किसलिए, धर्म कराए ज्ञान।।

समीचीन तत्व की खोज और सच्चे सुख की उपलब्धि सम्यग्ज्ञान के द्वारा ही संभव है। सम्यग्ज्ञान के प्रति भव्यजनों का आकर्षण बढ़े, तीर्थङ्करों एवं आचार्यों की वाणी जन-जन के कंठ का हार बने इस उद्देश्य से प्रश्नोत्तर शैली में इस ग्रन्थ जिनसरस्वती का सृजन किया गया है। इस ग्रन्थ को चारों अनुयोगों में विभक्त किया गया है।

प्रथमानुयोग- जिसमें महापुरुषों का आदर्श जीवन एवं पुण्य-पाप के फल को बताया जाता है। बोधि अर्थात् रत्नत्रय, समाधि अर्थात् समाधिमरण का निधान (खजाना) है एवं कथाओं के माध्यम से कठिन से कठिन विषय को भी सरलता से समझाया जाता है। इस अनुयोग के प्रमुख ग्रन्थ इस प्रकार हैं-हरिवंशपुराण, पद्मपुराण,श्रेणिकचरित्र, उत्तरपुराण, महापुराण आदि।

करणानुयोग- जो लोक-अलोक के विभाग को, कल्पकालों के परिवर्तन को तथा चारों गतियों के जानने में दर्पण के समान है, उसे करणानुयोग कहते हैं। इस अनुयोग के प्रमुख ग्रन्थ इस प्रकार हैं - तिलोयपण्णत्ती, त्रिलोकसार, लोकविभाग, जम्बूद्वीवपण्णत्ति आदि।

चरणानुयोग- जिसमें श्रावकों एवं मुनियों के चरित्र की उत्पत्ति एवं वृद्धि कैसे होती है? किन-किन कारणों से होती है एवं चारित्र की रक्षा किन-किन कारणों से होती है एवं कौन-कौन से व्रतों की कौन-कौन सी भावनाएँ हैं? उनका विस्तार से वर्णन मिलता है। इस अनुयोग के प्रमुख ग्रन्थ इस प्रकार हैं - मूलाचार, मूलाचारप्रदीप, अनगारधर्मामृत, सागारधर्मामृत, रत्नकरण्ड श्रावकाचार आदि।

द्रव्यानुयोग-जिसमें जीव-अजीव तत्त्वों का, पुण्य-पाप, बंध-मोक्ष का वर्णन हो एवं जिसमें मात्र आत्मा का कथन हो, वह द्रव्यानुयोग है। इस अनुयोग के प्रमुख ग्रन्थ इस प्रकार हैं-

समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, अष्टपाहुड, लब्धिसार, क्षपणासार, परमात्मप्रकाश आदि। इस ग्रन्थ में प्रस्तुत किए गए विषय को सरलता से समझने की अपेक्षा 61 अध्यायों में संयोजित किया गया है। जिनके नाम इस प्रकार हैं –

प्रथमानुयोग– 1. महामन्त्र णमोकार, 2. जैनधर्म की प्राचीनता, 3. सृष्टि का क्रम, 4. तीर्थङ्कर, 5. समवसरण, 6. पञ्चकल्याणक, 7. तीर्थङ्कर ऋषभदेव, 8. तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ, 9. तीर्थङ्कर महावीर, 10. आचार्य श्री शान्तिसागरजी, 11. आचार्य श्री ज्ञानसागरजी, 12. आचार्य श्री विद्यासागरजी, 13. तीर्थक्षेत्र, 14. जैनधर्म की मौलिक विशेषताएँ।

करणानुयोग– 15. जैन भूगोल, 16. नरकगति, 17. तिर्यञ्चगति 18. मनुष्यगति, 19. देवगति, 20. अकृत्रिम चैत्यालय।

चरणानुयोग– 21. परमेष्ठी, 22. अरिहंत परमेष्ठी, 23. सिद्ध परमेष्ठी, 24. आचार्य परमेष्ठी, 25. उपाध्याय परमेष्ठी, 26.साधु परमेष्ठी (मुनिधर्म), 27. मुनि एवं मिलिट्री में समानता, 28. आर्यिका, 29. सम्यदर्शन, 30. सच्चे देव-शास्त्र-गुरु, 31. मन्दिर किसका प्रतीक है? 32. मन्दिर जाने की विधि, 33. रात्रि भोजन त्याग, 34. जलगालन (पानी छानकार पीना), 35. देवपूजन, 36. जिनवाणी, 37. स्वाध्याय, 38. श्रावक की ग्यारह प्रतिमाएँ, 39. अभक्ष्य पदार्थ, 40. सल्लेखना।

द्रव्यानुयोग– 41. द्रव्य, 42. जीव, 43. इन्द्रिय, 44. कषाय, 45. पाप, 46. पर्याप्ति, 47. कर्म, 48. कर्मों की दस अवस्थाएँ, 49. आयु बन्ध, 50. गति-आगति, 51. जन्म, 52. शरीर, 53. संहनन, 54. संस्थान, 55. लेश्या, 56. गुणस्थान, 57. मार्गणा, 58. समुद्घात, 59. ध्यान, 60. नय, 61. अनेकान्त और स्याद्वाद।

इस ग्रन्थ के प्रथम संस्करण में मात्र 37 अध्याय थे, जिसमें और भी अध्यायों को जोड़कर द्वितीय संस्करण पाठकों/जिज्ञासुओं के लिए तैयार किया गया था। जिसमें मुनि श्री निर्वेगसागरजी ने ग्रन्थ के संशोधन में अत्यधिक सहयोग प्रदान किया था एवं **तृतीय संस्करण** को परिष्कृत एवं शुद्ध करने में मुनि श्री योगसागरजी, मुनि श्री अभयसागर जी, मुनि श्री प्रणम्य सागर जी, मुनिश्री श्रेयांससागर जी, मुनि श्री मल्लिसागर जी, मुनि श्री भावसागरजी ने अत्यधिक सहयोग प्रदान किया है। एतदर्थ उन्हें अपने अन्तरंग से साधुवाद देता हूँ। ग्रन्थ में त्रुटियाँ होना स्वाभाविक है, सुधी श्रोता और साधकजन उनसे अवगत कराकर इस कार्य को प्रशस्त करेंगे। इस ग्रन्थ के प्रकाशन को सुंदर एवं निर्दोष बनाने में पं. रतनलालजी बैनाड़ा आगरा, ब्र. भरत जी सागर एवं आचार्य श्री विद्यासागर दि. जैन पाठशाला आदिनाथ जिनालय गुना के सहयोगी **वैभव जी पाण्ड्या** ने अथक पुरुषार्थ किया है, उनके लिए आशीर्वाद।

इस दसवें संस्करण में भी कुछ संशोधन एवं कुछ प्रश्नों को भी जोड़ा है। यह ग्रन्थ आबाल वृद्ध के लिए उपयोगी एवं ज्ञानवर्द्धक सिद्ध हो, इसी मङ्गल भावना के साथ आचार्य गुरुवर के चरणों में नमन करते हुए उन्हीं के परम पवित्र करकमलों में सादर समार्पित.....

मुनि प्रशान्तसागर

*** प्रकाशकीय ***

यह निर्विवाद सत्य है कि संत समागम से पञ्चमकाल भी चतुर्थ काल-सा जान पड़ता है, तभी तो दृष्टि डालने मात्र से ही मन का कालुष धुल जाता है। और ऐसा ही हुआ युवा राजेश का, गुरु पर दृष्टि डालने मात्र से मन का कालुष धुल गया। और गुरु से दीक्षित हो गए, जिनका गुरु द्वारा प्रदत्त प्रशान्तसागर संज्ञा स्वयमेव प्रशान्त रूपाय हो जाती है। उन्हीं की जग उद्धारक लेखनी से बहुजन हिताय-बहुजन सुखाय, 61 अध्याय रूपी मुक्ताओं को सरल शब्द सूत्र में गूँथ कर, ज्ञान व चिन्तन की गहराई का स्वर्णिम लेप चढ़ाकर सिद्धांत की कसौटी पर कसकर चारों अनुयोगों का समावेश कर, जिन सरस्वती के रूप में प्रस्तुत कर दुरूह विषय को सहज बोधगम्य बना दिया है।

वर्तमान में भौतिक चकाचौंध के पीछे दौड़ती बाल-युवा पीढ़ी समय चक्र की तीव्र गति के आगे हतबल है। ऐसे में ज्ञान पिपासा का शमन करने हेतु ''जिन सरस्वती ग्रन्थ'' मील का पत्थर सिद्ध हुआ है। संक्षेप में, जिज्ञासुओं के लिए यह ग्रन्थ 'उपहार' स्वाध्यायी श्रावकों के लिए ''वरदान'', गहन रुचि रखने वालों के लिए अभ्यास व 'अन्यत्र खोजिए' आदि बिन्दु 'गागर में सागर' रूप का आभास कराते हैं। पाठशाला में शिक्षकों के लिए प्रशिक्षक की भूमिका अदा करता है। मोक्षमार्ग में प्रवृत्त होने वाले इसे मुनिश्री का उपहार मानते है।

परमपूज्य मुनिश्री के बारे में हम यह कह सकते हैं-

गोटेगाँव श्रीधाम में जन्मे, पले युवा हुए राजेश।
गुरु चरणों में बढ़ चले, हरने जग का क्लेश।।

श्रमण संस्कृति संस्थान, सांगानेर के अधिष्ठाता पं. श्रीमान रतनलालजी बैनाड़ा ने इस ग्रंथ के परिमार्जन में अपना अमूल्य योगदान दिया है। ब्र.डॉ भरत जी एवं आचार्य श्री विद्यासागर दि. जैन पाठशाला आदिनाथ जिनालय, गुना के शिक्षा प्रदाताओं ने भी कृति के सृजन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। साधुवाद के पात्र सभी महानुभावों के प्रति विनयांजलि सहित कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं।

जिन सरस्वती ऐसी रत्नत्रयवर्धिनी कृति है, जो अल्पज्ञ से मर्मज्ञ के ज्ञान गुण को विकसित कर मोक्ष मार्ग की ओर आगे बढ़ाए इसी मङ्गल भावना के साथ.....

देव शास्त्र-गुरु उपासक
वैभव जैन (पाण्ड्या)
गुना

अनुक्रम

प्रथमानुयोग

1. महामन्त्र णमोकार 1
2. जैनधर्म की प्राचीनता 7
3. सृष्टि का क्रम 11
4. तीर्थङ्कर 19
5. समवसरण 26
6. पञ्चकल्याणक 28
7. तीर्थङ्कर ऋषभदेव 31
8. तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ 34
9. तीर्थङ्कर महावीर 37
10. आचार्य श्री शान्तिसागरजी 40
11. आचार्य श्री ज्ञानसागरजी 44
12. आचार्य श्री विद्यासागरजी 48
13. तीर्थक्षेत्र 54
14. जैनधर्म की मौलिक विशेषताएँ 58

करणानुयोग

15. जैन भूगोल 60
16. नरकगति 71
17. तिर्यञ्चगति 75
18. मनुष्यगति 78
19. देवगति 82
20. अकृत्रिम चैत्यालय 91

चरणानुयोग

21. परमेष्ठी 94
22. अरिहंत परमेष्ठी 97
23. सिद्ध परमेष्ठी 101
24. आचार्य परमेष्ठी 103
25. उपाध्याय परमेष्ठी 107
26. साधु परमेष्ठी (मुनिधर्म) 108
27. मुनि एवं मिलिट्री में समानता 112
28. आर्यिका 115
29. सम्यग्दर्शन 116
30. सच्चे देव-शास्त्र-गुरु 124
31. मन्दिर किसका प्रतीक है ? 128
32. मन्दिर जाने की विधि 131
33. रात्रि भोजन का त्याग 136
34. जलगालन (पानी छानकर पीना) 140
35. देवपूजन 142
36. जिनवाणी 150
37. स्वाध्याय 153
38. श्रावक की ग्यारह प्रतिमाएँ 156
39. अभक्ष्य पदार्थ 167
40. सल्लेखना 170

द्रव्यानुयोग

41. द्रव्य 175
42. जीव 180
43. इन्द्रिय 187
44. कषाय 190
45. पाप 195
46. पर्याप्ति 199
47. कर्म 202
48. कर्मों की दस अवस्थाएँ 206
49. आयु बन्ध 209
50. गति-आगति 213
51. जन्म 216
52. शरीर 220
53. संहनन 223
54. संस्थान 225
55. लेश्या 227
56. गुणस्थान 231
57. मार्गणा 239
58. समुद्घात 249
59. ध्यान 253
60. नय 262
61. अनेकान्त और स्याद्वाद 267

ग्रन्थ संकेत सूची

क्र.	संकेत	ग्रन्थ का नाम	ग्रन्थ कर्ता
1.	आ.पु.	आदि पुराण	आचार्य जिनसेन
2	आ.प.	आलाप पद्धति	आचार्य श्रीमद् देवसेन
3.	आ.	आराधना कथा कोश	ब्र. नेमिदत्त जी
4.	अ.श्रा.	अमितगति श्रावकाचार	आचार्य अमितगति
5.	उ.पु.	उत्तर पुराण	आचार्य गुणभद्र
6.	का.अ.	कार्तिकेयानुप्रेक्षा	आचार्य कार्तिकेय
7.	क.	कथोदय (कहानी संग्रह)	मुनि प्रशान्तसागर
8.	का.अ.टी.	कार्तिकेयानुप्रेक्षा टीका	श्री क्षेमचन्द्र
9.	गो.जी.	गोम्मटसार जीवकाण्ड	आ.नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती
10.	गो.जी.जी.	गोम्मटसार जीवकाण्ड जीव प्रबोधिनी टीका	 केशववर्णी
11.	गो.क.	गोम्मटसार कर्मकाण्ड	आ.नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती
12.	गो.क.जी.	गोम्मटसार कर्मकाण्ड जीव प्रबोधिनी टीका	 केशववर्णी
13.	चा.सा.श्रा.	चारित्रसार श्रावकाचार	श्री चामुण्डराय
14.	चौ.ठा.च.	चौबीस ठाणा चर्चा	मुनि प्रशान्तसागर
15.	ज.ध.	जय धवला	आचार्य वीरसेन
16.	जै.सि.को.	जैनेन्द्र सिद्धान्त कोष	जिनेन्द्र वर्णी
17.	जै.मौ.वि.	जैनधर्म की मौलिक विशेषताएँ	डॉ. रमेशचन्द जैन
18.	पं.का.ता.वृ.	पञ्चास्तिकाय तात्पर्य वृत्ति	आचार्य जिनसेन
19.	ज्ञा.	ज्ञानार्णव	आचार्य शुभचन्द्र
20.	ज्ञा.श.	ज्ञानसागर शतक	पं. लालचन्द्र राकेश
21.	त.सू.	तत्त्वार्थ सूत्र	आचार्य उमास्वामी
22.	त.अ.	तत्त्वानुशासन	नागसेन सूरि
23.	ति.प.	तिलोय पण्णत्ती	आचार्य यतिवृषभ
24.	त्रि.सा.	त्रिलोकसार	आ. नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती
25.	द्र.सं.	द्रव्य संग्रह	आ. नेमिचन्द्र
26.	बृ.द्र.सं.टी.	बृहद् द्रव्यसंग्रह टीका	आ.ब्रह्मदेव सूरि
27.	बो.पा.टी	बोध पाहुड टीका	श्रुतसागर सूरि
28.	ध.पु.	धवला पुस्तक संख्या/पृष्ठ संख्या	आ.वीरसेन स्वामी
29.	न.च.सं.	नय चक्र संस्कृत	आ.देवसेन
30.	पु.	पुष्पांजलि	पंडित गुलाबचन्द्र जी पुष्प

31.	प्र.सा.	प्रवचनसार	आ. कुन्दकुन्द
32.	पं.सं.	पञ्च संग्रह	अमितगति सूरि
33.	प्र.ऐ.जै.	प्रमुख ऐतिहासिक जैन पुरुष एवं महिलाएँ	डॉ. ज्योति प्रसाद
34.	पा.च.	पार्श्वनाथ चरित्र	आचार्य सकल कीर्ति
35.	प्र.सा.ता.वृ.	प्रवचन सार तात्पर्यवृत्ति	आचार्य जिनसेन
36.	प.पु.	पद्म पुराण	आचार्य रविषेण
37.	भ.आ.	भगवती आराधना	आचार्य शिवार्य

नोट : इस ग्रन्थ का मूल नाम आराधना है, सम्मान की दृष्टि से इसे भगवती आराधना बोलते हैं।

38.	भ.आ.वि.	भगवती आराधना विजयोदय टीका	श्री अपराजित सूरि
39.	भा.पा.टी.	भाव पाहुड टीका	श्री श्रुत सागर सूरि
40.	म.पु.म.	महाकवि पुष्पदन्त महापुराण	महाकवि पुष्पदन्त
41.	मू.चा.	मूलाचार	आचार्य वट्टकेर स्वामी
42.	मू.चा.टी.	मूलाचार टीका	आचार्य वसुनन्दि
43.	मू.प्र.	मूलाचार प्रदीप	आचार्य सकलकीर्ति
44.	म.पु.	महापुराण	आचार्य जिनसेन
45.	मे.जी.गा.	मेरी जीवन गाथा	क्षुल्लक गणेश प्रसाद वर्णी
46.	य.च.उ.	यशस्तिलकचम्पूगत उपासकाध्ययन	आचार्य सोमदेव
47.	र.श्रा.	रत्नकरण्ड श्रावकाचार	आचार्य समन्तभद्र
48.	र.श्रा.टी.	रत्नकरण्ड श्रावकाचार टीका	आचार्य प्रभाचन्द्र
49.	रा.वा.	राजवार्तिक	आचार्य अकलंकदेव
50.	रा.वा.उ	राजवार्तिक उत्थानिक	आचार्य अकलंकदेव
51.	ल.सा.टी.	लब्धिसार टीका	माधवचन्द्र त्रिवैद्य
52.	ल.सा.	लब्धिसार	आ.नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती
53.	वि.श.	विद्या शति	मुनि अजितसागर जी
54.	व.श्रा.	वसुनन्दि श्रावकाचार	आचार्य वसुनन्दि
55.	व्र.श्रा.	व्रतोद्योतन श्रावकाचार	श्री अभ्रदेव
56.	श्रा.स.	श्रावकाचार संग्रह	पंडित हीरालालजी
57.	श्रा.	श्रावकाचार सारोद्धार	श्री पद्मनन्दि
58.	स.सि.	सर्वार्थ सिद्धि	आ.पूज्यपाद स्वामी
59.	सा.ध.	सागार धर्मामृत	पंडित आशाधरजी
60.	स.कौ.	सम्यक्त्व कौमुदी	श्री मङ्गरस कवि
61..	सि.सा.दी.	सिद्धान्तसार दीपक	भट्टारक सकलकीर्ति
62.	सू.	सूत्रोदय	मुनि प्रशान्तसागर
63.	ह.पु.	हरिवंश पुराण	आ. जिनसेन

शास्त्र का प्रारम्भिक मङ्गलाचरण

ॐ नमः सिद्धेभ्यः ! ॐ नमः सिद्धेभ्यः ! ॐ नमः सिद्धेभ्यः !

ओकारं बिन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः।
कामदं मोक्षदं चैव ओङ्काराय नमो नमः।।

अविरलशब्दघनौघप्रक्षालितसकलभूतकलङ्का।
मुनिभिरुपासिततीर्थाः सरस्वती हरतु नो दुरितम्।।

अज्ञानतिमिरान्धानां ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः।।

श्री परमगुरवे नमः, परम्पराचार्यगुरुभ्यो नमः। सकलकलुषविध्वंसकं, श्रेयसां परिवर्द्धकं, धर्मसम्बन्धकं, भव्यजीवमनः प्रतिबोधकारकमिदं शास्त्रं श्री....., नामधेयं, अस्य मूलग्रन्थकर्त्तारः श्री सर्वज्ञदेवास्तदुत्तरग्रन्थकर्त्तारः श्री गणधरदेवाः प्रतिगणधरदेवास्तेषां वचोऽनुसारमासाद्य श्री.....विरचितमिदं शास्त्रं।

वक्तारः श्रोतारश्च सावधानतया शृण्वन्तु।

मङ्गलं भगवान् वीरो, मङ्गलं गौतमो गणी।
मङ्गलं कुन्दकुन्दाद्यो, जैनधर्मोऽस्तु मङ्गलम्।।

सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं, सर्वकल्याणकारकम्।
प्रधानं सर्वधर्माणां, जैनं जयतु शासनम्।।

(प्रथमानुयोग)

अध्याय 1

महामन्त्र णमोकार

श्री विद्या गुरु को नमन करूँ, श्री पार्श्वनाथ को उर में धरूँ।
जिन सरस्वती को है रचना, अशुभोपयोग से है बचना॥

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोएसव्वसाहूणं॥

असंख्यात गुणी कर्मों की निर्जरा कराने वाला, सातिशय पुण्य का संचय कराने वाला, रानी सीता के अग्निकुण्ड को नीरकुण्ड में बदलने वाला यदि कोई मन्त्र है तो वह है णमोकार मन्त्र। यह मन्त्र प्रत्येक प्राणी का है। अतः प्रथम अध्याय में णमोकार मन्त्र का वर्णन है।

1. **मन्त्र किसे कहते हैं ?**
   1. जिसमें अनन्त शक्ति और अनन्त अर्थ विद्यमान रहता है, उसे मन्त्र कहते हैं।
   2. जिसका पाठ करने मात्र से कार्य की सिद्धि होती है, उसे मन्त्र कहते हैं।
2. **णमोकार मन्त्र किसे कहते हैं, यह किस भाषा एवं किस छंद में लिखा गया है ?**
   जिस मन्त्र में पाँचों परमेष्ठियों को नमस्कार किया गया हो, वह णमोकार मन्त्र है। यह प्राकृत भाषा एवं आर्या छंद में लिखा गया है।
3. **इस मन्त्र में किसी व्यक्ति विशेष को नमस्कार क्यों नहीं किया ?**
   इस मन्त्र में व्यक्ति विशेष को नहीं अपितु गुणों से युक्त जीवों को नमस्कार किया है, क्योंकि जैन दर्शन की यह विशेषता है कि इसमें व्यक्ति विशेष को नहीं बल्कि व्यक्तित्व को नमस्कार किया जाता है।
4. **इस णमोकार मन्त्र की रचना किसने की ?**
   इस मन्त्र की रचना किसी ने भी नहीं की, यह अनादिनिधन मन्त्र है, अर्थात् यह अनादिकाल से है और अनन्तकाल तक रहेगा।
5. **णमोकार मन्त्र को सर्वप्रथम किस आचार्य ने किस ग्रन्थ में लिपिबद्ध किया था ?**
   णमोकार मन्त्र को आचार्य श्री पुष्पदन्तजी महाराज ने षट्खण्डागम ग्रन्थ के प्रथम खण्ड में मङ्गलाचरण के रूप में द्वितीय शताब्दी में लिपिबद्ध किया था।
6. **णमोकार मन्त्र के पर्यायवाची नाम बताइए ?**
   1. **अनादिनिधन मन्त्र** – यह मन्त्र शाश्वत है, न इसका आदि है और न ही अन्त है।
   2. **अपराजित मन्त्र** – यह मन्त्र किसी से पराजित नहीं हो सकता है।
   3. **महा मन्त्र** – सभी मन्त्रों में महान् अर्थात् श्रेष्ठ है।

4. **मूल मन्त्र** – सभी मन्त्रों का मूल अर्थात् जड़ है, जड़ के बिना वृक्ष नहीं रहता है, इसी प्रकार इस मन्त्र के अभाव में कोई भी मन्त्र टिक नहीं सकता है।
5. **मृत्युञ्जयी मन्त्र** – इस मन्त्र से मृत्यु को जीत सकते हैं अर्थात् इस मन्त्र के ध्यान से मोक्ष को भी प्राप्त कर सकते हैं।
6. **सर्वसिद्धिदायक मन्त्र** – इस मन्त्र के जपने से सभी ऋद्धि–सिद्धि प्राप्त हो जाती हैं।
7. **तरणतारण मन्त्र** – इस मन्त्र से स्वयं भी तर जाते हैं और दूसरे भी तर जाते हैं।
8. **आदि मन्त्र** – सर्व मन्त्रों का आदि अर्थात् प्रारम्भ का मन्त्र है।
9. **पञ्च नमस्कार मन्त्र** – इसमें पाँचों परमेष्ठियों को नमस्कार किया गया है।
10. **मङ्गल मन्त्र** – यह मन्त्र सभी मङ्गलों में प्रथम मङ्गल है।
11. **केवल ज्ञान मन्त्र** – इस मन्त्र के माध्यम से केवलज्ञान भी प्राप्त कर सकते हैं।

7. णमोकार मन्त्र से कितने मन्त्रों की उत्पत्ति हुई है ?

इस मन्त्र से चौरासी लाख मन्त्रों की उत्पत्ति हुई है।

8. णमोकार मन्त्र कब और कहाँ–कहाँ पढ़ना चाहिए ?

दुःखे–सुखे भयस्थाने, पथि दुर्गे रणेऽपि वा।
श्री पञ्चगुरु मन्त्रस्य, पाठः कार्यः पदे–पदे॥ (णमोकार मन्त्र माहात्मय, 12)

अर्थ – दुःख में, सुख में, डर के स्थान में, मार्ग में, भयानक स्थान में, युद्ध के मैदान में एवं कदम–कदम पर णमोकार मन्त्र का जाप करना चाहिए।

9. क्या अपवित्र दशा में णमोकार मन्त्र का जाप कर सकते हैं ?

अपवित्रः पवित्रोऽवा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा।
ध्यायेत्पञ्च नमस्कारं, सर्वपापैः प्रमुच्यते॥ (पूजा पीठिका)

अर्थ – यह मन्त्र हमेशा सभी जगह स्मरण कर सकते हैं, पवित्र व अपवित्र दशा में भी, किन्तु जोर से उच्चारण पवित्र दशा में ही करना चाहिए। अपवित्र दशा में मात्र मन में ही पढ़ना चाहिए।

10. क्या सभी जगह णमोकार मन्त्र जपने से एकसा फल मिलता है ?

नहीं।

गृहे जपफलं प्रोक्तं वने शतगुणं भवेत्।
पुण्यारामे तथारण्ये सहस्रगुणितं मतम्॥
पर्वते दशसहस्रं च नद्यां लक्षमुदाहृतं।
कोटि देवालये प्राहुरनन्तं जिनसन्निधौ॥ (णमोकार मन्त्र कल्प, पृ.105)

अर्थ – घर में मन्त्राराधना करने से एक गुना, वन में सौ गुना, बगीचे तथा सघन वन में हजार गुना, पर्वत पर दस हजार गुना, नदी तट पर लाख गुना, देवालय में करोड़ गुना और जिनेन्द्रदेव के समक्ष अनन्त गुणा फल मिलता है। अतः मन्त्राराधना देवालय या जिनेन्द्र देव के समक्ष करना ही श्रेष्ठ है।

11. प्रयोग के द्वारा णमोकार मन्त्र कैसे श्रेष्ठ हुआ ?

ग्वालियर में णमोकार मन्त्र का अनुष्ठान हुआ, कोटि मन्त्र का जाप हुआ, वहाँ पर णमोकार मन्त्र की श्रेष्ठता देखने के लिए दो गमलों में दो पौधे रोपे गए एक पौधे के लिए साधारण जल प्रतिदिन डाला जाता था और दूसरे

पौधे पर मन्त्र से मंत्रित जल डाला जाता था। कुछ दिनों बाद देखा गया कि मंत्रों से मंत्रित जल जिस पौधे पर डाला जाता था, वह पौधा बड़ी तेजी से विकसित हो रहा था तथा जिसमें सामान्य जल डाला जा रहा था, उसके बढ़ने की स्थिति बहुत कम थी।

12. णमोकार मन्त्र में कितने पद, अक्षर, मात्राएँ, व्यञ्जन एवं स्वर होते हैं ?

णमो अरिहंताणं	प्रथम पद	7 अक्षर	11 मात्राएँ	6 व्यञ्जन	6 स्वर
णमो सिद्धाणं	द्वितीय पद	5 अक्षर	9 मात्राएँ	5 व्यञ्जन	5 स्वर
णमो आइरियाणं	तृतीय पद	7 अक्षर	11 मात्राएँ	5 व्यञ्जन	7 स्वर
णमो उवज्झायाणं	चतुर्थ पद	7 अक्षर	12 मात्राएँ	6 व्यञ्जन	7 स्वर
णमो लोए सव्वसाहूणं	पञ्चम पद	9 अक्षर	15 मात्राएँ	8 व्यञ्जन	9 स्वर
कुल	5 पद	35 अक्षर	58 मात्राएँ	30 व्यञ्जन	34 स्वर

नोट – (1) स्वर सहित व्यञ्जन को ही यहाँ गिनना है।

जैसे – णमो अरिहंताणं में, ण, मो, रि, ह, ता, ण = 6 इसी प्रकार आगे भी।

(2) 35 अक्षर किन्तु स्वर 34 हैं। मन्त्र शास्त्र के अनुसार णमो अरिहंताणं पद में अ का लोप हो जाता है।

मात्रा गिनना – । = एक (लघु) ऽ = दो (गुरु)

ण	मो	अ	रि	हं	ता	णं				
।	ऽ	।	।	ऽ	ऽ	ऽ			=	11
ण	मो	सिद्	धा	णं						
।	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ					=	9
ण	मो	आ	इ	रि	या	णं				
।	ऽ	ऽ	।	।	ऽ	ऽ			=	11
ण	मो	उ	वज्	झा	या	णं				
।	ऽ	।	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ			=	12
ण	मो	लो	ए	सव्	व	सा	हू	णं		
।	ऽ	ऽ	।	ऽ	।	ऽ	ऽ	ऽ	=	15
							कुल		=	58

नोट – प्राकृत भाषा में ए, ऐ, ओ, औ, ह्रस्व, दीर्घ एवं प्लुत तीनों भेद होते हैं। (ध.पु. 13/247)

अतः लोए में ए को ह्रस्व मानने से 58 मात्राएँ होंगी।

13. परमेष्ठियों के वाचक मन्त्र कितने–कितने अक्षर वाले हैं ?

पणतीस सोल छप्पण चदुदुगमेगं च जवहज्झाएह।

परमेट्ठिवाचयाणं अण्णं च गुरूवएसेण॥ (द्र.सं., 49)

अर्थ – परमेष्ठियों के वाचक 35, 16, 6, 5, 4, 2 और 1 अक्षर के मन्त्रों को जपो और ध्यान करो तथा गुरु के उपदेश के अनुसार अन्य भी मन्त्रों को जपो और ध्यान करो। 35 अक्षर वाला मन्त्र तो आप ऊपर पढ़ चुके हैं। आगे 16 अक्षर वाला–अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः या अरिहन्त सिद्ध आइरिया उवज्झाया साधु।

6 अक्षर वाला मन्त्र – अरिहंत सिद्ध और अरिहंत साधु।
5 अक्षर वाला – असिआउसा और नमः सिद्धेभ्यः।
4 अक्षर वाला – अरिहन्त और असिसाहू।
2 अक्षर वाला – सिद्ध और अर्हं।
1 अक्षर वाला – अ, ओम् , ह्रँ , श्रीं , और ह्रीं।

14. 'ओम्' शब्द में पञ्च परमेष्ठी किस प्रकार गर्भित हो जाते हैं ?

अरहंता असरीरा आइरिया तह उवज्झया मुणिणो।
पढमक्खरणिप्पण्णो ओंकारो पञ्च परमेट्ठी ।। (द्र.सं.टी.,49)

अर्थ – अरिहंत का 'अ', सिद्ध का अपर नाम अशरीरी का 'अ', आचार्य का 'आ', उपाध्याय का 'उ' और साधु का अपर नाम मुनि का 'म्' , इस प्रकार अ+अ+आ+उ+म् इन सब अक्षरों की सन्धि कर देने से 'ओम्' बना। 'ओम्' की आकृति ॐ[1] भी लिखी जाती है।

15. णमोकार मन्त्र 9 बार या 108 बार क्यों जपते हैं ?

9 का अङ्क शाश्वत है, उसमें कितनी भी संख्या का गुणा करें और गुणनफल को आपस में जोड़ने से 9 ही रहता है। जैसे 9×3=27 (2+7=9) अतः शाश्वत पद पाने के लिए 9 बार पढ़ा जाता है। कर्मों का आस्रव 108 द्वारों से होता है, उसको रोकने हेतु 108 बार णमोकार मन्त्र जपते हैं। प्रायश्चित्त में 27 या 108 श्वासोच्छ्वास के विकल्प में 9 बार या 36 बार णमोकार मन्त्र पढ़ सकते हैं।

16. णमोकार मन्त्र को श्वासोच्छ्वास में किस प्रकार पढ़ते हैं ?

णमोकार मन्त्र को तीन श्वासोच्छ्वास में पढ़ते हैं। श्वास ग्रहण करते समय णमो अरिहंताणं, श्वास छोड़ते समय णमो सिद्धाणं, पुनः श्वास ग्रहण करते समय णमो आइरियाणं, श्वास छोड़ते समय णमो उवज्झायाणं और अन्त में पुनः श्वास लेते समय णमो लोए एवं श्वास छोड़ते समय सव्वसाहूणं बोलना चाहिए।

17. जाप करने की कौन–कौन सी विधियाँ हैं ?

जाप करने की तीन विधियाँ हैं – कमल जाप, हस्ताङ्गुली जाप और माला जाप।

1. **कमल जाप विधि :**– अपने हृदय में आठ पाँखुड़ियों के एक श्वेत कमल का विचार करें। उसकी प्रत्येक पाँखुड़ी पर पीतवर्ण के बारह –बारह बिन्दुओं की कल्पना करें तथा मध्य की गोलवृत्त–कर्णिका में बारह बिन्दुओं का चिन्तन करें। इन 108 बिन्दुओं के प्रत्येक बिन्दु पर एक–एक मन्त्र का जाप करते हुए 108 बार इस मन्त्र का जाप करें।

2. **हस्ताङ्गुली जाप विधि :**– तर्जनी, मध्यमा एवं अनामिका तीनों अंगुली का उपयोग करके जाप करना। चित्र में दिए गए एक–एक भाग के ऊपर अंगूठे को रखते हुए 9 बार मन्त्र जपते हुए बारह बार में 108 बार होते हैं। तब पूरी जाप होती है।
3. **माला जाप :**– 108 दाने की माला द्वारा जाप करें। (मङ्गल मन्त्र णमोकार एक अनुचिन्तन, पृ.72-74)

18. मन्त्रोच्चारण जाप एवं ध्यान किस दिशा में करना चाहिए ?

मन्त्रोच्चारण जाप एवं ध्यान के लिए पूर्व एवं उत्तर मुख होने को शुभ बताया है क्योंकि प्रत्येक दिशा का अलग–अलग फल है।

---
1 जैनधर्म से सम्बन्धित ओम् ॐ

पूर्व – मोहान्तक (मोह का नाश करने वाली है)
दक्षिण – प्रज्ञान्तक (प्रज्ञा अर्थात् बुद्धि का नाश करने वाली है।)
पश्चिम – पद्मान्तक (हृदय की भावनाओं को नष्ट करने वाली है।)
उत्तर – विघ्नान्तक (विघ्नों का नाश करने वाली है।)

19. आचार्यों ने उच्चारण के आधार पर मन्त्र जाप कितने प्रकार से कहा है ?

चतुर्विधा हि वाग्वैखरी मध्यमा पश्यन्ती सूक्ष्माश्चेति। (त.अ.पृ.66)

1. **वैखरी** – जोर–जोर से बोलकर णमोकार मन्त्र का जाप करना जिसे दूसरे लोग भी सुन लें।
2. **मध्यमा** – इसमें होठ नहीं हिलते किन्तु अन्दर जीभ हिलती रहती है।
3. **पश्यन्ति** – इसमें न होठ हिलते हैं और न जीभ हिलती है, इसमें मात्र मन में ही चिन्तन करते हैं।
4. **सूक्ष्म** – मन में जो णमोकार मन्त्र का चिन्तन था वह भी छोड़ देना सूक्ष्म जाप है। जहाँ उपास्य–उपासक का भेद समाप्त हो जाता है। अर्थात् जहाँ मन्त्र का अवलम्बन छूट जाए वो ही सूक्ष्म जाप है।

20. णमोकार मन्त्र व्रत के कितने उपवास किए जाते हैं ?

णमोकार मन्त्र व्रत के 35 उपवास किए जाते हैं।

21. इस व्रत में कौन–कौन सी तिथि में कितने–कितने उपवास किए जाते हैं ?

इस व्रत में पञ्चमी के 5 , सप्तमी के 7, नवमी के 9 तथा चौदस के 14 उपवास किए जाते हैं।

22. यह व्रत कब प्रारम्भ किया जाता है ?

आषाढ़ शुक्ल सप्तमी से या किसी भी माह की पञ्चमी, सप्तमी, नवमी या चौदस से प्रारम्भ किया जाता है।

23. इस मन्त्र का क्या प्रभाव है ?

यह पञ्च नमस्कार मन्त्र सभी पापों का नाश करने वाला है तथा सभी मङ्गलों में प्रथम मङ्गल है। यथा–

एसो पञ्च णमोयारो सव्वपावप्पणासणो।
मङ्गलाणं च सव्वेसिं पढमं होई मङ्गलं ।।

मङ्गल शब्द का अर्थ दो प्रकार से किया जाता है।

1. मङ्ग = सुख। ल = लाति, ददाति, जो सुख को देता है, उसे मङ्गल कहते हैं।
2. मङ्गल–मम् = पापं। गल = गालयतीति = अर्थात् जो पापों का गलाता है नाश करता हैं, उसे मङ्गल कहते हैं।

लौकिक मङ्गल में – कन्या, पीले सरसों, हाथी, जल से भरे कलश, दूध पीता बछड़ा आदि शुभ हैं ।
पारलौकिक मङ्गल में – अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय एवं साधु परमेष्ठी शुभ हैं ।

24. णमोकार मन्त्र की क्या महिमा है ?

यह मन्त्र सभी मन्त्रों का राजा माना जाता है, इसके स्मरण से पूर्वोपार्जित कर्म नष्ट हो जाते हैं, जिससे अनेक प्रकार के शारीरिक, मानसिक कष्ट दूर हो जाते हैं। सिंह, सर्प आदि भयंकर जीवों का भय नहीं रहता है। भूत, व्यंतर आदि भाग जाते हैं। हलाहल विष भी अपना असर त्याग देता है। इस मन्त्र के सुनने मात्र से अनेक जीवों ने उच्च गति एवं विद्याओं को प्राप्त किया था। जिसके अनेक उदाहरण शास्त्रों में आते हैं।

जैसे – 1. पद्मरुचि सेठ ने बैल को णमोकार मन्त्र सुनाया तो वह सुग्रीव हुआ था।

विशेष– बैल पहले राजा वृषभध्वज बना बाद में सुग्रीव तथा पद्मरुचि रामचन्द्र जी हुए।

2. रामचन्द्र जी ने जटायु पक्षी को णमोकार मन्त्र सुनाया तो वह स्वर्ग में देव हुआ था।
3. जीवन्धर कुमार ने कुत्ते को णमोकार मन्त्र सुनाया तो वह यक्षेन्द्र हुआ।
4. अञ्जनचोर ने णमोकार मन्त्र पर श्रद्धा रखकर आकाशगामी विद्या को प्राप्त किया।

25. णमोकार मंत्र की महिमा का कोई दूसरा दृष्टान्त बताइए ?

आचार्य श्री देशभूषण जी महाराज एक शहर से गुजर रहे थे। एक मुस्लिम भाई का मात्र एक बेटा था। उस बेटे को सर्प ने काट लिया था। जिसे उस शहर के जो भी तन्त्रवादी, मन्त्रवादी थे, सब उसके बेटे का इलाज कर चुके थे, लेकिन उसका जहर नहीं उतार पाए। अकस्मात् आचार्य श्री देशभूषण जी महाराज उस रास्ते से गुजर रहे थे। उनको देख मुस्लिम भाई ने उनके पैर पकड़ लिए और कहने लगा, आप पहुँचे हुए फकीर हैं , आपके पास जरूर कोई मन्त्र सिद्धि है, कृपया मेरे बेटे का जहर उतार दीजिए। मेरा यह इकलौता बेटा है, मैं आपका जन्म भर उपकार मानूँगा। आचार्य श्री देशभूषण जी महाराज श्रेष्ठ साधक थे, उनके पास सिद्धियाँ थी। उन्होंने तुरन्त अपने कमण्डलु से जल लेकर मंत्रित किया और उसके ऊपर छींटा तो वह बेटा ठीक हो गया।

26. मन्त्रों में और भी कोई चमत्कारिक शक्तियाँ हैं ?

मन्त्रों में अनेक चमत्कारिक शक्तियाँ हैं । जिनसे महाशक्तिशाली देवों को भी वश में किया जाता है। वर्षा, तूफान आदि को भी रोका जाता है और यह मन्त्र सर्प–विष दूर करने में जगत् प्रसिद्ध है।

27. चत्तारि दण्डक में आचार्य, उपाध्याय क्यों नहीं लिए ?

आचार्य और उपाध्याय विशेष पद हैं, जो कि संघ के संचालन हेतु दीक्षा, प्रायश्चित्त और शिक्षा आदि की अपेक्षा निश्चित किए हैं। अतः इन्हें साधु परमेष्ठी में ही गर्भित किया है। जैसे – लोकव्यवहार की संस्थाओं में अध्यक्ष, मन्त्री, कोषाध्यक्ष आदि हुआ करते हैं व्यवस्था के लिए।

28. णमोकार मन्त्र के उच्चारण करने से कितने सागर के पाप कट जाते हैं ?

णमोकार मन्त्र के एक अक्षर का भी भक्ति पूर्वक नाम लेने से सात सागर के पाप कट जाते हैं , पाँच अक्षरों का पाठ करने से पचास सागर के पाप कट जाते हैं तथा पूर्ण मन्त्र का उच्चारण करने से पाँच सौ सागर के पाप कट जाते हैं। (त.अ., उद्धृत 63)

अभ्यास

सही या गलत बताइए –

1. णमोकार मन्त्र को एक परमेष्ठी ने लिपिबद्ध किया था।
2. घर में मन्त्र आराधना नहीं करना चाहिए।
3. तीन अक्षर वाला मन्त्र भी हो सकता है।
4. ओम् में चार परमेष्ठी भी गर्भित हो सकते हैं।

अन्यत्र खोजिए –

1. णमोकार मन्त्र कहाँ अर्थात् किस नगर में लिखा था ? इसमें भी 2 मत हैं। (ध.पु.1, प्रस्तावना पृ. 15–17)
2. णमोकार मन्त्र का जप करना सबसे बड़ा स्वाध्याय है, ऐसा किस आचार्य ने किस ग्रन्थ में कहा है ?

(नागसेन सूरि, त.अ., 80)

3. णमोकार मन्त्र की अविनय करने से कौन दुर्गति को प्राप्त हुआ था ? (आ., सुभौम चक्रवर्ती की कथा)
4. णमोकार मन्त्र से असंख्यात गुणी कर्म की निर्जरा होती है। ऐसा कौन से आचार्य ने कहा है ?

(आ. वीरसेन)

अध्याय 2

जैनधर्म की प्राचीनता

अनादिकाल से अनन्तकाल तक विद्यमान रहने वाला जैन धर्म है । पुरातत्त्व एवं वैष्णव धर्म के अनुसार इसकी प्राचीनता किस प्रकार सिद्ध होती है इसका वर्णन इस अध्याय में है ।

1. जैन धर्म कब और किसके द्वारा स्थापित किया गया है ?

जैन धर्म अनादिनिधन है अर्थात् यह अनादिकाल से है एवं अनन्तकाल तक रहेगा। इसके संस्थापक तीर्थङ्कर ऋषभदेव, तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ एवं तीर्थङ्कर महावीर भी नहीं हैं। इतना अवश्य है कि समय–समय पर तीर्थङ्करों के माध्यम से इसका प्रवर्तन होता रहता है एवं उन्हीं के माध्यम से यह धर्म आगे बढ़ता जाता है। जैसे– भारत का संविधान नहीं बदलता है। मात्र सरकार बदलती रहती है। उसी प्रकार जैनधर्म का सिद्धांत (संविधान) नहीं बदलता, मात्र सरकार (तीर्थङ्कर) बदलती रहती है। किन्तु जन सामान्य की धारणा से कोई इसे बौद्धधर्म की शाखा या बौद्धधर्म से उत्पत्ति मानते हैं कोई हिन्दूधर्म की शाखा मानते हैं। जबकि ऐसा नहीं है।

2. पुरातत्त्व विभाग के अनुसार जैनधर्म की प्राचीनता किस प्रकार सिद्ध होती है ?

पुरातत्त्व की दृष्टि से जैनधर्म की प्राचीनता इस प्रकार से सिद्ध होती है। प्रसिद्ध पुरातत्त्ववेत्ता डॉ. राखलदास बनर्जी ने सिन्धु घाटी की सभ्यता का अन्वेषण किया है। यहाँ के उत्खनन में उपलब्ध सील (मोहर) नं. 449 में कुछ लिखा हुआ है। इस लेख को प्रो. प्राणनाथ विद्यालंकार ने जिनेश्वर (जिन–इ–इ–इसरः) पढ़ा है। पुरातत्त्वज्ञ रायबहादुर चन्द्रा का वक्तव्य है कि सिन्धु घाटी की मोहरों में एक मूर्ति प्राप्त हुई है, जिसमें मथुरा की तीर्थङ्कर ऋषभदेव की खड्गासन मूर्ति के समान त्याग और वैराग्य के भाव दृष्टिगोचर होते हैं । सील क्र. द्वितीय एफ.जी.एच. में जो मूर्ति उत्कीर्ण है, उसमें वैराग्य मुद्रा तो स्पष्ट है ही, उसके नीचे के भाग में तीर्थङ्कर ऋषभदेव का चिह्न बैल का सद्भाव भी है। इन्हीं सब आधारों पर अनेक विद्वानों ने जैनधर्म को सिन्धु घाटी की सभ्यता के काल का माना है। सिन्धु घाटी की सभ्यता आज से 5000 वर्ष पुरानी स्वीकार की गई है।

हड़प्पा से प्राप्त नग्न मानव धड़ भी सिन्धु घाटी सभ्यता में जैन तीर्थङ्करों के अस्तित्व को सूचित करता है। केन्द्रीय पुरातत्त्व विभाग के महानिदेशक टी.एन. रामचन्द्रन् ने उस पर गहन अध्ययन करते हुए लिखा है – हड़प्पा की खोज में कायोत्सर्ग मुद्रा में उत्कीर्णित मूर्ति पूर्ण रूप से दिगम्बर जैन मूर्ति है। मथुरा का कंकाली टीला जैन पुरातत्त्व की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है। वहाँ की खुदाई से अत्यन्त प्राचीन देव निर्मित स्तूप (जिसके निर्माण काल का पता नहीं है) के अतिरिक्त एक सौ दस शिलालेख एवं सैकड़ों प्रतिमाएँ मिली हैं जो ईसा पूर्व दूसरी सदी से बारहवीं सदी तक की हैं।

पुरातत्त्ववेत्ताओं के अनुसार उक्त स्तूप का ई.पू.आठ सौ वर्ष में पुनर्निर्माण हुआ था। डॉ. विन्सेन्ट ए. स्मिथ के अनुसार मथुरा सम्बन्धी अन्वेषणों से यह सिद्ध होता है कि जैनधर्म के तीर्थङ्करों का अस्तित्व ईसा सन् से बहुत पूर्व से विद्यमान था। तीर्थङ्कर ऋषभदेव आदि चौबीस तीर्थङ्करों की मान्यता प्राचीनकाल से प्रचलित थी। सम्राट खारवेल द्वारा उत्कीर्णित हाथी गुफा के शिलालेख से यह सिद्ध होता है– ऋषभदेव की प्रतिमा की

स्थापना, पूजा का प्रचलन सर्व प्राचीन है।

3. वैष्णव धर्म के अनुसार जैनधर्म की प्राचीनता किस प्रकार से सिद्ध होती है ?

वैष्णव धर्म के विभिन्न शास्त्रों एवं पुराणों के अन्वेषण से ज्ञात होता है कि जैनधर्म की प्राचीनता कितनी अधिक है – जिसे हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं –

1. शिवपुराण में लिखा है – अष्टषष्ठिसु तीर्थेषु यात्रायां यत्फलं भवेत्।
श्री आदिनाथ देवस्य स्मरणेनापि तद्भवेत्।।

अर्थ – अड़सठ (68) तीर्थों की यात्रा करने का जो फल होता है, उतना फल मात्र तीर्थङ्कर आदिनाथ के स्मरण करने से होता है।

2. महाभारत में कहा है –

युगेयुगे महापुण्यं दृश्यते द्वारिका पुरी,
अवतीर्णो हरिर्यत्र प्रभासशशि भूषणः।
रेवताद्रौ जिनो नेमिर्युगादि र्विमलाचले,
ऋषीणामा श्रमादेव मुक्ति मार्गस्य कारणम्।।

अर्थ – युग–युग में द्वारिकापुरी महाक्षेत्र है, जिसमें हरि का अवतार हुआ है। जो प्रभास क्षेत्र में चन्द्रमा की तरह शोभित है और गिरनार पर्वत पर नेमिनाथ और कैलास (अष्टापद) पर्वत पर आदिनाथ हुए हैं। यह क्षेत्र ऋषियों का आश्रय होने से मुक्तिमार्ग का कारण है।

3. महाभारत में कहा है – आरोहस्व रथं पार्थ गांढीवं करे कुरु।
निर्जिता मेदिनी मन्ये निर्ग्रंथा यदि सन्मुखे।।

अर्थ – हे अर्जुन ! रथ पर सवार हो और गांडीव धनुष हाथ में ले, मैं जानता हूँ कि जिसके सन्मुख दिगम्बर मुनि आ रहे हैं उसकी जीत निश्चित है।

4. ऋग्वेद में कहा है – ॐ त्रैलोक्य प्रतिष्ठितानां चतुर्विंशति तीर्थङ्कराणाम्।
ऋषभादिवर्द्धमानान्तानां सिद्धानां शरणं प्रपद्ये।

अर्थ – तीन लोक में प्रतिष्ठित आदि श्री ऋषभदेव से लेकर श्री वर्द्धमान स्वामी तक चौबीस तीर्थङ्कर हैं। उन सिद्धों की शरण को प्राप्त होता हूँ।

5. ऋग्वेद में कहा है – ॐ नग्नं सुधीरं दिग्वाससं ब्रह्मगर्भं सनातनं उपैमि वीरं।
पुरुषमर्हंतमादित्य वर्णं तसमः पुरस्तात् स्वाहा।।

अर्थ – मैं नग्न धीर वीर दिगम्बर ब्रह्मरूप सनातन अर्हंत आदित्यवर्ण पुरुष की शरण को प्राप्त होता हूँ।

6. यजुर्वेद में कहा है – ॐ नमोऽर्हन्तो ऋषभो।

अर्थ – अर्हन्त नाम वाले पूज्य ऋषभदेव को प्रणाम हो।

7. दक्षिणा मूर्ति सहस्रनाम ग्रन्थ में लिखा है – शिव उवाच। जैन मार्गरतो जैनो जितक्रोधो जितामयः।

अर्थ – शिवजी बोले, जैन मार्ग में रति करने वाला जैनी क्रोध को जीतने वाला और रोगों को जीतने वाला है।

8. **नगर पुराण में कहा है – दशभिर्भोजितैर्विप्रैः यत्फलं जायते कृते ।**
मुनेरर्हत्सुभक्तस्य तत्फलं जायते कलौ ।।

अर्थ – सतयुग में दस ब्राह्मणों को भोजन देने से जो फल होता है। उतना ही फल कलियुग में अर्हन्त भक्त एक मुनि को भोजन देने से होता है।

9. भागवत के पाँचवें स्कन्ध के अध्याय 2 से 6 तक ऋषभदेव का कथन है। जिसका भावार्थ यह है कि चौदह मनुओं में से पहले मनु स्वयंभू के पौत्र नाभि के पुत्र ऋषभदेव हुए, जो दिगम्बर जैनधर्म के आदि प्रचारक थे। ऋग्वेद में भगवान् ऋषभदेव का 141 ऋचाओं में स्तुति परक वर्णन किया है। ऐसे अनेक ग्रन्थों में अनेक दृष्टान्त हैं।

4. विद्वानों के अनुसार जैनधर्म की प्राचीनता किस प्रकार सिद्ध होती है ?

1. जर्मन विद्वान् डॉक्टर जैकोबी इसी मत से सहमत हैं कि ऋषभदेव का समय अब से असंख्यात वर्ष पूर्व का है।
2. श्री हरिसत्य भट्टाचार्य की लिखी – 'भगवान् अरिष्टनेमि नामक' अंग्रेजी पुस्तक में तीर्थङ्कर नेमिनाथ को ऐतिहासिक महापुरुष स्वीकार किया गया है।
3. डॉ. विन्सेन्ट ए.स्मिथ के अनुसार मथुरा सम्बन्धी खोज ने जैन परम्पराओं को बहुत बड़ी मात्रा में समर्थन प्रदान किया है। जो जैनधर्म की प्राचीनता और उसकी सार्वभौमिकता के अकाट्य प्रमाण हैं। मथुरा के जैन स्तूप तथा 24 तीर्थङ्करों की चिह्न सहित मूर्तियों की प्राप्ति ईसवी सन् के प्रारम्भ में भी जैनधर्म था यह सिद्ध करती है।
4. मद्रास के प्रोफेसर चक्रवर्ती ने 'वैदिक साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन' पुस्तक में यह प्रमाणित किया है कि 'जैनधर्म उतना ही प्राचीन है' जितना कि हिन्दू धर्म प्राचीन है।
5. डॉ. राधाकृष्णन् ने इंडियन फिलासफी पृ.287 में स्पष्ट लिखा है कि ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी तक लोग तीर्थङ्कर ऋषभदेव की पूजा किया करते थे।
6. 30 नवम्बर 1904 को बड़ौदा में श्री लोकमान्य बालगङ्गाधर तिलक ने व्याख्यान दिया था कि ब्राह्मण धर्म पर जैनधर्म ने अपनी अक्षुण्ण छाप छोड़ी है। अहिंसा का सिद्धान्त जैनधर्म में प्रारम्भ से है। आज ब्राह्मण और सभी हिन्दू लोग माँस भक्षण तथा मदिरापान में जो प्रतिबन्ध लगा रहे हैं, वह जैनधर्म की ही देन और जैनधर्म का ही प्रताप है। यह दया, करुणा और अहिंसा का ऐसा प्रचार–प्रसार करने वाला जैनधर्म चिरकाल तक स्थायी रहेगा।
7. डॉ.कालिदास नाग ने अपनी पुस्तक 'डिस्कवरी ऑफ एशिया' में जो नग्न मूर्ति का चित्र प्रकाशित किया था वह दस हजार वर्ष पुराना है। उसे डॉक्टर साहब ने जैन मूर्ति के अनुरूप माना है।
8. श्री चित्संग ने 'उपाय हृदय शास्त्र' में भगवान् ऋषभदेव के सिद्धान्तों का विवेचन चीनी भाषा में किया है। चीनी भाषा के विद्वानों को भगवान् ऋषभदेव के व्यक्तित्व और धर्म ने बहुत प्रभावित किया है।
9. इटली के प्रो.ज्योसेफ टक्सी को एक तीर्थङ्कर की मूर्ति तिब्बत में मिली थी, जिसे वह रोम ले गए थे। इस से स्पष्ट होता है कि कभी तिब्बत में भी जैनधर्म प्रचलित था।

10. यूनानी लेखकों के कथन से यह सिद्ध होता है कि पायथागोरस डायजिनेश जैसे यूनानी तत्त्ववेत्ताओं ने भारत में आकर 'जैन श्रमणों' से शिक्षा, दीक्षा (नियम) ग्रहण की थी। यूनानी बादशाह सिकन्दर के साथ धर्म प्रचार के लिए कल्याण मुनि उनके देश में गए थे।

11. जापान के प्रसिद्ध पुरातत्त्ववेत्ता प्रो.हाजिमे नाकामुरा लिखते हैं कि बौद्ध धार्मिक ग्रन्थों के चीनी भाषा में जो रूपांतरित संस्करण उपलब्ध हैं, उनमें यत्र-तत्र जैनों के प्रथम तीर्थङ्कर ऋषभदेव के विषय में उल्लेख मिलते हैं, तीर्थङ्कर ऋषभदेव के व्यक्तित्व से जापानी भी अपरिचित नहीं है। जापानी तीर्थङ्कर ऋषभदेव को ''राकूशव'' कहकर पहचानते हैं ।

5. जैनधर्म के बारे में बौद्धधर्म के ग्रन्थों में क्या लिखा है ?

''बौद्ध महावग्ग में लिखा है'' – वैशाली में सड़क–सड़क पर बड़ी संख्या में दिगम्बर साधु प्रवचन दे रहे थे। ''अगुत्तर निकाय में लिखा है'' – नाथपुत्र (तीर्थङ्कर महावीर) सर्वदृष्टा, अनन्तज्ञानी तथा प्रत्येक क्षण पूर्ण सजग एवं सर्वज्ञ रूप से स्थित थे। ''मंजू श्रीकल्प'' में तीर्थङ्कर ऋषभदेव को निर्ग्रन्थ तीर्थङ्कर व आप्त देव कहा है। ''न्यायबिन्दु'' में तीर्थङ्कर महावीर को सर्वज्ञ अर्थात् केवलज्ञानी आप्त तीर्थङ्कर कहा है। ''मज्झिमनिकाय'' में लिखा है – तीर्थङ्कर महावीर सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, सम्पूर्ण ज्ञान व दर्शन के ज्ञाता थे। ''दीर्घ निकाय'' में लिखा है – भगवान् महावीर तीर्थङ्कर हैं, मनुष्यों द्वारा पूज्य हैं, गणधराचार्य हैं।

6. वैष्णव धर्म के अनुसार विष्णु के 22 अवतारों में ऋषभावतार कौन–सा है ?

आठवाँ अवतार है।

अभ्यास

सही या गलत बताइए –

1. जैन धर्म की स्थापना तीर्थङ्कर महावीर ने की थी।
2. जैन धर्म विदेशों में भी पाया जाता है।
3. एक विद्वान् ने तीर्थङ्कर नेमिनाथ को ऐतिहासिक पुरुष सिद्ध किया है।

अन्यत्र खोजिए –

1. वैष्णव धर्म में विष्णुजी के 26 नाम दिए हैं। उन नामों की परिभाषा जैनधर्म से घटित कीजिए ?
2. वैष्णव धर्म के किस ग्रन्थ में राजा ऋषभदेव के नौ पुत्र वातरशना आदि बताए गए हैं ?
3. किस दार्शनिक ने कहा है कि चारों वेद तीर्थङ्कर ऋषभदेव की स्तुति करते हैं ?

(सभी तीर्थङ्कर ऋषभदेव में लेखिका डॉ. रमारानी, छतरपुर)

अध्याय 3

सृष्टि का क्रम

सृष्टि का परिवर्तन अनादिकाल से चला आ रहा है, वह कभी रुकता नहीं है। इसमें परिवर्तन किस प्रकार से होता है। इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. भरत–ऐरावत क्षेत्र में सृष्टि का क्या क्रम चलता है ?

भरत एवं ऐरावत क्षेत्र के आर्यखण्डों में अवसर्पिणी एवं उत्सर्पिणी काल के दो विभाग होते हैं। जिसमें मनुष्यों एवं तिर्यञ्चों की आयु, शरीर की ऊँचाई, बुद्धि, वैभव आदि घटते जाते हैं, वह अवसर्पिणी काल कहलाता है एवं जिसमें आयु, शरीर की ऊँचाई, बुद्धि, वैभव आदि बढ़ते जाते हैं वह उत्सर्पिणी काल कहलाता है।

2. एक कल्पकाल कितने वर्षों का होता है ?

20 कोड़ाकोड़ी सागर का एक कल्पकाल होता है। जिसमें 10 कोड़ाकोड़ी सागर का अवसर्पिणी काल एवं 10 कोड़ाकोड़ी सागर का उत्सर्पिणी काल होता है। दोनों मिलाकर एक कल्पकाल कहलाता है। (ति.प.,4/319)

उदाहरण – यह क्रम ट्रेन के अप, डाउन के समान चलता रहता है। जैसे – ट्रेन बॉम्बे से हावड़ा एवं हावड़ा से बॉम्बे आती–जाती है।

3. अवसर्पिणी एवं उत्सर्पिणी के कितने भेद हैं एवं कौन–कौन से हैं ?

सुषमा–सुषमा काल, सुषमा काल, सुषमा–दुःषमा काल, दुःषमा–सुषमा काल, दुःषमा काल एवं दुःषमा–दुःषमा काल। ये छः भेद अवसर्पिणी काल के हैं । इससे विपरीत उत्सर्पिणी काल के भी छः भेद हैं । दुःषमा–दुःषमा काल, दुःषमा काल, दुःषमा–सुषमा काल, सुषमा–दुःषमा काल, सुषमा काल एवं सुषमा–सुषमा काल। इन्हें दुःखमा–सुखमा भी कहते हैं।

4. सुषमा–दुःषमा का क्या अर्थ है ?

समा काल के विभाग को कहते हैं । सु और दुर् उपसर्ग क्रम से अच्छे और बुरे के अर्थ में आते हैं। सु और दुर् उपसर्गों को पृथक्–पृथक् समा के साथ जोड़ देने से व्याकरण के नियमानुसार स का ष हो जाता है। अतः सुषमा और दुःषमा की सिद्धि होती है। जिनके अर्थ क्रम से अच्छा काल और बुरा काल होता है।(म.पु. 3/19)

5. अवसर्पिणी के प्रथम तीन कालों में एवं उत्सर्पिणी के अन्त के तीन कालों में कौन–सी भूमि रहती है एवं उसकी कौन–कौन सी विशेषताएँ हैं ?

उनमें भोगभूमि रहती है। विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं –

1. भोगभूमि के जीवों का आहार तो होता है किन्तु नीहार (मल–मूत्र) नहीं होता।
2. यहाँ के मनुष्य अक्षर, गणित, चित्र आदि 64 कलाओं में स्वभाव से ही निपुण होते हैं।[1]
3. यहाँ विकलेन्द्रिय एवं असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव नहीं होते हैं।
4. यहाँ दिन–रात का भेद नहीं होता एवं शीत, गर्मी की वेदना भी नहीं है।
5. यहाँ सुन्दर–सुन्दर नदियाँ, कमलों से भरी वापिकाएँ, रत्नों से भरी पृथ्वी एवं कोमल घास होती है।

---

1. भोग भूमियाँ पुरुष 72 कलाओं सहित और स्त्रियाँ 64 गुणों से समन्वित होती है। (वसु.श्रा., 263)

6. यहाँ के मनुष्य एवं तिर्यञ्चों का वज्रऋषभनाराच संहनन एवं समचतुरस्र संस्थान होता है।
7. युगल संतान (बेटा–बेटी) का जन्म होता है एवं इनके जन्म होते ही पिता को छींक आने से एवं माँ को जम्भाई आने से मरण हो जाता है।
8. युगल संतान ही पति–पत्नी के रूप में रहते हैं, जिन्हें वे आपस में आर्य और आर्या कहकर पुकारते हैं।
9. मृत्यु के बाद इनका शरीर कपूरवत उड़ जाता है।
10. यहाँ नपुंसक वेद वाले नहीं होते हैं। मात्र स्त्री तथा पुरुष वेद होते हैं।
11. इन्हें भोगोपभोग सामग्री कल्पवृक्षों से ही मिलती है।
12. यहाँ के मनुष्यों में 9000 हाथियों के बराबर बल पाया जाता है। (ति.प., 4/324-381)

सुषमा–सुषमा काल की विशेषताएँ –

1. इस काल में सुख ही सुख होता है। यह भोग प्रधान काल है, इसे उत्कृष्ट भोगभूमि का काल कहते हैं।
2. इस काल में जन्मे युगल 21 दिनों में पूर्ण वृद्धि को प्राप्त हो जाते हैं। जिसका क्रम इस प्रकार है। शय्या पर अँगूठा चूसते हुए 3 दिन, उपवेशन (बैठना) 3 दिन, अस्थिर गमन 3 दिन, स्थिर गमन 3 दिन, कलागुण प्राप्ति 3 दिन, तारुण्य 3 दिन और सम्यक् गुण प्राप्ति की योग्यता 3 दिन। यहाँ के जीव 21 दिन के बाद सम्यग्दर्शन प्राप्त करने की योग्यता प्राप्त कर लेते हैं।
3. तीन दिन के बाद चौथे दिन बेर के बराबर आहार लेते हैं ।
4. इस काल के प्रारम्भ में मनुष्यों की ऊँचाई 6000 धनुष एवं आयु 3 पल्य की होती है एवं अन्त में घटते–घटते ऊँचाई 4000 धनुष एवं आयु 2 पल्य रह जाती है।
5. यह काल 4 कोड़ाकोड़ी सागर का होता है। इसमें शरीर का वर्ण स्वर्ण (रा.वा.3/29/2) के समान होता है। (ति.प.4/324-398)

सुषमा काल की विशेषताएँ –

1. प्रथम काल की अपेक्षा सुख में हीनता होती जाती है। इसे मध्यम भोगभूमि का काल कहा जाता है।
2. इस काल में जन्मे युगल 35 दिनों में पूर्ण वृद्धि को प्राप्त हो जाते हैं। जैसे– प्रथम काल में सात प्रकार की वृद्धियों में 3–3 दिन लगते हैं तो यहाँ 5–5 दिन लगते हैं।
3. 2 दिन के बाद तीसरे दिन बहेड़ा के बराबर आहार लेते हैं ।
4. इस काल के प्रारम्भ में मनुष्यों की ऊँचाई 4000 धनुष एवं आयु 2 पल्य की होती है एवं अन्त में घटते–घटते ऊँचाई 2000 धनुष एवं आयु एक पल्य की रह जाती है।
5. यह काल 3 कोड़ाकोड़ी सागर का होता है। इसमें शरीर का वर्ण श्वेत रंग के समान रहता है। (ति.प.4/399-406)

सुषमा–दुःषमा काल की विशेषताएँ –

1. द्वितीय काल की अपेक्षा सुख में हीनता होती जाती है। इसे जघन्य भोगभूमि का काल कहते हैं।
2. इस काल में जन्मे युगल 49 दिनों में पूर्ण वृद्धि को प्राप्त हो जाते हैं। जैसे – द्वितीय काल में 7 प्रकार की वृद्धियों में 5–5 दिन लगते हैं तो यहाँ 7–7 दिन लगते हैं।
3. 1 दिन के बाद दूसरे दिन आंवले के बराबर आहार लेते हैं ।
4. इस काल में प्रारम्भ में मनुष्यों की ऊँचाई 2000 धनुष एवं आयु 1 पल्य की होती है एवं अन्त में घटते–घटते ऊँचाई 500 धनुष (त्रि.सा.783) एवं आयु 1 पूर्व कोटि की रह जाती है।

5. यह काल 2 कोड़ाकोड़ी सागर का होता है, इसमें शरीर का वर्ण नीले रङ्ग (रा.वा.3/29/2) के समान रहता है।
6. कुछ कम पल्य का आठवां भाग शेष रहने पर कुलकरों का जन्म प्रारम्भ हो जाता है। वे तब भोगभूमि के समापन से आक्रान्त मनुष्यों को जीवन जीने की कला का उपाय बताते हैं। इन्हें मनु भी कहते हैं। अन्तिम कुलकर से प्रथम तीर्थङ्कर की उत्पत्ति होती है। (ति.प.,4/407-516)

दुःषमा–सुषमा की विशेषताएँ –

1. यह काल अधिक दुःख एवं अल्प सुख वाला है तथा इस काल के प्रारम्भ से ही कर्मभूमि प्रारम्भ हो जाती है।
2. कल्पवृक्षों की समाप्ति होने से अब जीवन यापन के लिए षट्कर्म प्रारम्भ हो जाते हैं । असि, मसि, कृषि, विद्या, शिल्प और वाणिज्य ये षट्कर्म हैं।
3. शलाका पुरुषों का जन्म एवं मोक्ष भी इसी काल में होता है। चतुर्थ काल का जन्मा पञ्चम काल में मोक्ष जा सकता है, किन्तु पञ्चम काल का जन्मा पञ्चम काल में मोक्ष नहीं जा सकता।
4. युगल सन्तान के जन्म का नियम नहीं होना एवं माता–पिता के द्वारा बच्चों का पालन किया जाना प्रारम्भ हो जाता है।
5. इस काल के मनुष्य प्रतिदिन (एक बार) आहार करते हैं ।
6. इस काल के प्रारम्भ में मनुष्यों की ऊँचाई 500 धनुष एवं आयु 1 पूर्व कोटि की होती है एवं अन्त में घटते–घटते ऊँचाई 7 हाथ एवं आयु 120 वर्ष की रह जाती है।
7. यह काल 42,000 वर्ष कम 1 कोड़ाकोड़ी सागर का होता है, इसमें पाँच वर्ण वाले मनुष्य होते हैं।
8. छः संहनन एवं छः संस्थान वाले मनुष्य एवं तिर्यञ्च होते हैं। (त्रि.सा.,783-85)

नोट – 84 लाख × 84 लाख × 1 करोड़ वर्ष = एक पूर्व कोटि वर्ष

दुःषमा काल की विशेषताएँ –

1. यह काल दुःख वाला है तथा इस काल के मनुष्य मंद बुद्धि वाले होते हैं।
2. इस काल में मनुष्य अनेक बार (न एक इति अनेक अर्थात् दो बार को भी अनेक बार कह सकते हैं) भोजन करते हैं।
3. इस काल के प्रारम्भ में मनुष्यों की ऊँचाई 7 हाथ एवं आयु 120 वर्ष की होती है एवं अन्त में घटते–घटते ऊँचाई 3 हाथ या 3.5 हाथ एवं आयु 20 वर्ष की रह जाती है।
4. यह काल 21,000 वर्ष का होता है। इसमें पाँच वर्ण वाले किन्तु कान्ति से हीन युक्त शरीर होते हैं।
5. अन्तिम तीन संहननधारी मनुष्य एवं तिर्यञ्च होते हैं।
6. पाँच सौ वर्ष बाद उपकल्की राजा व हजार वर्ष बाद एक कल्की राजा उत्पन्न होता है।
7. इक्कीसवाँ अन्तिम कल्की राजा जलमंथन, मुनिराज से टैक्स माँगेगा पर मुनि महाराज क्या दें ? राजा कहता है प्रथम ग्रास दीजिए, मुनि महाराज दे देते हैं और जिससे पिण्डहरण नामक अन्तराय करके वापस आ जाते हैं। वे अवधिज्ञान से जान लेते हैं कि अब पञ्चम काल का अन्त है। तीन दिन की आयु शेष है। चारों (वीरांगज मुनि, सर्वश्री आर्यिका, अग्निल श्रावक, पंगुश्री श्राविका) सल्लेखना ग्रहण कर लेते हैं। कार्तिक कृष्ण अमावस्या को प्रातः काल शरीर त्यागकर सौधर्म स्वर्ग में देव होते हैं,मध्याह्न

में असुरकुमार देव धर्म द्रोही कल्की को समाप्त कर देता है और सूर्यास्त के समय अग्नि नष्ट हो जाती है। इस प्रकार पञ्चम काल का अन्त होता है। (ति.प.,4/1486-1552)

नोट – प्रत्येक कल्की के समय एक अवधिज्ञानी मुनि नियम से होते हैं।

दुःषमा–दुःषमा काल की विशेषताएँ –

1. यह काल दुःख ही दुःख वाला है तथा इस काल के प्रारम्भ में मनुष्यों की ऊँचाई 3 हाथ या 3.5 हाथ एवं आयु 20 वर्ष की होती है एवं अन्त में घटते–घटते ऊँचाई 1 हाथ एवं आयु 15 या16 वर्ष रह जाती है।
2. यह काल भी 21,000 वर्ष का होता है। इसमें शरीर का रङ्ग धुएँ के समान काला होता है।
3. इस काल के मनुष्यों का आहार बारम्बार कंदमूल फल आदि होता है। सब नग्न और भवनों से रहित होकर वनों में घूमते हैं।
4. इस काल के मनुष्य प्रायः पशुओं जैसा आचरण करने वाले क्रूर, बहरे, अंधे, गूंगे, बन्दर जैसे रूप वाले और कुबड़े बौने शरीर वाले अनेक रोगों से सहित होते हैं।
5. इस काल में जन्म लेने वाले नरक व तिर्यञ्चगति से आते हैं एवं मरण कर वहीं जाते हैं।
6. इस काल के अन्त में संवर्तक (लवा) नाम की वायु, पर्वत, वृक्ष और भूमि आदि को चूर्ण करती हुई दिशाओं के अन्त पर्यन्त भ्रमण करती है, जिससे वहाँ स्थित जीव मूर्छित हो जाते हैं और कुछ मर भी जाते हैं। इससे व्याकुलित मनुष्य और तिर्यञ्च शरण के लिए विजयार्ध पर्वत और गङ्गा-सिंधु की वेदी में स्वयं प्रवेश कर जाते हैं तथा दयावान् विद्याधर और देव,मनुष्य एवं तिर्यञ्चों में से बहुत से जीवों को वहाँ ले जाकर सुरक्षित रख देते हैं। (त्रि.सा., 865) इसके पश्चात् क्रमशः 7–7 दिन तक 7 प्रकार की कुवृष्टि होती है। उस समय गंभीर गर्जना से सहित मेघ तुहिन (ओला), क्षार जल,विष, धूम, धूलि, वज्र एवं जलती हुई दुष्प्रेक्ष्य ज्वाला की 7–7 दिन वर्षा होती है अर्थात् कुल 49 दिन तक वर्षा होती है। अवशेष रहे मनुष्य उन वर्षाओं से नष्ट हो जाते हैं। विष एवं अग्नि की वर्षा से दग्ध हुई पृथ्वी 1 योजन तक (मोटाई में) चूर्ण हो जाती है। इस प्रकार 10 कोड़ाकोड़ी सागर का यह अवसर्पिणी काल समाप्त हो जाता है। उसके बाद उत्सर्पिणी काल के प्रारम्भ में सुवृष्टि प्रारम्भ होने से नया युग प्रारम्भ हो जाता है। उत्सर्पिणी के प्रथम काल में मेघों द्वारा क्रमशः जल, दूध, घी, अमृत, रस (त्रि.सा., 868) आदि की वर्षा 7–7 दिन होती है। यह भी 49 दिन तक होती है। इस वर्षा से पृथ्वी स्निग्धता, धान्य तथा औषधियों को धारण कर लेती है। बेल,लता, गुल्म और वृक्ष वृद्धि को प्राप्त होते हैं। शीतल गंध को ग्रहण कर वे मनुष्य और तिर्यञ्च गुफाओं से बाहर निकलते हैं। उस समय मनुष्य पशुओं जैसा आचरण करते हुए क्षुधित होकर वृक्षों के फल, मूल व पत्ते आदि को खाते हैं। इस काल में आयु, ऊँचाई, बुद्धि बल आदि क्रमशः बढ़ने लगते हैं। इसका नाम भी दुःषमा–दुःषमा काल है। (ति.प.4/1588-1575)

दुःषमा काल – इस काल में भी क्रमशः आयु, ऊँचाई, बुद्धि आदि बढ़ते रहते हैं। इस काल में 1000 वर्ष शेष रहने पर क्रमशः14 कुलकर होते हैं, जो कुलानुरूप आचरण और अग्नि आदि से भोजन पकाना आदि सिखाते हैं। (ति.प.4/1588-1590)

दुःषमा–सुषमा काल – इस काल में आयु, ऊँचाई,बल आदि में क्रमशः वृद्धि होती हुई अन्तिम कुलकर से प्रथम तीर्थङ्कर महापद्म (राजा श्रेणिक का जीव) होंगे बाद में 23 तीर्थङ्कर और होंगे। अन्तिम तीर्थङ्कर अनन्तवीर्य होंगे जिनकी आयु एक पूर्व कोटि एवं ऊँचाई 500 धनुष होगी। आगे सुषमा–दुःषमा चौथाकाल,

सुषमा पाँचवाँ काल एवं सुषमा–सुषमा छठा काल होता है। इन तीनों कालों में क्रमशः जघन्य, मध्यम और उत्तम भोगभूमि होगी। इनमें आयु, ऊँचाई क्रमशः बढ़ती रहती है। छठा काल सुषमा–सुषमा समाप्त होने पर एक कल्प काल पूरा होता है।

विशेष - कल्पकाल का प्रारम्भ उत्सर्पिणी से होता है एवं समापन अवसर्पिणी में।

ऐसे असंख्यात अवसर्पिणी–उत्सर्पिणी काल बीत जाने पर एक हुण्डावसर्पिणी काल आता है। जिसमें कुछ अनहोनी (विचित्र) घटनाएँ घटती हैं। वर्तमान में हुण्डावसर्पिणी काल चल रहा है, जिसमें कुछ विचित्र घटनाएँ घट रही हैं। जैसे–

1. तृतीय काल सुषमा – दुःषमा के कुछ समय शेष रहने पर ही वर्षा होने लगी एवं विकलचतुष्क जीवों की उत्पत्ति होने लगी एवं इसी काल में कल्पवृक्षों का अन्त एवं कर्मभूमि का प्रारम्भ होना।
2. तृतीय काल में प्रथम तीर्थङ्कर का जन्म एवं निर्वाण होना।
3. भरत चक्रवती की हार होना।
4. भरत चक्रवर्ती द्वारा की गयी ब्राह्मण वंश की उत्पत्ति का होना।
5. नौवें तीर्थङ्कर से सोलहवें तीर्थङ्कर पर्यन्त, जिनधर्म का विच्छेद होना। (9वें–10वें तीर्थङ्कर के बीच में 1/4 पल्य, 10वें–11वें के बीच में 1/2 पल्य, 11वें–12वें के बीच में 3/4 पल्य, 12वें13वें के बीच में 1 पल्य, 13वें–14वें के बीच में 3/4 पल्य, 14वें–15वें के बीच में 1/2 पल्य एवं 15वें – 16वें के बीच में 1/4 पल्य अर्थात् कुल 4 पल्य तक मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका कोई भी नहीं थे)

   विशेष : असंख्यात वर्षों का एक पल्य होता है।
6. तीर्थङ्कर ऋषभदेव ने तीसरे काल में जन्म लिया और इसी काल में मोक्ष गए, 3 तीर्थङ्कर चक्रवर्ती पद के धारी भी थे एवं त्रिपृष्ठ (प्रथम नारायण) यही जीव तीर्थङ्कर महावीर हुआ। इस प्रकार 63 शलाका पुरुषों में से 5 शलाका पुरुष कम हुए। अर्थात् दुःषमा–सुषमा काल में 58 शलाका पुरुष हुए।
7. 11 रुद्र और 9 कलह प्रिय नारद हुए।
8. तीन तीर्थङ्करों पर मुनि अवस्था में उपसर्ग होना। (7वें, 23वें एवं 24वें)
9. कल्की उपकल्कियों का होना।
10. तृतीय, चतुर्थ एवं पञ्चमकाल में धर्म को नाश करने वाले कुदेव और कुलिंगी भी होते हैं ।
11. अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकम्प, वज्राग्नि आदि का गिरना।
12. तीर्थङ्करों का जन्म अयोध्या के अलावा अन्य स्थानों से होना एवं मोक्ष भी सम्मेदशिखरजी के अलावा अन्य स्थानों से होना। (ति.प.,4/1637-1645)

6. क्या सम्पूर्ण भरत–ऐरावत क्षेत्रों में काल का प्रभाव पड़ता है ?

नहीं। भरत–ऐरावत क्षेत्रों में स्थित 5–5 म्लेच्छ खण्डों में तथा विजयार्ध की विद्याधर श्रेणियों में दुःषमा–सुषमा काल के आदि से लेकर अन्त पर्यन्त के समान ही हानि–वृद्धि होती है। (ति.प.,4/1607)

7. भोगभूमि के अन्त में दण्ड व्यवस्था क्या रहती है ?

आदि के पाँच कुलकर अपराधी को 'हा' अर्थात् हाय तुमने यह बुरा किया मात्र इतना ही दण्ड देते थे। आगे के पाँच 'हा–मा' अर्थात् हाय तुमने यह बुरा किया अब नहीं करना तथा शेष कुलकर 'हा–मा–धिक्' अर्थात् हाय

तुमने यह बुरा किया अब नहीं करना, धिक्कार है, इस प्रकार का दण्ड देते थे।

8. विदेह क्षेत्र एवं स्वयंभूरमण द्वीप व स्वयंभूरमण समुद्र में काल व्यवस्था कैसी रहती है ?

विदेहक्षेत्र में सदैव चतुर्थकाल के प्रारम्भवत् तथा स्वयंभूरमणद्वीप के परभाग में एवं स्वयंभूरमण समुद्र में दुःषमा काल सदृश वर्तना होती है। देवगति में निरन्तर प्रथम काल सदृश और नरकगति में निरन्तर छठवें काल सदृश वर्तना होती है (यहाँ अत्यन्त सुख एवं अत्यन्त दुःख की विवक्षा है आयु आदि की नहीं) (त्रि.सा.,884)

9. क्या इतनी विशाल – विशाल अवगाहना होती है, यह तो आश्चर्यकारी लगती है ?

वर्तमान में कुछ ऐसे प्रमाण मिले हैं, जिससे ये अवगाहना आश्चर्यकारी नहीं लगती है, बल्कि सही लगती है। कुछ प्रमाण निम्नलिखित हैं –

1. द्वारिका के समुद्र तल के अन्दर खोज करने वाले राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान के समुद्र पुरातत्त्व विभाग के द्वारा किए गए उत्खनन की रिपोर्ट के अनुसार समुद्र में डूबे मकानों की ऊँचाई 200 से 600 मीटर है। इनके कमरे के दरवाजे 20 मीटर ऊँचे हैं । विशेष यह अवशेष द्वारिका के अशुभ तैजस पुतले के द्वारा जल जाने के बाद के बचे हुए हैं । यदि दरवाजे 20 मीटर ऊँचे (लगभग 70 फीट) हैं तो इनमें रहने वाले व्यक्ति 50–60 फीट से कम ऊँचे नहीं होंगे,जैन आगम के अनुसार तीर्थङ्कर नेमिनाथ की अवगाहना 10 धनुष अर्थात् 60 फीट थी। अतः यह सिद्ध होता है कि इतनी अवगाहना होती थी।
2. वर्तमान में जिसे विज्ञान 30 से 50 फीट लम्बा डायनासोर मानता है, वह आज से कई करोड़ वर्ष पूर्व छिपकली का ही रूप है।
3. मास्को में 1993 में एक ग्लेशियर सरका था। उसके अन्दर एक नरकंकाल मिला जो 23 फीट लम्बा था। वैज्ञानिक इसे 2 से 4 लाख वर्ष पूर्व का मानते हैं । यह नरकंकाल श्री राजमल जी देहली के अनुसार आज भी मास्को के म्यूजियम में रखा हुआ है।
4. बड़ौदा (गुजरात) के म्यूजियम में कई लाख वर्ष पूर्व का छिपकली का अस्थिपंजर रखा है। जो 10–12 फीट लम्बा है।
5. तिब्बत की गुफाओं में कई लाख वर्ष पूर्व के चमड़े के जूते मिले हैं, जिनकी लम्बाई कई फीट है।
6. भारत और मानव संस्कृति (लेखक श्री विशंबरनाथ पांडे, पृष्ठ 112–115) के अनुसार मोहनजोदड़ो हड़प्पा की खुदाई से यह सिद्ध हो गया है कि मानवों के अस्थि पंजर के आधार से पूर्वकाल में मनुष्यों की आयु अधिक व लम्बाई भी अधिक होती थी।
7. फ्लोरिडा में एक दस लाख वर्ष पुराना बिल्ली का धड़ मिला है, जिसमें बिल्ली के दांत 7 इंच लम्बे हैं।
8. अमेरिका में 5.5 करोड़ वर्ष पूर्व का कॉकरोच का ढाँचा मिला है। ये कॉकरोच चूहे के बराबर बड़े होते थे।
9. रोम के पास कैसल दी गुड्डों में तीन लाख वर्ष पुरानी हाथियों की हड्डी मिली है, इनमें से कुछ हाथी के दाँत 10 फीट लम्बाई के हैं।

ध. = धनुष **छः कालों में आयु, ऊँचाई आदि की वृद्धि व हानि का क्रम जानने के लिए तालिका है –**

काल	**नाम**	**ऊँचाई** (उत्कृष्ट)	**ऊँचाई** (जघन्य)	**आयु** (उत्कृष्ट)	**आयु** (जघन्य)	**समय**	**आहार का अन्तराल**	**आहार**	**वर्ण**	**सुख–दुःख**
प्रथम	सुषमा–सुषमा	6000 ध.	4000 ध.	3 पल्य	2 पल्य	4 कोड़ा–कोड़ी सागर	तीन दिन के बाद	बेर बराबर	स्वर्ण के समान	सुख ही सुख वाला काल
द्वितीय	सुषमा	4000 ध.	2000 ध.	2 पल्य	1 पल्य	3 कोड़ा–कोड़ी सागर	दो दिन के बाद	बहेड़ा बराबर	श्वेत वर्ण के समान	सुख वाला काल
तृतीय	सुषमा–दुःषमा	2000 ध.	500 ध.	1 पल्य	1 पूर्व कोटि	2 कोड़ा–कोड़ी सागर	एक दिन के बाद	आँवला बराबर	नीलवर्ण के समान	अधिक सुख अल्प दुःख वाला काल
चतुर्थ	दुःषमा–सुषमा	500 ध.	7 हाथ	1 पूर्व कोटि	120 वर्ष	42000 वर्ष कम1 कोड़ा-कोड़ी सागर	प्रतिदिन (एक बार)	-	पाँचों वर्ण वाले	अधिक दुःख अल्प सुख वाला काल
पञ्चम	दुःषमा	7 हाथ	3 हाथ या 3.5 हाथ	120 वर्ष	20 वर्ष	21000 वर्ष	अनेक बार (दो बार)	-	पाँचों वर्ण वाले हीन कान्ति से युक्त	दुःख वाला काल
छठवाँ	दुःषमा–दुःषमा	3 हाथ या 3.5 हाथ	1 हाथ	20 वर्ष	15 या 16 वर्ष	21000 वर्ष	बारम्बार	-	धुएँ के समान काला	दुःख ही दुःख वाला काल

अभ्यास

सही या गलत बताइए –

1. उत्सर्पिणी के प्रथम तीन कालों में भोगभूमि रहती है।
2. भोगभूमि जीवों के पास पाँच संहनन नहीं होते हैं।
3. सुषमा–सुषमा काल में जघन्य ऊँचाई 500 धनुष की होती है।
4. पञ्चम काल के मानव बारम्बार भोजन करते हैं ।
5. छठे काल के अन्त में एक मुनि रहेंगे।
6. पञ्चम काल में मानव की उत्कृष्ट ऊँचाई 7 हाथ होती है।
7. छठे काल के मनुष्यों का एक हाथ होता है।
8. हुण्डावसर्पिणी के चतुर्थकाल में धर्म का विच्छेद कुल चार पल्य रहा।
9. उत्सर्पिणी के दुःषमा काल में मुनि नहीं रहेंगे।
10. भरत चक्रवर्ती एक बार भोजन करते थे।

अन्यत्र खोजिए –

1. चतुर्थ काल में उत्कृष्ट अवगाहना एवं तृतीय काल में जघन्य अवगाहना 525 धनुष कौन से ग्रन्थ में मानी है ? (त्रि.प., 4/1288)
2. पञ्चम काल में जघन्य एवं छठे काल में उत्कृष्ट अवगाहना 2 हाथ का कथन किस ग्रन्थ में मिलता है ? (त्रि.सा., 783)
3. किस ग्रन्थ में 15 कुलकर होते हैं, ऐसा लिखा है ? (त्रि.सा., 792–794)
4. छठवें काल के अन्त में होने वाले प्रलय के समय 72 जोड़े एवं संख्यात मनुष्य सुरक्षित स्थान (विजयार्ध पर्वत और गङ्गा–सिंधु की वेदी) में जाते हैं, ऐसा किस ग्रन्थ में लिखा है ? (त्रि.प., 4/1568)
5. विदेह क्षेत्र में कितने प्रकार के कालमेघ एवं कितने प्रकार के धवलमेघ कितने–कितने दिन तक वर्षा करते हैं ? (त्रि.सा., 679)
6. किस ग्रन्थ में लिखा है कि जलमंथन नामक कल्की वीरांगज मुनिराज के पाणिपात्र से प्रथम ग्रास का हरण कर घोर उपसर्ग करेगा ? (सि.सा.दी. 9/295)
7. 49 दिन की कुवृष्टि एवं 49 दिन की सुवृष्टि कब से प्रारम्भ होती है ? (चिन्तन कीजिए)

अध्याय 4

तीर्थङ्कर

जो समवसरण में विराजमान होकर धर्म का सच्चा उपदेश देते हैं, जिन्हें तीन लोक के जीव नमस्कार करते हैं ऐसे तीर्थङ्कर प्रभु की महिमा का वर्णन इस अध्याय में है।

1. तीर्थङ्कर किसे कहते हैं ?

1. ''तरंति संसार महार्णवं येन तत् तीर्थम्'' अर्थात् जिसके द्वारा संसार सागर से पार होते हैं , वह तीर्थ है और इसी तीर्थ के प्रवर्तक तीर्थङ्कर कहलाते हैं।
2. धर्म का अर्थ सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र है। चूंकि इनके द्वारा संसार सागर से तरते हैं , इसलिए इन्हें तीर्थ कहा है और जो तीर्थ (धर्म) का उपदेश देते हैं, वे तीर्थङ्कर कहलाते हैं।

2. तीर्थङ्कर कितने होते हैं ?

वैसे तीर्थङ्कर तो अनन्त हो चुके, किन्तु भरत और ऐरावत क्षेत्र में अवसर्पिणी के चतुर्थ काल में एवं उत्सर्पिणी के तृतीय काल में (दुःषमा–सुषमा) क्रमशः एक के बाद एक चौबीस तीर्थङ्कर होते हैं।

3. चौबीस तीर्थङ्कर के चिह्न सहित नाम बताइए ?

01.	आदिनाथ जी	बैल/वृषभ		13.	विमलनाथ जी	शूकर	
02.	अजितनाथ जी	हाथी		14.	अनन्तनाथ जी	सेही	
03.	सम्भवनाथ जी	घोड़ा		15.	धर्मनाथ जी	वज्रदण्ड	
04.	अभिनन्दन जी	बन्दर		16.	शान्तिनाथ जी	हिरण	
05.	सुमतिनाथ जी	चकवा		17.	कुन्थुनाथ जी	बकरा	
06.	पद्मप्रभ जी	लाल कमल		18.	अरनाथ जी	मच्छ	
07.	सुपार्श्वनाथ जी	स्वस्तिक		19.	मल्लिनाथ जी	कलश	
08.	चन्द्रप्रभ जी	चन्द्रमा		20.	मुनिसुव्रतनाथ जी	कछुआ	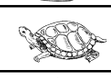
09.	पुष्पदंत जी	मगर		21.	नमिनाथ जी	नील कमल	
10.	शीतलनाथ जी	कल्पवृक्ष		22.	नेमिनाथ जी	शंख	
11.	श्रेयांसनाथ जी	गैंडा		23.	पार्श्वनाथ जी	सर्प	
12.	वासुपूज्य जी	भैंसा		24.	महावीर स्वामी	सिंह	

4. विदेहक्षेत्र में कितने तीर्थङ्कर होते हैं ?

विदेह क्षेत्र में 20 तीर्थङ्कर तो विद्यमान रहते ही हैं, किन्तु 5 विदेह में अधिक से अधिक 160 हो सकते हैं।

5. अढ़ाईद्वीप में एक साथ अधिक–से–अधिक कितने तीर्थङ्कर हो सकते हैं ?

अढ़ाईद्वीप में एक साथ अधिक से अधिक 170 (विदेह में 160, भरत में 5, ऐरावत में 5) तीर्थङ्कर हो सकते हैं।

6. क्या कभी एक साथ 170 तीर्थङ्कर हुए थे ?

सुनते हैं कि अजितनाथ तीर्थङ्कर के समय एक साथ 170 तीर्थङ्कर हुए थे।

7. तीर्थङ्करों के कितने कल्याणक होते हैं ?

तीर्थङ्करों के पाँच कल्याणक होते हैं। गर्भ, जन्म, दीक्षा या तप, ज्ञान और मोक्ष कल्याणक।

8. क्या भरत, ऐरावत एवं विदेह सभी जगह पाँच कल्याणक वाले तीर्थङ्कर होते हैं ?

नहीं। भरत, ऐरावत में पाँच कल्याणक वाले ही तीर्थङ्कर होते हैं। किन्तु विदेह क्षेत्र में 2, 3 और 5 कल्याणक वाले भी होते हैं। दो में ज्ञान और मोक्ष कल्याणक, तीन में दीक्षा, ज्ञान और मोक्ष कल्याणक होते हैं।

9. तीर्थङ्कर की कौन–कौन सी विशेषताएँ होती हैं ?

तीर्थङ्करों की प्रमुख विशेषताएँ निम्न हैं –

1. तीर्थङ्कर के दाढ़ी–मूँछ नहीं होती है। (बो.पा.टी.,32/98)
2. तीर्थङ्कर बालक माता का दूध नहीं पीते किन्तु सौधर्म इन्द्र जन्माभिषेक के बाद उनके दाहिने हाथ के अँगूठे में अमृत भर देता है जिसे चूसकर बड़े होते हैं।
3. जीवन भर (दीक्षा के पूर्व) देवों के द्वारा दिया गया ही भोजन एवं वस्त्राभूषण ग्रहण करते हैं।
4. तीर्थङ्कर स्वयं दीक्षा लेते हैं।
5. तीर्थङ्कर को बालक अवस्था में, गृहस्थ अवस्था में एवं मुनि अवस्था में भी मन्दिर जाना आवश्यक नहीं होता। उनका अन्य मुनि से, गृहस्थ अवस्था में साक्षात्कार भी नहीं होता।
6. तीर्थङ्करों के कल्याणकों के समय पर नारकी जीवों को भी कुछ क्षण के लिए आनन्द की अनुभूति होती है।
7. तीर्थङ्कर मात्र सिद्ध परमेष्ठी को नमस्कार करते हैं। अतः नमःसिद्धेभ्यः बोलते हैं।
8. तीर्थङ्करों के 46 मूलगुण होते हैं।
9. तीर्थङ्कर सर्वाङ्ग सुन्दर होते हैं।

10. तीर्थङ्कर के चिह्न कौन रखता है ?

जब सौधर्म इन्द्र तीर्थङ्कर बालक का पाण्डुकशिला पर जन्माभिषेक करता हैं। उस समय तीर्थङ्कर के दाहिने पैर के अँगूठे पर जो चिह्न दिखता है, वह इन्द्र उन्हीं तीर्थङ्कर का वह चिह्न निश्चित कर देता है।

11. कौन से क्षेत्र के तीर्थङ्कर का कौन – सी शिला पर जन्माभिषेक होता है ?

भरत क्षेत्र के तीर्थङ्करों का पाण्डुकशिला पर, पश्चिम विदेह के तीर्थङ्करों का पाण्डु कम्बला शिला पर, ऐरावत क्षेत्र के तीर्थङ्करों का रक्त शिला एवं पूर्व विदेह के तीर्थङ्करों का रक्त कम्बला शिला पर जन्माभिषेक होता है। (त्रि.सा.,633/634)

12. कौन से तीर्थङ्करों के शरीर का वर्ण कौन–सा था ?

कृत्रिम–अकृत्रिम–जिनचैत्य की पूजा के अर्घ्य में तीर्थङ्करों के शरीर का वर्ण इस प्रकार कहा है–

द्वौ कुन्देन्दु–तुषार–हार–धवलौ, द्वाविन्द्रनील–प्रभौ,
द्वौ बन्धूक–सम–प्रभौ जिनवृषौ, द्वौ च प्रियङ्गुप्रभौ ।
शेषाः षोडश जन्म–मृत्यु–रहिताः संतप्त–हेम–प्रभास् ।
ते संज्ञान–दिवाकराः सुर–नुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ।।

किसी कवि ने तीर्थङ्करों के वर्ण के विषय निम्न प्रकार कहा है –

दो गोरे दो सांवरे, दो हरियल दो लाल ।
सोलह कंचन वरण हैं , तिन्हें नवाऊँ भाल ।।

अर्थ –	चन्द्रप्रभ एवं पुष्पदन्त	सफेद वर्ण
	मुनिसुव्रतनाथ एवं नेमिनाथ	श्याम वर्ण / नील वर्ण
	पद्मप्रभ एवं वासुपूज्य	लाल वर्ण
	सुपार्श्वनाथ एवं पार्श्वनाथ	हरित वर्ण
	शेष सोलह तीर्थङ्करों का	पीत वर्ण

विशेष – मुनिसुव्रतनाथ एवं नेमिनाथ का वर्ण त्रि.सा. 847-849 के अनुसार श्याम वर्ण है।

13. कौन से तीर्थङ्कर कहाँ से मोक्ष पधारे ?

ऋषभदेव कैलाश पर्वत से, वासुपूज्य चम्पापुर से, नेमिनाथ गिरनार से,महावीर स्वामी पावापुर से एवं शेष तीर्थङ्कर तीर्थराज सम्मेदशिखर जी से मोक्ष पधारे।

14. अ वर्ण से प्रारम्भ होने वाले तीर्थङ्करों के नाम बताइए ?

आदिनाथ, अजितनाथ, अभिनन्दननाथ, अनन्तनाथ, अरनाथ एवं अतिवीर।

15. व वर्ण से प्रारम्भ होने वाले तीर्थङ्करों के नाम बताइए ?

वृषभनाथ, वासुपूज्य, विमलनाथ और वर्द्धमान।

16. श, स से प्रारम्भ होने वाले तीर्थङ्करों के नाम बताइए ?

संभवनाथ, सुमतिनाथ, सुपार्श्वनाथ, सुविधिनाथ, शीतलनाथ, श्रेयांसनाथ, शान्तिनाथ एवं सन्मति।

17. कितने तीर्थङ्करों के चिह्न एकेन्द्रिय हैं ?

चार। पद्मप्रभ का लालकमल, चन्द्रप्रभ का चन्द्रमा, शीतलनाथ का कल्पवृक्ष[1] और नमिनाथ का नीलकमल

18. कौन से तीर्थङ्कर का चिह्न दो इन्द्रिय है ?

तीर्थङ्कर नेमिनाथ का शंख चिह्न दो इन्द्रिय है।

19. कितने तीर्थङ्करों के चिह्न अजीव हैं ?

तीन। स्वस्तिक, वज्रदण्ड और कलश।

20. कितने तीर्थङ्करों के चिह्न पञ्चेन्द्रिय हैं ?

शेष 16 तीर्थङ्करों के चिह्न पञ्चेन्द्रिय हैं।

---

1. ति.प., 4/358 (यहाँ एकेन्द्रिय की सिद्धि के लिए प्रमाण दिया गया है)

21. उन तीर्थङ्करों के चिह्न बताइए जो बोझा ढोने वाले पशु हैं ?

वे चार तीर्थङ्करों के चिह्न हैं – बैल, हाथी, घोड़ा और भैंसा।

22. उन तीर्थङ्करों के चिह्न बताइए जो जल में रहते हैं ?

जल में रहने वाले – लालकमल, मगर, मछली, कछुआ, नीलकमल, शंख और सर्प चिह्न हैं।

23. एक तीर्थङ्कर के उस चिह्न को बताइए जिसके शरीर में काँटे होते हैं ?

सेही के शरीर में काँटे होते हैं।

24. चौबीस तीर्थङ्करों के चिह्न में सबसे तेज दौड़ने वाला प्राणी कौन–सा है ?

हिरण सबसे तेज दौड़ने वाला प्राणी है।

25. ऐसे कितने तीर्थङ्कर हैं, जिनके नाम जिस वर्ण (अक्षर) से प्रारम्भ होते हैं, उसी वर्ण से चिह्न प्रारम्भ होता है ?

वृषभनाथ का वृषभ, सुपार्श्वनाथ का स्वस्तिक, चन्द्रप्रभ का चन्द्रमा, नमिनाथ का नीलकमल और सन्मति का सिंह।

26. ऐसे कौन से तीर्थङ्कर हैं जिनका जन्म उत्तम आकिञ्चन्य धर्म के दिन हुआ था ?

वीर (महावीर स्वामी) का।

27. कितने तीर्थङ्करों की बारात निकली थी ?

बीस तीर्थङ्करों की।

28. तीर्थङ्करों और सामान्य अरिहंतों में क्या अंतर है ?

1. तीर्थङ्करों के कल्याणक होते हैं, सामान्य अरिहंतों के नहीं।
2. तीर्थङ्करों के चिह्न होते हैं, सामान्य अरिहंतों के नहीं।
3. तीर्थङ्करों का समवसरण होता है, सामान्य अरिहंतों के नहीं। उनकी गंधकुटी होती है।
4. तीर्थङ्करों के गणधर होते हैं, सामान्य अरिहंतों के नहीं।
5. तीर्थङ्करों को जन्म से ही अवधिज्ञान होता है, सामान्य अरिहंतों के लिए नियम नहीं है।
6. तीर्थङ्करों को दीक्षा लेते ही मनः पर्ययज्ञान होता है, सामान्य अरिहंतों के लिए नियम नहीं है।
7. तीर्थङ्कर अपनी माता की अकेली संतान होते हैं, सामान्य अरिहंतों के अनेक भाई–बहिन हो सकते हैं।
8. तीर्थङ्कर जब तक गृहस्थ अवस्था में रहते हैं तब तक उनके परिवार में किसी का मरण नहीं होता है, किन्तु सामान्य अरिहंतों के लिए नियम नहीं है।
9. भाव पुरुषवेद वाले ही तीर्थङ्कर बनते हैं, किन्तु सामान्य अरिहंत तीनों भाववेद वाले बन सकते हैं।
10. तीर्थङ्करों के समचतुरस्र संस्थान ही होता है, किन्तु सामान्य अरिहंतों के छः संस्थानों में से कोई भी हो सकता है।
11. तीर्थङ्करों के प्रशस्त विहायोगतिका ही उदय रहता, किन्तु सामान्य अरिहंतों के दोनों में से कोई भी हो सकता है।
12. तीर्थङ्करों के सुस्वर नाम कर्म का ही उदय रहेगा, सामान्य अरिहंतों के दोनों में से कोई भी हो सकता है।

13. चौथे नरक से आने वाले तीर्थङ्कर नहीं बन सकते किन्तु सामान्य अरिहंत बन सकते हैं।
14. तीर्थङ्करों की माता को सोलह स्वप्न आते हैं, सामान्य अरिहंतों के लिए यह नियम नहीं है।
15. तीर्थङ्करों के श्रीवत्स का चिह्न नियम से रहता है, सामान्य अरिहंतों के लिए नियम नहीं है।
16. तीर्थङ्करों की दिव्य ध्वनि नियम से खिरती है, सामान्य अरिहंतों के लिए नियम नहीं है। जैसे – मूक केवली की नहीं खिरती है।

29. किन तीर्थङ्कर के साथ कितने राजाओं ने दीक्षा ली थी ?

ऋषभदेव के साथ 4000 राजाओं ने, वासुपूज्य के साथ 676 राजाओं ने, मल्लिनाथ एवं पार्श्वनाथ के साथ 300–300 राजाओं ने, भगवान् महावीर ने अकेले एवं शेष तीर्थङ्करों के साथ 1000-1000 राजाओं ने दीक्षा ली थी। (ति.प.,4/675-76)

30. कौन से तीर्थङ्कर ने कौन सी वस्तु से प्रथम पारणा की थी ?

ऋषभदेव ने इक्षु रस से एवं शेष सभी तीर्थङ्करों ने क्षीरान्न अर्थात् दूध व अन्न से बने अनेक व्यञ्जनों की खीर आदि से पारणा की थी।

31. तीर्थङ्करों की पारणा कराने वाले दाताओं के शरीर का रङ्ग कौन– सा था ?

आदि के दो दाता राजा श्रेयांस, राजा ब्रह्मदत्त/सुवर्ण और अन्त के दो दाता राजा ब्रह्मदत्त और राजा कूल/नन्दन श्यामवर्ण के थे। अन्य सभी दाता तपाये हुए सुवर्ण के समान वर्ण वाले थे।

32. कौन से तीर्थङ्कर किस आसन से मोक्ष पधारे ?

वृषभनाथ, वासुपूज्य और नेमिनाथ (1, 12, 22) तो पद्मासन से एवं शेष सभी तीर्थङ्कर कायोत्सर्गासन (खड्गासन) से मोक्ष पधारे थे, किन्तु समवसरण में सभी तीर्थङ्कर पद्मासन से ही विराजमान होते हैं।

33. ऐसे तीर्थङ्कर कितने हैं, जिनके समवसरण में मुनियों से आर्यिकाएँ कम थीं ?

धर्मनाथ एवं शान्तिनाथ तीर्थङ्कर के समवसरण में मुनियों से आर्यिकाएँ कम थीं।

34. कौन से तीर्थङ्कर के समवसरण का कितना विस्तार था ?

वृषभदेव का 12 योजन एवं आगे–आगे नेमिनाथ तक प्रत्येक तीर्थङ्कर में $^{1}/_{2}$ योजन घटाते जाना है एवं पार्श्वनाथ एवं महावीर में $^{1}/_{4}$ योजन, $^{1}/_{4}$ योजन घटाना है। तब पार्श्वनाथ का 1.25 योजन एवं महावीर स्वामी का 1 योजन का था। (ति.प.,4–724-25)

नोट – 4 कोस = 1 योजन, 2 मील = 1 कोस एवं 1.5 किलोमीटर का 1 मील अर्थात् 1 योजन में 12 किलोमीटर होते हैं।

35. किन तीर्थङ्कर ने योग निरोध करने के लिए कितने दिन पहले समवसरण छोड़ा था ?

ऋषभदेव ने 14 दिन पहले, महावीर स्वामी ने 2 दिन पहले एवं शेष सभी तीर्थङ्करों ने 1 माह पहले योग निरोध करने के लिए समवसरण छोड़ दिया था।

36. सबसे कम समय में कौन से तीर्थङ्कर को केवलज्ञान हुआ था ?

मल्लिनाथ को मात्र 6 दिनों में केवलज्ञान हुआ था।

37. कौन से तीर्थङ्कर को सबसे अधिक दिनों में केवलज्ञान हुआ था ?

ऋषभदेव को 1000 वर्ष में केवलज्ञान हुआ था।

38. सबसे कम गणधर कौन से तीर्थङ्कर के थे ?

सबसे कम मात्र 10 गणधर पार्श्वनाथ तीर्थङ्कर के थे।

39. सबसे अधिक गणधर कौन से तीर्थङ्कर के थे ?

सबसे अधिक 116 गणधर सुमतिनाथ तीर्थङ्कर के थे।

40. सभी तीर्थङ्करों के कुल कितने गणधर थे ?

सभी तीर्थङ्करों के कुल 1452 गणधर थे।

41. सबसे ज्यादा शिष्य मण्डली कौन से तीर्थङ्कर की थी ?

सबसे ज्यादा शिष्य मण्डली पद्मप्रभ की 3,30,000 थी।

42. तीर्थङ्कर के सहस्र नामों से स्तुति किसने कहाँ पर की थी ?

सौधर्म इन्द्र ने तीर्थङ्कर की स्तुति केवलज्ञान होने के बाद समवसरण में की थी।

43. पाँच बाल ब्रह्मचारी तीर्थङ्करों के नाम कौन–कौन से हैं ?

वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ एवं महावीर।

44. तीन पदवियों से विभूषित तीर्थङ्करों के नाम ?

शान्तिनाथ, कुंथुनाथ, अरनाथ। ये तीनों तीर्थङ्कर, चक्रवर्ती एवं कामदेव तीनों पदों के धारक थे।

45. किन तीर्थङ्करों पर मुनि अवस्था में उपसर्ग हुआ था ?

सुपार्श्वनाथ, पार्श्वनाथ एवं महावीर।

46. जिसने तीर्थङ्कर प्रकृति का बंध किया वह जीव किस भव में मोक्ष चला जाएगा ?

दो, तीन कल्याणक वाले उसी भव से एवं पाँच कल्याणक वाले तीसरे भव से मोक्ष चले जाएंगे।

47. तीर्थङ्कर प्रकृति का बंध कौन कहाँ करता है ?

कर्मभूमि का मनुष्य केवली,श्रुतकेवली के पादमूल में सोलहकारण भावना तथा विश्व कल्याण की भावना भाता हुआ तीर्थङ्कर प्रकृति का बंध करता है।

48. तीर्थङ्कर चौबीस ही क्यों होते हैं ?

आचार्य सोमदेव से जब यह प्रश्न किया गया तब उनका उत्तर था ''इस मान्यता में कोई अलौकिकता नहीं है, क्योंकि लोक में अनेक ऐसे पदार्थ हैं जैसे – ग्रह, नक्षत्र, राशि, तिथियाँ और तारागण जिनकी संख्या काल योग से नियत है।'' तीर्थङ्कर सर्वोत्कृष्ट होते हैं। अतः उनके जन्मकाल योग भी विशिष्ट उत्कृष्ट ही होना चाहिए या होते हैं । ज्योतिषाचार्यों का (जिनमें स्व.डॉ.नेमीचन्द आरा भी थे) मत है कि प्रत्येक कल्पकाल के दु :षमा–सुषमा काल में ऐसे उत्तम काल योग 24 ही पड़ते हैं, जिनमें तीर्थङ्करों का जन्म होता है या हो सकता है। विष्णु के भी अवतार 24 ही हैं, बौद्धों ने भी 24 बुद्ध और ईसाइयों ने भी 24 ही पुरखे स्वीकार किए हैं।

49. तीस चौबीसी के 720 तीर्थङ्कर कैसे कहे जाते हैं ?

अढ़ाई द्वीप में 5 भरत क्षेत्र और 5 ऐरावत क्षेत्र = कुल 10 क्षेत्र हैं। इनमें प्रत्येक क्षेत्र में तीनों कालों के 72–72 तीर्थङ्कर होते हैं। अतः 10 क्षेत्रों के तीनों काल सम्बन्धी 720 तीर्थङ्कर कहे जाते हैं।

अभ्यास

सही या गलत बताइए –

1. विदेह क्षेत्र में बीस से ज्यादा तीर्थङ्कर नहीं होते हैं।
2. विदेह क्षेत्र में पाँच कल्याणक वाले तीर्थङ्कर नहीं होते हैं।
3. तीर्थङ्कर मात्र एक परमेष्ठी को नमस्कार करते हैं।
4. पश्चिम विदेह के तीर्थङ्करों का जन्माभिषेक पाण्डुक शिला पर होता है।
5. शान्तिनाथ तीर्थङ्कर का समवसरण 4.5 योजन विस्तार वाला था।
6. तीर्थङ्कर के एक भाई होते हैं ।
7. लवण समुद्र में 34 तीर्थङ्कर हो सकते हैं।
8. मल्लिनाथ तीर्थङ्कर एक पद के धारी थे।
9. सबसे ज्यादा गणधर पार्श्वनाथ तीर्थङ्कर के थे।
10. सबसे ज्यादा शिष्य मण्डली पद्मप्रभ तीर्थङ्कर की थी।

अन्यत्र खोजिए –

1. एक और चार कल्याणक वाले तीर्थङ्कर क्यों नहीं होते ? (चिन्तन कीजिए)
2. कौन से आचार्य ने सुपार्श्वनाथ का चिह्न नद्यावर्त एवं शीतलनाथ का स्वस्तिक चिह्न बताया है ? (त्रि.प., 4/611–612)
3. तीर्थङ्करों के रंग के अनुसार चौबीसी किस क्षेत्र में हैं ? (तीर्थयात्रा कीजिए)
4. तीर्थङ्करों का केवलज्ञान के साथ जघन्य एवं उत्कृष्ट काल कितना है ? (ध.पु., 15/67)
5. तीर्थङ्कर प्रकृति का बंध कम–से–कम कितनी आयु में प्रारम्भ हो सकता है ? (गो.क.जी., 93)
6. कौन–कौन सी लेश्याओं के साथ तीर्थङ्कर प्रकृति का बंध होता है ? (गो.क.जी., 119–120)
7. कौन से सम्यग्दर्शन के साथ तीर्थङ्कर प्रकृति का बंध होता है ? (गो.क.जी., 93)
8. भूतकाल एवं भविष्यकाल के तीर्थङ्करों के नाम खोजें ? (धर्मध्यान)
9. तीर्थङ्कर बनने में निमित्त सोलहकारण भावनाओं के नाम व उनकी परिभाषा क्या है ? (सू., 6/24)

अध्याय 5

समवसरण

तीर्थङ्करों को केवल ज्ञान होते ही उनके सातिशय पुण्य से समवसरण की रचना होती है। ऐसे समवसरण की विशेषताओं का वर्णन इस अध्याय में है।

1. समवसरण क्या है ?

तीर्थङ्करों के धर्मोपदेश देने की सभा का नाम समवसरण है।

2. समवसरण की विशेषताएँ बताइए ?

1. तीर्थङ्करों को केवल ज्ञान उत्पन्न होने के बाद सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से कुबेर विशेष रत्न एवं मणियों से समवसरण की रचना करता है।
2. यह समवसरण भूतल से 5000 धनुष ऊपर आकाश के अधर में बारह योजन विस्तृत एक गोलाकार इन्द्र नीलमणि की शिला होती है। इस शिला पर समवसरण की रचना बनाई जाती है। (1 धनुष = 4 हाथ अर्थात् 6 फीट) अतः यह समवसरण 30,000 फीट ऊपर रहता है। (ति.प.,4/724-725)
3. चारों दिशाओं में 20000–20000 सीढ़ियाँ होती हैं, इन सीढ़ियों से बिना परिश्रम के चढ़ जाते हैं। जैसे– आज लिफ्ट से ऊपर चढ़ जाते हैं एवं एसकेलेटर में मात्र खड़े हो जाते हैं और सीढ़ियाँ चलती रहती हैं।
4. प्रत्येक दिशा में सीढ़ियों से लगा एक मार्ग होता है, जो समवसरण के केन्द्र में स्थित गंध कुटी के प्रथम पीठ तक जाता है।
5. समवसरण में आठ भूमियाँ होती हैं – 1. चैत्य प्रासाद भूमि, 2. जल खातिका भूमि, 3. लतावन भूमि, 4. उपवन भूमि, 5. ध्वज भूमि, 6. कल्पवृक्ष भूमि, 7. भवन भूमि, 8. श्री मण्डप भूमि एवं इसके आगे स्फटिक मणिमय वेदी है। इस वेदी के आगे एक के ऊपर एक क्रमशः तीन पीठ होती हैं। प्रथम पीठ, द्वितीय पीठ, तृतीय पीठ के ऊपर ही गंधकुटी होती है। इस गंधकुटी में स्थित सिंहासन में रचे हुए कमल से 4 अङ्गुल ऊपर तीर्थङ्कर अष्ट प्रातिहार्यों के साथ आकाश में विराजमान रहते हैं।
6. समवसरण के बाहरी भाग में मार्ग के दोनों तरफ दो–दो नाट्य शालायें अर्थात् कुल 16 नाट्य शालाएँ होती हैं, जिनमें 32–32 देवांगनाएँ नृत्य करती रहती हैं।
7. इन द्वारों के भीतर प्रविष्ट होने पर कुछ आगे चारों दिशाओं में चार मान स्तम्भ होते हैं, जिन्हें देखने से मानी व्यक्तियों का मान गलित हो जाता है।
8. श्री मण्डप भूमि में स्फटिक मणिमय '16 दीवारों' से विभाजित बारह कोठे होते हैं जिनमें बारह सभाएँ होती हैं। तीर्थङ्कर की दाईं ओर से क्रमशः 1. गणधर एवं समस्त मुनि, 2. कल्पवासी देवियाँ, 3. आर्यिकाएँ एवं श्राविकाएँ, 4. ज्योतिषी देवियाँ, 5. व्यन्तर देवियाँ, 6. भवनवासी देवियाँ, 7. भवनवासी देव, 8. व्यन्तर देव, 9. ज्योतिषी देव, 10. कल्पवासी देव, 11. चक्रवर्ती एवं मनुष्य, 12. पशु–पक्षी बैठते हैं। (ति.प.4/866-872)

9. समवसरण में तीर्थङ्कर के महात्म्य से आतंक, रोग, मरण, भूख, प्यास, सर्दी, गर्मी नहीं लगती है एवं हमेशा बैर रखने वाले सर्प–नेवला, मृग–मृगेन्द्र भी एक साथ बैठते हैं और तीर्थङ्कर का उपदेश सुनते हैं। गुरुवर आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज ने इससे सम्बन्धित एक दोहा लिखा है –

पानी भरते देव हैं, वैभव होता दास।
मृग–मृगेन्द्र मिल बैठते, देख दया का वास॥ (सर्वोदय शतक, 29)

10. योजनों विस्तार वाले समवसरण में प्रवेश करने व निकलने में मात्र अन्तर्मुहूर्त का ही समय लगता है।
11. समवसरण में मात्र संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव ही आते हैं।
12. समवसरण में तीन लोक के जीव आते हैं,क्योंकि अधोलोक से भवनवासी और व्यन्तर देव भी वहाँ आते हैं।

3. समवसरण व्रत के कितने उपवास होते हैं एवं कब से प्रारम्भ होते हैं ?

एक वर्ष पर्यन्त प्रत्येक चतुर्दशी को एक उपवास करें। इस प्रकार 24 उपवास करें। यह व्रत किसी भी चतुर्दशी से प्रारम्भ कर सकते हैं तथा ''ओं ह्रीं जगदापद्विनाशाय सकलगुण करण्डाय श्री सर्वज्ञाय अर्हत्परमेष्ठिने नमः'' इस मन्त्र का त्रिकाल जाप करें।

अभ्यास

सही या गलत बताइए –

1. छिपकली समवसरण में जाती है।
2. समवसरण में ब्रह्मचारी जी मुनियों की सभा में बैठते हैं।
3. समवसरण में कुल 20,000 सीढ़ियाँ होती हैं।

अन्यत्र खोजिए –

1. समवसरण में 12 सभा 16 दीवारों से कैसे विभाजित होती हैं ? (चिन्तन कीजिए)
2. समवसरण में कितने कोट एवं कितनी वेदी होती हैं ? (ति.प., 4/731)
3. समवसरण में कौन से भाव वेदी कितनी सभाओं में बैठेंगे ? (चिन्तन कीजिए)
4. मिथ्यादृष्टि समवसरण में जाते हैं, कोई सशक्त कारण बताइए ?

(ध.पु., 3/157, उ.पु. 171–198, म.पु.म., 1/30/264–265)

5. मुनियों की सभा में विराजमान 7 प्रकार के मुनियों के क्या नाम हैं ? (त्रि.प., 4/1098)

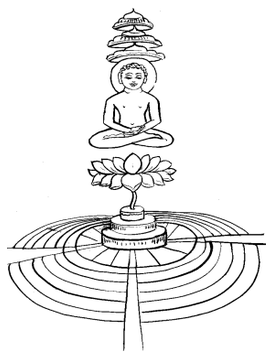

अध्याय 6

पञ्च कल्याणक

प्राणीमात्र के कल्याण की भावना एवं सोलहकारण भावना भाने से संसार अवस्था में सर्वोच्च पद तीर्थङ्कर का प्राप्त होता है। उनके पाँच कल्याणक होते हैं। किस कल्याणक में क्या - क्या होता है, इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. कल्याणक किसे कहते हैं ?

तीथङ्करों के गर्भ, जन्म, तप (दीक्षा), ज्ञान एवं निर्वाण के समय इन्द्रों, देवों एवं मनुष्यों के द्वारा विशेष रूप से जो उत्सव मनाया जाता है, उसे कल्याणक कहते हैं।

2. पाँच कल्याणक कौन-कौन से होते हैं ?

गर्भकल्याणक, जन्मकल्याणक, तपकल्याणक (दीक्षाकल्याणक), ज्ञानकल्याणक एवं मोक्षकल्याणक।

3. गर्भ कल्याणक किसे कहते हैं ?

सौधर्म इन्द्र अपने दिव्य अवधिज्ञान से तीर्थङ्कर के गर्भावतरण को निकट जानकर कुबेर को तीर्थङ्कर के माता - पिता के लिए नगरी का निर्माण करने एवं घर के आँगन में प्रतिदिन तीन बार साढ़े तीन करोड़ की संख्या का परिमाण लिए हुए धन की धारा (रत्नों की वर्षा)[1] करने की आज्ञा प्रदान करता है। इस प्रकार रत्नों की वर्षा गर्भ में आने से 6 माह पूर्व से जन्म होने तक अर्थात् लगभग 15 माह तक निरन्तर होती है। तीर्थङ्कर की माता गर्भ धारण के पूर्व रात्रि के अन्तिम पहर में अत्यन्त सुहावने, मनभावन और आह्लादकारी क्रमशः16 स्वप्नों को देखती है, ये स्वप्न तीर्थङ्कर के गर्भावतरण के सूचक होते हैं। जैसे ही तीर्थङ्कर का गर्भावतरण होता है, स्वर्ग से सौधर्म इन्द्र सहित अनेक देव उस नगर की तीन पक्रिमा कर माता - पिता को नमस्कार करते हैं। गर्भ स्थित तीर्थङ्कर की स्तुति कर महान् उत्सव मनाते हैं। गर्भकल्याणक का उत्सव पूर्ण कर सौधर्म इन्द्र श्री आदि देवकुमारियों को जिन माता के गर्भ शोधन के लिए नियुक्त करता है। ये देवकुमारियाँ जिनमाता की सेवा करती हैं एवं माता का मन धर्म चर्चा में लगाए रखती हैं और सौधर्म इन्द्र देवों सहित अपने स्थान को वापस चला जाता है।

4. जन्मकल्याणक किसे कहते हैं ?

गर्भावधि पूर्ण होते ही जिनमाता तीर्थङ्कर बालक को जन्म देती है। जन्म होते ही तीनों लोक में आनन्द और सुख का प्रसार होता है। यहाँ तक कि जहाँ चौबीसों घंटे मार-काट चल रही है, वहाँ नरकों में भी नारकी जीवों को एक क्षण के लिए अपूर्व सुख की प्राप्ति होती है एवं स्वर्ग के इन्द्रों के आसन कम्पायमान हो जाते हैं तथा कल्पवासी, ज्योतिषी, व्यन्तर और भवनवासी देवों के यहाँ क्रमशः घंटा, सिंहनाद, भेरी और शंख अपने आप ही बजने लगते हैं। इन सब कारणों से इन्द्रों एवं देवों को तीर्थङ्कर के जन्म का निश्चय हो जाता है और तत्काल ही वे अपने आसन से नीचे उतर कर सात कदम आगे चलकर परोक्षरूप से तीर्थङ्कर (बालक) को नमस्कार कर उनकी स्तुति करते हैं। तदनन्तर सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से सात प्रकार की देव सेना जय– जय करती हुई जन्म नगरी की

1. हरिवंश पुराण, 37/2, 3/471

ओर गमन करती है। सौधर्म इन्द्र भी अपनी इन्द्राणी के साथ ऐरावत हाथी पर सवार होकर जन्म नगरी को गमन करते हैं। सौधर्म इन्द्र के साथ सारे देवगण जन्म नगरी की तीन प्रदक्षिणा देते हैं। तदनन्तर शची प्रसूति गृह में प्रच्छन्न रूप से पहुँचकर जिन माता की तीन प्रदक्षिणा देकर, जिनमाता को मायामयी निद्रा से निद्रित कर, अत्यन्त हर्ष और उल्लास के साथ जिन बालक की छवि को निहारती हुई बालक को लाकर सौधर्म इन्द्र को सौंप देती है एवं वहाँ एक मायामयी बालक को सुला देती है। सौधर्म इन्द्र तीर्थङ्कर बालक का दर्शन कर भाव विभोर हो जाता है एवं 1000 नेत्र बनाकर तीर्थङ्कर बालक का रूप देखता है। तत्पश्चात् ऐरावत हाथी पर आरूढ़ होकर जिन बालक को अपनी गोद में बिठाकर सुमेरु पर्वत पर जाकर पाण्डुकशिला पर क्षीरसागर के जल से तीर्थङ्कर बालक का 1008 कलशों से अभिषेक करता है, शची बालक को वस्त्राभूषणों से सुशोभित करती है। पश्चात् इन्द्र बालक के दाहिने पैर के अंगूठे पर जो चिह्न देखता है वही चिह्न उन तीर्थङ्कर का घोषित कर तीर्थङ्कर का नामकरण करता है। तत्पश्चात् सौधर्म इन्द्र ऐरावत हाथी पर बालक को विराजमान कर वापस जन्म नगरी को आता है। इन्द्राणी, माता के पास जाकर मायामयी बालक को उठा लेती है और माता की मायामयी निद्रा को दूर कर जिन बालक को माता के पास रखती है। जिनमाता अत्यन्त प्रसन्न होकर बालक का दर्शन करती है। इन्द्र एवं देवगण तीर्थङ्कर के माता – पिता का विशेष सत्कार कर वापस अपने इन्द्रलोक आ जाते हैं ।

5. तपकल्याणक किसे कहते हैं ?

जन्मकल्याणक के बाद तीर्थङ्कर का बाल्यकाल व्यतीत होता है एवं युवा होने पर राज्यपद को स्वीकार करते हैं। (वर्तमान चौबीसी में 5 तीर्थङ्करों ने राज्यपद स्वीकार नहीं किया) किसी निमित्त से उन्हें वैराग्य उत्पन्न हो जाता है तब उसी समय ब्रह्मस्वर्ग से लौकान्तिक देव आकर तीर्थङ्कर के वैराग्य की प्रशंसा करते हुए स्तुति करते हैं । तत्पश्चात् सौधर्म इन्द्र क्षीरसागर के जल से वैरागी तीर्थङ्कर का अभिषेक करता है, जिसे दीक्षाभिषेक कहते हैं । तत्पश्चात् कुबेर द्वारा लायी गई पालकी में तीर्थङ्कर स्वयं बैठ जाते हैं, उस पालकी को मनुष्य एवं विद्याधर 7-7 कदम तक ले जाते हैं, इसके बाद देवतागण उस पालकी को आकाश मार्ग से दीक्षावन तक ले जाते हैं। वहाँ देवों द्वारा रखी हुई चन्द्रकान्तमणि की शिला पर विराजमान हो पद्मासन मुद्रा में पूर्वाभिमुख होकर सिद्ध परमेष्ठी को नमस्कार करके पञ्चमुष्ठी केशलोंच करके वस्त्राभूषण का त्यागकर जिनमुद्रा को धारण करते हुए समस्त पापों को त्याग कर महाव्रतों का संकल्प करते हैं। सौधर्म इन्द्र केशों (बालों) को रत्न के पिटारे में रखकर क्षीरसागर में विसर्जित करता है। दीक्षोपरांत तीर्थङ्कर (मुनि) की विशेष पूजा– भक्ति कर देवगण अपने-अपने स्थान को चले जाते हैं। (प.पु.3/263-265)

6. ज्ञानकल्याणक किसे कहते हैं ?

तीर्थङ्कर (मुनि) दीक्षा लेने के बाद मौन होकर घोर तपस्या करते हुए धर्म्यध्यान को बढ़ाते हुए क्षपक श्रेणी चढ़ते हुए, 10 वें गुणस्थान के अन्त में मोहनीय कर्म का पूर्ण क्षय करते हुए 12 वें गुणस्थान के अन्तिम समय में ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्म का क्षय होते ही केवलज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। जिससे जगत् के समस्त चराचर द्रव्यों को और उनकी अनन्त पर्यायों को युगपत् जानने लगते हैं। केवलज्ञान उत्पन्न होते ही देव अपने-अपने यहाँ प्रकट होने वाले चिह्नों से एवं सौधर्म इन्द्र का आसन कम्पायमान होने से अवधिज्ञान से जान लेते हैं

कि तीर्थङ्कर (मुनि) को केवलज्ञान प्राप्त हो गया है, अतः इन्द्र एवं देव अपने स्थान से उठकर सात कदम आगे बढ़कर तीर्थङ्कर को नमस्कार करते हैं। सौधर्म इन्द्र सभी देवों के साथ तीर्थङ्कर के दर्शन-पूजन करने आते हैं एवं सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से कुबेर समवसरण की रचना करता है। जिसमें तीर्थङ्कर विराजमान होते हैं, इन्द्र, देव, मनुष्य तथा तिर्यञ्च तीर्थङ्कर के दर्शन–पूजन करते एवं धर्मोपदेश सुनते हैं।

7. तीर्थङ्करों की देशना दिन में कितने बार होती है एवं कितने समय तक होती है ?

तीर्थङ्करों की देशना दिन में चार बार होती है – प्रातः, मध्याह्न, सायंकाल एवं मध्यरात्रि में तथा चक्रवर्ती आदि विशेष पुरुष के आने से अकाल में भी देशना हो जाती है। एक बार में 3 मुहूर्त अर्थात् 2 घंटा 24 मिनट तक देशना होती है, जिसे दिव्यध्वनि कहते हैं। (गो.जी.जी. 356)

8. मोक्षकल्याणक किसे कहते हैं ?

तीर्थङ्कर का जब मोक्ष का समय निकट आ जाता हैं, तब वे समवसरण को छोड़कर जहाँ से निर्वाण (मोक्ष) होना है, वहाँ जाकर योग निरोध कर 14 वें गुणस्थान में आते ही पाँच ह्रस्व अक्षर (अ,इ,उ,ऋ,लृ) के उच्चारण में जितना समय लगता है उसके अन्त में ही चार अघातिया कर्मों का क्षय कर निर्वाण को प्राप्त हो जाते हैं। उसी समय इन्द्र एवं देव तीर्थङ्कर की निर्वाण भूमि में आते हैं और तीर्थङ्कर के परम पवित्र शरीर को रत्नमयी पालकी में विराजमान कर नमस्कार करते हैं। तदनन्तर अग्निकुमार देव अपने मुकुट से उत्पन्न अग्नि के द्वारा तीर्थङ्कर के शरीर का अन्तिम संस्कार करते हैं । पश्चात् उस भस्म को मस्तक पर लगाकर उन जैसा बनने की भावना भाते हैं। फिर समस्त इन्द्र मिलकर आनन्द नाटक करते हैं। इस प्रकार सभी देव विधिपूर्वक तीर्थङ्कर के निर्वाणकल्याणक की पूजन कर एवं उस स्थान पर वज्रसूची से चरण चिह्न बनाकर अपने–अपने स्थान वापस चले जाते हैं। (म.पु.47/343-354)

अभ्यास

सही या गलत बताइए-

1. तीर्थङ्कर के जन्म के समय मात्र नारकियों को एक क्षण अपूर्व सुख होता है।
2. तीर्थङ्कर के जन्म के समय सौधर्म इन्द्र का आसन गिर जाता है।

अन्यत्र खोजिए-

1. जब सौधर्म इन्द्र बालक तीर्थङ्कर को ऐरावत हाथी पर ले जाता है उस समय ऐशान इन्द्र क्या करता है ? (पा.च., 12/45)
2. निर्वाण होते ही तीर्थङ्कर के नख–केश शेष रह जाते हैं , ऐसा कौन से आचार्य ने किस ग्रन्थ में लिखा है ? (प्रवचन सार टीका, 129)
3. निर्वाण होते ही तीर्थङ्कर का पूर्ण शरीर विलीन हो जाता है, ऐसा कौन से ग्रन्थ में किसने कहा है ? (नेमिनाथ पु., ब्र. नेमिदत्त 16/265)
4. सबसे ज्यादा एवं सबसे कम दिनों तक रत्नों की वर्षा किस तीर्थङ्कर के समय हुई ? (चिन्तन कीजिए)
5. पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में नंदा–सुनंदा के पात्र क्यों नहीं बनाते हैं ? (चिन्तन कीजिए)

अध्याय 7
तीर्थङ्कर ऋषभदेव

राजा नाभिराय एवं रानी मरुदेवी के इकलौते पुत्र राजकुमार ऋषभदेव ने संसारी प्राणी को आजीविका का क्या साधन बताया तथा उनका जीवन परिचय एवं चारित्र के विकास का वर्णन इस अध्याय में है।

भोगभूमि का अवसान हो रहा था और कर्मभूमि का प्रारम्भ। उसी समय बालक ऋषभ का जन्म अयोध्या में हुआ था। उनके पिता राजा नाभिराय एवं माता रानी मरुदेवी थीं। पहले भोगभूमि में भोग सामग्री कल्पवृक्षों से मिलती थी। कर्मभूमि प्रारम्भ होते ही कल्पवृक्षों ने भोग सामग्री देना बंद कर दिया था, जिससे जनता में त्राहि-त्राहि मच गई। सारे मानव इस समस्या को लेकर राजा नाभिराय के पास पहुँचे। राजा नाभिराय ने कहा इसका समाधान अवधिज्ञानी राजकुमार ऋषभदेव करेंगे। राजकुमार ऋषभदेव ने दुःखी जनता को देखकर आजीविका चलाने के लिए षट्कर्म का उपदेश दिया। जो निम्न प्रकार हैं-

1. **असि** - असि का अर्थ तलवार। जो देश की रक्षा के लिए तलवार लेकर देश की सीमा पर खड़े रहकर देश की रक्षा करते हैं, ऐसे सैनिक एवं नगर की रक्षा के लिए भी सिपाही एवं गोरखा आदि रहते हैं।
2. **मसि** - मुनीमी करने वाले, लेखा-जोखा रखने वाले, चार्टर्ड एकाउन्टेंट एवं बैंक कैशियर आदि।
3. **कृषि**- जीव हिंसा का ध्यान रखते हुए खेती करना अर्थात् अहिंसक खेती करना एवं पशुपालन करना।
4. **विद्या**- बहत्तर कलाओं को करना अथवा वर्तमान में आई.ए.एस., आई.पी.एस., लेक्चरार, एम.बी.ए., इंजीनियरिंग, डॉक्टरी, एल.एल.बी. आदि शैक्षणिक कार्य करना।
5. **शिल्प**- सुनार, कुम्हार, चित्रकार, कारीगर, दर्जी, नाई, रसोइया, मूर्तिकार, मकान, मन्दिर आदि के नक्शे बनाना आदि।
6. **वाणिज्य**- सात्त्विक और अहिंसक व्यापार, उद्योग करना।

इस उपदेश से मानवों में शान्ति आई और वे इस प्रकार जीवन जीने लगे जो आज तक इसी रूप से चला आ रहा है। कुछ समय के पश्चात् राजकुमार ऋषभदेव का विवाह नंदा एवं सुनंदा नामक दो कन्याओं से हुआ। पिता ने समय देखकर राजकुमार ऋषभदेव का राज्य तिलक कर दिया राजा ऋषभदेव के 101 पुत्र एवं 2 पुत्रियाँ थीं। राजा ऋषभदेव ने अपनी दोनों पुत्रियों को अक्षर एवं अङ्क विद्या सिखाई। ब्राह्मी को अक्षर एवं सुन्दरी को अङ्क विद्या सिखाई जो आज तक चली आ रही है।

एक समय राजा ऋषभदेव अपने राजदरबार में स्वर्ग की अप्सरा नीलाञ्जना का नृत्य देख रहे थे कि उसका अचानक मरण हो गया। इन्द्र ने तुरन्त दूसरी अप्सरा भेजी, किन्तु राजा ऋषभदेव ने अवधिज्ञान से जान लिया कि प्रथम अप्सरा का मरण हो गया है और इन्द्र ने चालाकी से दूसरी अप्सरा भेज दी है। अप्सरा का मरण जानकर उन्हें वैराग्य हो गया और राजपाट भरत-बाहुबली को देकर, दिगम्बरी दीक्षा धारण कर ली। छः माह का उपवास किया। जब वे पारणा (आहार) करने निकले तब कोई भी श्रावक नवधाभक्ति नहीं जानता था। अतः 7 माह 9 दिन के उपवास और हो गए। विहार करते-करते एक दिन मुनि ऋषभदेव का हस्तिनापुर में

आगमन हुआ। मुनि श्री ऋषभदेव का दर्शन करते ही राजा श्रेयांस को जातिस्मरण हो गया कि पिछले आठवें भव में मैंने चारणऋद्धिधारी मुनिराज को नवधाभक्ति पूर्वक आहार दान दिया था। इसी नवधाभक्ति के न मिलने से ऋषभदेव मुनिराज का आहार नहीं हो पा रहा है। फिर क्या था। जब ऋषभदेव मुनि आहार को निकले तो राजा श्रेयांस एवं राजा सोम ने प्रथम तीर्थङ्कर की प्रथम पारणा वैशाख शुक्ल तीज के दिन कराई। तभी से अक्षय तृतीया पर्व प्रचलित है।

एक हजार वर्ष तपस्या करने के बाद मुनि ऋषभदेव को केवलज्ञान की प्राप्ति हुई और समवसरण में दिव्यध्वनि द्वारा धर्म उपदेश दिया। कालांतर में आयु के चौदह दिन शेष रहने पर वे समवसरण को छोड़कर कैलास पर्वत पर चले गए। वहाँ योग निरोध किया और माघ कृष्ण चतुर्दशी को सिद्ध गति अर्थात् मोक्ष को प्राप्त किया।

1. **बालक ऋषभदेव कहाँ से आए थे ?**
   बालक ऋषभदेव सर्वार्थसिद्धि विमान से आए थे।
2. **तीर्थङ्कर ऋषभदेव के प्रचलित नाम बताइए ?**
   श्री आदिनाथ, श्री वृषभनाथ, श्री पुरुदेव, श्री आदि ब्रह्मा, श्री प्रजापति आदि।
3. **बालक ऋषभदेव का जन्म कहाँ हुआ था और उस नगरी का दूसरा नाम क्या था ?**
   बालक ऋषभदेव का जन्म अयोध्या में हुआ था और उस नगरी का दूसरा नाम विनीता नगरी था।
4. **मुनि ऋषभदेव को दीक्षा के कितने दिन बाद आहार मिला था ?**
   मुनि ऋषभदेव को दीक्षा के 1 वर्ष 39 दिन बाद आहार मिला था।
5. **तीर्थङ्कर ऋषभदेव के यक्ष-यक्षिणी का क्या नाम था ?**
   तीर्थङ्कर ऋषभदेव के यक्ष का नाम गौमुख, यक्षिणी का नाम चक्रेश्वरी था।
6. **राजा ऋषभदेव के कौन से पुत्र सर्वप्रथम मोक्ष गए ?**
   राजा ऋषभदेव के अनन्तवीर्य अथवा बाहुबली (इस सम्बन्ध में दो मत हैं) पुत्र सर्वप्रथम मोक्ष गए।
7. **भारत देश का नाम भरत वर्ष कब से है ?**
   अनादिकाल से इस क्षेत्र को भरत वर्ष ही कहते हैं।
8. **नारी शिक्षा के प्रथम उद्घोषक कौन थे ?**
   नारी शिक्षा के प्रथम उद्घोषक राजा ऋषभदेव थे।
9. **ऋषभदेव के पाँच कल्याणक किस-किस तिथि में हुए थे ?**
   गर्भकल्याणक - आषाढ़ कृष्ण द्वितीया।
   जन्मकल्याणक - चैत्र कृष्ण नवमी।
   दीक्षाकल्याणक - चैत्र कृष्ण नवमी।
   ज्ञानकल्याणक - फाल्गुन कृष्ण एकादशी।
   मोक्षकल्याणक - माघ कृष्ण चतुर्दशी।
10. **राजा ऋषभदेव ने कौन-कौन सी वर्ण व्यवस्था दी थी ?**
    राजा ऋषभदेव ने तीन वर्णों की व्यवस्था की थी-क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र।

11. राजा ऋषभदेव की दीक्षा स्थली, दीक्षा वन एवं दीक्षा वृक्ष का क्या नाम है ?
राजा ऋषभदेव की दीक्षा स्थली-प्रयाग, दीक्षा वन-सिद्धार्थ वन एवं दीक्षा वृक्ष-वट वृक्ष है।

12. तीर्थङ्कर ऋषभदेव के मुख्य गणधर, मुख्य गणिनी एवं मुख्य श्रोता कौन थे ?
मुख्य गणधर ऋषभसेन, मुख्य गणिनी ब्राह्मी एवं मुख्य श्रोता भरत थे।

13. तीर्थङ्कर ऋषभदेव का तीर्थकाल कितने वर्ष रहा था ?
तीर्थङ्कर ऋषभदेव का तीर्थकाल 50 लाख कोटि सागर+ 1 पूर्वाङ्ग प्रमाण रहा था। (ति.प.4/1261)

14. मुनि ऋषभदेव को केवलज्ञान कहाँ एवं किस वृक्ष के नीचे हुआ था ?
मुनि ऋषभदेव को केवलज्ञान शकटावन (पुरिमतालपुर) में एवं वट वृक्ष के नीचे हुआ था।

15. तीर्थङ्कर ऋषभदेव के कितने गणधर थे ?
तीर्थङ्कर ऋषभदेव के 84 गणधर थे।

16. ऋषभदेव के समवसरण में कितने मुनि, आर्यिकाएँ, श्रावक एवं श्राविकाएँ थीं ?
ऋषभदेव के समवसरण में 84,000मुनि,3,50,000 आर्यिकाएँ, 3 लाख श्रावक एवं 5 लाख श्राविकाएँ थीं।

17. तीर्थङ्कर ऋषभदेव ने तीर्थङ्कर प्रकृति का बंध कब और किसके पादमूल में किया था ?
पूर्व के तीसरे भव में जब ऋषभदेव वज्रनाभि चक्रवर्ती की पर्याय में थे तब सब कुछ त्यागकर वज्रसेन तीर्थङ्कर,जो पिता थे,उनके समवसरण में दिगम्बरी दीक्षा धारण की थी। उसी समय उन्हें तीर्थङ्कर प्रकृति का बंध हुआ था।

18. तीर्थङ्कर ऋषभदेव की आयु एवं ऊँचाई कितनी थी ?
तीर्थङ्कर ऋषभदेव की आयु 84 लाख पूर्व एवं ऊँचाई 500 धनुष थी।

अभ्यास

सही या गलत बताइए-

1. ऋषभदेव ने ब्राह्मी को अङ्क और सुंदरी को अक्षर विद्या सिखाई थी।
2. ऋषभदेव ने राजा बनने से पहले षट्कर्म का उपदेश नहीं दिया था।
3. ऋषभदेव को दूसरी नीलाञ्जना को देखते ही वैराग्य हो गया था।
4. ऋषभदेव ने चार वर्णों की व्यवस्था नहीं की थी।
5. ऋषभदेव ने अपने पिता के ही (गृहस्थ अवस्था के) समवसरण में तीर्थङ्कर प्रकृति का बंध किया था।
6. ऋषभदेव के समवसरण में आठ लाख श्रावक - श्राविकाएँ थीं।

अन्यत्र खोजिए-

1. ऋषभदेव के पूर्व दस भव कौन-कौन से थे ? (म.पु., 47/357–359)
2. राजा ऋषभदेव की कितनी आयु भोगों के साथ निकली थी ? (आदि.पु., 16/129, 268)
3. नंदा एवं सुनंदा के कितने पुत्र एवं पुत्रियाँ थीं ? (आ.पु., 16/4–7)
4. राजा ऋषभदेव के नमि और विनमि कौन थे ? (आ.पु., 15/69–70, 18/91–92)

अध्याय 8

तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ

चौबीस तीर्थङ्करों में सबसे ज्यादा उपसर्गों को सहन करने वाले तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ का जीवन परिचय एवं चारित्र के विकास का वर्णन इस अध्याय में है।

बालक पार्श्वनाथ का जन्म ईसा पूर्व 877 सन् में बनारस में हुआ था। जब बालक पार्श्वकुमार 16 वर्ष के हो गए तब वे एक दिन क्रीड़ा करने के लिए अपने साथियों के साथ नगर के बाहर गए। वहाँ क्या देखते हैं कि एक तापसी जो उनका नाना महीपाल था, नानी के वियोग में पञ्चाग्नि तप तपने वाला तापसी हो गया था। वह अग्नि में लकड़ी डाल रहा था। पार्श्वकुमार ने उसे रोका और कहा कि तुम क्या कर रहे हो ? इसमें एक नाग-नागिन का युगल जल रहा है। जब जलती हुई लकड़ी को चीरा गया तब सचमुच वह जोड़ा जल रहा था। पार्श्वकुमार ने उस युगल को उपदेश दिया। उपदेश सुनते-सुनते उनका मरण हुआ और वह युगल धरणेन्द्र–पद्मावती हुए। कालान्तर में वह तापसी भी संक्लेश को प्राप्त होकर मरण को प्राप्त हुआ और वह संवर नामक ज्योतिषी देव हुआ।

30 वर्ष की आयु में पार्श्वकुमार को वैराग्य उत्पन्न हो गया और उन्होंने समस्त परिग्रह को छोड़कर दिगम्बरी दीक्षा धारण कर ली तथा 4 माह का छद्मस्थ काल रहा और 4 माह के अन्त में 7 दिनों का योग लेकर वे धर्म्यध्यान को बढ़ाते हुए विराजमान थे, तभी आकाश मार्ग से संवर देव विमान में जा रहा था। उसका विमान रुक गया और उसने विभङ्गज्ञान से इसका कारण जाना तो पूर्व भव का बैर स्पष्ट दिखने लगा तब उस दुर्बुद्धि ने उन पर अनेक प्रकार के उपसर्ग प्रारम्भ कर दिए। प्रत्येक कर्म की अति का होना इति का सूचक है। धरणेन्द्र-पद्मावती ने अवधिज्ञान से यह उपसर्ग जाना तो वह अपने उपकारक पार्श्वनाथ मुनि की रक्षा के लिए आए और उनकी रक्षा की। पार्श्वप्रभु ध्यान में लीन रहे और उन्होंने केवलज्ञान को प्राप्त कर लिया। केवलज्ञान प्राप्त होते ही उपसर्ग दूर हुआ और वह कमठ का जीव संवर भी प्रभु चरणों में अपने किए हुए कर्म की क्षमा माँगता रहा और उसे भी सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हो गई।

केवलज्ञान होते ही समवसरण की रचना हुई और प्रभु ने अनेक स्थानों पर जाकर धर्मोपदेश दिया। अन्त में आयु का एक माह शेष रहने पर योग निरोध करने के लिए समवसरण छोड़कर सम्मेदशिखरजी पधारे और वहीं से मोक्ष प्राप्त किया।

1. **बालक पार्श्वनाथ कौन-से स्वर्ग से आए थे ?**
   प्राणत स्वर्ग (चौदहवें स्वर्ग) से आए थे।
2. **पार्श्वकुमार का अपर नाम क्या था ?**
   पार्श्वकुमार का अपर नाम सुभौम था।[1] (उत्तरपुराण,73/103)
3. **पार्श्वकुमार के माता - पिता का क्या नाम था ?**
   माता वामादेवी (ब्राह्मी) पिता विश्वसेन (अश्वसेन) था।
4. **पार्श्वकुमार का जन्म किस वंश में हुआ था ?**
   पार्श्वकुमार का जन्म उग्रवंश में हुआ था।

---

1. चौबीसी पुराण में मित्र का नाम सुभौम लिखा है।

5. पार्श्वनाथ के कल्याणक किन - किन तिथियों में हुए थे ?

गर्भकल्याणक - वैशाख कृष्ण द्वितीया।
जन्मकल्याणक - पौष कृष्ण एकादशी।
दीक्षाकल्याणक - पौष कृष्ण एकादशी।
ज्ञानकल्याणक - चैत्र कृष्ण चतुर्थी ।
मोक्षकल्याणक - श्रावण शुक्ल सप्तमी।

6. पार्श्वकुमार की दीक्षा स्थली, दीक्षा वन एवं दीक्षा वृक्ष का क्या नाम था ?

पार्श्वकुमार की दीक्षा स्थली-वाराणासी, दीक्षा वन - अश्ववन/अश्वत्थ वन एवं दीक्षा वृक्ष-धाव/देवदारु वृक्ष।

7. मुनि पार्श्वनाथ की पारणा कहाँ एवं किसके यहाँ हुई थी ?

मुनि पार्श्वनाथ की पारणा गुलमखेट (द्वारावती) में राजा ब्रह्मदत्त के यहाँ हुई।

8. मुनि पार्श्वनाथ को केवलज्ञान कहाँ एवं किस वृक्ष के नीचे हुआ था ?

मुनि पार्श्वनाथ को केवलज्ञान अश्ववन (काशी) में देवदारु वृक्ष के नीचे हुआ था।

9. तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ की आयु एवं ऊँचाई कितनी थी ?

तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ की आयु 100 वर्ष एवं ऊँचाई 9 हाथ थी।

10. तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ को मोक्ष कहाँ से हुआ था ?

तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ को मोक्ष सम्मेदशिखरजी के स्वर्णभद्र कूट से हुआ था।

11. तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ ने कितने वर्ष उपदेश दिया था ?

तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ ने 69 वर्ष 7 माह उपदेश दिया था ?

12. तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ के मुख्य गणधर, मुख्य गणिनी एवं मुख्य श्रोता कौन थे ?

तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ के मुख्य गणधर स्वयंभू, मुख्य गणिनी सुलोचना एवं मुख्य श्रोता महासेन थे।

13. तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ के समवसरण में कितने मुनि, आर्यिका, श्रावक और श्राविकाएँ थीं ?

तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ के समवसरण में 16,000 मुनि, 38,000 आर्यिकाएँ, 1 लाख श्रावक और 3 लाख श्राविकाएँ थीं।

14. तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ के यक्ष-यक्षिणी का क्या नाम था ?

तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ के यक्ष मातंग, यक्षिणी पद्मावती थी।

15. तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ एवं कमठ के पूर्व भव कौन-कौन से थे ?

	पार्श्वनाथ	**कमठ**
1.	विश्वभूति ब्राह्मण का पुत्र मरुभूति	विश्वभूति ब्राह्मण का पुत्र मरुभूति का बड़ा भाई कमठ
2.	वज्रघोष हाथी	कुक्कुट सर्प
3.	सहस्रार स्वर्ग (12 वाँ) में देव	धूम प्रभा नरक
4.	अग्निवेग विद्याधर	अजगर
5.	अच्युत स्वर्ग (16 वाँ) में देव	छठवें नरक

6.	वज्रनाभि चक्रवर्ती	कुरङ्ग भील
7.	मध्यम ग्रैवेयक में अहमिन्द्र	सप्तम नरक
8.	आनन्द राजा	सिंह
9.	आनत नामक स्वर्ग (13 वाँ) के प्राणत विमान में इन्द्र	पाँचवें नरक
10.	तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ	महीपाल राजा एवं संवर नामक ज्योतिषी देव (पा.च.)

16. तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ का तीर्थकाल कितने वर्ष रहा था ?

तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ का तीर्थकाल 278 वर्ष रहा था। (ति.प.,4/1285)

17. कमठ के जीव ने कितनी बार पार्श्वनाथ के जीव को प्राणों से रहित किया था ?

कमठ के जीव ने पाँच बार पार्श्वनाथ के जीव को प्राणों से रहित किया था।

अभ्यास

सही या गलत बताइए-

1. पार्श्वकुमार का जन्म उग्रवंश में नहीं हुआ था।
2. पार्श्वकुमार का नाना कमठ का ही जीव हुआ था।
3. मुनि पार्श्वनाथ को केवलज्ञान पौष कृष्ण एकादशी को हुआ था।
4. मुनि पार्श्वनाथ मनः पर्यय ज्ञान के साथ 120 दिन रहे थे।
5. तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ के चार कल्याणक कृष्ण पक्ष में हुए थे।

अन्यत्र खोजिए-

1. कमठ और मरुभूति की स्त्रियों के क्या नाम थे ? (पा.च., 1/69)
2. मरुभूति जिसके यहाँ मन्त्री था उस राजा का क्या नाम था ? (पा.च., 1/64)
3. तीर्थङ्कर नेमिनाथ के निर्वाण होने के पश्चात् कितने वर्ष पश्चात् बालक पार्श्वकुमार का जन्म हुआ था ? (त्रि.प., 4/582, 1249)
4. महापुरुषों के साथ मित्रता तो दूर रही शत्रुता भी संसार-वृद्धि का कारण नहीं होती है कैसे ? (चिन्तन कीजिए – कमठ – पार्श्वनाथ)
5. धरणेन्द्र - पद्मावती किस - किस निकाय (देवों) में हैं। (त्रि.सा., 209–211, त्रि.प., 4/11, त्रि.प., 4/937–939)
6. तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ की प्रतिमा पर फण किस का प्रतीक है ? (चिन्तन कीजिए)

अध्याय 9
तीर्थङ्कर महावीर

अनेक नामों को धारण करने वाले वर्तमान शासन नायक अन्तिम तीर्थङ्कर भगवान् महावीर का जीवन परिचय एवं चारित्र के विकास का वर्णन इस अध्याय में है।

1. बालक महावीर का जन्म कहाँ हुआ था ?

बालक महावीर का जन्म कुण्डग्राम (वैशाली) बिहार में हुआ था।

2. तीर्थङ्कर महावीर के पाँच कल्याणक किस–किस तिथि में हुए थे ?

गर्भकल्याणक	-	आषाढ़ शुक्ल षष्ठी, शुक्रवार, 17 जून, ई.पू. 599 में।
जन्मकल्याणक	-	चैत्र शुक्ल त्रयोदशी, सोमवार, 27 मार्च, ई.पू. 598 में।
दीक्षाकल्याणक	-	मगसिर कृष्ण दशमी , सोमवार, 29 दिसम्बर, ई.पू.569 में।
ज्ञानकल्याणक	-	वैशाख शुक्ल दशमी, रविवार, 23 अप्रैल, ई.पू.557 में।
मोक्षकल्याणक	-	कार्तिक कृष्ण अमावस्या, मङ्गलवार 15 अक्टूबर ई.पू. 527 में विक्रम सं.पूर्व 470 एवं शक पूर्व 605 में । (तीर्थ.महा.और उनकी आचार्य परम्परा, भाग-1)

3. बालक महावीर कहाँ से आए थे ?

बालक महावीर अच्युत स्वर्ग के पुष्पोत्तर विमान से आए थे।

4. बालक महावीर के माता-पिता एवं दादा-दादी का क्या नाम था ?

बालक महावीर की माता का नाम त्रिशला, पिता का नाम राजा सिद्धार्थ तथा दादा का नाम सर्वार्थ, दादी का नाम श्रीमती था।

5. त्रिशला के माता-पिता एवं दादा-दादी का क्या नाम था ?

त्रिशला की माता का नाम सुभद्रा देवी, पिता का नाम राजा चेटक, दादा का नाम राजा केक तथा दादी का नाम यशोमति था।

6. राजा चेटक के कितने पुत्र एवं पुत्रियाँ थीं ?

राजा चेटक के दस पुत्र- धनदत्त, धनभद्र, उपेन्द्र, सुदत्त, सिंहदत्त, सुकुम्भोज, अकम्पन, पतंगक, प्रभंजन और प्रभास तथा पुत्रियाँ- त्रिशला, मृगावती, सुप्रभा, प्रभावति, चेलना, ज्येष्ठा और चंदना। चेलना का अपर नाम वसुमति भी था।

7. चेटक का अर्थ क्या होता है ?

अनेक शत्रुओं को चेटी या दास बना लेने के कारण वह चेटक कहलाने लगे।

8. राजकुमार महावीर की दीक्षा स्थली, दीक्षा वन एवं दीक्षा वृक्ष का क्या नाम था ?

राजकुमार महावीर की दीक्षा स्थली कुण्डलपुर, दीक्षा वन-षण्डवन एवं दीक्षा वृक्ष-शालवृक्ष था।

9. राजकुमार महावीर को वैराग्य कैसे हुआ था ?

राजकुमार महावीर को वैराग्य जातिस्मरण के कारण हुआ।

10. मुनि महावीर की पारणा कहाँ एवं किसके यहाँ हुई थी ?
मुनि महावीर की पारणा राजा कूल के यहाँ कूलग्राम में हुई थी।

11. महावीर का वंश एवं गोत्र कौन-सा था ?
महावीर का वंश- नाथ एवं गोत्र -काश्यप था।

12. किस पालकी में बैठकर दीक्षा लेने गए थे ?
चन्द्रप्रभा पालकी में बैठकर दीक्षा लेने गए थे।

13. मुनि महावीर को केवलज्ञान कहाँ कौन से वृक्ष के नीचे हुआ था ?
मुनि महावीर को केवलज्ञान षण्डवन/मनोहर वन (ऋजुकूला नदी) एवं शाल वृक्ष के नीचे हुआ था।

14. तीर्थङ्कर महावीर के समवसरण में मुनि, आर्यिकाएँ, श्रावक और श्राविकाएँ कितनी थीं ?
तीर्थङ्कर महावीर के समवसरण में 14,000 मुनि, 36,000 आर्यिकाएँ, 1 लाख श्रावक और 3 लाख श्राविकाएँ थीं।

15. तीर्थङ्कर महावीर के मुख्य गणधर एवं मुख्य गणिनी एवं मुख्य श्रोता कौन थे ?
तीर्थङ्कर महावीर के मुख्य गणधर गौतम, गणिनी चंदना , श्रोता राजा श्रेणिक थे।

16. तीर्थङ्कर महावीर के यक्ष-यक्षिणी का क्या नाम था ?
तीर्थङ्कर महावीर के यक्ष गुहाक, यक्षिणी सिद्धायनी।

17. तीर्थङ्कर महावीर के कितने गणधर थे। नाम बताइए ?
तीर्थङ्कर महावीर के11 गणधर थे। इन्द्रभूति (गौतम), वायुभूति, अग्निभूति, सुधर्मास्वामी, मौर्य, मौन्द्र, पुत्र, मैत्रेय, अकम्पन, अंधवेला तथा प्रभास थे।

18. तीर्थङ्कर महावीर का प्रथम समवसरण कहाँ लगा था ?
तीर्थङ्कर महावीर का प्रथम समवसरण विपुलाचल पर्वत पर लगा था।

19. तीर्थङ्कर महावीर की देशना कितने दिन तक और क्यों नहीं खिरी ?
तीर्थङ्कर महावीर की देशना 66 दिन तक नहीं खिरी क्योंकि गणधर का अभाव था।

20. तीर्थङ्कर महावीर की देशना कब खिरी थी ?
तीर्थङ्कर महावीर की देशना श्रावण कृष्ण प्रतिपदा, शनिवार 1 जुलाई, ई.पू. 557 में खिरी थी।

21. तीर्थङ्कर महावीर के समवसरण में राजा श्रेणिक ने कितने प्रश्न किए थे ?
तीर्थङ्कर महावीर के समवसरण में राजा श्रेणिक ने 60 हजार प्रश्न किए थे।

22. तीर्थङ्कर महावीर ने योग निरोध करने के लिए कितने दिन पहले समवसरण छोड़ा था ?
तीर्थङ्कर महावीर ने योग निरोध करने के लिए दो दिन पहले समवसरण छोड़ा था।

23. तीर्थङ्कर महावीर को सम्यग्दर्शन किस पर्याय में हुआ था ?
तीर्थङ्कर महावीर को सम्यग्दर्शन सिंह की पर्याय में हुआ था।

24. तीर्थङ्कर महावीर का तीर्थकाल कितने वर्षों का है ?
तीर्थङ्कर महावीर का तीर्थकाल 21 हजार 42 वर्षों का है। (ति.प.,4/1285)

25. सिंह से महावीर तक के भव बताइए ?
सिंह, सौधर्म स्वर्ग में देव, कनकोज्ज्वल राजा, लान्तव स्वर्ग में देव, हरिषेण राजा, महाशुक्र स्वर्ग में देव, प्रिय मित्र नामक राजपुत्र, बारहवें स्वर्ग में देव, नंदराजा, अच्युत स्वर्ग में इन्द्र और तीर्थङ्कर महावीर।

26. तीर्थङ्कर महावीर ने तीर्थङ्कर प्रकृति का बंध कब एवं कहाँ किया था ?

तीर्थङ्कर महावीर ने नंद राजा की पर्याय में जब संयम धारण किया था, तब प्रोष्ठिल गुरु के पादमूल में तीर्थङ्कर प्रकृति का बंध किया था।

27. सिंह को उपदेश देने वाले मुनियों के क्या नाम थे ?

सिंह को उपदेश देने वाले मुनियों के नाम अमितकीर्ति एवं अमितप्रभ मुनि थे।

28. तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ के निर्वाण पश्चात् कितने वर्षों के बाद बालक महावीर का जन्म हुआ था ?

तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ के निर्वाण के 178 वर्ष बाद बालक महावीर का जन्म हुआ था।

29. तीर्थङ्कर महावीर के कितने नाम थे, नाम बताइए ?

1. **वीर** – जन्माभिषेक के समय इन्द्र को शंका हुई कि बालक इतने जल प्रवाह को कैसे सहन करेगा। बालक ने अवधिज्ञान से जानकर पैर के अंगूठे से मेरुपर्वत को थोड़ा–सा दबाया, तब इन्द्र को ज्ञात हुआ इनके पास बहुत बल है। इन्द्र ने क्षमा माँगी एवं कहा कि ये तो वीर जिनेन्द्र हैं।
2. **वर्द्धमान** – राजा सिद्धार्थ ने कहा जब से बालक प्रियकारिणी के गर्भ में आया उसी दिन से घर, नगर और राज्य में धन–धान्य की समृद्धि प्रारम्भ हो गई, अतएव इस बालक का नाम वर्द्धमान रखा जाए।
3. **सन्मति** – एक समय संजय और विजय नाम के दो चारण ऋद्धिधारी मुनियों को तत्त्व सम्बन्धी कुछ जिज्ञासा थी। वर्द्धमान पर दृष्टि पड़ते ही उनकी जिज्ञासा का समाधान हो गया तब मुनियों ने वर्द्धमान का नाम सन्मति रखा।
4. **महावीर** – वर्द्धमान मित्रों के साथ एक वृक्ष पर क्रीड़ा (खेल) कर रहे थे, तब संगमदेव ने भयभीत करने के लिए एक विशाल सर्प का रूप धारण कर वृक्ष के तने से लिपट गया। सब मित्र डर गए, डाली से कूदे और भाग गए, किन्तु वर्द्धमान सर्प के ऊपर चढ़कर ही उससे क्रीड़ा करने लगे थे। ऐसा देख संगमदेव ने अपने रूप में आकर वर्द्धमान की प्रशंसा कर महावीर नाम दिया।
5. **अतिवीर** – एक हाथी मदोन्मत्त हो किसी के वश में नहीं हो रहा था। उत्पात मचा रहा था। महावीर को ज्ञात हुआ तो वे जाने लगे, तब लोगों ने मना किया किन्तु वे नहीं माने और चले गए। हाथी महावीर को देख नतमस्तक हो सूँड उठाकर नमस्कार करने लगा। तब जनसमूह ने कुमार की प्रशंसा की और उनका नाम अतिवीर रख दिया।

30. मुनि महावीर पर किसने उपसर्ग किया था ?

मुनि महावीर पर उपसर्ग भव नामक यक्ष अथवा स्थाणु नाम रुद्र ने किया। ऐसे दो नाम पुराणों में आते हैं।

अभ्यास

सही या गलत बताइए –

1. बालक महावीर का जन्म सोमवार के दिन हुआ था।
2. राजकुमार महावीर की दीक्षा ईपू.569 में हुई थी।

अन्यत्र खोजिए –

1. केवली राम के कितने वर्षों बाद बालक महावीर हुए थे ?
   (त्रि.प., 4/1248–1249, त्रि.प., 4/582, प.पु., 123/142)
2. भगवान् महावीर के पुरुरवा भील की पर्याय से महावीर स्वामी तक के भव कौन–कौन से थे ?
   (जै.सि.को., 3/291–292)
3. भगवान् महावीर का सम्बन्ध कौन–से तीर्थङ्कर से था ? (महावीर पुराण)
4. बालक महावीर की चेलना कौन थीं एवं राजगृही में समवसरण कितनी बार आया था ? (महावीर पुराण)

अध्याय 10
आचार्य श्री शान्तिसागर जी

बीसवीं शताब्दी में श्रमण परम्परा को पुनर्जीवन देने वाले घोर उपसर्ग विजेता, महान् तपस्वी आचार्य शान्तिसागर जी का जीवन परिचय एवं चारित्र के विकास का वर्णन इस अध्याय में है।

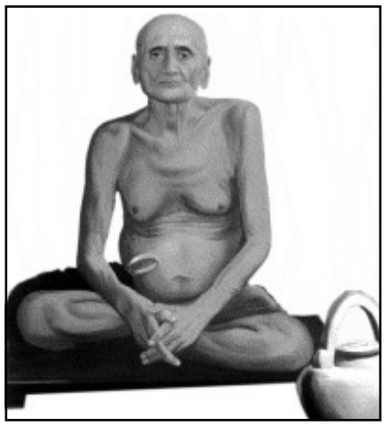

1. **सातगौड़ा का जन्म कब और कहाँ हुआ था ?**
   भोजग्राम (कर्नाटक) के समीप येलगुल (महाराष्ट्र) में नाना के यहाँ आषाढ़ कृष्ण षष्ठी, वि.सं.1929, 25 जुलाई सन् 1872 को बुधवार रात्रि के समय हुआ था।
2. **सातगौड़ा जब माता के गर्भ में थे, तब माता को कैसा दोहला (तीव्र इच्छा) हुआ था ?**
   108 सहस्रदल वाले कमलों से जिनेन्द्र भगवान् की पूजा करूँ। तब कोल्हापुर के समीप के तालाब से वे कमल लाए गए और भगवान् की बड़ी भक्तिपूर्वक पूजा की गई थी।
3. **आचार्य श्री शान्तिसागर जी का पूर्व का क्या नाम था ?**
   आचार्य श्री शान्तिसागर जी का पूर्व नाम सातगौड़ा था।
4. **सातगौड़ा के माता–पिता का क्या नाम था ?**
   माता सत्यवती एवं पिता भीमगौड़ा पाटील (मुखिया) थे। जाति चतुर्थ जैन थी।
5. **सातगौड़ा कितने भाई-बहिन थे ?**
   सातगौड़ा पाँच भाई–बहिन थे। आदिगौड़ा, दैवगौड़ा, सातगौड़ा (आचार्य श्री शान्तिसागर जी), कुम्भगौड़ा एवं बहिन कृष्णाबाई थी।
6. **सातगौड़ा विवाहित थे या बालब्रह्मचारी ?**
   विवाहित बालब्रह्मचारी थे। अर्थात् 9 वर्ष की अवस्था में 6 वर्ष की बालिका के साथ इनका विवाह हो गया था। दैवयोग से उस बालिका का 6 माह बाद मरण भी हो गया। महाराज ने बताया था कि ''हमने उसे अपनी स्त्री के रूप में कभी नहीं जाना था'' बाद में उन्होंने विवाह नहीं किया।

7. सातगौड़ा के कब से मुनि बनने के भाव थे ?

बाल्यावस्था 17-18 वर्ष में ही मुनि बनना चाहते थे, किन्तु आपके पिता का आप पर बड़ा अनुराग था। पिता ने कहा जब तक हमारा जीवन है, तब तक तुम घर में रहकर साधना करो। बाद में मुनि बनना। अतः पिता की आज्ञा के कारण उनके समाधिमरण के बाद 43 वर्ष की अवस्था में क्षुल्लक बने एवं 48 वर्ष की अवस्था में मुनि बने थे।

8. सातगौड़ा ने सम्मेदशिखर जी की वंदना कब की एवं वहां क्या त्याग करके आए थे ?

32 वर्ष की अवस्था में सम्मेदशिखर जी की वंदना के लिए गए थे। स्मृति स्वरूप घी–तेल खाने का आजीवन त्याग कर आए एवं घर आते ही एक बार भोजन करने की प्रतिज्ञा ले ली।

9. सातगौड़ा के बचपन में प्राणी–रक्षा के भाव थे या नहीं ?

प्राणी-रक्षा के भाव थे। एक दिन की घटना है, सातगौड़ा शौच के लिए बाहर (जंगल में) गए थे। वापस आने पर उनके हाथ में टूटे हुए लोटे को देखकर घर में पूछा गया यह लोटा कैसे टूट गया ? उन्होंने बताया कि, एक सर्प एक मेंढक को खाने जा रहा था, उस समय उस मेंढक की प्राण रक्षा के लिए मैंने तत्काल इस लोटे को पत्थर पर जोर से पटक दिया, जिससे वह सर्प भाग गया। जब खेत पर जाते तो पक्षी फसल को नुकसान पहुँचाते थे, परन्तु उन्हें भगाते नहीं थे बल्कि पीने के लिए पानी और रख देते थे।

10. सातगौड़ा का व्यापारिक जीवन कैसा था ?

सातगौड़ा एवं कुम्भगौड़ा कपड़े की दुकान पर बैठते थे। जब सातगौड़ा रहते थे। दुकान पर ग्राहक आता तो उससे कहते थे कौन सा कपड़ा लेना है, अपने हाथ से नाप लो और पैसे यहाँ रख दो। वे पैसे भी स्वयं नहीं गिनते थे।

11. सातगौड़ा घर में वीतरागी कैसे थे ?

हाँ, सातगौड़ा घर में वीतरागी थे, इसी कारण वे अपने छोटे भाई कुम्भगौड़ा एवं बहिन कृष्णा के विवाह में शामिल नहीं हुए थे।

12. सातगौड़ा की करुणा एवं शारीरिक शक्ति कैसी थी ?

जब सातगौड़ा सम्मेदशिखर जी की वंदना कर रहे थे तब एक वृद्धा चल नहीं पा रही थी एवं उसके पास इतने पैसे भी नहीं थे कि वह डोली कर सके। अतः सातगौड़ा ने देखा और उस वृद्धा को अपने कंधे पर बिठाकर वंदना करा दी। इसी प्रकार एक पुरुष को भी राजगृही की पञ्च पहाड़ियों की वंदना करा दी थी।

13. आचार्य श्री शान्तिसागर जी का संयम पथ किस प्रकार था ?

1. **क्षुल्लक दीक्षा** – देवेन्द्रकीर्ति मुनि से ज्येष्ठ शुक्ल त्रयोदशी वि.सं. 1972, सन् 1915 में उत्तूरग्राम में।
2. **एलक दीक्षा** – स्वयं ली, सिद्धक्षेत्र गिरनार जी में पौष शुक्ल चतुर्दशी वि.सं. 1975, 15 जनवरी, बुधवार सन् 1919 में।
3. **मुनि दीक्षा** – यरनाल पञ्चकल्याणक में फाल्गुन शुक्ल त्रयोदशी वि.सं. 1976, 2 मार्च, मङ्गलवार, सन् 1920 में हुई थी। दीक्षा गुरु मुनि देवेन्द्रकीर्ति थे।

4. **आचार्य पद** – समडोली में आश्विन शुक्ल एकादशी वि.सं. 1981, 8 अक्टू. बुधवार सन् 1924 में।

5. **चारित्र चक्रवर्ती पद** – गजपंथा वि.सं. 1994 सन् 1937 में।

14. एलक शान्तिसागर जी ने वाहन का त्याग कब और कहाँ किया था ?

सिद्धक्षेत्र गिरनारजी से वापस आकर सांगली के समीपवर्ती कुण्डल नाम के पहाड़ से अलंकृत स्टेशन पर उतरे। वहाँ के मंदिरों की वंदना कर जीवन भर के लिए वाहन (सवारी) का त्याग कर दिया था।

15. आचार्य श्री शान्तिसागर जी का उत्तर भारत में प्रथम चतुर्मास कहाँ हुआ था ?

आचार्य श्री शान्तिसागर जी का उत्तर भारत में प्रथम चतुर्मास सन् 1928 में कटनी (म.प्र.) में हुआ था।

16. आचार्य श्री शान्तिसागर जी ने अपने मुनि जीवन में कितने उपवास किए थे ?

35 वर्ष के मुनि जीवन में 27 वर्ष 2 माह और 23 दिन अर्थात् 9,938 उपवास किए थे।

17. आचार्य श्री शान्तिसागर जी ने आचार्य पद का त्याग कब, कहाँ किया था एवं किसे दिया था ?

आचार्य पद का त्याग पत्र के द्वारा सन् 1955 में कुंथलगिरी में किया था और वह पत्र अतिशय क्षेत्र चूलगिरि खानियाँजी, जयपुर में मुनि श्री वीरसागर जी के पास भेजा जो उनके प्रथम शिष्य थे। अर्थात् मुनि श्री वीरसागर जी को आचार्य पद प्रथम भाद्रपद शुक्ल नवमी वि. सं. 2012, 26 अगस्त सन् 1955 दिन शुक्रवार को दिया।

18. आचार्य श्री शान्तिसागर जी की समाधि कब और कहाँ हुई थी ?

आचार्य श्री शान्तिसागर जी की समाधि द्वितीय भाद्रपद शुक्ल द्वितीया वि.सं. 2012 दिन रविवार, 18 सितम्बर सन् 1955 में कुंथलगिरी में हुई थी।

19. आचार्य श्री शान्तिसागर जी की सल्लेखना कितने दिन चली ?

36 दिन की यम सल्लेखना हुई। 14 अगस्त को आहार के उपरान्त उन्होंने आहार को छोड़ा, किन्तु जल ग्रहण की छूट रखी थी एवं 4 सितम्बर को अन्तिम बार जल लेकर उसका भी त्याग कर दिया था।

20. मुनि श्री वर्धमानसागर जी (आचार्य श्री शान्तिसागर जी के अग्रज) के अनुसार आचार्य श्री शान्तिसागर जी ने मुनि दीक्षा किससे ली थी ?

आचार्य श्री शान्तिसागर जी ने मुनि दीक्षा भौंसेकर आदिसागर जी मुनिराज से यरनाल में ली थी।

21. आचार्य श्री शान्तिसागर जी की शिष्य परम्परा कौन–कौन सी हैं ?

आचार्य श्री शान्तिसागर जी	आचार्य श्री शान्तिसागर जी
आचार्य श्री वीरसागर जी	आचार्य श्री वीरसागर जी
आचार्य श्री शिवसागर जी	आचार्य श्री शिवसागर जी
आचार्य श्री ज्ञानसागर जी	आचार्य श्री धर्मसागर जी
आचार्य श्री विद्यासागर जी	आचार्य श्री अजित सागरजी
	आचार्य श्री श्रेयांससागर जी आचार्य श्री वर्धमानसागर जी
	आचार्य श्री अभिनंदनसागर जी

विशेष :- और भी अनेक शिष्य परम्परा हैं।

22. आचार्य श्री शान्तिसागर जी का वर्णन किस ग्रन्थ में है एवं उसके लेखक कौन हैं ?

चारित्र चक्रवर्ती ग्रन्थ में है। लेखक स्व.पंडित सुमेरूचंद जी दिवाकर सिवनी (म.प्र.)

23. चारित्र चक्रवर्ती ग्रन्थ का विमोचन कब हुआ था ?

दिनाँक 4.3.1953 को प्रातः श्रवणबेलगोला में आचार्य श्री देशभूषणजी के ससंघ सान्निध्य में।

(लगभग सम्पूर्ण विषय चारित्र चक्रवर्ती ग्रन्थ से लिया गया है)

अभ्यास

सही या गलत बताइए–

1. सातगौड़ा का जन्म बुधवार को हुआ था।
2. सातगौड़ा के चार भाई थे।
3. सातगौड़ा विवाहित बालब्रह्मचारी थे।
4. सातगौड़ा ने 32 वर्ष की अवस्था में तेल लगाने का त्याग कर दिया था।
5. आचार्य श्री शान्तिसागर जी एलक अवस्था में ट्रेन में बैठे थे।
6. आचार्य श्री शान्तिसागर जी की कषाय सल्लेखना एवं काय सल्लेखना कुंथलगिरि में नहीं हुई थी।
7. आचार्य श्री शान्तिसागर जी आचार्य पद पर लगभग 32 वर्ष रहे।
8. सातगौड़ा का विवाह 9 वर्ष में हो गया था।
9. उत्तर भारत में प्रथम वर्षायोग जबलपुर संभाग में हुआ था।

अन्यत्र खोजिए –

1. आचार्य श्री शान्तिसागर जी का उत्तर भारत में दूसरा वर्षायोग कहाँ हुआ था ?
2. राजाखेड़ा में किस प्रकार का उपसर्ग हुआ था ?
3. आचार्य श्री शान्ति सागर जी की मुनि बनने के बाद प्रथम शिखर जी का यात्रा कब हुई ?
4. कटनी वर्षायोग से पूर्व किस व्यक्ति ने छद्मवेश में रहकर आचार्य श्री के ससंघ की परीक्षा की थी ?
5. दिल्ली के लाल किले, जामा मस्जिद आदि स्थानों में जाकर आचार्य श्री शान्तिसागर जी ने अपनी फोटो क्यों खिंचवाई थी ?
6. सातगौड़ा के दादा का क्या नाम था ?
7. आचार्य श्री शान्तिसागर जी ने 1105 दिन तक अन्नाहार क्यों नहीं लिया था ?
8. 1105 दिन बाद अन्नाहार किस तिथि एवं तारीख से प्रारम्भ किया था ?

(सभी चारित्र चक्रवर्त्ती में)

अध्याय 11
आचार्य श्री ज्ञानसागर जी

क्षीणकाया में अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी यथानाम तथा गुण के धारी गुरुणाम् गुरु आचार्य ज्ञानसागर जी का जीवन परिचय एवं चारित्र विकास का वर्णन इस अध्याय में है।

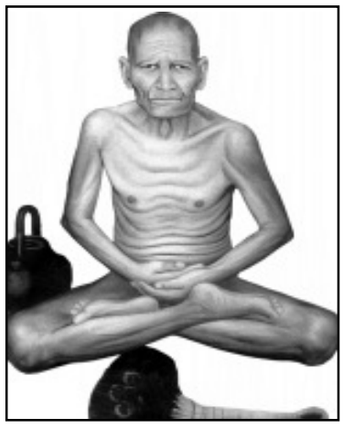

1. आचार्य श्री ज्ञानसागर जी महाराज कौन थे ?

आचार्य श्री शान्तिसागर जी के प्रथम शिष्य आचार्य श्री वीरसागर जी, आचार्य श्री वीरसागर जी के प्रथम शिष्य आचार्य श्री शिवसागर जी, आचार्य श्री शिवसागर जी के प्रथम शिष्य आचार्य श्री ज्ञानसागर जी थे।

2. आचार्य श्री ज्ञानसागर जी का सामान्य परिचय क्या है ?

आपका पूर्व नाम	–	भूरामल जी
अपर नाम	–	शान्तिकुमार
माता	–	श्रीमती घृतवरी देवी
पिता	–	श्री चतुर्भुज छाबड़ा
दादी	–	श्रीमती गट्टूदेवी
दादा	–	सुखदेवजी
भाई	–	आप कुल 5 भाई थे - छगनलाल, भूरामल, गङ्गाप्रसाद, गौरीलाल एवं देवीदत्त
जन्म	–	विक्रम संवत् 1948 सन् 1891 में
स्थान	–	राणोली, जिला – सीकर (राजस्थान)
पिता की मृत्यु	–	सन् 1902 में
शिक्षा	–	प्रारम्भिक शिक्षा गाँव के विद्यालय में एवं शास्त्री स्तर की शिक्षा स्याद्वाद महाविद्यालय, बनारस में हुई थी।

3. आचार्य श्री ज्ञानसागर जी का प्रारम्भिक जीवन कैसा रहा था ?

कहा जाता है कि सरस्वती एवं लक्ष्मी साथ–साथ नहीं रहती है, यह कहावत आचार्य श्री ज्ञानसागर जी पर पूर्णतः घटित हुई थी। प्रारम्भिक शिक्षा गाँव के प्राथमिक विद्यालय में हुई। साधनों के अभाव में आप आगे अध्ययन न कर अपने अग्रज के साथ नौकरी हेतु गया (बिहार) आ गए। वहाँ एक सेठ के यहाँ आजीविका हेतु कार्य करने लगे, किन्तु आपका मन आगे अध्ययन करने का था। संयोगवश स्याद्वाद महाविद्यालय, बनारस के छात्र किसी समारोह में भाग लेने हेतु गया में आए। उनके प्रभावपूर्ण कार्यक्रमों को देखकर भूरामलजी के भाव अध्ययन हेतु वाराणसी जाने के हुए। आपकी तीव्र इच्छा देख आपके अग्रज ने जाने की अनुमति दे दी। पढ़ाई के खर्च एवं भोजन के खर्च के लिए आप गङ्गा के घाट पर गमछा बेचते थे। उससे प्राप्त आय से खर्च की पूर्ति करते थे। बाद में किसी ने कहा आपको खर्च महाविद्यालय से मिल जाएगा, किन्तु स्वावलम्बी जीवन जीने वाले भूरामल जी ने मना कर दिया। वाराणसी से शास्त्री की परीक्षा पास कर आपने व्याकरण, साहित्य, सिद्धान्त एवं अध्यात्म विषयों के अनेक ग्रन्थों का गहन अध्ययन किया।

बनारस से लौटकर आपने साहित्य साधना, लेखन, मनन करके अनेक ग्रन्थों की रचना संस्कृत तथा हिन्दी में की। वर्तमान शताब्दी में संस्कृत भाषा के महाकाव्यों की रचना को जीवित रखने वाले मूर्धन्य विद्वानों में आपका नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। काशी के दिग्गज विद्वानों ने प्रतिक्रिया की थी, ''इस काल में भी कालीदास और माघ कवि की टक्कर लेने वाले विद्वान् हैं, यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता होती है।'' इस प्रकार जिनवाणी की सेवा में 50 वर्ष पूर्ण किए। किन्तु ''ज्ञानं भारं क्रिया बिना'' क्रिया के बिना ज्ञान भार स्वरूप है – इस मन्त्र को जीवन में उतारने हेतु आप त्याग मार्ग पर प्रवृत्त हुए।

4. आचार्य श्री ज्ञानसागर जी का चारित्र पथ किस प्रकार था ?

1.	ब्रह्मचर्य प्रतिमा	–	व्रत रूप में सन् 1947, वि.सं.2004 में
2.	क्षुल्लक दीक्षा	–	25 अप्रैल, सन् 1955 में वि.सं.2012 में अक्षय तृतीया के दिन, मन्सूरपुर, मुजफ्फर नगर, (उत्तर प्रदेश) के पार्श्वनाथ जिनालय में स्वयं ली थी।
3.	एलक दीक्षा	–	सन् 1957 में आचार्य श्री देशभूषण जी महाराज से
4.	मुनि दीक्षा	–	आषाढ़ कृष्ण द्वितीया 22 जून, सन् 1959, सोमवार
5.	दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री शिवसागर जी महाराज
6.	आचार्य पद कब मिला	–	7 फरवरी, सन् 1969, शुक्रवार फाल्गुन कृष्ण पञ्चमी, वि.सं. 2025 को नसीराबाद (राज.) में समाज ने दिया। इस दिन एक साधक को मुनि दीक्षा दी थी। नाम मुनि श्री विवेकसागर जी रखा था।
7.	आचार्य पद त्यागना एवं सल्लेखना व्रत ग्रहण	–	22 नवम्बर सन् 1972, मगसिर कृष्ण द्वितीया वि.सं. 2029 को अपने प्रथम शिष्य मुनि श्री विद्यासागर जी को नसीराबाद में आचार्य पद दिया एवं सल्लेखना के लिए निवेदन किया।

8.	समाधिस्थ	–	ज्येष्ठ कृष्ण अमावस्या, 1 जून 1973, शुक्रवार वि.सं. 2030 में स्थान नसीराबाद (राज.)
9.	समाधिस्थ समय	–	प्रातः 10 बजकर 50 मिनट पर।
10.	सल्लेखना काल	–	6 माह 13 दिन (तिथि के अनुसार)
11.	सल्लेखना काल	–	6 माह 10 दिन (दिनाँक के अनुसार)

5. आचार्य श्री ज्ञानसागर जी ने क्या–क्या साहित्य लिखा है ?

संस्कृत भाषा में –

महाकाव्य	–	दयोदय, जयोदय और वीरोदय।
चरित्रकाव्य	–	सुदर्शनोदय, भद्रोदय और मुनि मनोरंजनाशीति।
जैन सिद्धान्त	–	सम्यक्त्वसारशतकम्।
धर्मशास्त्र	–	प्रवचनसार प्रतिरूपक।

हिन्दी भाषा में –

चरित्रकाव्य–		ऋषभावतार, भाग्योदय, विवेकोदय और गुण सुन्दर वृतान्त।
धर्मशास्त्र	–	कर्त्तव्यपथप्रदर्शन, सचित्तविवेचन, सचित्तविचार, तत्त्वार्थसूत्र टीका और मानवधर्म।
पद्यानुवाद	–	देवागमस्तोत्र, नियमसार और अष्टपाहुड।
अन्य	–	स्वामीकुन्दकुन्द और सनातन् जैनधर्म, जैनविवाह विधि, भक्ति संग्रह, हितसम्पादकम् , पवित्र मानव जीवन, इतिहास के पन्ने, ऋषि कैसा होता है, समयसार हिन्दी टीका, शान्तिनाथ पूजन विधान आदि।

6. आचार्य श्री ज्ञानसागर जी ने ज्ञानदान किस–किस को दिया ?

अनेक साधु, आर्यिकाएँ, एलक, क्षुल्लक, ब्रह्मचारी एवं श्रावकों को दिया। आचार्य वीरसागर जी के संघ में, आचार्य शिवसागर जी के संघ में, आचार्य धर्मसागर जी, आचार्य अजितसागर जी एवं वर्तमान में श्रेष्ठ आचार्य विद्यासागर जी इनके अनुपम उदाहरण हैं।

7. आचार्य श्री ज्ञानसागर जी की सल्लेखना किस प्रकार हुई थी ?

सर्वप्रथम आचार्य ज्ञानसागर जी ने अपने आचार्य पद का त्याग किया और वह पद मुनि विद्यासागर को दिया एवं उन्होंने आचार्य विद्यासागर जी से निवेदन किया कि मेरी सल्लेखना करा दें। वैसे आचार्य परमेष्ठी के लिए नियम है कि वे दूसरे संघ में सल्लेखना लेने जाएँ, वे क्यों नहीं गए मेरे मन में एक चिन्तन आया कि आचार्य ज्ञानसागर जी ने सब कुछ अपने शिष्य विद्यासागर जी को सिखा दिया, कैसे पढ़ाया जाता है ? कैसे शिष्यों की भर्ती की जाती है ? कैसे दीक्षा दी जाती है ? कैसे संघ चलाया जाता है ? आदि, किन्तु यह नहीं सिखाया कि सल्लेखना कैसे दी जाती है ? इसलिए उन्होंने स्वयं सल्लेखना आचार्य विद्यासागर जी से ली, जिससे वे भी सीख जाएँ। करोड़ों रुपयों की जायदाद पाने वाला बेटा भी वैसी सेवा पिता की नहीं करता जैसी सेवा आचार्य श्री विद्यासागर जी ने अपने गुरु आचार्य श्री ज्ञानसागर जी की। आचार्य श्री ज्ञानसागर जी को साइटिका का दर्द रहता था। जिससे वे गर्मी के दिनों में भी बाहर शयन नहीं करते थे। तब भी आचार्य विद्यासागर जी अन्दर गर्मी

में शयन करते थे। हमेशा जागृत अवस्था में ज्ञानसागर जी रहते थे। उन्होंने लगभग 6 माह पहले अन्न का त्याग कर दिया था एवं 4 उपवास के साथ राजस्थान की भीषण गर्मी में यम सल्लेखना सम्पन्न हुई थी।

विशेष : आचार्य श्री ज्ञानसागर जी के साहित्य पर अभी तक 2 डी.लिट, 4 विद्यावारिधि, 32 पी.एच.डी., 8 एम.ए. तथा 3 एम.फिल के शोध प्रबन्ध लिखे जा चुके हैं।

अभ्यास

सही या गलत बताइए –

1. भूरामल का अपर नाम शान्तिलाल था।
2. भूरामल का जन्म 1891 वि.सं. में हुआ था।
3. भूरामल की माता का नाम घृतवरीदेवी था।
4. भूरामल के पाँच भाई थे।
5. भूरामल की मुनि दीक्षा खनियाँधाना में हुई थी।
6. आचार्य श्री ज्ञानसागर जी के दादा गुरु आचार्य श्री वीरसागर जी थे।
7. 30 जून सन् 1968 को मुनि श्री ज्ञानसागर जी को आचार्य पद मिला था।
8. 22 नवम्बर सन् 1972 को आचार्य श्री ज्ञानसागर जी ने अपने आचार्य पद का त्याग कर दिया था।
9. अजैन विद्वान् ने कहा था, आज कालीदास और माघकवि की टक्कर लेने वाले विद्वान् हैं।

अन्यत्र खोजिए –

1. आचार्य श्री ज्ञानसागर जी के मुनि एवं आचार्य पद के साथ वर्षायोग कहाँ–कहाँ हुए थे ? (ज्ञा.श.पृ., 20–21)
2. आचार्य श्री ज्ञानसागर जी ने कितनी दीक्षाएँ दी थीं ? (ज्ञा.श.पृ., 19–20)
3. आचार्य श्री ज्ञानसागर जी के प्रथम शिष्य ने सर्वप्रथम क्या त्याग किया था ? (ज्ञा.श.पृ., 14)

सोलहकारण भावना			
1.	दर्शन विशुद्धि	2.	विनय सम्पन्नता
3.	शील–व्रत का निरतिचार पालन	4.	अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग
5.	अभीक्ष्ण संवेग	6.	शक्तितस्त्याग
7.	शक्तितस्तप	8.	साधु समाधि
9.	वैयावृत्त्य	10.	अर्हत् भक्ति
11.	आचार्य भक्ति	12.	बहुश्रुत भक्ति
13.	प्रवचन भक्ति	14.	आवश्यक अपरिहाणि
15.	मार्ग प्रभावना	16.	प्रवचन वात्सल्य।

अध्याय 12
आचार्य श्री विद्यासागर जी

बीसवीं - इक्कीसवीं शताब्दी में सर्वाधिक दीक्षा देने वाले मूकमाटी महाकाव्य के रचयिता गुरुवर आचार्य श्री विद्यासागर जी का जीवन परिचय एवं चारित्र विकास का वर्णन इस अध्याय में है।

1. आचार्य श्री विद्यासागर जी कौन हैं ?

आचार्य श्री शान्तिसागर जी के प्रथम शिष्य आचार्य श्री वीरसागर जी एवं आचार्य श्री वीरसागर जी के प्रथम शिष्य आचार्य श्री शिवसागर जी एवं आचार्य श्री शिवसागर जी के प्रथम शिष्य आचार्य श्री ज्ञानसागर जी एवं आचार्य श्री ज्ञानसागर जी के प्रथम शिष्य सुप्रसिद्ध दिगम्बर जैनाचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज हैं।

2. आचार्य श्री विद्यासागर जी का सामान्य जीवन परिचय बताइए ?

पूर्व नाम	–	विद्याधर अपर नाम पीलू, गिनी (तोता) और मरी।
जन्म स्थान	–	सदलगा जिला बेलगाँव (कर्नाटक)।
जन्म दिनाँक	–	आश्विन शुक्ल पूर्णिमा (शरद पूर्णिमा), वि.सं.2003 (दि.10 अक्टू.1946, गुरुवार रात्रि 1.50 पर)
माता	–	श्रीमन्ति (समाधिस्थ आर्यिका श्री समयमतीजी)।
पिता	–	श्री मलप्पाजी जैन (अष्टगे) (समाधिस्थ मुनि श्री मल्लिसागर जी)।
दादी	–	श्रीमती काशीजी जैन अष्टगे।
दादा	–	श्री पारिसजी जैन अष्टगे।
भाई	–	महावीर, अनन्तनाथ एवं शान्तिनाथ जी। अनंतनाथ जी (मुनि श्री योगसागर जी) एवं शान्तिनाथ जी (मुनि श्री समयसागर जी)। (बचपन का नाम सुकुमाल)
बहिन	–	बाल ब्रह्मचारिणी शान्ता एवं सुवर्णा।
शिक्षा	–	9 वीं कन्नड़ माध्यम से। हिन्दी, मराठी, अंग्रेजी, संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश के भी ज्ञाता हैं।
मातृभाषा	–	कन्नड़।
प्रिय खेल	–	शतरंज।
गृहत्याग	–	27 जुलाई सन् 1966
ब्रह्मचर्य व्रत	–	सन् 1966 में आचार्य श्री देशभूषण जी से, खानियाँ जी, जयपुर (राजस्थान)।
प्रतिमा	–	सात प्रतिमा के व्रत श्रवणबेलगोला (कर्नाटक)।
मुनि दीक्षा	–	आषाढ़ शुक्ल पञ्चमी, 30 जून 1968 वि.सं.2025 दिन शनिवार, अजमेर (राज.)।
दीक्षा गुरु	–	मुनि श्री ज्ञानसागर जी महाराज। (दीक्षा देते समय आचार्य ज्ञानसागर जी मुनि थे)

आचार्य पद – 22 नवम्बर सन् 1972 मगसिर कृष्ण द्वितीया वि.सं.2029 में , आचार्य श्री ज्ञानसागर जी महाराज द्वारा।

त्याग – नमक, मीठा सन् 1969 में।

उपवास – लगातार नौ, मुक्तागिरि सन् 1990 में।

चटाई का त्याग – सन् 1985 आहारजी से।

हरी (वनस्पति) त्याग – सन् 1994 रामटेक से।

3. बालक पीलू ने अपनी माता के साथ कितने माह की अवस्था में गोम्मटेश की यात्रा प्रथम बार की थी ?

बालक पीलू ने अपनी माता के साथ 18 माह की अवस्था में गोम्मटेश की यात्रा प्रथम बार की थी।

4. विद्याधर नामकरण कैसे हुआ ?

माँ श्रीमन्ति गर्भवती अवस्था में अकिवाट के विद्यासागर के समाधिस्थल पर जाती थीं उनके ऊपर विशेष भक्ति होने से उस बच्चे का नाम विद्याधर रखा।

5. विद्याधर ने कितने वर्ष की अवस्था में ब्रह्मचर्य व्रत, किससे और कहाँ लिया था ?

20 वर्ष की अवस्था में आचार्य श्री देशभूषण जी महाराज से खानियाँ (चूलगिरी) जयपुर में लिया था।

6. श्रीमन्ति ने कुल कितनी सन्तानों को जन्म दिया था ?

श्रीमन्ति ने कुल 10 सन्तानों को जन्म दिया। जिनमें से 4 का बाल्यावस्था में ही अवसान हो गया था।

7. ब्रह्मचारी विद्याधर ने गृह त्याग कब किया ?

27 जुलाई सन् 1966 को अनुराधा नक्षत्र में मित्र मारुति के साथ तीनों मन्दिरों के दर्शन करके प्रातः 11.30 पर मारुति ने बस में बिठाल दिया। तोता तो हँसते–हँसते उड़ गया और मारुति रोते–रोते घर पहुँचा।

8. विद्याधर की मुनि दीक्षा की शोभा यात्रा में कितने हाथी थे ?

विद्याधर की मुनि दीक्षा की शोभा यात्रा में 25 हाथी थे।

9. विद्याधर की मुनि दीक्षा में माता–पिता कौन बने थे ?

विद्याधर की मुनि दीक्षा में माता जतनकुंवरजी एवं पिता हुकमचंद लुहाड़ियाजी बने थे।

10. श्रीमन्ति माता एवं शान्ता, सुवर्णा ने ब्रह्मचर्य व्रत कहाँ, कब एवं किससे लिया था ?

सवाईमाधोपुर में 8 अप्रैल, सन् 1975 को आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज से लिया था।

11. अनन्तनाथ एवं शान्तिनाथ ने ब्रह्मचर्य व्रत कहाँ, कब एवं किससे लिया था ?

महावीर जी में 2 मई, सन् 1975 को आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज से लिया था।

12. आचार्य श्री विद्यासागर जी ने प्रथम मुनि दीक्षा कहाँ एवं कब दी थी ?

एलक समयसागर जी को 08.03.1980, शनिवार, चैत्र कृष्ण षष्ठी को द्रोणगिरी सिद्धक्षेत्र, जिला छतरपुर (म.प्र.) में मुनि दीक्षा प्रदान की थी।

13. आचार्य श्री विद्यासागर जी ने प्रथम बार आर्यिका दीक्षा कितनी, कब और कहाँ दी थी ?

11 आर्यिकाएँ दीक्षा 10 फरवरी, सन् 1987 को सिद्ध क्षेत्र नैनागिर, जिला छतरपुर (म.प्र.) में दी थी।

14. आचार्य श्री ने अभी तक (अगस्त, 2013 तक) कुल कितनी दीक्षाएँ दी हैं ?

113 मुनि, 172 आर्यिकाएँ, 21 एलक, 14 क्षुल्लक एवं 3 क्षुल्लिका, कुल 323 दीक्षाएँ दी हैं।

विशेष – किन्तु जो क्षुल्लक से एलक, एलक से मुनि हुए अथवा क्षुल्लक से मुनि या एलक से मुनि हुए उनकी अपेक्षा दीक्षाओं की संख्या में अन्तर आएगा अतः – 113 मुनि, 172 आर्यिकाएँ, 56 एलक, 64 क्षुल्लक एवं 3 क्षुल्लिका कुल 408 दीक्षाएँ दी गईं।

15. आचार्य श्री ने अब तक (अगस्त, 2013 तक) कितने राज्यों में विहार (गमनागमन) किया है ?

9 राज्यों में – राजस्थान, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, बिहार, पश्चिमबंगाल, उड़ीसा, गुजरात एवं छत्तीसगढ़।

16. रत्नत्रय से पावन जिनका यह औदारिक तन है।
गुप्ति समिति अनुप्रेक्षा में रत, रहता निशि दिन मन है।

यह नमन गीत किसने लिखा है ?

पंडित नरेन्द्र प्रकाशजी फिरोजाबाद ने।

17. आचार्य श्री से सर्वप्रथम किन मुनि महाराज ने चारित्र शुद्धि व्रत के 1234 उपवास लिए एवं पूर्ण भी किए ?

समाधिस्थ मुनि श्री मल्लिसागर जी ने (गृहस्थ अवस्था के आचार्य श्री विद्यासागर जी के पिताजी)।

18. आचार्य श्री से सर्वप्रथम किस शिष्य मुनि ने चारित्र शुद्धि के व्रत के 1234 उपवास लिए हैं ?

मुनि श्री उत्तमसागर जी ने।

19. आचार्य श्री के किस शिष्य ने चारित्र शुद्धि के 1234 उपवास सर्वप्रथम पूर्ण किए ?

मुनि श्री चन्द्रप्रभ सागर जी ने सर्वप्रथम पूर्ण किए। भाद्रपद शुक्ल प्रतिपदा 10-9-99 शुक्रवार गोम्मटगिरी इन्दौर में गुरु पादमूल में प्रारम्भ किए एवं श्रावण कृष्ण द्वादशी 19-7-09, रविवार हुपरी (महाराष्ट्र) के चन्द्रप्रभ मन्दिर में मुनि श्री विनीतसागर जी के सान्निध्य में पूर्ण हुए। कुल समय 9 वर्ष 10 माह 10 दिन।

20. क्या मुनि श्री चन्द्रप्रभसागर जी ने और भी कोई विशेष उपवास किए हैं ?

1. सिंह निष्क्रीडित व्रत औरंगाबाद में 22-7-05 वीर शासन जयन्ती से प्रारम्भ 09-10-05 को समाप्त जिसमें 60 उपवास एवं 20 पारणा।
2. त्रिलोकसार विधि विधान हिंगोली (महाराष्ट्र) में 12-7-06 से 21-8-06 तक 30 उपवास एवं 11 पारणा।
3. सिंह निष्क्रीडित दूसरी बार भाद्रपद कृष्ण तृतीया 09-08-09 से 27-10-09 तक 60 उपवास एवं 20 पारणा स्थान हुपरी (महाराष्ट्र)।
4. वज्रमध्य विधि – कोल्हापुर (महाराष्ट्र) में 28-9-10 से 4-11-10 तक 29 उपवास एवं 9 पारणा।
5. कर्मदहन व्रत 148 उपवास, 20-7-09 से 31-7-10 तक एक उपवास एक पारणा समापन कोल्हापुर में।
6. जिन गुण संपत्ति के 63 उपवास 01-8-10 से 15-1-11 एक उपवास एक पारणा समापन चिंचवाड (महाराष्ट्र) में।
7. सोलहकारण के 16 उपवास 20-1-11 से 19-2-11 तक एक उपवास एक पारणा समापन रूकड़ी (महाराष्ट्र) में।
8. सिद्धों के 8 उपवास 16-1-11 से 3-3-11 तक एक उपवास एक आहार समापन सदलगा (कर्नाटक)।

9. धर्मचक्र विधि के 1004 उपवास 6-3-11 से सदलगा में प्रारम्भ हुए इस व्रत के प्रारम्भ एवं अन्त में दो–दो उपवास शेष 1 उपवास 1 पारणा।
10. सिंह निष्क्रीडित तीसरी बार श्रावण शुक्ल पूर्णिमा 13-08-11 से 31-10-11 तक 60 उपवास एवं 20 पारणा स्थान फलटन (महाराष्ट्र)।

21. आचार्य श्री के सान्निध्य में अब तक (जून 2013) कितने पञ्चकल्याणक एवं गजरथ महोत्सव हुए हैं ?

आचार्य श्री के सान्निध्य में 48 बार पञ्चकल्याणक एवं गजरथ महोत्सव दोनों मिलाकर हुए।

22. ऐसा कौन सा नगर है, जहाँ छह बार गजरथ चले (सन् 1993 से 2012 तक) हैं एवं पाँच बार आचार्य श्री ससंघ विराजमान थे ?

सागर (म.प्र.) में छह बार गजरथ चले।

23. आचार्य श्री के सान्निध्य में प्रथम बार त्रिगजरथ महोत्सव कहाँ हुआ था ?

खजुराहो (म.प्र.) में हुआ।

24. आचार्य श्री के सान्निध्य में अगस्त 2007 तक कितनी समाधियाँ हुई हैं ?

29 समाधियाँ।

25. उत्तर प्रदेश में आचार्य श्री का वर्षायोग कहाँ हुआ था ?

उत्तर प्रदेश में आचार्य श्री का वर्षायोग फिरोजाबाद में हुआ था।

26. गुजरात में आचार्य श्री का वर्षायोग कहाँ हुआ था ?

गुजरात में आचार्य श्री का वर्षायोग महुवा पार्श्वनाथ, जिला सूरत में हुआ था।

27. बिहार राज्य में आचार्य श्री का वर्षायोग कहाँ हुआ था ?

बिहार राज्य में आचार्य श्री का वर्षायोग ईसरी (वर्तमान झारखंड) में हुआ था।

28. महाराष्ट्र में आचार्य श्री के (2013) तक कितने वर्षायोग हुए हैं ?

महाराष्ट्र में आचार्य श्री के 4 वर्षायोग रामटेक में हुए।

29. मुनिपद एवं आचार्य पद दोनों मिलाकर के आचार्य श्री के राजस्थान (2013 तक) में कुल कितने वर्षायोग हुए?

मुनिपद एवं आचार्य पद दोनों मिलाकर के आचार्य श्री के राजस्थान में 7 वर्षायोग हुए।

30. आचार्य श्री ने अभी तक कितनी रचनाएँ की हैं ?

पद्यानुवाद, दोहानुवाद, हिन्दी शतक, संस्कृत शतक, दोहा शतक, कविता संग्रह आदि लगभग 69 रचनाएँ की हैं।

31. आचार्य श्री के द्वारा लिखित महाकाव्य मूकमाटी का लेखन कब और कहाँ प्रारम्भ हुआ एवं कब और कहाँ समाप्त हुआ था ?

मूकमाटी लेखन कार्य का प्रारम्भ श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र पिसनहारी की मढ़िया, जबलपुर मध्यप्रदेश में आयोजित हुए ग्रन्थराज षट्खण्डागम रचना शिविर (चतुर्थ) के प्रारम्भिक दिवस बीसवें तीर्थङ्कर मुनिसुव्रतनाथ जी के दीक्षा कल्याण दिवस वैशाख कृष्ण दशमी, वीर निर्वाण सम्वत् 2510, विक्रम सम्वत् 2041, बुधवार, 25 अप्रैल 1984 को हुआ तथा समापन श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र नैनागिरि जी (छतरपुर) मध्यप्रदेश में आयोजित श्रीमज्जिनेन्द्र, पञ्चकल्याणक एवं त्रिगजरथ महोत्सव के दौरान ज्ञान कल्याणक दिवस, माघ

शुक्ल त्रयोदशी, वीर निर्वाण सम्वत् 2513, विक्रम सम्वत् 2043, बुधवार, 11 फरवरी 1987 को हुआ। मूकमाटी पर 4 डी.लिट, 24 पी.एच.डी., 7 एम.फिल. 2 एम.एड. तथा 6 एम.ए. शोध हो चुके हैं/हो रहे हैं। रायपुर, वाराणसी एवं राजकोट के विश्व विद्यालयों में पाठ्यक्रम में सम्मिलित हो चुकी है एवं बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल में सन्दर्भ के रूप में सम्मिलित किया जा चुका है।

मूकमाटी का अंग्रेजी, मराठी, बंगला, कन्नड़, गुजराती में अनुवाद हो चुका है। मूकमाटी का अंग्रेजी संस्करण ''द साइलेंट अर्थ'' का विमोचन तात्कालिक राष्ट्रपति सौ. प्रतिभा देवी जी पाटिल द्वारा 14.06.2011 को राष्ट्रपति भवन दिल्ली में हुआ था।

मूकमाटी पर लगभग 350 जैन-अजैन विद्वानों ने समीक्षा लिखी है, जिसका प्रकाशन मूकमाटी मीमांसा भाग 1, 2, 3 के नाम से भारतीय ज्ञान पीठ से हो चुका है।

32. मूकमाटी महाकाव्य कितने खण्डों में लिखा है एवं उनके नाम क्या हैं ?

मूकमाटी महाकाव्य को चार खण्डों में लिखा है –

1. संकर नहीं, वर्ण लाभ।
2. शब्द सो बोध नहीं, बोध सो शोध नहीं।
3. पुण्य का पालन, पाप–प्रक्षालन।
4. अग्नि की परीक्षा, चाँदी–सी राख।

33. आचार्य श्री के आशीर्वाद से शिक्षण संस्थान कहाँ–कहाँ खुले हैं ?

1. प्रशासनिक प्रशिक्षण संस्थान, जबलपुर (मध्य प्रदेश)।
2. श्री दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति संस्थान, सांगानेर,जयपुर (राजस्थान)।
3. शान्ति विद्या छात्रावास, उमरगा (महाराष्ट्र)।
4. श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन गुरुकुल, हैदराबाद (आंध्रप्रदेश)।
5. विद्यासागर इन्स्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट, भोपाल (मध्य प्रदेश)।
6. प्रतिभास्थली ज्ञानोदय विद्यापीठ, जबलपुर (मध्य प्रदेश)।
7. विद्यासागर बी एड. कॉलेज, विदिशा (मध्य प्रदेश)।
8. प्रतिभास्थली ज्ञानोदय विद्यापीठ, डोंगरगढ़ (छ.ग.)

34. आचार्य श्री के आशीर्वाद से कौन-कौन से प्रभावक कार्य हुए एवं हो रहे हैं ?

1. श्री पिसनहारी जी की मढ़िया, जबलपुर में नंदीश्वरद्वीप का नवीन निर्माण हुआ।
2. श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र, कुण्डलपुर के बड़े बाबा का निर्माणाधीन बड़े मन्दिर में विराजमान होना।
3. श्री शान्तिनाथ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र, रामटेकजी में चौबीसी एवं पञ्चबालयति मन्दिरों का नवीन निर्माण हुआ।
4. श्री सिद्धोदय सिद्ध क्षेत्र, नेमावर में त्रिकाल चौबीसी एवं पञ्चबालयति मन्दिरों का नवीन निर्माण कार्य प्रारम्भ है।
5. श्री सर्वोदय तीर्थ अमरकंटक का नवीन निर्माण हुआ।
6. श्री भाग्योदय तीर्थ (मानव सेवा के लिए अस्पताल) का नवीन निर्माण सागर में हुआ।
7. सिलवानी में समवसरण मन्दिर का नवीन निर्माण कार्य प्रारम्भ है।
8. श्री शान्तिनाथ दिगम्बर अतिशय क्षेत्र बीनाबारह जी का जीर्णोद्धार हुआ।

9. विदिशा के शीतलधाम हरीपुरा में समवसरण मन्दिर का नवीन निर्माण कार्य प्रारम्भ है।
10. नवीन निर्माण डोंगरगढ़ में श्री चन्द्रगिरि क्षेत्र का जहाँ 21 फीट ऊँची पाषाण की प्रतिमा का विजौलिया पार्श्वनाथ के आकार में एवं धातु की त्रिकाल चौबीसी प्रतिमाओं का निर्माण कार्य प्रारम्भ है।
11. सुप्रीमकोर्ट में 7 जजों के बैंच से ऐतिहासिक गौवध पर प्रतिबन्ध का फैसला हुआ।
12. बैलों की रक्षा एवं गरीबों को रोजगार हेतु दयोदय जहाज नाम की संस्था का निर्माण गंजबासौदा एवं विदिशा में।
13. भारतवर्ष की 70 गौशालाओं में लगभग 40,000 पशुओं का संरक्षण हो रहा है।
14. श्री दिगम्बर धर्म संरक्षिणी सभा द्वारा गरीब महिलाओं को रोजगार की व्यवस्था के लिए गृह उद्योगों को प्रोत्साहन।
15. बीनाजी बारह में शान्तिधारा दुग्ध योजना का निर्माण कार्य प्रारम्भ है।

अभ्यास

सही या गलत बताइए –

1. विद्याधर का जन्म सदलगा में हुआ था।
2. आचार्य श्री विद्यासागर जी ने लगातार नौ उपवास मध्य प्रदेश में किए थे।
3. आचार्य श्री विद्यासागर जी हरी (वनस्पति) का त्याग मध्य प्रदेश में किया था।
4. आचार्य श्री विद्यासागर जी ने चटाई का त्याग नैनागिर जी में किया था।
5. आचार्य श्री विद्यासागर जी के दो भाई एक परमेष्ठी हैं।
6. प्रथम आर्यिका दीक्षा सागर जिले के अंतर्गत श्रेत्र में हुई थी।
7. आचार्य श्री विद्यासागर जी ने दो अङ्ग प्रमाण रचनाएँ की हैं।

अन्यत्र खोजिए –

1. आचार्य श्री विद्यासागर जी ने सबसे ज्यादा मुनि दीक्षा किस क्षेत्र पर दी हैं ?
2. आचार्य श्री विद्यासागर जी सबसे कम आर्यिका दीक्षा किस जिले में दी हैं ?
3. आचार्य श्री विद्यासागर जी के सान्निध्य में पञ्चकल्याणक, पञ्चकल्याणक एवं गजरथ महोत्सव कहाँ–कहाँ पर हुए हैं ?
4. मूकमाटी महाकाव्य का विमोचन कब, कहाँ और किसके सान्निध्य में हुआ था ?
5. आचार्य श्री विद्यासागर जी से दीक्षित ऐसे कौन से मुनि महाराज हैं, जो राज परिवार (कटक रियासत) से सम्बन्ध रखते हैं ?
6. आचार्य श्री विद्यासागर जी से दीक्षित प्रथम आर्यिका कौन हैं ?
7. आचार्य श्री विद्यासागर जी ने सर्वप्रथम कौन-सी दीक्षा कब, कहाँ और किसको दी ?
8. आचार्य श्री विद्यासागर जी ने सर्वप्रथम ब्रह्मचर्य व्रत किसको, कब और कहाँ दिया ?

(सभी के लिए गुरु भाई मुनि श्री अभयसागर जी, वि.श. एवं www.vidyasagar.net)

अध्याय 13
तीर्थक्षेत्र

जहाँ पर जाने से मन को शान्ति मिलती है, पुण्य का संचय होता है, कर्मों की निर्जरा होती है एवं सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होती है। ऐसे तीर्थक्षेत्र कितने प्रकार के होते हैं तथा प्रमुख तीर्थक्षेत्रों का वर्णन इस अध्याय में है।

1. तीर्थक्षेत्र किसे कहते हैं ?

जहाँ पर तीर्थङ्करों एवं सामान्य केवलियों को मोक्ष (निर्वाण) की प्राप्ति हुई, जहाँ तीर्थङ्करों के कल्याणक (मोक्ष के अलावा) हुए तथा जहाँ कोई विशेष अतिशय घटित हुआ, ऐसे स्थानों (क्षेत्रों) को तीर्थक्षेत्र कहते हैं।

2. तीर्थक्षेत्रों को कितने भागों में विभाजित किया गया है ?

तीर्थक्षेत्रों को चार भागों में विभाजित किया गया है –

1. सिद्ध क्षेत्र, 2. कल्याणक क्षेत्र, 3. अतिशय क्षेत्र, 4. कला क्षेत्र।

1. **सिद्ध क्षेत्र :–** जिस क्षेत्र (स्थान) से तीर्थङ्कर और सामान्य केवली को मोक्ष की प्राप्ति हुई है, ऐसे परम पावन क्षेत्र को सिद्धक्षेत्र कहते हैं। जैसे – अष्टापदजी (कैलास पर्वत), ऊर्जयन्त पर्वत (गिरनारजी), श्री सम्मेदशिखरजी, चम्पापुरजी, पावापुरजी, नैनागिरजी, बावनगजाजी, सिद्धवरकूटजी, मुक्तागिरिजी, सिद्धोदयजी (नेमावर), कुंथलगिरिजी, मथुरा चौरासीजी, तारंगाजी, शत्रुंजयजी, गुणावाजी, कुण्डलपुरजी आदि।
2. **कल्याणक क्षेत्र :–** जिस परम पावन क्षेत्र में तीर्थङ्करों के गर्भ, जन्म, दीक्षा (तप) और ज्ञानकल्याणक हुए हों, उन्हें कल्याणक क्षेत्र कहते हैं – जैसे– अयोध्याजी, श्रावस्तीजी, कौशाम्बीजी, काशीजी, चन्द्रपुरीजी, काकन्दीपुरी, भद्दिलापुरीजी, सिंहपुरीजी, कपिलाजी, रत्नपुरीजी, हस्तिनापुरीजी, मिथिलापुरजी, कुशाग्रपुरजी, शौरीपुरजी, कुण्डलपुरजी आदि।
3. **अतिशय क्षेत्र :–** श्रावकों के विशेष पुण्य से देवों द्वारा (देवगति के जीव) विशेष चमत्कार आदि किए जाते हैं, ऐसे क्षेत्रों को अतिशय क्षेत्र कहते हैं। जैसे – गोम्मटेश्वर जी, महावीरजी, तिजाराजी, पपौराजी, अहिच्छत्र पार्श्वनाथजी, महुवा पार्श्वनाथजी, रामटेकजी, बहोरीबंदजी, पनागरजी, पिसनहारी की मढ़ियाजी, देवगढ़जी, चाँदखेड़ीजी, सीरोनजी, मूढ़बद्रीजी, बीनाबारहजी, थूवौनजी, अमरकंटकजी, नवागढ़जी, नेमगिरिजी (जिन्तूर), कचनेरजी, भातकुली, जटवाडा, चन्द्रगिरि जी डोंगरगढ़ (छ.ग.) आदि।
4. **कला क्षेत्र :–** जिन अतिशय क्षेत्रों में कलाकारों ने अपनी कला विशेष प्रदर्शित की है। ऐसे क्षेत्रों को कला क्षेत्र कहते हैं। जैसे – धर्मस्थलजी, शंखबसदीजी (कर्नाटक), मूढबिद्री, खजुराहोजी, नौगामाजी (राजस्थान), एलोराजी आदि।

3. धर्मक्षेत्रों में पाप करने का क्या फल होता है ?

अन्य क्षेत्र में किया हुआ पाप धर्मक्षेत्र में समाप्त हो जाता है किन्तु धर्मक्षेत्र में किया हुआ पाप वज्रलेप जैसा कठोरता से चिपकता है अर्थात् फल दिए बिना नहीं रहता। यथा –

अन्य क्षेत्रे कृतं पापं धर्म क्षेत्रे विनश्यति।
धर्म क्षेत्रे कृतं पापं वज्रलेपो भविष्यति।।

4. क्षेत्र और खेत में क्या अन्तर है ?

किसान परिश्रम करके खेत में धान उगाता है, जिससे सारी सृष्टि के जीवों का पेट भरता है। यह धान (अनाज) भी धर्म्यध्यान में सहायक है क्योंकि बिना भोजन के धर्म भी नहीं हो सकता है तथा धर्मात्मा क्षेत्र में ध्यान लगाता है, जिससे यह आत्मा एक दिन परमात्मा बन जाती है। यथा –

खेत अरु क्षेत्र में अन्तर इतना जान।
धान लगत है खेत में, लगत क्षेत्र में ध्यान।।

प्रमुख क्षेत्रों का विवरण निम्न प्रकार है –

1. **तीर्थराज श्री सम्मेदशिखर जी** – तीर्थराज सम्मेदशिखर दिगम्बर जैनों का सबसे बड़ा और सबसे ऊँचा शाश्वत् सिद्धक्षेत्र है। यह वर्तमान में झारखण्ड प्रदेश में पारसनाथ स्टेशन से 23 किलोमीटर पर मधुवन में स्थित है। तीर्थराज सम्मेदशिखर की ऊँचाई 4,579 फीट है। इसका क्षेत्रफल 25 वर्गमील में है एवं 27 किलोमीटर की पर्वतीय वन्दना है। सम्पूर्ण भूमण्डल पर इस शाश्वत् निर्वाणक्षेत्र से पावन, पवित्र और अलौकिक कोई भी तीर्थक्षेत्र, अतिशय क्षेत्र और सिद्धक्षेत्र नहीं है। इस तीर्थराज के कण– कण में अनन्त विशुद्ध आत्माओं की पवित्रता व्याप्त है। अतः इसका एक–एक कण पूज्यनीय है, वन्दनीय है। कहा भी है – **एक बार वन्दे जो कोई ताको नरक पशुगति नहीं होई।** एक बार जो इस पावन पवित्र सिद्धक्षेत्र की वन्दना श्रद्धापूर्वक करते हैं, उनकी नरक और तिर्यञ्चगति छूट जाती है अर्थात् वो नरकगति में और तिर्यञ्चगति में जन्म नहीं लेता है। इस तीर्थराज सम्मेदशिखर से वर्तमान काल सम्बन्धी चौबीसी के बीस तीर्थङ्करों के साथ–साथ अरबों मुनियों ने मोक्ष प्राप्त किया एवं इस तीर्थ की एक बार वन्दना करने से करोड़ों उपवासों का फल मिलता है। इस सिद्धक्षेत्र की भूमि के स्पर्श मात्र से संसार ताप नाश हो जाता है। परिणाम निर्मल, ज्ञान, उज्ज्वल, बुद्धि स्थिर, मस्तिष्क शान्त और मन पवित्र हो जाता है। पूर्वबद्ध पाप तथा अशुभ कर्म नष्ट हो जाते हैं । दुःखी प्राणी को आत्मशान्ति प्राप्त होती है। ऐसे निर्वाण क्षेत्र की वन्दना करने से उन महापुरुषों के आदर्श से अनुप्रेरित होकर आत्मकल्याण की भावना उत्पन्न होती है।
2. **श्री पावापुर जी (बिहार)** – यहाँ से अन्तिम तीर्थङ्कर महावीरस्वामी को निर्वाण की प्राप्ति हुई थी। यहाँ तालाब के मध्य में एक विशाल मन्दिर है, जिसे जलमंदिर कहते हैं। जलमंदिर में तीर्थङ्कर महावीरस्वामी, गौतमस्वामी एवं सुधर्मास्वामी के चरण स्थापित हैं । कार्तिक कृष्ण अमावस्या को तीर्थङ्कर महावीरस्वामी के निर्वाण दिवस के उपलक्ष्य में यहाँ बहुत बड़ा मेला लगता है।

3. **श्री अयोध्या जी (उत्तर प्रदेश)** – यहाँ तीर्थङ्कर ऋषभदेव जी, अजितनाथ जी, अभिनन्दननाथ जी, सुमतिनाथ जी और अनन्तनाथ जी के गर्भ, जन्म, तप और ज्ञान कल्याणक हुए थे। (ऋषभदेव का ज्ञानकल्याणक प्रयाग में हुआ था) अयोध्या की रचना देवों ने की थी। यहाँ लगभग 9 फीट ऊँचाई वाली ऋषभदेव की कायोत्सर्ग प्रतिमा बड़ी मनोज्ञ है।

4. **श्री कुण्डलपुर जी (मध्यप्रदेश)** – बुन्देलखण्ड का यह सुप्रसिद्ध सिद्धक्षेत्र है। इस क्षेत्र पर कुण्डल के आकार का एक पर्वत है, जिससे इस क्षेत्र का नाम कुण्डलपुर पड़ा है। यहाँ एक विशाल पद्मासन 12 फुट की प्रतिमा है। जिस पर चिह्न नहीं है। जिसे जैन–अजैन सभी 'बड़े बाबा' के नाम से जानते हैं। पर्वत एवं तलहटी में कुल मिलाकर लगभग 62 जिनालय हैं। विगत 17 जनवरी, 2006 को सुप्रसिद्ध दिगम्बर जैनाचार्य गुरुवर श्री विद्यासागर जी महाराज के आशीर्वाद से वह मूर्ति निर्माणाधीन बहुत विशाल मंदिर में स्थापित की जा चुकी है। इस क्षेत्र से अन्तिम केवली ''श्रीधर स्वामी'' मोक्ष पधारे थे। उनके चरण चिह्न भी वहाँ स्थापित हैं। आचार्य श्री जी द्वारा यहाँ पर फरवरी, 2013 तक 84 आर्यिका दीक्षा एवं 4 क्षुल्लक दीक्षा प्रदान की जा चुकी हैं एवं 5 वर्षायोग सम्पन्न कर चुके हैं।

5. **श्री सिद्धोदय जी (नेमावर)** – यह क्षेत्र मध्यप्रदेश के देवास जिले में राष्ट्रीय राजमार्ग 86 पर स्थित है। यहाँ से रावण के पुत्र आदिकुमार सहित साढ़े पाँच करोड़ मुनिराजों को मोक्ष की प्राप्ति हुई थी। यहाँ सुप्रसिद्ध दिगम्बर जैनाचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के आशीर्वाद से खड्गासन अष्टधातु की पञ्च बालयति एवं त्रिकाल चौबीसी के विशाल मंदिरों का निर्माण हो रहा है। अभी यहाँ एक मन्दिर है, जहाँ मूलनायक पार्श्वनाथ की प्रतिमा है तथा एक मन्दिर नगर (नेमावर) में है। जहाँ मूलनायक अतिशयकारी भगवान् आदिनाथ जी की प्रतिमा विराजमान है। सिद्धोदय क्षेत्र पर आचार्य श्री द्वारा सन् 2013 तक 33 मुनि, 43 आर्यिका, 8 एलक एवं 7 क्षुल्लक दीक्षा प्रदान की जा चुकी है एवं दो वर्षायोग सम्पन्न कर चुके हैं।

6. **श्री मुक्तागिरि जी** – यह सिद्ध क्षेत्र मध्यप्रदेश के बैतूल जिले में स्थित है। यहाँ से साढ़े तीन करोड़ मुनि मोक्ष पधारे थे। यहाँ पहाड़ पर 52 जिनालय हैं। 26 नम्बर के मन्दिर में मूलनायक भगवान् पार्श्वनाथ जी की प्रतिमा है एवं तलहटी में 2 मन्दिर हैं। इस क्षेत्र में अतिशय होते रहते हैं। अभी–अभी श्री अरुण जैन, दिल्ली जो सन् 1978 से वैशाखी के सहारे चलते थे। मुक्तागिरि सन् 1994 में आए तो बिना वैशाखी के यात्रा (वन्दना) की, सन् 1995 में पुनः आए तो गेट से ही वैशाखी की आवश्यकता नहीं पड़ी, सन्1996 में वापस बैतूल जाते समय स्टेशन तक वैशाखी की आवश्यकता नहीं पड़ी, सन् 1997 से पूर्णतः वैशाखी छूट गई। वह प्रतिवर्ष यहाँ दर्शन करने आते हैं। इस सिद्ध क्षेत्र पर गुरुवर आचार्य श्री विद्यासागर जी द्वारा फरवरी 2013 तक 9 मुनि, 9 एलक, 7 क्षुल्लक एवं 1 क्षुल्लिका दीक्षा प्रदान की जा चुकी है एवं तीन वर्षायोग सम्पन्न कर चुके हैं।

7. **श्री गिरनारजी (गुजरात)** – 22 वें तीर्थङ्कर श्री नेमिनाथ जी के दीक्षा, ज्ञान एवं निर्वाण कल्याणक यहीं से हुए तथा 72 करोड़ 700 मुनि यहाँ से मोक्ष पधारे यहाँ कुल 5 पहाड़ी हैं। प्रथम पहाड़ी पर राजुल की गुफा, दूसरी पहाड़ी पर अनिरुद्ध कुमार के चरण चिह्न, तीसरी पहाड़ी पर शम्भुकुमार के चरण चिह्न, चौथी पहाड़ी पर

प्रद्युम्न कुमार के चरण चिह्न हैं । पाँचवीं पहाड़ी पर तीर्थङ्कर नेमिनाथ के चरण चिह्न हैं । चरण चिह्न के पीछे तीर्थङ्कर श्री नेमिनाथ जी की भव्य दिगम्बर प्रतिमा है। गुरुवर आचार्य श्री विद्यासागर जी ने इस पहाड़ी पर 5 एलक दीक्षा प्रदान की थीं ।

8. **श्री श्रवणबेलगोला (कर्नाटक)** – हासन जिले में श्रवणबेलगोला महान्अतिशय क्षेत्र है। इस क्षेत्र में दो पहाड़ियाँ हैं। एक विन्ध्यगिरि नाम की पहाड़ी है। विन्ध्यगिरि पहाड़ी पर भगवान् बाहुबली की 57 फीट ऊँचाई वाली एक प्रतिमा खुले आकाश में है। इसे गंगवंश के सेनापति चामुण्डराय ने निर्माण कराया था, जिसका अपर नाम गोम्मट था। अतः गोम्मट के ईश्वर (स्वामी) होने से इस क्षेत्र एवं प्रतिमा का नाम गोम्मटेश्वर पड़ गया। इस प्रतिमा की प्राण प्रतिष्ठा सन् 981 में हुई है। तभी से प्रत्येक 12 वर्ष में यहाँ महामस्तकाभिषेक होता है। सामने दूसरी पहाड़ी पर चन्द्रगिरि है, जहाँ पर अनेक मन्दिर हैं। चामुण्डराय ने चन्द्रगिरि पर एक हस्त प्रमाण इन्द्रनीलमणि की तीर्थङ्कर नेमिनाथ जी की प्रतिमा स्थापित की थी। एक गुफा में अन्तिम श्रुतकेवली श्री भद्रबाहु मुनिराज के चरण चिह्न बने हुए हैं । जहाँ उन्होंने सल्लेखना धारण की थी।

अभ्यास

सही या गलत बताइए –

1. अयोध्या सिद्धक्षेत्र नहीं है।
2. सिद्धोदय सिद्धक्षेत्र है।
3. मुक्तागिरि महाराष्ट्र प्रान्त में आता है।
4. आचार्य श्री ने श्रवणबेलगोला में दीक्षा दी थी।
5. श्रीधर स्वामी मध्यप्रदेश से मोक्ष पधारे थे।

अन्यत्र खोजिए –

1. तीर्थराज सम्मेदशिखर जी में गणेशप्रसादजी वर्णी के साथ क्या अतिशय हुआ ?
   (मे.जी.गा. पृ. 52–57)
2. सिद्धोदय सिद्धक्षेत्र पर आचार्य श्री ने प्रथम बार मुनि दीक्षा कब दी ? (वि.श.)
3. श्रवणबेलगोला की मूर्ति का निर्माण किसकी प्रेरणा से हुआ था ? (गोमटेश गाथा - नीरज जी)
4. मध्यप्रदेश में कुल कितने सिद्धक्षेत्र हैं ? (तीर्थङ्कर वर्धमान केलैन्डर)
5. उत्तरप्रदेश में कितने सिद्धक्षेत्र हैं ? (तीर्थङ्कर वर्धमान केलैन्डर)

अध्याय 14
जैनधर्म की मौलिक विशेषताएँ

जिस तरह प्रत्येक राष्ट्र की अपनी–अपनी विशेषताएँ होती हैं तथा प्रत्येक धर्म की अपनी–अपनी विशेषताएँ होती हैं, उसी प्रकार जैनधर्म की मौलिक विशेषताओं का वर्णन इस अध्याय में है।

1. **जिन एवं जैन किसे कहते हैं ?**
   जयति इति जिनः। अपनी इन्द्रियों, कषायों और कर्मों को जीतने वाले जिन कहलाते हैं तथा ''जिनस्य उपासकः जैनः'' अर्थात् जिनेन्द्र भगवान् के उपासक को जैन कहते हैं।
2. **जैनधर्म किसे कहते हैं ?**
   जिन के द्वारा कहा गया धर्म जैनधर्म है।
3. **धर्म किसे कहते हैं ?**
   जिसके द्वारा यह संसारी आत्मा–परमात्मा बन जाता है, वह धर्म है। अर्थात् सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र को धर्म कहा है, क्योंकि रत्नत्रय के माध्यम से ही यह आत्मा–परमात्मा बनती है।
4. **जैनधर्म के पर्यायवाची नाम कौन–कौन से हैं ?**
   जैनधर्म के पर्यायवाची नाम निम्नलिखित हैं –
   1. **निर्ग्रन्थ धर्म** – समस्त परिग्रह से रहित साधु को निर्ग्रन्थ कहते हैं और उनके धर्म को निर्ग्रन्थ धर्म कहते हैं।
   2. **श्रमण धर्म** – तपश्चरण करके जो अपनी आत्मा को श्रम व परिश्रम पहुँचाते हैं, वे श्रमण हैं और उनके द्वारा धारण किया जाने वाला धर्म श्रमण धर्म है।
   3. **आर्हत् धर्म** – अरिहन्त परमेष्ठी द्वारा प्रतिपादित धर्म आर्हत् धर्म है।
   4. **सनातन धर्म** – अनादिकाल से चले आ रहे धर्म को सनातन धर्म कहते हैं।
   5. **जिन धर्म** – जिनेन्द्र कथित धर्म को जिनधर्म कहते हैं।
5. **जैनधर्म की मौलिक विशेषताएँ कौन–कौन सी हैं ?**
   जैनधर्म की मौलिक विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –
   1. **अनेकान्त** – अनेक+अन्त=अनेकान्त। अनेक का अर्थ है– एक से अधिक, अन्त का अर्थ है गुण या धर्म। वस्तु में परस्पर विरोधी अनेक गुणों या धर्मों के विद्यमान रहने को अनेकान्त कहते हैं।
   2. **स्याद्वाद** – अनेकान्त धर्म का कथन करने वाली भाषा पद्धति को स्याद्वाद कहते हैं। स्यात् का अर्थ है कथंचित् किसी अपेक्षा से एवं वाद का अर्थ है कथन करना। जैसे- रामचन्द्र जी राजा दशरथ की अपेक्षा से पुत्र हैं एवं रामचन्द्र जी लव–कुश की अपेक्षा से पिता हैं।
   3. **अहिंसा** – जैनधर्म में अहिंसा प्रधान है। मन, वचन और काय से किसी भी प्राणी को कष्ट नहीं पहुँचाना एवं अन्तरङ्ग में राग–द्वेष परिणाम नहीं करना अहिंसा है।

4. **अपरिग्रहवाद –** समस्त प्रकार की मूर्च्छा/आसक्ति का त्याग करना एवं मूर्च्छा का कारण पर पदार्थों का त्याग करना अपरिग्रहवाद है। अपरिग्रहवाद का जीवन्त उदाहरण दिगम्बर साधु है। अपरिग्रहवाद के सिद्धान्त को विश्व मान ले तो विश्व में अपने आप समाजवाद आ जाएगा।
5. **प्राणी स्वातंत्र्य**– संसार का प्रत्येक प्राणी स्वतंत्र है। जैसे – प्रत्येक नागरिक राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री बन सकता है। उसी प्रकार प्रत्येक आत्मा–परमात्मा बन सकती है। किन्तु परमात्मा बनने के लिए कर्मों का क्षय करना पड़ेगा और कर्मों का क्षय, बिना दिगम्बर मुनि बने नहीं हो सकता है।
6. **सृष्टि शाश्वत है** – इस सृष्टि को न किसी ने बनाया है, न इसको कोई नाश कर सकता है, न कोई इसकी रक्षा करता है। प्रत्येक जीव को अपने किए हुए कर्मों के अनुसार फल मिलता है। उसके लिए न्यायाधीश की आवश्यकता नहीं है। जैसे – शराब पीने से नशा होता है और दूध पीने से ताकत आती है। शराब या दूध पीने के बाद उसके फल देने के लिए किसी दूसरे निर्णायक की आवश्यकता नहीं है।
7. **अवतारवाद नहीं** – संसार से मुक्त होने के बाद परमात्मा पुनः संसार में नहीं आता है। जैसे – दूध से घी बन जाने पर पुनः वह घी, दूध के रूप में परिवर्तित नहीं हो सकता है। उसी प्रकार परमात्मा (भगवान्) पृथ्वी पर अवतार नहीं लेते हैं।
8. **पुनर्जन्म** – जैनधर्म पुनर्जन्म को मानता है। प्राणी मरने के बाद पुनः जन्म लेता है। जन्म लेने के बाद पुनः मरण भी हो सकता है, मरण न हो तो निर्वाण भी प्राप्त कर सकता है, किन्तु निर्वाण के बाद पुनः उसका जन्म नहीं होता है।
9. **भगवान् न्यायाधीश नहीं** – भगवान् मात्र देखते जानते हैं वे किसी को सुखी–दुःखी नहीं करते हैं। जीव अपने ही कर्मों से सुखी–दुःखी होता है।
10. **द्रव्य शाश्वत् है** – द्रव्य का कभी नाश नहीं होता मात्र पर्याय बदलती रहती है। आत्मा भी एक द्रव्य है वह न जन्मती है और न मरती है मात्र पर्याय बदलती है।

अभ्यास

सही या गलत बताइए –

1. दूसरों को जीतने वाले जिन कहलाते हैं।
2. रत्नत्रय को धर्म कहा है।
3. आप चाचा, मामा या बुआ, मौसी हो सकते हैं/सकती हैं।
4. प्रत्येक परमात्मा आत्मा बन सकता है।
5. आप प्रधानमंत्री बन सकते हैं।
6. घी, दूध नहीं बन सकता है।

अन्यत्र खोजिए –

1. हिन्दूधर्म एवं जैनधर्म की मान्यताओं में मूलभूत अन्तर कौन–कौन से हैं ? (जै.मौ.वि.)
2. जैनधर्म का प्रथम सोपान क्या है ? (सुगम है)
3. जैनधर्म का अन्तिम लक्ष्य क्या है ? (सुगम है)

करणानुयोग

अध्याय 15
जैन भूगोल

यह लोक किसी इंजीनियर के द्वारा बनाया हुआ नहीं है। यह तो अनादिनिधन है। इसका चिन्तन करना संस्थान विचय धर्मध्यान है। इसका आकार कैसा है कौन से जीव कहाँ रहते हैं, इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. लोक किसे कहते हैं ?

अनन्त आकाश के मध्य का वह अनादि व अकृत्रिम भाग जिसमें जीव आदि षट् द्रव्य रहते हैं, वह लोक कहलाता है।

2. लोक का आकार कैसा है ?

1. तीन गिलास लीजिए एक को उल्टा रखें, उसके ऊपर दूसरे गिलास को सीधा रखें एवं दूसरी गिलास के ऊपर तीसरे गिलास को उल्टा रखें यह जो आकार बनता है, वह लोक का आकार है।
2. यह लोक पुरुषाकार है, जैसे-एक पुरुष जो दोनों पैर फैलाकर कटि पर दोनों तरफ एक-एक हाथ रखकर खड़ा है, यह जो आकार बनता है, वह लोक का आकार है।
3. मिस्र देश के गिरजे में बने हुए महास्तूप से यह लोक का आकार किंचित् समानता रखता हुआ प्रतीत होता है। (जै. सि. को. 3/438)

3. लोक का विस्तार कितना है ?

लोक का विस्तार दक्षिणोत्तर दिशा में सर्वत्र 7 राजू मोटा (लम्बा) है। पूर्व-पश्चिम दिशाओं का विस्तार (चौड़ा) नीचे 7 राजू, ऊपर क्रम से घटता हुआ मध्य लोक में 1 राजू, पश्चात् क्रमशः बढ़ता-बढ़ता ब्रह्म स्वर्ग में 5 राजू, फिर क्रमशः घटता हुआ लोक के अंत में 1 राजू चौड़ा है। लोक की ऊँचाई कुल 14 राजू है। सम्पूर्ण लोक का घनफल 7 राजू का घन अर्थात् 7 × 7× 7= 343 घन राजू है।

4. राजू किसे कहते हैं ?

जगत् श्रेणी के सातवें भाग को राजू कहते हैं। (सि.सा.दी. 4/2-3) यह आगम की परिभाषा है। सामान्य परिभाषा में असंख्यात योजन का एक राजू होता है। रिसर्च स्कालर पंडित माधवाचार्य ने कहा है - 1 हजार भार का 1 गोला इन्द्र लोक से नीचे गिरकर 6 माह में जितनी दूरी तय करता है, वह 1 राजू है। (जम्बूदीप पण्णत्ति में उद्घृत पृष्ठ 23)

5. अधोलोक कितने राजू में है एवं वहाँ कौन-कौन रहते हैं ?

अधोलोक 7 राजू में है। 6 राजू में सात पृथ्वी (नरक) हैं एक पृथ्वी से दूसरी पृथ्वी के बीच 1 राजू में कुछ कम अर्थात् असंख्यात योजन प्रमाण खाली आकाश है। इनमें सबसे ऊपर मेरु पर्वत की आधारभूत रत्नप्रभा नाम की पृथ्वी है जिसके तीन भाग हैं-खरभाग, पङ्कभाग और अब्बहुलभाग। खरभाग 16,000 योजन मोटा है, इसमें भवनवासी और व्यन्तरों के आवास हैं। जिनमें असुरकुमार के अलावा 9 प्रकार के

भवनवासी एवं राक्षस देवों के अलावा शेष 7 प्रकार के व्यंतर देव निवास करते हैं। पङ्क भाग 84,000 योजन मोटा है, इसमें भवनवासी देवों के असुरकुमार देव तथा व्यन्तरों के राक्षस नामक देव निवास करते हैं। अब्बहुल भाग 80,000 योजन मोटा है, इसमें नारकी रहते हैं। इस प्रकार प्रथम पृथ्वी की मोटाई 1,80,000 योजन है, दूसरी शर्कराप्रभा पृथ्वी की मोटाई 32,000 योजन, तीसरी बालुकाप्रभा पृथ्वी की मोटाई 28,000 योजन, चौथी पङ्कप्रभा पृथ्वी की मोटाई 24,000 योजन, पाँचवीं धूमप्रभा पृथ्वी की मोटाई 20,000 योजन, छठवीं तमःप्रभा पृथ्वी की मोटाई 16,000 योजन एवं सातवीं महातमः प्रभा पृथ्वी की मोटाई 8,000 योजन है एवं अन्तिम एक राजू में निगोद आदि पञ्चस्थावर रहते हैं, जिसे कलकला पृथ्वी कहते हैं। (त्रि.सा.,146-149)

6. लोक का आधार क्या है ?

घनोदधिवलय, घनवातवलय और तनुवातवलय लोक के आधार हैं। जैसे-चमड़ी शरीर को चारों ओर से घेरे रहती है या जैसे-छाल वृक्ष को चारों ओर से घेरे रहती है, वैसे ही ये तीनों वातवलय चारों ओर से लोक को घेरे हुए हैं। लोक के नीचे तथा दोनों पार्श्व भागों में नीचे से एक राजू की ऊँचाई तक अर्थात् जहाँ तक पञ्च स्थावर रहते हैं एवं सातों भूमियों (नरकों) के नीचे एवं ईषत्प्राग्भार नामक आठवीं पृथ्वी के नीचे तीनों वातवलय 20-20 हजार योजन मोटे हैं।

दोनों पार्श्व भागों में एक राजू के ऊपर सप्तम पृथ्वी (नरक) के निकट आठों दिशाओं में तीनों वातवलय क्रमशः 7, 5, 4 योजन मोटे हैं। फिर क्रमशः घटते हुए मध्य लोक की आठों दिशाओं में 5, 4, 3 योजन मोटे रह जाते हैं। फिर क्रमशः बढ़ते हुए ब्रह्मलोक की आठों दिशाओं में 7, 5, 4 योजन मोटे हो जाते हैं, फिर ऊपर क्रमशः घटते हुए लोकाग्र के पार्श्व भाग में 5, 4, 3 योजन मोटे रह जाते हैं। ये तीनों वातवलय लोक शिखर पर क्रमशः 2 कोस (4000 धनुष), 1 कोस (2000 धनुष) एवं 1575 धनुष मोटे रह जाते हैं। (ति. प., 1/273-276)

7. वातवलय किस रंग के हैं ?

घनोदधिवलय गोमूत्र के रंग का, घनवातवलय काले रंग की मूँग के समान एवं तनुवातवलय अनेक रंगों वाला है। (ति. प., 1/271-272)

8. मध्यलोक का विस्तार कितना है ?

मध्यलोक एक राजू तिर्यक् (चारों ओर) फैला हुआ है और 1 लाख 40 योजन सुमेरु पर्वत के बराबर ऊँचा है। सुमेरु पर्वत की जड़ 1 हजार योजन जो चित्रा पृथ्वी में नींव के रूप में है। 99,000 योजन ऊँचा एवं 40 योजन की चोटी (चूलिका) है। इस मध्य-लोक में असंख्यात द्वीप और असंख्यात समुद्र एक दूसरे को घेरे हुए हैं। 1/2 राजू में अन्तिम स्वयंभूरमण समुद्र है एवं शेष 1/2 राजू में असंख्यात द्वीप व समुद्र हैं। मध्यलोक के बीचोंबीच जम्बूद्वीप है, यह थाली के आकार का है। जिसका विस्तार 1 लाख योजन है, जम्बूद्वीप को घेरे हुए लवण समुद्र है, यह चूड़ी के आकार का है। इसका विस्तार 2 लाख योजन है। लवणसमुद्र धातकीखण्ड द्वीप से घिरा है, इसका विस्तार 4 लाख योजन है। धातकीखण्ड द्वीप कालोदधि समुद्र से परिवेष्टित है, इसका विस्तार 8 लाख योजन है। पुष्कर द्वीप, पुष्कर समुद्र से घिरा है। इसका विस्तार 16 लाख योजन है किन्तु बीच में मानुषोत्तर पर्वत पड़ जाने पर इसका विस्तार 8 लाख योजन है। जम्बूद्वीप के बाद का विस्तार दोनों तरफ लेना है, अतः1+2+4+8+8+2+4+8+8=45 लाख

अढ़ाईद्वीप

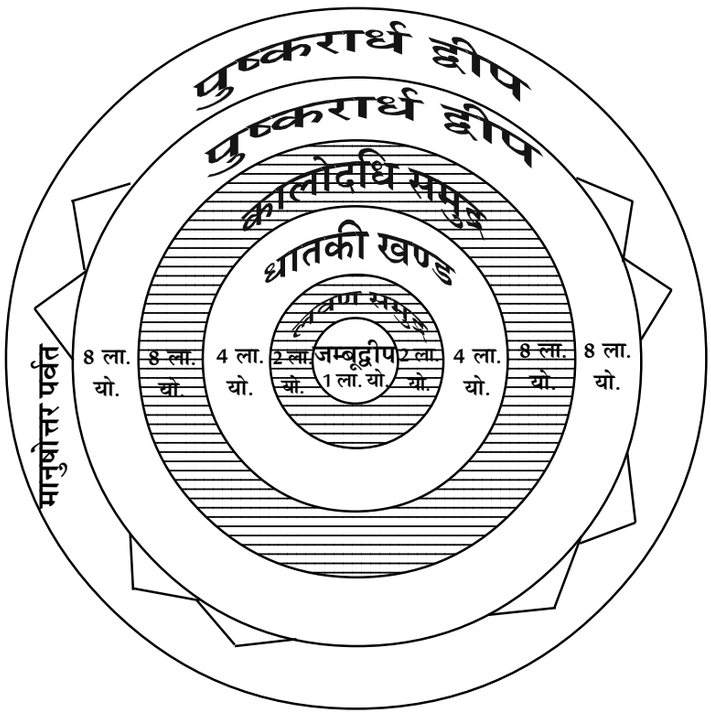

योजन है। इस अढ़ाई द्वीप में मनुष्य रहते हैं। मनुष्य इसके आगे नहीं जा सकते अतः इस पर्वत का मानुषोत्तर पर्वत नाम सार्थक है।

9. इस द्वीप का नाम जम्बूद्वीप क्यों पड़ा ?

जम्बूद्वीप के उत्तरकुरु में स्थित एक अनादिनिधन जम्बू का वृक्ष है, जिससे इस द्वीप का नाम जम्बूद्वीप पड़ा। इसी प्रकार धातकीखण्ड के उत्तरकुरु में धातकी वृक्ष होने के कारण उस द्वीप का नाम धातकीखण्ड है। इसी प्रकार पुष्करद्वीप के उत्तरकुरु में पुष्कर वृक्ष होने के कारण उस द्वीप का नाम पुष्करद्वीप है।

(स. सि., 3/9/383)

10. जम्बूद्वीप को विभाजित करने वाले पर्वतों के नाम, उनका रङ्ग, उन पर स्थित तालाब, तालाबों के मध्य कमल पर निवास करने वाली देवियों के नाम एवं तालाबों से निकलने वाली नदियों के नाम बताइए ?

क्र.	पर्वत	रङ्ग	तालाब	देवियाँ	नदियाँ
1.	हिमवन्	स्वर्ण के समान	पद्म	श्री	गङ्गा, सिन्धु और रोहितास्या
2.	महाहिमवन्	चाँदी के समान	महापद्म	ह्री	रोहित, हरिकान्ता
3.	निषध	तपाये हुए स्वर्ण के समान	तिगिञ्छ	धृति	हरित, सीतोदा
4.	नील	वैडूर्य मणि के समान	केसरी	कीर्ति	सीता, नरकान्ता
5.	रुक्मी	चाँदी के समान	महापुण्डरीक	बुद्धि	नारी, रूप्यकूला
6.	शिखरी	स्वर्ण के समान	पुण्डरीक	लक्ष्मी	सुवर्णकूला, रक्ता और रक्तोदा

11. छः पर्वतों से सात क्षेत्र कौन से होते हैं ?

भरतवर्ष, हैमवतवर्ष, हरिवर्ष, विदेहवर्ष, रम्यकवर्ष, हैरण्यवतवर्ष और ऐरावतवर्ष ये सात क्षेत्र होते हैं।

12. कौन-सी नदी किस समुद्र में मिलती है ?

गङ्गा, रोहित, हरित, सीता, नारी, सुवर्णकूला और रक्ता ये सात नदियाँ पूर्व लवण समुद्र में मिलती हैं। सिन्धु, रोहितास्या, हरिकांता, सीतोदा, नरकान्ता, रूप्यकूला और रक्तोदा ये सात नदियाँ पश्चिम लवण समुद्र में मिलती हैं। (त.सू., 3/21)

13. इन नदियों की सहायक नदियाँ कितनी-कितनी हैं ?

गङ्गा-सिन्धु की	–	14000	रोहित-रोहितास्या की	–	28000
हरित-हरिकांता की	–	56000	सीता-सीतोदा की	–	112000
नारी-नरकान्ता की	–	56000	सुवर्णकूला-रूप्यकूला की	–	28000
रक्ता-रक्तोदा की	–	14000			

विशेष-प्रत्येक की एक-सी अर्थात् गङ्गा की 14000 एवं सिन्धु की भी 14000 सहायक नदियाँ हैं। इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिए। (स.सि., 3/23/410)

14. भरत क्षेत्र का विस्तार कितना है ?

भरत क्षेत्र का विस्तार 526 $^{6}/_{19}$ योजन। (त.सू., 3/24)

15. अढ़ाई द्वीप में कितने आर्यखण्ड एवं म्लेच्छखण्ड हैं ?

अढ़ाई द्वीप में 170 आर्यखण्ड एवं 850 म्लेच्छखण्ड हैं।

16 अढ़ाई द्वीप में कितनी भोगभूमियाँ एवं कर्मभूमियाँ हैं ?

अढ़ाई द्वीप में 30 भोगभूमियाँ एवं 15 कर्मभूमियाँ हैं।

17. कर्मभूमियाँ, भोगभूमियाँ इतनी ही हैं कि और भी हैं ?

अढ़ाईद्वीप के बाद, अंतिम स्वयंभूरमण द्वीप में स्थित नागेन्द्र पर्वत (बृ.द्र.सं.टी.,35) तक समस्त द्वीपों में जघन्य भोगभूमि हैं। किन्तु वहाँ मात्र तिर्यञ्च रहते हैं। नागेन्द्र पर्वत के परवर्ती स्वयंभूरमण द्वीप के शेष भाग और स्वयंभूरमण समुद्र में कर्मभूमि है। वहाँ भी मात्र तिर्यञ्च रहते हैं। (त्रि.सा., 323-324)

18. द्वीप समुद्रों का आकार कैसा है ?

जम्बूद्वीप थाली के आकार का है, इसके बाद सभी द्वीप और समुद्र चूड़ी के आकार के हैं।

19. मध्यलोक को तिर्यक् लोक क्यों कहते हैं ?

स्वयंभूरमण पर्यन्त असंख्यात द्वीप, समुद्र तिर्यक्-समभूमि पर तिरछे अवस्थित हैं, अतः इसको तिर्यक्लोक कहते हैं। (रा.वा.उ., 3/7)

20. ज्योतिषी देव किन्हें कहते हैं ?

सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह, नक्षत्र और तारे ये पाँच प्रकार के देव ज्योतिर्मय हैं। प्रकाश करने का ही स्वभाव होने से इन देवों की ज्योतिषी देव यह संज्ञा सार्थक है। (स.सि., 4/12/465)

21. सूर्य-चन्द्रमा क्या हैं ?

सूर्य-चन्द्रमा ज्योतिषी देवों के विमान हैं। सूर्य बिम्ब में आतप नाम कर्म का उदय है जो मूल में शीतल एवं उसकी प्रभा (किरणें) गर्म होती हैं तथा चन्द्रबिम्ब में उद्योत नाम कर्म का उदय है, जो मूल में भी शीतल एवं उसकी प्रभा भी शीतल है। ज्योतिषी देवों के विमान पृथ्वीकायिक के होते हैं।
(गो.क., 33)

22. ज्योतिषी देवों का आवास कहाँ-कहाँ पर है ?

ये देव चित्रा पृथ्वी से 790 योजन की ऊँचाई से लेकर 900 योजन की ऊँचाई तक अर्थात् 110 योजन में निवास करते हैं एवं एक राजू तिर्यक् घनोदधि वलय तक फैले हैं।

790 योजन ऊपर ताराएँ

इससे 10 योजन (800 योजन) ऊपर सूर्य (32 लाख मील ऊपर)
इससे 80 योजन (880 योजन) ऊपर चन्द्रमा
इससे 4 योजन (884 योजन) ऊपर नक्षत्र
इससे 4 योजन (888 योजन) ऊपर बुध
इससे 3 योजन (891 योजन) ऊपर शुक्र
इससे 3 योजन (894 योजन) ऊपर गुरु
इससे 3 योजन (897 योजन) ऊपर मङ्गल (अङ्गारक)
इससे 3 योजन (900 योजन) ऊपर शनि (मंदगति)
110 योजन

बुध और शनिश्चर के अंतराल में अवशिष्ट 83 ग्रहों की नित्य नगरियाँ अवस्थित हैं। (त्रि.सा., 332- 333)

नोट -

1. जैनदर्शन के अनुसार सूर्य यहाँ से 32 लाख मील दूरी पर है एवं विज्ञान के अनुसार 9 करोड़ 30 लाख मील दूरी पर है।
2. जैनदर्शन के अनुसार चन्द्रमा यहाँ से 45 लाख 20 हजार मील दूरी पर है एवं विज्ञान इसे मात्र 2 लाख 40 हजार मील दूरी पर मानता है।

23. ज्योतिष्क विमान का पारस्परिक अंतर कितना है ?

ताराओं का जघन्य अन्तर 1 कोस का सातवाँ भाग, मध्यम अंतर 50 कोस और उत्कृष्ट अंतर 1000 योजन है। सूर्य से सूर्य का और चन्द्र से चन्द्र का जघन्य अंतर 99,640 योजन है। उत्कृष्ट अंतर 1 लाख 660 योजन है। (रा.वा., 4/13/6)

24. चन्द्र, सूर्य आदि की कितनी-कितनी किरणें हैं ?

चन्द्रमा की 12,000 किरणें हैं वे शीतल हैं। सूर्य की भी 12,000 किरणें हैं किन्तु वे तीक्ष्ण (उष्ण) हैं। शुक्र की 2500 किरणें हैं, वे तीव्र अर्थात् प्रकाश से उज्ज्वल हैं। शेष ज्योतिषी देवों की किरणें मंद प्रकाश वाली हैं। (त्रि.सा., 341)

25. ज्योतिषी देवों के विमान का आकार कैसा है ?

एक संतरा के दो खंड करके उन्हें ऊर्ध्वमुखी रखा जाए तो चौड़ाई वाला भाग ऊपर और गोलाई वाला थोड़ा-सा भाग नीचे रहता है, वैसे ही इन देवों के विमान होते हैं। हमें मात्र नीचे का भाग देखने में आता है। (त्रि.सा., 336)

26. ग्रहण क्या है ?

राहु का विमान चन्द्र विमान के नीचे और केतु का विमान सूर्य विमान के नीचे गमन करता है। प्रत्येक छः माह बाद पर्व के अन्त में अर्थात् पूर्णिमा और अमावस्या के अन्त में राहु चन्द्रमा को और केतु सूर्य को आच्छादित करता है, इसी का नाम ग्रहण है। (त्रि.सा., 339)

27. अढ़ाई वर्ष में एक माह कैसे बढ़ता है ?

सूर्य के गमन की 184 गलियाँ हैं, एक गली से दूसरी गली दो योजन दूरी पर है, जिसे पार करने में एक मुहूर्त लगता है, अतः 30 दिन में 30 मुहूर्त (1 दिन) बढ़ जाता है, इसी प्रकार वर्ष में 12 दिन एवं अढ़ाई वर्ष में एक माह बढ़ जाता है। (त्रि.सा., 410)

28. चन्द्रादिक विमानों के वाहक देवों का आकार कैसा है एवं वे किस-किस दिशा में गमन करते हैं ?

पूर्व दिशा में सिंह, दक्षिण दिशा में हाथी, पश्चिम दिशा में बैल और उत्तर दिशा में घोड़े के आकार वाले देव अपने-अपने विमानों को ढोते हैं। चन्द्र एवं सूर्य को ढोने वाले एक दिशा में 4000, चारों दिशाओं में कुल 16000 देव होते हैं। शेष विमानों में एक दिशा में 2000 एवं चारों दिशाओं में कुल 8000 देव होते हैं। किन्तु नक्षत्रों में एक दिशा में 1000 एवं चारों दिशाओं में कुल 4000 देव होते हैं तथा ताराओं में एक दिशा में 500 एवं चारों दिशाओं में कुल 2000 देव होते हैं। आभियोग्य जाति के देव विमान ढोते हैं, अतः वे ही गज आदि बनते हैं। (त्रि.सा., 343)

29. मनुष्य लोक में सूर्य-चन्द्रमा आदि कितने-कितने हैं ?

द्वीप-समुद्र	सूर्य	चन्द्रमा	ग्रह	नक्षत्र
जम्बू द्वीप में	2	2	176	56
लवण समुद्र में	4	4	352	112
धातकी खण्ड में	12	12	1056	336
कालोदधि में	42	42	3696	1176
पुष्करार्ध में	72	72	6336	2016
कुल	132	132	11616	3696

अढ़ाई द्वीप में तो ज्योतिषी देवों की संख्या संख्यात है, किन्तु सम्पूर्ण तिर्यक् लोक में ज्योतिषी देवों की संख्या असंख्यात है।

30. एक चन्द्रमा का परिवार कितना है ?

एक चन्द्रमा के परिवार में एक सूर्य, 28 नक्षत्र, 88 ग्रह एवं 66,975 कोड़ाकोड़ी तारे हैं। (सि.सा.दी., 14/54)

31. एक सूर्य जम्बूद्वीप की पूर्ण प्रदक्षिणा कितने दिन में करता है ?

दो दिन (दिन-रात) में करता है।

32. एक चन्द्रमा जम्बूद्वीप की पूर्ण प्रदक्षिणा कितने दिन में करता है ?

दो दिन से (दिन-रात) अधिक समय लगता है, इसी से चन्द्रोदय में हीनाधिकता आती है।

33. अमावस्या और पूर्णिमा क्या है ?

राहु प्रतिदिन 1-1 पथ में चन्द्रमंडल के 16 भागों में से 1-1 कला (भाग) को आच्छादित करता हुआ क्रम से 15 कला पर्यन्त आच्छादित करता है। इस प्रकार अंत में जिस मार्ग में चन्द्र की केवल 1 कला दिखाई देती है। वह अमावस्या है। प्रतिपदा के दिन से वह राहु 1-1 वीथी में गमन विशेष से 1-1 कला को छोड़ता जाता है। जिसके कारण 1 दिन चन्द्र बिम्ब परिपूर्ण दिखता है, वह पूर्णिमा है। अथवा चन्द्र बिम्ब स्वभाव से ही 15 दिनों तक कृष्ण कांति स्वरूप और इतने ही दिनों तक शुक्ल कांति स्वरूप परिणमता है। (त्रि.सा., 342 विशेषार्थ)

34. उत्तरायन और दक्षिणायन क्या है ?

जब सूर्य प्रथम गली में रहता है, तब श्रावण कृष्ण प्रतिपदा से दक्षिणायन प्रारम्भ होता है और जब वह अन्तिम गली में पहुँचता है तब उत्तरायन प्रारम्भ होता है। श्रावण माह से पौष माह तक (183 दिन) सूर्य दक्षिणायन तथा माघ माह से आषाढ़ माह तक (183 दिन) उत्तरायन रहता है। (त्रि. सा., 412)

35. सूर्य और चन्द्रमा की कितनी-कितनी गलियाँ हैं ?

सूर्य की 184 गलियाँ हैं और इसी क्षेत्र में चन्द्रमा की 15 गलियाँ हैं। इनमें ये दोनों गमन करते हैं।

36. जब सूर्य प्रथम गली में आता है तो क्या होता है ?

जब सूर्य प्रथम गली में आता है तब अयोध्या नगर के भीतर अपने भवन के ऊपर से चक्रवर्ती सूर्य विमान में स्थित जिनबिम्ब के दर्शन करता है। चक्रवर्ती की चक्षु इन्द्रिय का विषय $47263^{7}/_{20}$ योजन अर्थात् 18,90,53,400 मील प्रमाण है। (त्रि.सा., 391)

37. सूर्य और चन्द्रमा एक-एक मिनट में कितना गमन करते हैं ?

प्रथम मार्ग में सूर्य एक मिनट में 4, 37, $623^{11}/_{18}$ मील प्रमाण गमन करता है एवं प्रथम मार्ग में चन्द्रमा एक मिनट में 4,22,797 $^{31}/_{1647}$ मील प्रमाण गमन करता है। (त्रि.सा., 388, विशेषार्थ)

38. क्या पृथ्वी घूमती है ?

नहीं। सूर्य और चन्द्रमा सुमेरु पर्वत की प्रदक्षिणा करते हैं। सुमेरु पर्वत अर्थात् पृथ्वी स्थित है एवं सूर्य चन्द्रमा उसकी प्रदक्षिणा करते हैं।

39. क्या सभी ज्योतिषी मंडल गमन करते हैं ?

अढ़ाईद्वीप और दो समुद्र में अर्थात् समस्त मनुष्य लोक में पाँचों प्रकार के ज्योतिषी देव निरन्तर गमन करते रहते हैं। मनुष्य लोक से बाहर के सभी ज्योतिषी देव स्थित रहते हैं। (त.सू., 4/13-15)

40. दिन छोटे-बड़े कैसे होते हैं ?

जब सूर्य अभ्यन्तर वीथी (प्रथम वीथी) में भ्रमण करता है, तब दिन 18 मुहूर्त का (14 घंटा 24 मिनट) और रात्रि 12 मुहूर्त (9 घंटा 36 मिनट) की होती है तथा बाह्य (अंतिम) वीथी में भ्रमण करता है, तब 18 मुहूर्त की रात्रि और 12 मुहूर्त का दिन होता है। श्रावण माह में सूर्य अभ्यंतर वीथी में भ्रमण करता है। माघ मास में सूर्य सबसे बाह्य वीथी में भ्रमण करता है। (त्रि.सा., 379)

41. क्या सूर्य और चन्द्रमा की गति घटती-बढ़ती है ?

हाँ। सूर्य और चन्द्रमा की प्रथम वीथी में हाथीवत् (अतिमंद), मध्यम वीथी में घोड़े की चाल समान (मध्यम गति) और बाह्य वीथी में सिंह सदृश (तेज गति) गति है। (त्रि.सा., 388)

42. क्या सभी ज्योतिषी विमानों की गति एक-सी है ?

नहीं। चन्द्रमा सबसे मंद गति वाला है, इससे शीघ्रगति सूर्य की, सूर्य से शीघ्र गति ग्रहों की, ग्रहों से शीघ्र गति नक्षत्रों की और उससे भी अधिक शीघ्र गति ताराओं की है। (त्रि.सा., 403)

43. सूर्य का ताप कहाँ तक फैलता है ?

सूर्य का ताप सुदर्शन मेरु के मध्य भाग से लेकर लवण समुद्र के छठवें भाग तक फैलता है तथा सूर्य बिम्ब से चित्रा पृथ्वी 800 योजन नीचे है और 1000 योजन चित्रा पृथ्वी की जड़ हैं सूर्य का ताप नीचे की ओर 1800 योजन अर्थात् 72,00000 मील तक फैलता है। सूर्य बिम्ब से ऊपर 100 योजन पर्यन्त ज्योतिर्लोक है। अतः सूर्य का ताप ऊपर की ओर 100 योजन (4,00,000 मील) दूर तक फैलता है।[1]

44. चन्द्र और सूर्य का गमन क्षेत्र कितना है ?

चन्द्र और सूर्य के गमन करने को चार क्षेत्र कहते हैं। दो चन्द्र और दो सूर्य के प्रति 1-1 चार क्षेत्र होता है। जम्बूद्वीप के दो सूर्यों का एक चार क्षेत्र है। लवण समुद्र के चार सूर्यों के 2 चार (संचार) क्षेत्र, धातकीखण्ड द्वीप के 12 सूर्यों के 6 चार क्षेत्र हैं, कालोदधि समुद्र के 42 सूर्यों के 21 चार क्षेत्र हैं और पुष्करार्धद्वीप के 72 सूर्यों के 36 चार क्षेत्र हैं। जम्बूद्वीप सम्बन्धी चन्द्र और सूर्य जम्बूद्वीप में तो 180 योजन प्रमाण क्षेत्र में ही विचरते हैं और शेष $330\frac{48}{61}$ प्रमाण क्षेत्र लवण समुद्र में विचरते हैं। अर्थात् 2-2 चन्द्र और सूर्य $180+330\frac{48}{61} = 510\frac{48}{61}$ योजन प्रमाण क्षेत्र में विचरते हैं। शेष पुष्करार्ध पर्यन्त के चन्द्र और सूर्य अपने -अपने क्षेत्र में विचरते हैं। (त्रि.सा., 374-375)

45. दिन-रात कैसे होते हैं ?

सूर्य जब सुमेरु पर्वत के पूर्व-पश्चिम में होता है तब पूर्व विदेह एवं पश्चिम विदेह क्षेत्र में दिन एवं भरत-ऐरावत क्षेत्र में रात्रि होती है एवं जब सूर्य सुमेरु पर्वत के दक्षिण–उत्तर में होता है, तब भरत-ऐरावत क्षेत्र में दिन एवं विदेह क्षेत्र में रात्रि होती है।

46. ऊर्ध्वलोक कितने राजू में है एवं वहाँ क्या-क्या है ?

मध्यलोक के सुमेरु पर्वत की चूलिका से एक बाल की मोटाई प्रमाण स्थान के बाद स्वर्ग प्रारम्भ हो जाते हैं। चित्रा पृथ्वी से 1.5 राजू में सौधर्म-ऐशान स्वर्ग आमने-सामने हैं। 1.5 राजू में सानत्कुमार-माहेन्द्र

---

1 त्रिलोकसार,397

स्वर्ग हैं। 1/2 राजू में ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर स्वर्ग हैं। 1/2 राजू में लान्तव-कापिष्ठ स्वर्ग हैं। 1/2 राजू में शुक्र-महाशुक्र स्वर्ग हैं। 1/2 राजू में शतार-सहस्रार स्वर्ग हैं। 1/2 राजू में आनत-प्राणत स्वर्ग हैं। 1/2 राजू में आरण-अच्युत स्वर्ग हैं। ये सभी स्वर्ग आमने-सामने हैं। इस प्रकार 6 राजू में 16 स्वर्ग हैं तथा 16 स्वर्गों के ऊपर 1 राजू में 9 ग्रैवेयक, 9 अनुदिश, 5 अनुत्तर विमान एवं सिद्ध शिला भी है। इस प्रकार 7 राजू में ऊर्ध्व लोक एवं 7 राजू में अधोलोक हैं। इस तरह लोक की ऊँचाई कुल 14 राजू है।

नोट- सुमेरु पर्वत की ऊँचाई ऊर्ध्वलोक में ही गर्भित है। (त्रि.सा., 458)

47. स्वर्गों के विमानों का आधार क्या है ?

सौधर्म युगल के विमान घनस्वरूप जल के ऊपर तथा सानत्कुमार युगल के विमान पवन (हवा) के ऊपर स्थित हैं। ब्रह्मादि चार कल्प जल व वायु दोनों के ऊपर तथा आनत-प्राणत आदि शेष विमान शुद्ध आकाश में स्थित हैं। (ति.प., 8/206-207)

48. सिद्धालय कहाँ है ?

सर्वार्थसिद्धि विमान के ध्वजदण्ड से 12 योजन ऊपर जाकर अष्टम ईषत् प्राग्भार नामक पृथ्वी के बीचोंबीच 45 लाख योजन गोल एवं 8 योजन मध्य में मोटी चाँदी एवं स्वर्ण के सदृश और नाना रत्नों से परिपूर्ण सिद्ध शिला है। जो आगे-आगे क्रमशः कम होती हुई अंत में 1 अंगुल प्रमाण रह जाती है। वह उत्तान धवल छत्र के सदृश है। ईषत्प्राग्भार नामक अष्टम पृथ्वी की चौड़ाई (पूर्व-पश्चिम) एक राजू, लम्बाई (उत्तर-दक्षिण) सात राजू तथा मोटाई (ऊँचाई) आठ योजन प्रमाण है। (ति.प., 8/675-681) इस पृथ्वी के ऊपर 3 वातवलय हैं, जो क्रमशः 2 कोस (4000 धनुष), 1 कोस (2000 धनुष) और 1575 धनुष मोटे हैं अंतिम वातवलय के ऊपरी भाग में 525 धनुष की उत्कृष्ट अवगाहना को आदि लेकर 3.5 हाथ की अवगाहना तक के सिद्ध परमेष्ठी विराजमान रहते हैं।

49. सिद्धक्षेत्र का विस्तार कितना है ?

मनुष्य क्षेत्र प्रमाण 45,00,000 योजन है।

50. त्रस नाली कितनी लंबी, चौड़ी एवं ऊँची है ?

लोक के मध्य भाग में एक राजू लंबी, एक राजू चौड़ी और कुछ कम तेरह राजू ऊँची त्रसनाली है। लोकनाड़ी चौदह राजू है जिसमें एक राजू कलकला नामक स्थावर लोक है, इसमें त्रस जीव नहीं रहते हैं एवं सप्तम पृथ्वी के मध्य भाग में नारकी रहते हैं। नीचे 3999 $^{1}/_{3}$ योजन अर्थात् 3,19,94,666 $^{2}/_{3}$ धनुष में त्रस जीव नहीं हैं। इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धि विमान से ईषत् प्राग्भार का अंतर 12 योजन अर्थात् 96,000 धनुष है एवं ईषत् प्राग्भार की मोटाई 8 योजन अर्थात् 64,000 धनुष है एवं तीनों शिखरवर्ती वातवलय 2 कोस (4000 धनुष), 1 कोस (2000 धनुष) एवं 1575 धनुष इस क्षेत्र में त्रस जीव नहीं रहते (समुद्घात एवं उपपाद[1] को छोड़कर) हैं।

3,19,94,666$^{2}/_{3}$ धनुष + 96,000धनुष + 64,000 धनुष+7575धनुष =3,21,62,241$^{2}/_{3}$ धनुष कम 13 राजू ऊँची त्रस नाली है। (ति.प., 2/6-7)

---

1. त्रस पर्याय में जन्म लेने वाले

51. सुमेरु पर्वत और नंदीश्वर द्वीप की विशेषताएँ बताइए।

सुमेरु पर्वत

यह मध्यलोक का सर्वप्रथम पर्वत है - विदेह क्षेत्र के बहुमध्य भाग में स्थित स्वर्ण वर्ण व कूटाकार पर्वत है, यह जम्बूद्वीप में एक, धातकीखण्ड में दो और पुष्करार्ध द्वीप में दो पर्वत हैं कुल 5 सुमेरु पर्वत हैं, इसमें प्रत्येक में 16-16 चैत्यालय हैं कुल मिलाकर 80 चैत्यालय हैं, जिसमें 8, 640 प्रतिमाएँ हैं।

यह पर्वत तीर्थङ्करों के जन्माभिषेक का आसन रूप माना जाता है।

सुमेरु पर्वत की ऊँचाई 1 लाख 40 योजन है। सुमेरु पर्वत की जड़ 1000 योजन है, इसके ऊपर भद्रशाल वन, नन्दन वन, सौमनस वन और पाण्डुक वन है, पाण्डुक वन के मध्य से सुमेरु पर्वत की चोटी (चूलिका) प्रारम्भ होती है जो 40 योजन है, उस चोटी की ईशान दिशा में पाण्डुक शिला, आग्नेय में पाण्डुकम्बला, नैऋत्य में रक्ता और वायव्य में रक्त कम्बला शिला है जो अर्द्धचन्द्राकार है, इनमें क्रमशः भरत, पश्चिम विदेह, ऐरावत तथा पूर्व विदेह के सर्व तीर्थङ्करों का देव जन्माभिषेक करते हैं।

इसी प्रकार धातकीखण्ड द्वीप में पूर्व तथा पश्चिम दिशा में विजय और अचल नामक दो मेरु हैं तथा पुष्करद्वीप में पूर्व तथा पश्चिम दिशा में मंदर और विद्युन्माली नामक दो मेरु हैं। इन पर अकृत्रिम चैत्यालयों की रचना, सुमेरु (सुदर्शन मेरु) के समान ही है। विशेषता इतनी है कि इन पर्वतों में प्रत्येक की ऊँचाई 84,000 योजन है। एवं 1000 योजन की जड़ पृथक् है अतः इन चारों पर्वतों की कुल ऊँचाई 85,000 योजन है। (ति.प.4/2617)

नन्दीश्वर द्वीप

इस मध्यलोक में असंख्यात द्वीप व समुद्र हैं जिसमें 7 द्वीप और 7 समुद्र के बाद आठवाँ द्वीप नन्दीश्वर द्वीप है। इस द्वीप की पूर्व दिशा में एक अंजनगिरि नामक काले रंग का पर्वत है, उसके चारों ओर एक लाख योजन छोड़कर चार वापियाँ हैं, प्रत्येक वापी के चारों दिशाओं में अशोक, सप्तपर्ण, चम्पक और आम्र नामक 4 वन हैं, इस द्वीप की एक दिशा में 16 और चारों दिशाओं में कुल 64 वन हैं, प्रत्येक वापी के मध्य में सफेद रंग वाला दधिमुख नाम का एक-एक पर्वत है, प्रत्येक वापी के चारों कोनों पर लाल रङ्ग के 4 रतिकर पर्वत हैं। अभ्यन्तर रतिकरों पर देव क्रीड़ा करते हैं एवं बाह्य रतिकरों पर जिनमन्दिर हैं। इस प्रकार एक दिशा में 1 अंजनगिरि, 4 दधिमुख एवं 8 रतिकर पर्वत हैं, इनके ऊपर 13 अकृत्रिम चैत्यालय हैं, इसी प्रकार शेष तीन दिशाओं में भी 13-13 चैत्यालय हैं, अतः नन्दीश्वर द्वीप सम्बन्धी 52 अकृत्रिम चैत्यालय हैं, प्रत्येक मंदिर में 108 जिनबिम्ब रत्नों के हैं। देवी-देवताओं के मन को आकर्षित करने वाली 500 धनुष की पद्मासन प्रतिमाएँ हैं, उनके नाखून, चेहरा लाल, आँखें काली और सफेद, भौंह काली, सिर के बाल काले शोभा देते हैं, मुख मुद्रा ऐसी लगती है, जैसे पापों को हरण करने वाली दिव्यध्वनि खिरती है, रत्नमयी प्रतिमा में करोड़ों सूर्य और चन्द्रमा की भी आभा उन प्रतिमाओं के प्रकाश के आगे फीकी पड़ जाती है, जो महावैराग्य परिणाम वाले हैं, वे उनके दर्शन करते हैं, वे प्रतिमाएँ बोलती

नहीं हैं, उन्हें देखकर ही सम्यग्दर्शन हो जाता है उन सुख देने वाली प्रतिमाओं को नमस्कार करते हैं। सौधर्म इन्द्र आदि देवगण अष्टाह्निका पर्व में अपने परिवार सहित इन प्रतिमाओं का अभिषेक-पूजन करने आते हैं।

पूर्व दिशा में कल्पवासी देव, दक्षिण दिशा में भवनवासी देव, पश्चिम दिशा में व्यन्तर देव तथा उत्तर दिशा में ज्योतिषी देव भक्ति-भाव से पूजन करते हैं। मनुष्य वहाँ नहीं जा सकते हैं, वे यहाँ पर ही जिनालयों में नन्दीश्वर द्वीप के जिनालयों की स्थापना कर पूजन करते हैं।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. एक गिलास उल्टा, दूसरा सीधा एवं तीसरा उल्टा रखने से लोक का आकार बनता है।
2. कलकला पृथ्वी में मात्र निगोदिया जीव रहते हैं।
3. प्रथम पृथ्वी 1,80,000 योजन मोटी नहीं है।
4. पञ्चम पृथ्वी से पञ्चम स्वर्ग की ऊँचाई 7.5 राजू है।
5. लोक के बाहर सिद्ध परमेष्ठी रहते हैं।
6. सर्वार्थसिद्धि विमान शुद्ध आकाश के आधार से नहीं है।
7. यहाँ से चन्द्र विमान 880 योजन ऊपर है।
8. कालोदधि में 1176 नक्षत्र नहीं हैं।
9. चन्द्रमा के परिवार में सूर्य भी आता है।
10. चन्द्रमा के ढोने वाले देवों में पूर्व दिशा में हाथी रहता है।

अन्यत्र खोजिए-

1. लोक में किन-किन जीवों का कहाँ-कहाँ आवास है एवं पञ्च पैताले का क्या अर्थ है ?
   (ह.पु., 6/89)
2. किन-किन अवस्थाओं में त्रस जीव त्रस नाली के बाहर पाए जाते हैं ? (गो.जी., 199)
3. दूसरे प्रकार से भरत क्षेत्र का विस्तार जम्बूद्वीप का 190 वाँ भाग किस प्रकार से होता है ?
   (सू., 3/32)
4. 343 घनराजू लोक का क्षेत्रफल किस प्रकार से होता है ? (सू., 3/39)

अध्याय 16
नरक गति

संसारी जीवों को चार गतियों में विभाजित किया है। उनमें प्रथम नरक गति के जीवों की क्या विशेषताएँ हैं, उन्हें कौन–कौन से दुःख भोगने पड़ते हैं आदि का वर्णन इस अध्याय में है।

1. संसारी जीवों को कितनी गतियों में विभाजित किया है ?

संसारी जीवों को चार गतियों में विभाजित किया है–नरकगति, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति एवं देवगति।

2. गति किसे कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से जीव नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य एवं देवपने को प्राप्त होता है, उसे गति कहते हैं।

3. नरकगति किसे कहते हैं ?

1. जिस कर्म का निमित्त पाकर आत्मा नारक भाव को प्राप्त करता है, उसे नरकगति कहते हैं।
2. पापकर्मों के फलस्वरूप अनेक प्रकार के असह्य दुःखों को भोगने वाले जीव नारकी कहलाते हैं और उनकी गति को नरकगति कहते हैं।
3. जो नर अर्थात् प्राणियों को काता अर्थात् गिराता है, पीसता है, उसे नरक कहते हैं। (ध.पु., 1/202)
4. जो परस्पर में रत नहीं है अर्थात् प्रीति नहीं रखते हैं, उन्हें नरत कहते हैं और उनकी गति को नरक गति कहते हैं। (गो.जी.का., 147)

4. नरकगति का वर्णन पहले क्यों ?

नारकियों के स्वरूप का ज्ञान होने से भय उत्पन्न हो गया है, ऐसे भव्य जीव की दसलक्षण धर्म अर्थात् मुनिधर्म में निश्चल रूप से बुद्धि स्थिर हो जाती है, ऐसा समझकर पहले नरकगति का वर्णन किया है। (ध.पु., 3/122)

5. नारकियों की कौन-कौन-सी विशेषताएँ हैं ?

1. नारकियों का शरीर अशुभ वैक्रियिक, अत्यन्त दुर्गन्ध युक्त एवं डरावना होता है।
2. शरीर का आकार बेडोल (हुण्डक संस्थान) होता है।
3. शरीर का रंग धुएँ के समान काला होता है।
4. शरीर में खून, पीप, माँस, विष्ठा आदि पाए जाते हैं।
5. नारकी अपृथक् विक्रिया ही करते हैं अर्थात् स्वयं अपने शरीर को ही अस्त्र-शस्त्र बनाते हैं।
6. नारकियों के शरीर के टुकड़े-टुकड़े होने पर भी उनका अकाल मरण नहीं होता है। उनका शरीर पुनः जुड़ जाता है।
7. इनके शरीर में निगोदिया जीव नहीं रहते हैं।
8. इनका नपुंसक वेद होता हैं।
9. इनकी दाढ़ी–मूँछें नहीं होती हैं।
10. आयु समाप्त होते ही इनका शरीर कपूर की तरह उड़ जाता है।

6. सात भूमियों में कितने बिल (नरक) हैं ?

84 लाख बिल हैं। रत्नप्रभा में 30 लाख, शर्कराप्रभा में 25 लाख, बालुकाप्रभा में 15 लाख, पङ्कप्रभा में 10 लाख, धूमप्रभा में 3 लाख, तमः प्रभा में 5 कम 1 लाख एवं महातमःप्रभा में मात्र 5 बिल हैं। नारकियों के रहने के स्थान को बिल कहते हैं। (त.सू., 3/2)

7. सात भूमियों के अपर नाम कौन-कौन से हैं ?

धम्मा, वंशा, मेघा, अञ्जना, अरिष्टा, मघवी और माघवी। (ति.प., 1/153)

8. सात भूमियों में कितने-कितने पटल हैं ?

प्रथम भूमि में 13, फिर आगे-आगे क्रमशः 11, 9, 7, 5, 3 और 1 पटल है।

9. नरकों की मिट्टी कैसी होती है एवं उस मिट्टी की गन्ध यहाँ पर आ जाए तो क्या होगा ?

सुअर, कुत्ता, बकरी, हाथी, भैंस आदि के सड़े हुए शरीर की गन्ध से अनन्त गुणी दुर्गन्ध वाली मिट्टी नरकों में होती है। प्रथम पृथ्वी की मिट्टी की दुर्गन्ध से यहाँ पर एक कोस के भीतर स्थित जीव मर सकते हैं। इसके आगे द्वितीयादि पृथ्वियों में इसकी घातक शक्ति आधा-आधा कोस और भी बढ़ जाती है। (ति. प., 2/347-349)

10. इन पृथ्वियों में रहने वाले नारकियों की आयु कितनी होती है ?

उत्कृष्ट आयु क्रमशः प्रथम पृथ्वी से 1, 3, 7, 10, 17, 22 एवं 33 सागर एवं जघन्य आयु क्रमशः 10,000 वर्ष, 1, 3, 7, 10, 17 और 22 सागर होती है।

11. नारकियों की उत्कृष्ट एवं जघन्य अवगाहना कितनी है ?

पृथ्वी	उत्कृष्ट अवगाहना	जघन्य अवगाहना
1	7 धनुष, 3 हाथ, 6 अङ्गुल	3 हाथ
2	15 धनुष, 2 हाथ, 12 अङ्गुल	8 धनुष, 2 हाथ, 2-2/11 अङ्गुल
3	31 धनुष, 1 हाथ	17 धनुष, 1 हाथ, 10-2/3 अङ्गुल
4	62 धनुष, 2 हाथ	35 धनुष, 2 हाथ, 20-4/7 अङ्गुल
5	125 धनुष	75 धनुष
6	250 धनुष	166 धनुष, 2 हाथ, 16 अङ्गुल
7	500 धनुष	500 धनुष

(ति.प.2/217-269)

12. नरकों में कितने प्रकार के दुःख हैं ?

नरकों में अनेक प्रकार के दुःख होते हैं। जिनमें कुछ प्रमुख हैं-

1. **क्षेत्र सम्बन्धी दुःख** - बिलों में गहन अंधकार रहता है, दुर्गन्ध युक्त मिट्टी रहती है, छाया चाहते हैं[1] पर सेमर के वृक्ष मिलते हैं, वे छाया तो नहीं देते, किन्तु नारकियों के ऊपर छुरी, कांटे के समान वह पत्र (पत्ता) गिराते हैं। प्रथम पृथ्वी से पाँचवीं पृथ्वी के 3/4 भाग तक अत्यन्त उष्ण एवं चतुर्थ भाग में शीत, छठी पृथ्वी में भी शीत एवं सप्तम पृथ्वी में महाशीत रहती है। (ति.प.,2/29-30,34-36)

1. शरण के लिए असिपत्र वन में प्रवेश करते हैं। (वसु.श्रा.156)

2. **मानसिक दुःख**–"हाय-हाय! पापकर्म के उदय से हम इस भयानक नरक में पड़े हैं।" ऐसा विचारते हुए पश्चात्ताप करते हैं। हमने सत्पुरुषों व वीतरागी साधुओं के कल्याणकारी उपदेशों का तिरस्कार किया था। विषयान्ध होकर मैंने पाँच पाप किए थे। जिनको मैंने सताया था, वे यहाँ मुझको मारने के लिए तैयार हैं। अब मैं किसकी शरण में जाऊँ। यह दुःख अब मैं कैसे सहूँगा। जिनके लिए पाप किए थे, वे कुटुम्बीजन अब क्यों आकर मेरी सहायता नहीं करते। इस संसार में धर्म के अतिरिक्त अन्य कोई सहायक नहीं। इस प्रकार निरन्तर अपने पूर्वकृत पापों का पश्चात्ताप करते रहते हैं। (ज्ञा., 36/33,59)
3. **शारीरिक दुःख** –नारकियों का उपपाद जन्म होता है। उपपाद स्थान नीचे की भूमि पर नहीं है, ऊपर के भाग में ऊँटादि के मुख की तरह हैं। वहाँ जन्म लेकर अन्तर्मुहूर्त में पर्याप्तियाँ पूर्ण कर उपपाद स्थान से च्युत हो, उल्टे नरक भूमि में 36 आयुधों (तलवार, बरछी आदि) के मध्य गिरकर प्रथम पृथ्वी वाले 7 योजन 3 $^1/_4$ कोस अर्थात् 31$^1/_4$ कोस ऊपर उछलते हैं, आगे की भूमियों में दूने-दूने उछलते हैं। अर्थात् 62 $^1/_2$ कोस, 125 कोस, 250 कोस, 500 कोस, 1000 कोस एवं 2000 कोस उछलते हैं। 1 योजन में 4 कोस होते हैं। (त्रि.सा., 182)
4. **असुरकृत दुःख** – तृतीय पृथ्वी तक असुरकुमार जाति के देव वहाँ के नारकियों को उनके पूर्वभव के वैर का स्मरण कराकर परस्पर में लड़ने के लिए प्रेरित करते हैं। जैसे-यहाँ मनुष्य मेढ़े, भैंसे आदि को लड़ाते हैं, वैसे ही अम्बरीष आदि कुछ ही प्रकार के असुरकुमार देव नरकों में जाकर लड़ाते हैं और स्वयं भी मारते हैं। (ति.प., 2/353)
5. **परस्परकृत दुःख** – नारकी कभी शांति से नहीं बैठ सकते न दूसरे को बैठने देते हैं। वे दूसरे नारकी को देखते ही मारते हैं, उसके हजारों टुकड़े कर उबलते हुए तेल के कढ़ाव में फेंक देते हैं तो कभी तप्त लोहे की पुतलियों से आलिङ्गन कराते हैं और कैसे-कैसे दुःख देते हैं, उसे तो केवली भगवान् भी नहीं कह सकते हैं। (ति.प., 2/318-327,341-345)
6. **रोग सम्बन्धी दुःख** – दुस्सह तथा निष्प्रतिकार जितने भी रोग इस संसार में हैं, वे सब नारकियों के शरीर के रोम-रोम में होते हैं। (ज्ञा., 36/20)
7. **भूख-प्यास सम्बन्धी दुःख** – नारकियों को भूख इतनी लगती है कि तीन लोक का अनाज खा लें तो भी भूख न मिटे तथा प्यास इतनी लगती है कि सारे समुद्रों का पानी पी लें तो भी प्यास न बुझे। (ज्ञा., 36/77-78) किन्तु वे वहाँ की दुर्गन्धित मिट्टी खाते हैं एवं अत्यंत तीक्ष्ण खारा व गरम वैतरणी नदी का जल पीते हैं।

13. एक जीव नरकों में लगातार कितनी बार जा सकता है ?

प्रथम पृथ्वी से क्रमशः सप्तम पृथ्वी तक 8, 7, 6, 5, 4, 3 एवं 2 बार तक लगातार जा सकता है।

विशेष – नारकी मरण कर पुनः नारकी नहीं बनता है, अतः एक भव बीच में मनुष्य या तिर्यञ्च का लेकर पुनः नरक जा सकता है। (त्रि.सा., 205) किन्तु सप्तम पृथ्वी से पुनः सप्तम पृथ्वी जाने के लिए बीच में दो भव लेने पड़ेंगे। प्रथम तिर्यञ्च का दूसरा मनुष्य या मस्त्य का।

14. नाना जीव की अपेक्षा नरक में उत्पन्न होने का अंतर कितना है ?

प्रथम पृथ्वी से क्रमशः सप्तम पृथ्वी तक, यदि कोई भी जीव उत्पन्न न हो तो उत्कृष्टतया 48 घड़ी (19 घंटे 12 मिनट) एक सप्ताह, एक पक्ष, एक माह, दो माह, चार माह एवं छः माह का अन्तर हो सकता है। (त्रि.सा ., 206)

15. नारकियों का अवधिज्ञान क्षेत्र कितना है ?

नाम	ऊपर	तिर्यक्	नीचे
रत्नप्रभा	सर्वत्र अपने बिल के शिखर तक	सर्वत्र असंख्यात कोड़ा कोड़ी योजन	4 कोस तक
शर्कराप्रभा			3.5 कोस तक
बालुकाप्रभा			3 कोस तक
पङ्कप्रभा			2.5 कोस तक
धूमप्रभा			2 कोस तक
तमःप्रभा			1.5 कोस तक
महातमःप्रभा			1 कोस तक

गणना - 1 कोस = 2000 धनुष । 1 धनुष = 4 हाथ । 1 हाथ = 24 अङ्गुल । (त्रि.सा., 202)

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. नारकी अपृथक् विक्रिया नहीं करते हैं।
2. नरक की मिट्टी दुर्गन्धित होती है।
3. सप्तम पृथ्वी के नारकी की जघन्य ऊँचाई 500 धनुष नहीं है।
4. धम्मा नरक के नारकी की अवगाहना 3/4 धनुष जघन्य है।

अन्यत्र खोजिए -

1. आयुध रूप विक्रिया कौन-सी पृथ्वी तक के नारकी करते हैं ? (रा.वा., 2/47/4)
2. सप्तम पृथ्वी के नारकी किस प्रकार की विक्रिया करते हैं ? (रा.वा., 2/47/4)
3. त्रिलोकसार ग्रन्थ के अनुसार नरक की दुर्गन्धित मिट्टी से मनुष्य क्षेत्र के कितने कोस के व्यक्तियों को मारने की क्षमता है ? (193)
4. एक शरीर में अधिकतम कितने रोग हो सकते हैं ? (सू., 3/3)

विदेह क्षेत्रस्थ बीस तीर्थङ्करों के नाम

1. श्री सीमन्धरजी 2. श्री युगमन्धरजी 3. श्री बाहुजी 4. श्री सुबाहुजी 5. श्री सुजातजी 6. श्री स्वयंप्रभजी 7. श्री ऋषभाननजी 8. श्री अनन्तवीर्यजी 9. श्री सूर्यप्रभजी 10. श्री विशालकीर्तिजी 11. श्री वज्रधरजी 12. श्री चन्द्राननजी 13. श्री भद्रबाहुजी 14. श्री भुजंगमजी 15. श्री ईश्वरजी 16. श्री नेमप्रभजी 17. श्री वीरसेनजी 18. श्री महाभद्रजी 19. श्री देवयशजी 20. श्री अजितवीर्यजी

अध्याय 17
तिर्यञ्चगति

संसारी जीवों की दूसरी गति है तिर्यञ्च गति, इसमें जीवों को कैसे –कैसे दुःख भोगने पड़ते हैं , इसमें कितने गुणस्थान होते हैं। इनकी आयु आदि कितनी होती है, इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. तिर्यञ्चगति किसे कहते हैं ?

1. जिस नाम कर्म का निमित्त पाकर आत्मा तिर्यञ्च भाव को प्राप्त होता है, वह तिर्यञ्चगति है।
2. जो मन, वचन और काय की कुटिलता को प्राप्त हैं, जिनकी आहारादि संज्ञाएँ सुव्यक्त हैं और जिनके अत्यधिक पाप की बहुलता पायी जाती है, उनको तिर्यञ्च कहते हैं और उनकी गति को तिर्यञ्च गति कहते हैं। (गो.जी., 148)
3. तिरोभाव को अर्थात् नीचे रहना बोझा ढोने लायक कर्मोदय से तिरोभाव को प्राप्त हों, वे तिर्यञ्च योनि वाले हैं। (रा.वा., 4/27/3)

2. तिर्यञ्चगति में कौन-कौन से जीव आते है ?

देव, नारकी एवं मनुष्य के अलावा शेष सब जीव तिर्यञ्चगति वाले कहलाते हैं। अर्थात् एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय एवं पञ्चेन्द्रिय में पशु, पक्षी, सर्प आदि।

3. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च के तीन भेद कौन से हैं ?

पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च के तीन भेद निम्न हैं-

1. **जलचर**-जो जल में रहते हैं, वे जलचर कहलाते हैं। जैसे-मछली, मगर, केकड़ा, ओक्टोपस (अष्टबाहु) आदि।
2. **नभचर**-आकाश में उड़ने वाले जीव, नभचर कहलाते हैं। जैसे-कोयल, मैना, तोता, चिड़िया आदि।
3. **थलचर**- जो पृथ्वी पर रहते हैं, वे थलचर कहलाते हैं। जैसे-हाथी, घोड़ा, गाय, बकरी आदि।

नोट- ये तीनों भेद चर (पञ्चेन्द्रिय) की अपेक्षा से हैं विकलेन्द्रिय की अपेक्षा से नहीं।

4. क्षेत्र की अपेक्षा पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चों के कितने भेद हैं ?

क्षेत्र की अपेक्षा पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चों के दो भेद हैं-कर्मभूमिज तिर्यञ्च और भोगभूमिज तिर्यञ्च।

5. भोगभूमिज तिर्यञ्चों का आहार क्या होता है ?

भोगभूमि में सिंहादि तिर्यञ्च भी शाकाहारी होते हैं, वे अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार माँसाहार के बिना कल्पवृक्षों से प्राप्त सामग्री का भोग करते हैं। (ति.प., 4/397)

6. क्या भोगभूमि में जलचर, थलचर एवं नभचर तीनों भेद होते हैं ?

नहीं। भोगभूमि में जलचर जीव एवं विकलचतुष्क (2, 3, 4 एवं असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय) नहीं होते हैं, लवण समुद्र, कालोदधि समुद्र एवं स्वयंभूरमण समुद्र कर्मभूमि सम्बन्धी हैं, यहाँ जलचर रहते हैं, किन्तु शेष समुद्र भोगभूमि सम्बन्धी हैं, वहाँ जलचर नहीं रहते हैं। भोगभूमि के नदी, तालाबों में भी जलचर नहीं होते हैं एवं विकलचतुष्क भी नहीं होते हैं। यही कारण है कि सौधर्म इन्द्र तीर्थङ्कर बालक के जन्माभिषेक के लिए

क्षीरसागर (5 वाँ समुद्र) का जल लाता है। क्योंकि उसमें त्रस जीव नहीं रहते हैं। (का.अ.टी., 144)

7. तिर्यञ्चगति में कौन-कौन से दुःख हैं ?

तिर्यञ्चगति में अनेक प्रकार के दुःख हैं। सिंह, व्याघ्र अपने से कमजोर पशुओं को खा जाते हैं,आकाश में गिद्ध चील उड़ते हुए पक्षियों को झपटकर पकड़ लेते हैं,जल में बड़े-बड़े मच्छ छोटी-छोटी मछलियों को खा जाते हैं, इनसे बच गए तो भूख, प्यास, रोग के दुःखों को सहन करना पड़ता है, छेदन-भेदन के दुःख बहुत हैं, सांड को बैल बनाया जाता है, सुअर के बाल उखाड़े जाते हैं, इनसे बच गए तो म्लेच्छ, भील, धीवर आदि मनुष्य उसे मार डालते हैं और आज 21वीं सदी में तिर्यञ्चों के दुःखों का पार नहीं है, बूचड़खाने में प्रतिदिन लाखों पशु काटे जाते हैं। (का.अ., 40-44)

8. क्या सभी तिर्यञ्चों को ऐसा दुःख होता है ?

नहीं। भोगभूमिज तिर्यञ्चों के केवल सुख ही होता है और कर्मभूमिज तिर्यञ्चों के सुख व दुःख दोनों होते हैं। (ति. प., 5/300)

9. तिर्यञ्चों के कितने गुणस्थान होते हैं ?

तिर्यञ्चों में 1 से 5 तक गुणस्थान होते हैं।
एकेन्द्रिय से असंज्ञी पञ्चेन्द्रियों तक मात्र प्रथम गुणस्थान होता है।
कर्मभूमिज संज्ञी पञ्चेन्द्रिय में 1 से 5 तक गुणस्थान होते हैं।
भोगभूमिज तिर्यञ्चों में 1 से 4 तक गुणस्थान होते हैं।
संज्ञी संमूर्च्छन तिर्यञ्चों में 1 से 5 तक गुणस्थान होते हैं।

10. संज्ञी संमूर्च्छन तिर्यञ्चों की क्या विशेषताएँ हैं ?

यह अन्तर्मुहूर्त काल में सर्व पर्याप्तियों से पर्याप्त हो पुनः अन्तर्मुहूर्त विश्राम करता हुआ एवं एक अन्तर्मुहूर्त में विशुद्ध होकर के संयमासंयम भी प्राप्त कर सकता है और एक पूर्व कोटि काल तक देशसंयम का पालन कर सकता है। जैसे-मच्छ, कच्छप, मेंढक आदि जीव, किन्तु इनका वेद नपुंसक ही रहता है एवं ये प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त नहीं कर सकते हैं। मात्र क्षयोपशम (वेदक) सम्यक्त्व प्राप्त कर सकते हैं। (ध.पु., 4/350)

11. क्या भोगभूमि में भी पञ्चमगुणस्थानवर्ती तिर्यञ्च एवं विकलचतुष्क पाए जाते हैं ?

भोगभूमि में आदि के 4 गुणस्थान ही होते हैं वहाँ पञ्चम गुणस्थानवर्ती एवं विकलचतुष्क नहीं होते हैं, किन्तु पूर्व के बैरी देव यदि कर्मभूमि से उनका अपहरण करके भोगभूमि में छोड़कर चले जाते हैं तो वहाँ भी विकलचतुष्क एवं पञ्चम गुणस्थानवर्ती तिर्यञ्च पाए जाते हैं। (ध.पु., 4/8/168-189)

12. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च के पाँच प्रकार कौन-कौन से होते हैं एवं उनकी आयु कितनी होती है ?

जलचर	मछली आदि	1 पूर्व कोटि
परिसर्प	गोह, नेवला, सरीसृप आदि	9 पूर्वांग
उरग	सर्प	42,000 वर्ष
पक्षी	भैरुण्ड आदि	72,000 वर्ष
चतुष्पद	भोगभूमिज	3 पल्य

(रा.वा., 3/39/5)

गणना - 1 पूर्वांग = 8400000 (चौरासी लाख वर्ष) एवं 8400000 पूर्वांग का एक पूर्व होता है। एक पूर्व में वर्ष 70560000000000 होते हैं।

नोट-तिर्यञ्चों की जघन्य आयु अन्तर्मुहूर्त है।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. दूध तिर्यञ्च गति का जीव है।
2. भोगभूमि में बैल नहीं होते हैं।
3. मक्खी नभचर है।
4. क्षीरसागर समुद्र में एकेन्द्रिय जीव होते हैं।
5. भोगभूमि की गाय दूध देती है।
6. भोगभूमि में सिंह शाकाहारी होते हैं।
7. दो इन्द्रिय जीव पञ्चेन्द्रिय जीव को कर्मभूमि से भोगभूमि ले जा सकता है।
8. तीन गति वाले जीव तिर्यञ्चों को दु:ख देते है।

अन्यत्र खोजिए -

1. तिर्यञ्चगति मार्गणा में तिर्यञ्चों के कितने भेद हैं ? (गो.क., 294-297)
2. कौन से स्वर्ग तक के देव तिर्यञ्चों का अपहरण कर सकते हैं ? (चिन्तन कीजिए)

जिनवाणी स्तुति

माता तू दया करके कर्मों से छुड़ा देना।
इतनी सी विनय तुमसे चरणों में जगह देना॥ टेक॥

माता आज मैं भटका हूँ माया के अन्धेरे में।
कोई नहीं मेरा है इस कर्म के रेले में।
कोई नहीं मेरा है तुम धीर बंधा देना॥

जीवन के चौराहे पर मैं सोच रहा कब से।
जाऊँ तो किधर जाऊँ यह पूछ रहा मन से।
पथ भूल गया हूँ मैं, तुम राह दिखा देना॥

लाखों को उबारा है हमको भी उबारो तुम।
मझधार में है नैया उस पार लगा दो तुम।
मझधार में अटका हूँ उस पार लगा देना॥

अध्याय 18
मनुष्यगति

अद्वितीय अर्थात् तृतीय गति मनुष्य गति है। मनुष्यों के भेद उनके सुख–दुःख का वर्णन एवं इसमें कितने गुणस्थान होते हैं, मोक्ष कौन प्राप्त करता है आदि का वर्णन इस अध्याय में है।

1. मनुष्यगति किसे कहते हैं ?

1. जिस कर्म का निमित्त पाकर आत्मा मनुष्य भाव को प्राप्त करता है, वह मनुष्यगति है।
2. जो मन से उत्कृष्ट होते हैं, वे मानुष कहलाते हैं और इनकी गति को मनुष्यगति कहते हैं।
3. जो मन के द्वारा नित्य ही हेय-उपादेय, तत्त्व-अतत्त्व, धर्म-अधर्म का विचार करते हैं और कार्य करने में निपुण हैं, वे मनुष्य कहलाते हैं और उनकी गति को मनुष्यगति कहते हैं। (गो.जी.,149)
4. मनु (कुलकर) की संतान होने से मनुष्य कहलाते हैं।

2. क्षेत्र की अपेक्षा मनुष्य के कितने भेद हैं ?

क्षेत्र की अपेक्षा मनुष्य के दो भेद हैं-

1. **कर्मभूमिज** - जहाँ पात्रदान के साथ आजीविका चलाने के लिए असि, मसि, कृषि, विद्या, शिल्प और वाणिज्य कर्म किए जाते हैं। अशुभ कर्म से नरक, शुभ कर्म से स्वर्ग, तपस्या के द्वारा (मुनि बनकर) सर्वार्थसिद्धि विमान तक एवं समस्त (अष्ट) कर्मों का क्षय करके मोक्ष इसी कर्मभूमि से प्राप्त होता है और कर्मभूमि में जन्म लेने वाले कर्मभूमिज कहलाते हैं।
2. **भोगभूमिज** - जहाँ आजीविका चलाने के लिए षट्कर्म नहीं करने पड़ते हैं। जहाँ दस प्रकार के कल्पवृक्षों से प्राप्त सामग्री का भोग करते हैं। वह भोगभूमि कहलाती है और भोगभूमि में जन्म लेने वाले भोगभूमिज कहलाते हैं। (स.सि., 3/37/437)

3. कल्पवृक्ष किसे कहते हैं वे कौन-कौन से हैं ?

मनोवांछित वस्तु को देने वाले कल्पवृक्ष कहलाते हैं। वे दस प्रकार के होते हैं-

1. **पानाङ्ग** - मधुर, सुस्वादु, छः रसों से युक्त बत्तीस प्रकार के पेय को दिया करते हैं।
2. **तूर्याङ्ग** - अनेक प्रकार के वाद्य यंत्र देने वाले होते हैं।
3. **भूषणाङ्ग** - कंगन, कटिसूत्र, हार, मुकुट आदि आभूषण प्रदान करते हैं।
4. **वस्त्राङ्ग** - अच्छी किस्म (सुपर क्वालिटी) के वस्त्र देने वाले हैं।
5. **भोजनाङ्ग** - अनेक रसों से युक्त अनेक व्यञ्जनों को प्रदान करते हैं।
6. **आलयाङ्ग** - रमणीय दिव्य भवन प्रदान करते हैं।
7. **दीपाङ्ग** - प्रकाश देने वाले होते हैं।
8. **भाजनाङ्ग** - सुवर्ण एवं रत्नों से निर्मित भाजन और आसनादि प्रदान करते हैं।
9. **मालाङ्ग** - अच्छे-अच्छे पुष्पों की माला प्रदान करते हैं।
10. **तेजाङ्ग** - मध्य दिन के करोड़ों सूर्य से भी अधिक प्रकाश देने वाले इनके प्रकाश से सूर्य, चन्द्र का प्रकाश कांतिहीन हो जाता है। (ति.प., 4/346)

पानाङ्ग जाति के कल्पवृक्ष को मद्याङ्ग भी कहते हैं। ये अमृत के समान मीठे रस देते हैं। वास्तव में ये वृक्षों का एक प्रकार का रस है, जिन्हें भोगभूमि में उत्पन्न होने वाले आर्य पुरुष सेवन करते हैं, किन्तु यहाँ पर अर्थात् कर्मभूमि में जो मद्य पायी लोग जिस मद्य का पान करते हैं, वह नशीला होता है और अन्तःकरण को मोहित करने वाला है, इसलिए आर्य पुरुषों के लिए सर्वथा त्याज्य है। (आ.पु., 9/37-39)

4. आचरण की अपेक्षा मनुष्य के कितने भेद हैं ?

आचरण की अपेक्षा मनुष्य के दो भेद हैं-आर्य और म्लेच्छ।

धर्म-कर्म सहित उत्तम गुण वाले मनुष्य आर्य कहलाते हैं और जो धर्म-कर्म गुण से रहित आचार-विचार से भ्रष्ट हों, वे म्लेच्छ कहलाते हैं। आर्य मनुष्य दो प्रकार के हैं- ऋद्धि प्राप्त आर्य और ऋद्धि रहित आर्य। बुद्धि, तप, बल, विक्रिया, औषध, रस और क्षेत्र (अक्षीण महानस व अक्षीण महालय) रूप इन सात प्रकार की ऋद्धियों के धारी मुनिराज ऋद्धि प्राप्त आर्य कहलाते हैं। ऋद्धि रहित आर्य पाँच प्रकार के हैं-

1. **क्षेत्रार्य** - काशी कौशल, मालवा आदि उत्तम देशों में उत्पन्न हुआ क्षेत्रार्य है।
2. **जात्यार्य** - इक्ष्वाकु, ज्ञाति, भोज आदि कुलों में उत्पन्न हुआ जात्यार्य है।
3. **कर्मार्य** - असि, मसि, कृषि, विद्या, शिल्प और वाणिज्य रूप कर्म करने वाले कर्मार्य है।
4. **चारित्रार्य** - संयमधारी मनुष्य चारित्रार्य है।
5. **दर्शनार्य** - व्रत रहित सम्यग्दृष्टि मनुष्य दर्शनार्य है। (स.सि., 3/36/435)

म्लेच्छ मनुष्यों के दो भेद हैं-अन्तर्द्वीपज और कर्मभूमिज। अन्तर्द्वीपों में उत्पन्न हुए अन्तर्द्वीपज म्लेच्छ, म्लेच्छ खण्ड में उत्पन्न म्लेच्छ और शक, यवन, शवर व पुलिन्दादिक कर्मभूमिज आर्यखण्ड के म्लेच्छ हैं।

5. अन्तर्द्वीपज म्लेच्छ कहाँ रहते हैं, उनका आकार एवं आहार क्या है ?

अन्तर्द्वीपज जहाँ निवास करते हैं, वह कुभोगभूमि कहलाती है। यह लवण समुद्र में जम्बूद्वीप के तट पर चारों दिशाओं में चार, चारों विदिशाओं में चार, प्रत्येक दिशा, विदिशा के मध्य एक-एक अर्थात् आठ तथा भरत, ऐरावत के विजयार्ध पर्वत के दोनों छोरों पर एक-एक अर्थात् कुल चार एवं हिमवन् और शिखरी पर्वत के दोनों छोरों पर एक-एक अर्थात् कुल चार। इस प्रकार कुल 4+4+8+4+4=24 अन्तर्द्वीप हैं। इसी प्रकार 24 अन्तर्द्वीप लवण समुद्र के दूसरे तट पर और कालोदधि समुद्र के दोनों तटों पर भी 24-24 हैं। इस प्रकार कुल 48+48=96 कुभोगभूमियाँ हैं। इनमें कुमानुष निवास करते हैं, इसलिए इन्हें कुभोगभूमि कहते हैं।

उन अन्तर्द्वीपों में पूर्व दिशा में एक टांग वाले, दक्षिण में पूँछ वाले, पश्चिम में सींग वाले और उत्तर में गूँगे। आग्नेय आदि विदिशाओं में शष्कुली कर्ण (मत्स्य कर्ण), कर्ण प्रावरण, लम्बकर्ण और शशकर्ण अर्थात् खरगोश के कर्ण के समान होते हैं। इसी प्रकार शष्कुली कर्ण और एक टांग आदि के बीच में अर्थात् अंतर्दिशाओं में आठ कुमानुष सिंह, अश्व, श्वान, महिष, वराह, शार्दूल (व्याघ्र, बाघ), घूक और बंदर के समान मुख वाले होते हैं। हिमवन् पर्वत के पूर्व दिशा में मत्स्य मुख और पश्चिम दिशा में कालमुख, दक्षिण विजयार्ध के पूर्व दिशा में मेषमुख और पश्चिम दिशा में गौमुख। शिखरी पर्वत के पूर्व में मेघमुख और पश्चिम दिशा में विद्युतमुख तथा उत्तर विजयार्ध के पूर्व में आदर्शमुख और पश्चिम दिशा में हाथी मुख वाले कुमानुष रहते हैं। इनमें एक टांग वाले मनुष्य गुफाओं में निवास करते हैं और मिट्टी का आहार करते हैं तथा शेष मनुष्य फल-फूलों का आहार करते हैं तथा वृक्षों पर रहते हैं। कुभोगभूमि में

जघन्य भोगभूमि की व्यवस्था रहती है। (त्रि.सा., 913-921)

6. म्लेच्छों में कितने गुणस्थान होते हैं ?

अन्तर्द्वीपज म्लेच्छ (कुभोगभूमि) का जन्म तो मिथ्यात्व, सासादन के साथ होता है, किन्तु वह सम्यग्दर्शन प्राप्त कर सकता है। अतः प्रथम गुणस्थान से चतुर्थ तक। (ति.प., 4/2554-55) सब म्लेच्छखण्डों में प्रथम गुणस्थान ही होता है। (ति.प., 4/2982) म्लेच्छखण्ड से आर्यखण्ड में आए हुए कर्मभूमिज म्लेच्छ तथा उनकी कन्याओं से उत्पन्न हुई चक्रवर्ती की संतान कदाचित् दीक्षा के योग्य भी होती है। (ल.सा.टी., 195)

7. कुभोगभूमि में उत्पन्न होने का क्या कारण है ?

मिथ्यादेवों की भक्ति में तत्पर, दिगम्बर साधुओं की निंदा करने वाले। जो जिनलिङ्ग धारण कर मायाचारी करते हैं। गृहस्थों के विवाह आदि कराते हैं। जो सूक्ष्म व स्थूल दोषों की आलोचना गुरुजनों के समीप नहीं करते हैं, आदि कुमानुष म्लेच्छों में उत्पन्न होने के कारण हैं। (ति.प., 4/2540-2551)

8. भोगभूमि में उत्पन्न होने का क्या कारण है ?

जो मिथ्यात्व भाव से युक्त होते हुए भी मंद कषायी हैं, मद्य, माँस, मधु और उदम्बर फलों के त्यागी हैं। जो यतियों को आहार दान देते हैं या अनुमोदना करते हैं। ऐसे कर्मभूमि के मनुष्य और तिर्यञ्च भोगभूमि में उत्पन्न होते हैं एवं जिन मनुष्यों ने पहले मनुष्यायु, तिर्यञ्चायु का बंध कर लिया है एवं बाद में क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त किया है ऐसे सम्यग्दृष्टि मनुष्य भी भोगभूमि में उत्पन्न होते हैं। (ति.प., 4/369-372)

9. कुभोगभूमि में मनुष्य ही रहते हैं या तिर्यञ्च भी रहते हैं ?

कुभोग भूमि में मनुष्य एवं तिर्यञ्च दोनों के युगल रहते हैं। (ति.प., 4/2552)

10. संमूर्च्छन मनुष्य की क्या विशेषता है ?

संमूर्च्छन मनुष्य छः पर्याप्तियाँ एक साथ प्रारम्भ करता है, किन्तु एक भी पर्याप्ति पूर्ण नहीं करता और मरण हो जाता है। इनकी आयु क्षुद्रभव प्रमाण एवं अवगाहना अङ्गुल के असंख्यातवें भाग रहती है इनका मात्र नपुंसक वेद ही होता है ये स्त्रियों के काँख वगैरह एवं गुह्य (गुप्त) स्थानों में उत्पन्न होते हैं। आँखों से नहीं देखे जाते।

11. मनुष्यगति में कौन-कौन से दुःख हैं ?

संमूर्च्छन मनुष्य हुआ तो वह शीघ्र मरण कर गया। गर्भज हुआ तो, सात माह से दस माह तक गर्भ में रहना पड़ता है, वहाँ अङ्ग, उपाङ्ग को संकुचित करके रहना पड़ता है और जब जन्म लेता है तो बड़ी वेदना होती है। बाल अवस्था में भूख, प्यास, रोग को सहन करता है, क्योंकि वह अपने कष्ट को कह नहीं सकता है। बाल अवस्था में ही माता-पिता का अवसान हो गया, तो दूसरों के द्वारा दिया गया भोजन करके बड़ा होता है और बड़ा हुआ पढ़ गया तो ठीक नहीं तो सबके सामने नीचा देखना पड़ता है। किसी की स्त्री नहीं है। किसी की स्त्री है किन्तु दुष्टा (दुःचरित्र) है। किसी की अच्छी तो है, किन्तु जल्दी ही मरण को प्राप्त हो गई। किसी का पुत्र नहीं है, किसी का है, किन्तु दुर्व्यसनों में फँसा हुआ है। किसी का पुत्र आज्ञाकारी भी है, पढ़ने में होशियार भी है, किन्तु अल्पायु में ही मरण को प्राप्त हो गया। स्त्री, बच्चे भी हैं, किन्तु बीमार रहते हैं, कोई स्वस्थ है, किन्तु धन नहीं है। धन है, नष्ट हो गया तो भी कष्ट होता है। आज वर्तमान में बेरोजगारी से लोग पीड़ित हैं। विवाह की उम्र बढ़ती जा रही है, जिससे माता-पिता भी परेशान हैं। कन्या का विवाह करना है तो दहेज चाहिए और न जाने कैसे-कैसे दुःख हैं, बड़े भाई को भी छोटे भाइयों से अपमानित होना पड़ता है। पिता को भी पुत्र से अपमानित होना पड़ता है।

संक्षेप में कहा जाए तो यही कहेंगे, कोई तन दुःखी, कोई मन दुःखी कोई धन दुःखी है। (का.अ., 44-57)

12. क्या सभी मनुष्य दुःखी रहते हैं ?

भोगभूमि के मनुष्यों में तो सुख है, किन्तु कर्मभूमि के मनुष्यों में सुख भी है, दुःख भी है। जिनका पुण्यकर्म का उदय है, वे सुखी हैं, जिनका पाप कर्म का उदय है, वे दुःखी हैं।

13. मनुष्यगति में कितने गुणस्थान होते हैं ?

भोगभूमि के मनुष्यों में 1 से 4 तक गुणस्थान होते हैं एवं कर्मभूमि में 1 से 14 तक गुणस्थान होते हैं।

14. मनुष्य कहाँ रहते हैं एवं मुक्ति कहाँ से होती है ?

मनुष्य अढ़ाईद्वीप में रहते हैं एवं मुक्ति भी अढ़ाईद्वीप से होती है।

15. अढ़ाईद्वीप का क्या अर्थ है ?

अढ़ाईद्वीप एवं दो समुद्र। जम्बूद्वीप, लवण समुद्र, धातकीखण्ड, कालोदधि समुद्र एवं पुष्कर द्वीप आधा।

16. क्या मनुष्य, मानुषोत्तर पर्वत का उल्लङ्घन कर सकता है ?

मानुषोत्तर पर्वत के उस ओर उपपाद (मनुष्य गति में जन्म लेने वाले), मारणान्तिक समुद्घात तथा केवली समुद्घात को प्राप्त हुए मनुष्यों को छोड़कर और दूसरे विद्याधर तथा ऋद्धिधारी मुनि भी कदाचित् नहीं जाते हैं। इसलिए इस पर्वत का मानुषोत्तर यह नाम सार्थक है। (स.सि., 3/35/434)

17. भोगभूमि एवं समुद्रों से मुक्ति कैसे होती है ?

ऋद्धिधारी मुनि भोगभूमि जाकर मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं एवं पूर्व बैर रखने वाले देव भी मुनियों का अपहरण कर उन्हें भोगभूमि एवं समुद्रों में फेंक देते हैं, वे वहाँ से मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं।

18. विद्याधर कौन हैं एवं कहाँ रहते हैं ?

जो जाति, कुल व तप विद्याओं से युक्त होते हैं, वे विद्याधर कहलाते हैं। ये समस्त विद्याधर विजयार्ध पर्वतों के दस योजन ऊपर दक्षिण-उत्तर में इनके नगर बने हैं, वहाँ रहते हैं। यहाँ पर सदा चतुर्थकाल रहता है एवं गुणस्थान प्रथम से पञ्चम तक होते हैं। विद्याओं का त्याग कर मुनि बनकर मोक्ष भी जा सकते हैं। अतः सभी गुणस्थान भी हो जाते हैं। (जै.सि.कोश, 3/544, 1/275)

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. पानाङ्ग जाति के कल्पवृक्ष नारियल का पानी भी देते हैं।
2. वस्त्राङ्ग जाति के कल्पवृक्ष धोती, दुपट्टा नहीं देते हैं।
3. भोजनाङ्ग जाति के कल्पवृक्ष दाल-भात (चावल)भी देते हैं।
4. पुष्करवर समुद्र के उभय तटों पर 24-24 कुभोग भूमियाँ हैं।
5. एक टांग वाले कुमानुष मिट्टी का आहार नहीं करते हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. म्लेच्छ खण्डों में कौन-सा काल रहता है ? (ति.प., 4/16)
2. कौन से विजयार्ध पर्वतों में विद्याधरों के कितने-कितने नगर बसे हैं एवं विद्याधर पूजन करते हैं कि नहीं ? (त्रि.सा., 695) एवं (त्रि.सा., 709)

अध्याय 19
देवगति

अन्तिम गति देवगति है। देवों की विशेषताएँ, उनके भेद, प्रभेद, उनकी आयु, ऊँचाई, उनकी आठ ऋद्धियों के नाम एवं सुख-दुःख आदि का वर्णन इस अध्याय में है।

1. देव किसे कहते हैं ?

1. आभ्यन्तर कारण देवगति नाम कर्म का उदय होने पर जो नाना प्रकार की बाह्य विभूति से द्वीप समुद्रादि अनेक स्थानों में इच्छानुसार क्रीड़ा करते हैं, वे देव कहलाते हैं।
2. जो दिव्य भाव-युक्त अणिमादि आठ गुणों से नित्य क्रीड़ा करते रहते हैं और जिनका प्रकाशमान दिव्य शरीर है, वे देव कहलाते हैं।
3. दीव्यन्ति क्रीडन्तीति देवाः। (स.सि., 4/1/443)

2. देवगति किसे कहते हैं ?

जिस कर्म का निमित्त पाकर आत्मा देव भाव को प्राप्त होता है, वह देवगति है।

3. देव कितने प्रकार के होते हैं ?

देव चार प्रकार के होते हैं - भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक।

4. देवों की कौन-कौन-सी विशेषताएँ हैं ?

देवों की निम्न विशेषताएँ हैं-

1. देवों का आहार (अमृत का) तो होता है, किन्तु नीहार (मल-मूत्र), पसीना एवं सप्तधातुएँ नहीं होती हैं।
2. देवों के शरीर में बाल नहीं होते हैं एवं उनके शरीर में निगोदिया जीव भी नहीं होते हैं एवं शरीर वैक्रियिक होता है।
3. देवों के शरीर की परछाई नहीं पड़ती है एवं पलकें भी नहीं झपकती हैं।
4. समचतुरस्र संस्थान ही होता है किन्तु संहनन कोई भी नहीं होता है।
5. देवों का अकालमरण नहीं होता है।
6. देवों का जन्म उपपाद शय्या पर होता है एवं अन्तर्मुहूर्त में छः पर्याप्तियाँ पूर्ण कर 16वर्षीय नवयुवक के समान हो जाते हैं एवं इनका बुढ़ापा भी नहीं आता है। (त्रि.सा., 550)
7. सम्यग्दृष्टि देव स्वर्गों में प्रतिदिन अभिषेक-पूजन करते हैं एवं सीनियर (पुराने) देवों के कहने से मिथ्यादृष्टि देव भी जिनेन्द्र भगवान् की कुलदेवता मानकर अभिषेक-पूजन करते हैं। (त्रि.सा., 551-553)
8. एक देव की कम-से-कम 32 देवियाँ होती हैं।

9. चार निकाय के देव तीर्थङ्करों के पञ्चकल्याणकों में आते हैं किन्तु सोलहवें स्वर्ग के ऊपर वाले अहमिन्द्र देव वहीं से नमस्कार करते हैं एवं पञ्चम स्वर्ग के लौकान्तिक देव मात्र तीर्थङ्कर के दीक्षा कल्याणक में वैरागी तीर्थङ्कर के वैराग्य की प्रशंसा करने के लिए आते हैं। (त्रि.सा., 554)
10. देवों को रोग नहीं होते हैं।
11. देवों में स्त्री और पुरुष दो वेद होते हैं।
12. देवों को सभी भोग सामग्री, सोचते ही, दस प्रकार के कल्पवृक्षों से प्राप्त हो जाती है। (ज्ञा.36/175)

5. नख, केश (बाल) के बिना देव कैसे लगते होंगे ?

देवों के शरीर में नख व केश नहीं होते हैं तथापि उनका स्वरूप बीभत्स, भयावह, ग्लानि उत्पन्न करने वाला नहीं है तथापि नख व केश का आकार होता है। जैसे-स्वर्ण या पाषाण की प्रतिमा में नख व केश का आकार होता है वैसे ही देवों में होता है। (मू.1056)

6. देवों में आठ गुणों (ऋद्धियों) का स्वरूप बताइए ?

देवों की आठ ऋद्धियाँ निम्न हैं-

1. **अणिमा**- अपने शरीर को अणु के बराबर छोटा करने की शक्ति है जिससे वह सुई के छेद में से भी निकल सकता है।
2. **महिमा** - अपने शरीर को सुमेरुके समान बड़ा करने की शक्ति होती है।
3. **लघिमा** - अपने शरीर को बिल्कुल हल्का बना लेना, जिससे मकड़ी के जाल पर भी पैर रखे तो वह भी न टूटे।
4. **गरिमा** – सुमेरु पर्वत से भी भारी शरीर बना लेना जिसे हजारों व्यक्ति भी मिलकर न उठा सकें।
5. **प्राप्ति** - एक स्थान पर बैठे-बैठे ही दूर स्थित पदार्थों का स्पर्श कर लेना जैसे-यहाँ बैठे-बैठे ही शिखरजी की टोंक का स्पर्श कर लेना।
6. **प्राकाम्य** - जल के समान पृथ्वी में और पृथ्वी के समान जल पर गमन करना।
7. **ईशत्व** - जिससे सब जगत् पर प्रभुत्व होता है।
8. **कामरूपित्व** - जिससे युगपत् बहुत से रूपों को रचता है, वह कामरूपित्व ऋद्धि है। (का.अ.टी. 370)

7. भवनवासी देव किन्हें कहते हैं ?

जो भवनों में रहते हैं, उन्हें भवनवासी कहते हैं।

8. भवनवासी देवों के नाम में कुमार शब्द क्यों जुड़ा है ?

इनकी वेशभूषा, शस्त्र, यान, वाहन और क्रीड़ा आदि कुमारों के समान होती है, इसलिए कुमार शब्द जुड़ा है। (स.सि. 4/10/461)

9. भवनवासी देवों के कितने भेद हैं एवं उनके मुकुट पर चिह्न, आहार का अंतराल, श्वासोच्छ्वास का अन्तराल, अवगाहना एवं आयु कितनी है ?

देवों के नाम	मुकुट पर चिह्न	आहार का अंतराल[1]	श्वासोच्छ्वास का अंतराल[2]	आयु उत्कृष्ट[3]	आयु जघन्य[4]	अवगाहना[5]
असुरकुमार	चूड़ामणि	1000 वर्ष	15 दिन	1 सागर	सर्वत्र 10,000 वर्ष	25 धनुष
नागकुमार	सर्प	12.5 दिन	12.5 मुहूर्त	3 पल्य		10 धनुष
सुपर्णकुमार	गरुड़	12.5 दिन	12.5 मुहूर्त	2.5 पल्य		10 धनुष
द्वीपकुमार	हाथी	12.5 दिन	12.5 मुहूर्त	2 पल्य		10 धनुष
उदधिकुमार	मगर	12 दिन	12 मुहूर्त	1.5 पल्य		10 धनुष
स्तनितकुमार	स्वस्तिक	12 दिन	12 मुहूर्त	1.5 पल्य		10 धनुष
विद्युतकुमार	वज्र	12 दिन	12 मुहूर्त	1.5 पल्य		10 धनुष
दिक्कुमार	सिंह	7.5 दिन	7.5 मुहूर्त	1.5 पल्य		10 धनुष
अग्निकुमार	कलश	7.5 दिन	7.5 मुहूर्त	1.5 पल्य		10 धनुष
वायुकुमार	तुरङ्ग	7.5 दिन	7.5 मुहूर्त	1.5 पल्य		10 धनुष

नोट-1 पल्य आयु वाले देव 5 दिन के अंतराल से आहार एवं श्वासोच्छ्वास 5 मुहूर्त में ग्रहण करते हैं एवं 10,000 वर्ष आयु वाले देव 2 दिन के अंतराल से आहार एवं यहाँ 7 श्वासोच्छ्वास लेने पर वहाँ एक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं।

10. व्यंतर देव किन्हें कहते हैं ?

''यत्र तत्र विचरन्तीति व्यन्तराः'' जो पहाड़, गुफा, द्वीप,समुद्र, ग्राम, नगर, देवालय आदि में विचरण करते रहते हैं, वे व्यंतर कहलाते हैं।

11. व्यतंर देवों के निवास स्थान कितने प्रकार के हैं ?

भवन - चित्रा पृथ्वी के नीचे स्थित हैं।
भवनपुर - द्वीप और समुद्रों में।
आवास - तालाब, वृक्ष, पर्वत, आदि के ऊपर। (त्रि.सा., 295)

12. व्यन्तर देवों के कितने भेद हैं एवं उनके आहार, श्वासोच्छ्वास का अंतराल कितना है एवं आयु और अवगाहना कितनी है ?

व्यन्तरों के आठ भेद हैं-किन्नर, किम्पुरुष, महोरग, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, भूत और पिशाच (ति. प., 6/25)। व्यन्तर देवों की उत्कृष्ट आयु कुछ अधिक एक पल्य एवं जघन्य आयु 10,000 वर्ष (ति.प., 6/83)। अवगाहना 10 धनुष (ति.प., 6/98)एक पल्य आयु वाले देवों का आहार अंतराल 5 दिन एवं श्वासोच्छ्वास 5 मुहूर्त (ति.प., 6/88-89)। 10,000 वर्ष आयु वाले देवों का आहार अंतराल 2 दिन एवं श्वासोच्छ्वास का अंतर सात श्वासोच्छ्वास।

13. ज्योतिषी देव किन्हें कहते हैं ?

ज्योतिषी देव ज्योतिर्मय होते हैं, इसलिए इनकी ज्योतिषी संज्ञा सार्थक है। ये पाँच प्रकार के होते हैं- सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र व तारे। (त.सू., 4/12)

---

1. ति.प. 3/111-114 2. वही, 3/115-118
3. वही, 3/144-145 4. वही, 3/175 5. वही, 3/176

14. ज्योतिषी देवों की आयु,अवगाहना कितनी है, आहार एवं श्वासोच्छ्वास का अंतराल कितना है ?

चन्द्र की उत्कृष्ट आयु 1 लाख वर्ष अधिक 1 पल्य, सूर्य की 1000 वर्ष अधिक 1 पल्य, शुक्र की 100 वर्ष अधिक 1 पल्य, गुरु की 1 पल्य, शेष ग्रहों एवं नक्षत्रों की $^{1}/_{2}$ पल्य है, ताराओं की $^{1}/_{4}$ पल्य है। तारा और नक्षत्रों की जघन्य आयु $^{1}/_{8}$ पल्य है शेष सूर्य, चन्द्रमा, सोम, मङ्गल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि इनकी जघन्य आयु $^{1}/_{4}$ पल्य है एवं अवगाहना सभी की 7 धनुष है। इनके आहार, श्वासोच्छ्वास का अंतराल भवनवासी देवों के समान है। (रा.वा., 4/40-41)

ज्योतिषी देवों का विशेष वर्णन जैन भूगोल अध्याय में है।

15. भवनत्रिक में उत्पत्ति के क्या कारण हैं ?

आदि के तीन निकाय (समूह)को भवनत्रिक कहते हैं। इसमें उत्पत्ति के कारण ये हैं-जिनमत से विपरीत आचरण, निदान पूर्वक तप, अग्नि, जल आदि में मरण, अकामनिर्जरा, पञ्चाग्नि आदि तप और सदोष चारित्र को धारण करने वाले जीव भवनत्रिक में जन्म लेते हैं। (त्रि.सा., 450)

16. वैमानिक देव किन्हें कहते हैं ?

1. ''विगतः मानः इति विमानः'' जिनका मान कम है, वे वैमानिक हैं क्योंकि व्यन्तर आदि अधिक मान वाले हैं और ऊपर-ऊपर देवों में मान कम होता है इससे कम मान वाले भी वैमानिक हैं।
2. ''विमानेषु भवा वैमानिकाः'' जो विमानों में रहते हैं, वे वैमानिक हैं। (स.सि., 4/16/473)

17. वैमानिक देवों के भेद कितने व कौन से हैं ?

वैमानिक देवों के दो भेद हैं। कल्पोपपन्न और कल्पातीत। जहाँ दस प्रकार के इन्द्र सामानिक आदि की कल्पना होती है, उन 16 स्वर्गों को 'कल्प' कहते हैं। ये कल्पोपपन्न देव कहलाते हैं। इसके ऊपर वाले, जहाँ दस प्रकार के इन्द्र आदि की कल्पना नहीं है, वे कल्पातीत कहलाते हैं। नव ग्रैवेयक, नव अनुदिश एवं पञ्च अनुत्तर में रहने वाले देव कल्पातीत हैं।

18. कल्पवासी देव की आयु व अवगाहना कितनी है ?

कल्पवासी देव	उत्कृष्ट आयु[1]	जघन्य आयु[2]	अवगाहना[3]
सौधर्म-ऐशान	2 सागर से कुछ अधिक	1 पल्य से कुछ अधिक	7 हाथ
सानत्कुमार-माहेन्द्र	7 सागर से कुछ अधिक	2 सागर से कुछ अधिक	6 हाथ
ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर	10सागर से कुछ अधिक	7 सागर से कुछ अधिक	5 हाथ
लान्तव-कापिष्ठ	14सागर से कुछ अधिक	10सागर से कुछ अधिक	5 हाथ
शुक्र-महाशुक्र	16सागर से कुछ अधिक	14सागर से कुछ अधिक	4 हाथ
शतार-सहस्रार	18सागर से कुछ अधिक	16सागर से कुछ अधिक	4 हाथ
आनत-प्राणत	20सागर से अधिक नहीं	18सागर से अधिक नहीं	3.5 हाथ
आरण-अच्युत	22सागर से अधिक नहीं	20सागर से अधिक नहीं	3 हाथ

1. त.सू., 4/29-31 2. वही, 4/33-34 3. ति.प. 8/565

19. कल्पातीत देवों की आयु व अवगाहना कितनी है ?

कल्पातीत देव	उत्कृष्ट आयु[1]	जघन्य आयु[2]	अवगाहना[3]
ग्रैवेयकों (अधो)में क्रमशः	23, 24, 25 सागर	22, 23, 24 सागर	2.5 हाथ
मध्यम ग्रैवेयकों में क्रमशः	26, 27, 28 सागर	25, 26, 27 सागर	2 हाथ
उपरिम ग्रैवेयकों में क्रमशः	29, 30, 31 सागर	28, 29, 30 सागर	1.5 हाथ
नव अनुदिशों में	32 सागर	31 सागर	1.5 हाथ
अनुत्तरों में			
चार अनुत्तरों में	33 सागर	32 सागर	1 हाथ
सर्वार्थसिद्धि में	33 सागर	33 सागर	1 हाथ

विशेषः– अनुदिशों में अवगाहना 1.25 हाथ (सि.सा.दी.15/257)

20. साधिक आयु (कुछ अधिक) का अर्थ क्या है, यह कौन से स्वर्ग तक लेते हैं ?

किसी जीव ने संयम अवस्था में उपरिम स्वर्गों की देवायु का बंध किया, पश्चात् संक्लेश परिणामों के निमित्त से संयम की विराधना कर दी और अपवर्तनाघात अर्थात् बध्यमान आयु का घात कर अधस्तन स्वर्गों या भवनत्रिक में उत्पन्न होता है, उसे घातायुष्क कहते हैं। घातायुष्क सम्यग्दृष्टि को अपने-अपने विमानों की आयु से अन्तर्मुहूर्त कम $^{1}/_{2}$ सागर अधिक आयु मिलती है और वह मिथ्यादृष्टि हो गया तो उसे उस आयु से पल्य के असंख्यातवें भाग अधिक मिलेगी। घातायुष्क बारहवें स्वर्ग तक उत्पन्न होते हैं। (ध.पु.वि, 4/385)

21. कल्पवासी और कल्पातीत देवों में आहार और श्वासोच्छ्वास कब होता है ?

जितने सागर की आयु वाले देव होते हैं, उतने हजार वर्ष के बाद आहार ग्रहण करते हैं एवं उतने पक्ष (15 दिन) के बाद श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं। जैसे-7 सागर किसी देव की आयु है, वह 7000 वर्ष बाद आहार एवं 7 पक्ष अर्थात् 3.5 माह बाद श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं। (त्रि.सा., 544)

22. देव आहार में क्या लेते हैं ?

देवों में मानसिक आहार होता है अर्थात् उनके मन में आहार की इच्छा होते ही कण्ठ में अमृत झर जाता है और तृप्ति हो जाती है। (ति.प., 6/87)

23. चार प्रकार के देवों में विशेष भेद कितने होते हैं ?

चार प्रकार के देवों में ये दस भेद होते हैं-

1. **इन्द्र** - जो दूसरे देवों में न पाई जाने वाली अणिमा आदि ऋद्धि रूप ऐश्वर्य वाला हो, जिनकी आज्ञा चलती हो, वह इन्द्र कहलाता है।
2. **सामानिक** - आज्ञा और ऐश्वर्य के अलावा जो स्थान, आयु, वीर्य, परिवार, भोग और उपभोग आदि में इन्द्र के समान हों, वे सामानिक कहलाते हैं। ये पिता, गुरु और उपाध्याय के समान होते हैं।
3. **त्रायस्त्रिंश** - जो मंत्री और पुरोहित के समान इन्द्र को सम्मति देते हैं। ये सभा में 33 ही होते हैं। इससे त्रायस्त्रिंश कहलाते हैं।

---

1. तत्त्वार्थसूत्र, 4/32 2. वही, 4/34 3. ति.प. 8/565

4. **पारिषद** – जो सभा में मित्र और प्रेमीजनों के समान होते हैं, वे पारिषद कहलाते हैं।
5. **आत्मरक्ष** – जो अङ्ग रक्षक के समान होते हैं, वे आत्मरक्ष कहलाते हैं।
6. **लोकपाल** – जो देव कोतवाल के समान होते हैं, वे लोकपाल कहलाते हैं।
7. **अनीक** – जैसे-यहाँ सेना है, उसी प्रकार सात तरह के पैदल, घोड़ा, बैल, रथ, हाथी, गन्धर्व और नर्तकी रूप सेना ये देव अनीक कहलाते हैं।
8. **प्रकीर्णक** – जो गाँव और शहरों में रहने वाली प्रजा के समान हैं, उन्हें प्रकीर्णक कहते हैं।
9. **आभियोग्य** – जो देव दास के समान वाहन (हाथी, घोड़ा) आदि कार्य में प्रवृत्त होते हैं, उन्हें आभियोग्य कहते हैं।
10. **किल्विषिक** – जो इन्द्र की सभा में नहीं आ सकते, बाहर द्वार पर बैठते हैं, उन्हें किल्विषिक कहते हैं। (स.सि., 4/4/449)

नोट – व्यंतर और ज्योतिषियों में त्रायस्त्रिंश और लोकपाल नहीं होते हैं। (त.सू., 4/5)

24. देवियों की उत्कृष्ट आयु कितनी होती है ?

16 स्वर्गों में क्रमशः 5, 7, 9,11,13,15,17,19,21, 23, 25, 27, 34, 41, 48 एवं 55 पल्य है। प्रथम स्वर्ग में 5 पल्य है, 12 वें स्वर्ग तक 2-2 पल्य बढ़ाना है, इसके उपरांत 7-7 पल्य बढ़ाना है।

25. देवियों की जघन्य आयु कितनी होती है ?

सौधर्म-ऐशान स्वर्ग की देवियों की जघन्य आयु कुछ अधिक 1 पल्य है। शेष स्वर्गों की देवियों की उत्कृष्ट आयु, आगे-आगे के स्वर्गों की देवियों की जघन्य आयु है। जैसे-ऐशान स्वर्ग की देवियों की उत्कृष्ट आयु 7 पल्य है वही सानत्कुमार स्वर्ग की देवियों की जघन्य आयु है। (त्रि.सा., 542)

26. देवियाँ कौन से स्वर्ग तक उत्पन्न होती हैं ?

देवियाँ दूसरे स्वर्ग तक ही उत्पन्न होती हैं। वहाँ भी रहती हैं एवं उन स्वर्गों में उत्पन्न हुई देवियों को उनके नियोगी देव, देवियों के चिह्न अवधिज्ञान से जानकर, अपनी-अपनी देवियों को अपने-अपने स्वर्ग में ले जाते हैं। प्रथम स्वर्ग में उत्पन्न देवियाँ 3, 5, 7, 9, 11, 13 एवं 15 वें स्वर्ग तक जाती हैं। दूसरे स्वर्ग में उत्पन्न देवियाँ 4, 6, 8, 10, 12, 14 एवं 16 वें स्वर्ग तक जाती हैं। (त्रि.सा., 524-525)

27. सोलह स्वर्गों में कितने इन्द्र होते हैं ?

सोलह स्वर्गों में बारह इन्द्र होते हैं।

कल्प	दक्षिणेन्द्र	उत्तरेन्द्र
सौधर्म-ऐशान कल्प में	सौधर्म इन्द्र	ऐशान इन्द्र
सानत्कुमार-माहेन्द्र कल्प में	सानत्कुमार इन्द्र	माहेन्द्र इन्द्र
ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर कल्प में	ब्रह्म इन्द्र	–
लान्तव-कापिष्ठ कल्प में	लान्तव इन्द्र	–
शुक्र-महाशुक्र कल्प में	शुक्र इन्द्र	–
शतार-सहस्रार कल्प में	शतार इन्द्र	–
आनत-प्राणत कल्प में	आनत इन्द्र	प्राणत इन्द्र
आरण-अच्युत कल्प में	आरण इन्द्र	अच्युत इन्द्र

(स.सि. 4/19/479)

28. एक भवावतारी जीव कौन-कौन से होते हैं ?

सौधर्म इन्द्र, सौधर्म इन्द्र की शची, उसी के सोमादि चार लोकपाल (पूर्वादि दिशाओं में क्रमशः सोम, यम, वरुण और धनद (कुबेर) होते हैं), सानत्कुमारादि दक्षिणेन्द्र, लौकान्तिक देव और सर्वार्थसिद्धि विमान के देव एक भवावतारी होते हैं। (त्रि.सा., 548)

29. लौकान्तिक देव कौन हैं एवं कहाँ रहते हैं ?

पाँचवें ब्रह्मलोक नामक स्वर्ग के अंत में रहने वाले देव लौकान्तिक देव हैं। ये एक भवावतारी होते हैं। इनके लोक (संसार) का अन्त आ गया है, इसलिए इन्हें लौकान्तिक कहते हैं। ये विषयों से रहित होते हैं, अतः इन्हें देवर्षि भी कहते हैं। ये द्वादशाङ्ग के पाठी होते हैं, मात्र तीर्थङ्करों के तपकल्याणक में उनके वैराग्य की प्रशंसा करने आते हैं। इनकी शुक्ल लेश्या होती है। जघन्य एवं उत्कृष्ट आयु आठ सागर की होती है। (स.सि., 4/24-25, 42/489, 491, 525)

30. लौकान्तिक देवों के कितने भेद हैं ?

लौकान्तिक देवों के 8 भेद हैं-सारस्वत, आदित्य, वह्नि, अरुण, गर्दतोय, तुषित, अव्याबाध और अरिष्ट।

31. लौकान्तिक देव कौन बनते हैं ?

सतत् बारह भावनाओं का चिन्तन करने वाले सम्यग्दृष्टि मुनि लौकान्तिक देव बनते हैं तथा श्रावक भी इन्द्र या लौकान्तिक पद प्राप्त कर सकता है। (द्र.सं.टी.38,उ.पु.67/201-207)

32. कौन से स्वर्ग के देव मरणकर कितने समय बाद उसी स्वर्ग के देव हो सकते हैं ?

स्वर्ग	अन्तर काल
भवनत्रिक	अन्तर्मुहूर्त
सौधर्म-ऐशान	अन्तर्मुहूर्त
सानत्कुमार-माहेन्द्र	मुहूर्त पृथक्त्व
ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर	दिवस पृथक्त्व
लान्तव-कापिष्ठ	दिवस पृथक्त्व
शुक्र-महाशुक्र	पक्ष पृथक्त्व
शतार-सहस्रार	पक्ष पृथक्त्व
आनत-प्राणत	माह पृथक्त्व
आरण-अच्युत	माह पृथक्त्व
नवग्रैवेयक	वर्ष पृथक्त्व
नवअनुदिश	वर्ष पृथक्त्व
चार अनुत्तरों में	वर्ष पृथक्त्व

विशेष - पृथक्त्व का अर्थ 3 से 9 तक। किन्तु नवग्रैवेयक, नवअनुदिश एवं चार अनुत्तर विमानों में वर्ष पृथक्त्व से 8 वर्ष अन्तर्मुहूर्त से 9 वर्ष तक लेना होगा। क्योंकि कल्पातीत विमानों में मुनि ही जाते हैं और आठ वर्ष अन्तर्मुहूर्त से पहले मुनि नहीं बन सकते हैं।

33. वैमानिक देवों में उत्पत्ति के कारण क्या हैं ?

सम्यग्दर्शन, देशव्रत और महाव्रत से तो वैमानिकों में ही उत्पत्ति होती है। मंदकषायी, पीत, पद्म, शुक्ल लेश्या और अनेक प्रकार के तपादि करने से भी वैमानिक देवों में उत्पत्ति होती है।

34. सभी देवों में आपस में बड़ा प्रेम रहता होगा ?

यद्यपि अधिकांश देवों में शुभ लेश्या होने के कारण प्रीतिभाव रहता है परन्तु कुछ देव ईर्ष्या-द्वेष आदि भावों से भी युक्त होते हैं। जैसे-चमरेन्द्र (असुरकुमार में इन्द्र) सौधर्म इन्द्र से। वैरोचन (असुरकुमार में इन्द्र) ऐशान इन्द्र से। भूतानन्द (नागकुमार में इन्द्र) वेणु से (सुपर्णकुमार में इन्द्र)। धरणानन्द (नागकुमार में इन्द्र) वेणुधारी से स्वभावतः नियम से ईर्ष्या करते हैं। (त्रि.सा., 212)

35. देवों में कितनी शक्ति होती है ?

एक पल्योपम प्रमाण आयु वाला देव पृथ्वी के छः खण्डों को उखाड़ने के लिए और उनमें स्थित मनुष्यों व तिर्यञ्चों को मारने अथवा उनकी रक्षा करने में समर्थ है। सागरोपम आयु वाले देव जम्बूद्वीप को भी पलटने के लिए और उसमें स्थित मनुष्यों व तिर्यञ्चों को मारने अथवा उनकी रक्षा करने में समर्थ हैं। सौधर्म इन्द्र जम्बूद्वीप को उलट सकता है। (ति.प., 8/720-721)

36. देव अवधिज्ञान से कहाँ तक का जानते हैं ?

इन्द्र	**नीचे कहाँ तक**
सौधर्म-ऐशान	प्रथम नरक तक
सानत्कुमार-माहेन्द्र	दूसरे नरक तक
ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर, लान्तव-कापिष्ठ	तीसरे नरक तक
शुक्र-महाशुक्र,शतार-सहस्रार	चौथे नरक तक
आनत-प्राणत, आरण-अच्युत	पाँचवें नरक तक
नव ग्रैवेयक	छठवें नरक तक
नव अनुदिश	लोकनाली पर्यन्त
पञ्च अनुत्तर	लोकनाली पर्यन्त (रा.वा., 1/21/7)

सभी देव ऊपर अपने-अपने विमान के ध्वजदंड तक जानते हैं। तथा असंख्यात कोड़ाकोड़ी योजन तिर्यक् रूप से जानते हैं।

37. देवगति के दुःखों का वर्णन कीजिए ?

देवों में शारीरिक दुःख नहीं है, किन्तु मानसिक दुःख बहुत हैं। शारीरिक सुख होते हुए भी मन दुःखी है तब सारी भोग-उपभोग सामग्री नीरस हो जाती है। देव दूसरे बड़े इन्द्रों के वैभव को देखकर ईर्ष्या करते हैं। कोई प्रियजन-आयुपूर्ण कर स्वर्ग से च्युत होते हैं तो उनके वियोग को भी देव, देवी सहन करते हैं एवं मरण के छःमाह पहले स्वयं की माला मुरझा जाती है इसलिए स्वर्ग छूटने का भी दुःख देव, देवियाँ सहन करते हैं। देवों में अपवाद जनित दुःख नहीं होते हैं, क्योंकि स्वर्गों में अपवाद होते ही नहीं है।

(का.आ. , 58-61)

38. देवगति में कितने गुणस्थान होते हैं ?

देवगति में 1 से 4 तक गुणस्थान होते हैं।

39. 100 इन्द्र कौन-कौन से होते हैं ?

भवणालय चालीसा विंतर देवाण होंति बत्तीसा।
कप्पामर चउवीसा, चन्दो सूरो णरो तिरियो ॥

भवनवासी देवों के	40 इन्द्र
व्यन्तर देवों के	32 इन्द्र
वैमानिक देवों के	24 इन्द्र
ज्योतिषी देवों में सूर्य	1 इन्द्र
ज्योतिषी देवों में चन्द्रमा	1 इन्द्र
मनुष्यों में चक्रवर्ती	1 इन्द्र
तिर्यञ्चों में सिंह	1 इन्द्र
	100 इन्द्र

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. देव कटिंग करवाने मध्य लोक में आते हैं।
2. देव फाईव स्टार होटल में भोजन करते हैं।
3. सबसे ज्यादा अवगाहना (ऊँचाई) असुरकुमार देवों की होती है।
4. विमान में रहने वाले देव वैमानिक कहलाते हैं।
5. सर्वार्थसिद्धि के देवों का एक हाथ होता है।
6. बारहवें स्वर्ग में देवी की ज्यादा ऊँचाई होती है, देव की कम।
7. सौधर्म इन्द्र चमरेन्द्र से ईर्ष्या करता है।
8. लौकान्तिक देव 8000 वर्ष के बाद आहार ग्रहण करते हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. दूसरे आचार्य के मत से देवियों की आयु कितनी है ? (त्रि.प., 8/525-532)
2. कौन से आचार्य ने किस ग्रन्थ में चौदह इन्द्र माने हैं ? (रा.वा., 4/19/8)
3. कौन से ग्रन्थ में महाशुक्र और सहस्रार को इन्द्र माना है ? (त्रि.प., 8/120)
4. लौकान्तिक देवों की संख्या कितनी है ? (रा.वा., 4/25/3)
5. भरत, ऐरावत एवं पूर्व विदेह, पश्चिम विदेह के तीर्थङ्करों के वस्त्राभूषण कहाँ से आते हैं ? (त्रि.सा., 521-522)
6. इन्द्र, इन्द्र की महादेवी और लोकपाल का अन्तरकाल कितना है ? (त्रि.सा., 530)
7. कौन से स्वर्ग तक के देव शरीर से विषय-सुख भोगने वाले होते हैं ? (त.सू., 4/7)
8. कौन से स्वर्ग के देव स्पर्श, रूप, शब्द और मन से विषय-सुख भोगने वाले होते हैं ? (त.सू. 4/8)
9. कौन से देव विषय-सुख से रहित होते हैं ? (त.सू., 4/9)

अध्याय 20
अकृत्रिम चैत्यालय

जिन्हें किसी ने बनाया नहीं ऐसे अकृत्रिम चैत्यालय कहाँ–कहाँ पर हैं, कितने हैं उनकी लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई आदि कितनी है, इसका वर्णन इस अध्याय में है।

अनन्तानन्त अलोकाकाश के मध्य भाग में पुरुषाकार लोकाकाश है। इसके तीन भेद हैं–अधोलोक, मध्यलोक और ऊर्ध्वलोक।

अधोलोक – अधोलोक में भवनवासी देव भी निवास करते हैं। वहाँ प्रत्येक भवन में जिन चैत्यालय हैं, कुल चैत्यालय सात करोड़ बहत्तर लाख हैं। प्रत्येक जिनमंदिर में 108, 108 प्रतिमाएँ हैं। इस प्रकार कुल 8,33,76,00,000 प्रतिमाएँ हैं। (त्रि.सा., 208)

मध्यलोक – मध्यलोक में 458 चैत्यालय हैं।

मेरु में	16 × 5 = 80
गजदंत में	4 × 5 = 20
जम्बू–शाल्मली वृक्ष में	2 × 5 = 10

(जम्बू के उत्तर कुरु में जम्बू वृक्ष, धातकी के उत्तर कुरु में धातकी वृक्ष एवं पुष्कर के उत्तर कुरु में पुष्कर नाम के वृक्ष हैं।)

कुलाचल	6 × 5 = 30
वक्षार गिरि	16 ×5 = 80
विजयार्ध	34 × 5 =170
इष्वाकार पर्वत–धातकीखण्ड में 2 एवं पुष्करार्ध में 2 हैं।	2 × 2 = 4
मानुषोत्तर पर्वत पर	4
नंदीश्वर द्वीप में	52
कुण्डलवर पर्वत पर	4
रुचिकवर पर्वत पर	4
	458 (त्रि.सा., 561)

प्रत्येक जिन मंदिर में 108–108 प्रतिमाएँ हैं। 458 ×108= 49,464 कुल प्रतिमाएँ हैं।

जिनको मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो।

ज्योतिषी– ज्योतिषी देवों के असंख्यात विमानों में असंख्यात अकृत्रिम चैत्यालय हैं। (त्रि.सा., 302)

व्यन्तर – व्यन्तर देवों के असंख्यात निवास स्थानों में असंख्यात अकृत्रिम चैत्यालय हैं। (त्रि.सा., 250)

ऊर्ध्वलोक – सोलह स्वर्गों में 84, 96, 700 अकृत्रिम चैत्यालय एवं कल्पातीत विमानों में 323 अकृत्रिम चैत्यालय हैं। इस प्रकार ऊर्ध्वलोक में कुल 84, 97, 023 अकृत्रिम चैत्यालय हैं। प्रत्येक में 108–108 प्रतिमाएँ हैं। इन सबको मेरा मन, वचन और काय से बारम्बार नमस्कार हो। (त्रि.सा., 451)

1. **अकृत्रिम चैत्यालयों एवं प्रतिमाओं का कुल योग कितना है ?**

कहाँ	**चैत्यालय**		**प्रतिमाएँ**
भवनवासी	7,72,00,000×108	=	8, 33, 76, 00, 000
मध्यलोक	458×108	=	49, 464
स्वर्ग तथा अहमिंद्र में	84,97, 023 ×108	=	91, 76, 78, 484
कुल योग	8,56,97, 481 × 108	=	9, 25, 53, 27, 948

कहा भी है - **नवकोडिसया पणवीसा, लक्खा तेवण्ण सहस्स सगवीसा।**
नव सय तह अडयाला जिणपडिमाकिट्टिमां वंदे॥

नौ सौ पच्चीस करोड़ त्रेपन लाख सत्ताईस हजार नौ सौ अड़तालीस हैं। इन समस्त अकृत्रिम प्रतिमाओं की मैं वंदना करता हूँ।

2. **अकृत्रिम चैत्यालयों का मुख किस दिशा में है ?**

अकृत्रिम चैत्यालयों का मुख पूर्व दिशा में है।

विशेष -अष्ट प्रातिहार्यों सहित अरिहंत प्रतिमा। अष्ट प्रातिहार्यों से रहित सिद्ध प्रतिमा।(त्रि.सा. 1002)

3. **अकृत्रिम चैत्यालयों की लम्बाई, चौड़ाई व ऊँचाई कितनी है ?**

इन अकृत्रिम चैत्यालयों की लम्बाई, चौड़ाई व ऊँचाई निम्नलिखित है-

	लम्बाई	**चौड़ाई**	**ऊँचाई**
उत्कृष्ट	100 योजन	50 योजन	75 योजन
मध्यम	50 योजन	25 योजन	37 $^{1}/_{2}$ योजन
जघन्य	25 योजन	12 $^{1}/_{2}$ योजन	18 $^{3}/_{4}$ योजन

4. **अकृत्रिम चैत्यालयों के द्वार की ऊँचाई व चौड़ाई कितनी है ?**

	ऊँचाई	**चौड़ाई**
उत्कृष्ट	16 योजन	8 योजन
मध्यम	8 योजन	4 योजन
जघन्य	4 योजन	2 योजन

नोट- छोटे द्वारों की लम्बाई 8 योजन, चौड़ाई 4 योजन, ऊँचाई 2 योजन है। (त्रि.सा., 978)

5. **अकृत्रिम चैत्यालयों की नींव कितनी है ?**

उत्कृष्ट 2 कोस, मध्यम 1 कोस, जघन्य $^{1}/_{2}$ कोस।

6. **कौन-कौन से अकृत्रिम चैत्यालय उत्कृष्ट, मध्यम व जघन्य लम्बाई, चौड़ाई व ऊँचाई वाले हैं ?**

भद्रशालवन, नन्दनवन, नन्दीश्वरद्वीप और वैमानिक देवों के विमानों में जो जिनालय हैं वे उत्कृष्ट ऊँचाई आदि वाले हैं तथा सौमनसवन, रुचकगिरि, कुण्डलगिरि, वक्षार पर्वत, इष्वाकार पर्वत, मानुषोत्तर पर्वत और कुलाचलों पर जो जिनालय हैं उनकी ऊँचाई आदि मध्यम एवं पाण्डुक वन स्थित जो जिनालय हैं, उनकी ऊँचाई आदि जघन्य है। (त्रि.सा., 979-980)

7. **जम्बूद्वीप के विजयार्ध पर्वत तथा जम्बू, शाल्मली वृक्षों के चैत्यालय की लम्बाई, चौड़ाई व ऊँचाई कितनी है ?**

लम्बाई 1 कोस, चौड़ाई $^{1}/_{2}$ कोस व ऊँचाई $^{3}/_{4}$ कोस। (सि.सा.दी. 6/103)

8. **धातकीखण्ड व पुष्करार्ध के विजयार्ध तथा वृक्षों के चैत्यालय की लम्बाई, चौड़ाई व ऊँचाई कितनी है ?**

लम्बाई 2 कोस, चौड़ाई 1 कोस व ऊँचाई 1 $^{1}/_{2}$ कोस। (जै. सि.को., 2/304)

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. जम्बूद्वीप में 78 अकृत्रिम चैत्यालय नहीं हैं।
2. धातकीखण्ड द्वीप में 158 अकृत्रिम चैत्यालय हैं।
3. पुष्करवरद्वीप में 162 अकृत्रिम चैत्यालय हैं।
4. अढ़ाईद्वीप में 398 अकृत्रिम चैत्यालय नहीं हैं।
5. अकृत्रिम चैत्यालय बिना नींव के हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. चैत्य वृक्षों के कितने भेद हैं, नाम सहित बताइए ? (त्रि.सा., 214)
2. चैत्य वृक्षों के मूल भाग की चारों दिशाओं में से प्रत्येक दिशा में कितनी-कितनी प्रतिमाएँ हैं ? (त्रि.सा., 215)
3. उन प्रतिमाओं के आगे प्रत्येक दिशा में रत्नमयी उत्तुङ्ग कितने-कितने मानस्तंभ विराजमान हैं एवं उन मानस्तंभों के उपरिम भाग में चारों दिशाओं में से प्रत्येक दिशा में कितनी-कितनी प्रतिमाएँ हैं? (त्रि.सा., 216)

गुरु स्तुति

भो आचार्यः श्री विद्यासागरः भक्तित्रय सहितोहं, नमोऽस्तु कुर्वेहं।
बाल ब्रह्मचारिणः परमविरागिनः भक्ति त्रय सहितोऽहं।
नमोऽस्तु कुर्वेहं ..... भो .....॥ 1॥
अनुपम ज्ञानिनः भेद विज्ञानिनः भक्ति त्रय सहितोऽहं।
नमोऽस्तु कुर्वेहं ..... भो .....॥ 2॥
रहिताऽडम्बरः महादिगम्बरः भक्ति त्रय सहितोऽहं।
नमोऽस्तु कुर्वेहं ..... भो .....॥ 3॥
मुनिगण नायकः दुरितविनाशकः भक्ति त्रय सहितोऽहं।
नमोऽस्तु कुर्वेहं ..... भो .....॥ 4॥
भव्य शरीरिणः महामनीषिणः भक्ति त्रय सहितोऽहं।
नमोऽस्तु कुर्वेहं ..... भो .....॥ 5॥
धर्मप्रभावकः धर्म प्रबोधकः भक्ति त्रय सहितोऽहं।
नमोऽस्तु कुर्वेहं ..... भो .....॥ 6॥

अध्याय 21
परमेष्ठी

जिन शासन में सर्वोच्च पद प्राप्त करने वाले परमेष्ठी कितने होते हैं, कहाँ रहते हैं, उनकी प्रतिमाएँ कैसी बनती हैं, कितने परमेष्ठियों का अभिषेक होता है आदि का वर्णन इस अध्याय में है।

1. परमेष्ठी किसे कहते हैं ?

1. जिनशासन में जिनका पद महान् होता है, जो गुणों में सर्वश्रेष्ठ होते हैं तथा जिन्हें राजा, इन्द्र, चक्रवर्ती, देव और सिंह आदि भी नमस्कार करते हैं, उन्हें 'परमेष्ठी' कहते हैं।
2. ''परमे पदे तिष्ठति इति परमेष्ठी उच्यते'' इस व्युत्पत्ति के अनुसार जो परमपद में स्थित हो, उन्हें परमेष्ठी कहते हैं। यहाँ परम शब्द का अर्थ है 'पारलौकिक'।

2. परमेष्ठी कितने होते हैं, नाम बताइए ?

परमेष्ठी पाँच होते हैं। अरिहंत परमेष्ठी, सिद्ध परमेष्ठी, आचार्य परमेष्ठी, उपाध्याय परमेष्ठी एवं साधु परमेष्ठी।

3. सबसे बड़े परमेष्ठी कौन से हैं ?

सबसे बड़े परमेष्ठी सिद्ध परमेष्ठी हैं।

4. सबसे बड़े सिद्ध परमेष्ठी हैं, तो पहले अरिहंत परमेष्ठी को क्यों नमस्कार किया ?

अरिहंत परमेष्ठी ने चार घातिया कर्मों का क्षय किया है, वे जीवन मुक्त हैं। संसार मुक्त नहीं। किन्तु सिद्ध परमेष्ठी ने तो आठों ही कर्मों का नाश कर दिया है। अतः सिद्ध परमेष्ठी बड़े हैं, किन्तु अरिहंत परमेष्ठी के माध्यम से ही सिद्ध परमेष्ठी, आप्त (देव), आगम और पदार्थ का ज्ञान होता है। इसलिए उपकार की अपेक्षा से आदि में अरिहंत परमेष्ठी को नमस्कार किया है।

5. पाँच परमेष्ठी कहाँ-कहाँ रहते हैं एवं कहाँ-कहाँ विहार करते हैं ?

पाँच परमेष्ठी में सिद्ध परमेष्ठी को छोड़कर शेष चार परमेष्ठी मध्यलोक के अढ़ाईद्वीप (2.5) एवं दो समुद्र अर्थात् 45 लाख योजन प्रमाण क्षेत्र में रहते हैं। जिनमें तीर्थङ्कर व केवली भगवान् सभी आर्यखण्डों में ही विहार करते हैं। किन्तु आचार्य, उपाध्याय, साधु परमेष्ठी भोगभूमि में भी उपदेश देने के निमित्त से चले जाते हैं। सिद्ध परमेष्ठी ऊर्ध्वलोक के अन्तिम तनुवातवलय के अंत में निवास करते हैं। ईषत् प्राग्भार नामक अष्टम भूमि में स्थित सिद्ध शिला से 7050 धनुष ऊपर से लोकान्त तक सिद्ध भगवान् रहते हैं। किन्तु आगे धर्मास्तिकाय का अभाव होने से अनन्तशक्तिधारी सिद्ध परमेष्ठी वहीं रुक जाते हैं।

6. कितने परमेष्ठी के साक्षात् दर्शन कर सकते हैं ?

सिद्ध परमेष्ठी को छोड़कर शेष चार परमेष्ठियों के, किन्तु वर्तमान इस पञ्चमकाल में भरत-ऐरावत क्षेत्र में तीन परमेष्ठी आचार्य, उपाध्याय और साधु के ही दर्शन हो पाते हैं।

7. **तिरेसठ (63) शलाका पुरुषों में कौन से परमेष्ठी आते हैं ?**
   तिरेसठ (63) शलाका पुरुषों में मात्र अरिहंत परमेष्ठी आते हैं।
8. **विदेशों में कोई साधु बन सकते हैं कि नहीं ?**
   हाँ, विदेशों में साधु बन सकते हैं किन्तु अभी तक बने नहीं हैं।
9. **कितने परमेष्ठी दीक्षा देते हैं ?**
   तीन परमेष्ठी दीक्षा देते हैं। आचार्य, उपाध्याय और साधु। मुख्य रूप से आचार्य परमेष्ठी दीक्षा देते हैं।
10. **पञ्च परमेष्ठियों में देव और गुरु कौन-कौन हैं ?**
    अरिहंत एवं सिद्ध परमेष्ठी देव हैं। आचार्य, उपाध्याय और साधु परमेष्ठी गुरु हैं।
11. **तीन कम नौ करोड़ मुनिराजों में कौन-कौन से परमेष्ठी आते हैं ?**
    चार परमेष्ठी। अरिहंत, आचार्य, उपाध्याय और साधु।
12. **कौन से परमेष्ठी का किस रंग में और शरीर के किस अङ्ग में ध्यान करना चाहिए ?**

परमेष्ठी	**रङ्ग**[1]	**अङ्ग में**[2]
अरिहंत	श्वेत	नाभि में
सिद्ध	लाल	मस्तक में
आचार्य	पीला	कंठ में
उपाध्याय	हरा	हृदय में
साधु	काला	मुख में

1. मानसार, अध्याय 35, स्थापत्य एवं मूर्तिकला ग्रन्थ
2. ज्ञा., 38/108

13. **कितने परमेष्ठी आपके घर में आते हैं ?**
    तीन परमेष्ठी घर में आहार करने एवं उपदेश देने के लिए आते हैं।
14. **आर्यिका, एलक, क्षुल्लक, क्षुल्लिका एवं भट्टारक जी कौन से परमेष्ठी हैं ?**
    ये पाँचों ही कोई भी परमेष्ठी नहीं हैं।
15. **कितने परमेष्ठी शयन करते हैं ?**
    तीन परमेष्ठी शयन करते हैं। आचार्य, उपाध्याय एवं साधु।
16. **कितने परमेष्ठी की मूर्तियाँ बनती हैं ?**
    सभी परमेष्ठियों की मूर्तियाँ बनती हैं।
17. **पाँच परमेष्ठियों की प्रतिमाएँ किस प्रकार की होती हैं ?**
    चिह्न एवं अष्ट प्रातिहार्य सहित अरिहन्त प्रतिमा होती है, चिह्न एवं अष्ट प्रातिहार्य से रहित सिद्ध प्रतिमा होती है, वरदहस्त सहित आचार्य की, शास्त्र सहित उपाध्याय की तथा पिच्छी-कमण्डलु सहित साधु की प्रतिमा होती है। (जै.सि.को., 2/301) वर्तमान में सिद्ध भगवान् की पुरुषाकार वाली मूर्तियों की भी परम्परा है।
    नोट - हू-ब-हू आचार्य, उपाध्याय एवं साधु की प्रतिमा नहीं बनती है।

18. कितने परमेष्ठियों का अभिषेक होता है ?

साक्षात् किसी भी परमेष्ठी का अभिषेक नहीं होता है। प्रतिमा में जिन परमेष्ठियों की स्थापना की गई है, उनका अभिषेक होता है।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. अरिहंत, सिद्ध परमेष्ठी को भूख लगती है।
2. सिद्ध परमेष्ठी के पास घातिया कर्म हैं।
3. सिद्ध परमेष्ठी सबसे बड़े हैं।
4. चार परमेष्ठी आहार करते हैं।
5. विदेशों में भी साधु हो सकते हैं।
6. सरस्वती शिशु मंदिर के आचार्य जी आचार्य परमेष्ठी हैं।
7. सिद्ध परमेष्ठी का ध्यान लाल रङ्ग में करते हैं।
8. अरिहंत परमेष्ठी का ध्यान सफेद रङ्ग में नहीं करते हैं।
9. साधु परमेष्ठी का ध्यान नीले रङ्ग में भी करते हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. गणधर कौन से परमेष्ठी में गर्भित हैं ? (चिन्तन कीजिए)
2. अरिहंत परमेष्ठी कौन-कौन से परमेष्ठियों को देखते हैं ? (चिन्तन कीजिए)
3. सिद्ध परमेष्ठी कितने राजू ऊर्ध्व गमन करते हैं ? (चिन्तन कीजिए)
4. गणधर परमेष्ठी आहार करते हैं कि नहीं (ध.पु., 9/127) एवं अरिहंत परमेष्ठी शयन क्यों नहीं करते हैं ? (चिन्तन कीजिए)

जिनवाणी स्तुति

मिथ्यातम नासवे को, ज्ञान के प्रकाशवे को।
आपा पर भासवे को, भानु सी बखानी है॥
छहों द्रव्य जानवे को, बन्ध-विधि भानवे को।
स्वपर पिछानवे को, परम प्रमानी है॥
अनुभव बतायवे को, जीव के जतायवे को।
काहू न सतायवे को, भव्य उर आनी है॥
जहाँ-तहाँ तारवे को, पार के उतारवे को।
सुख विस्तारवे को, ऐसी जिनवाणी है॥
हे जिनवाणी भारती, तोहि जपूँ दिन-रैन।
जो तेरी शरणा गहै, सो पावे सुख चैन॥
जिनवाणी की यह थुति, अल्पबुद्धि परमान।
'पन्नालाल' विनती करै, दे माता मोहि ज्ञान॥
जा वाणी के ज्ञानतैं, सूझे लोकालोक।
सो वानी मस्तक चढ़ो, सदा देत हों धोक॥

अध्याय 22
अरिहंत परमेष्ठी

पञ्च परमेष्ठी में प्रथम अरिहंत परमेष्ठी के कितने मूलगुण होते हैं एवं अरिहंत परमेष्ठी कितने प्रकार के होते हैं, इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. अरिहंत परमेष्ठी किसे कहते हैं ?

जो सौ इन्द्रों से वंदित होते हैं, जो वीतराग, सर्वज्ञ और हितोपदेशी होते हैं। जिन्होंने चार घातिया कर्मों को नष्ट कर दिया है, जिससे उन्हें अनन्त चतुष्टय प्राप्त हुए हैं। जिनने परम औदारिक शरीर की प्रभा से सूर्य की प्रभा को भी फीका कर दिया है। जो कमल से चार अङ्गुल ऊपर रहते हैं। जो 34 अतिशय तथा 8 प्रातिहार्यों से सुशोभित हैं, जो जन्म-मरण आदि 18 दोषों से रहित हो गए हैं, उन्हें अरिहंत परमेष्ठी कहते हैं।

2. अरिहंत परमेष्ठी के पर्यायवाची नाम कौन-कौन से हैं ?

अरिहंत, अरुहंत, अर्हन्त, जिन, सकल परमात्मा और सयोगकेवली।

1. **अरिहंत** - ''रहस्याभावाद्वा अरिहन्ता'' रहस्य के अभाव से भी अरिहन्त होते हैं। रहस्य अन्तराय कर्म को कहते हैं। अन्तराय कर्म का नाश शेष तीन घातिया कर्मों के नाश का अविनाभावी है।

(ध.पु., 1/45)

2. **अरुहंत** - घातिकर्म रूपी वृक्ष को जड़ से उखाड़ देने से वे अरुहंत कहे जाते हैं।
3. **अर्हन्त** - ''अतिशयपूजार्हत्वाद्वार्हन्तः'' अथवा, सातिशय पूजा के योग्य होने से अर्हन्त होते हैं।

(ध.पु., 1/45)

4. **जिन**-जो रागादि शत्रुओं को जीतें व अज्ञानादि आवरणों को हटा लें, उस आत्मा को जिन कहते हैं।
5. **सकल परमात्मा** - कल का अर्थ है शरीर, जो परम औदारिक शरीर सहित हैं, ऐसे परमात्मा को सकल परमात्मा कहते हैं।
6. **सयोग केवली**- जो केवलज्ञानी हैं, किन्तु अभी योग सहित हैं, वे सयोग केवली हैं।

3. अरिहंत परमेष्ठी के कितने मूलगुण होते हैं ?

अरिहंत परमेष्ठी के 46 मूलगुण होते हैं। जिनमें 34 अतिशय (10 जन्म के, 10 केवलज्ञान के एवं 14 देवकृत) 8 प्रातिहार्य एवं 4 अनन्त चतुष्टय।

4. अरिहंत परमेष्ठी के जन्म के 10 अतिशय बताइए ?

1. अतिशय सुन्दर शरीर, 2. अत्यन्त सुगंधित शरीर, 3. पसीना रहित शरीर, 4. मल-मूत्र रहित शरीर। 5. हित-मित-प्रिय वचन, 6. अतुल बल, 7. सफेद खून, 8. शरीर में 1008 लक्षण होते हैं। जिसमें शंख,गदा, चक्र आदि 108 लक्षण तथा तिल मसूरिका आदि 900 व्यञ्जन होते हैं, 9. समचतुरस्र संस्थान, 10. वज्रऋषभनाराच संहनन।

5. अरिहंत परमेष्ठी के केवलज्ञान के 10 अतिशय बताइए ?

1. भगवान् के चारों ओर सौ-सौ योजन (चार कोस का एक योजन,एक कोस में दो मील एवं 1.5 कि.मी. का एक मील) तक सुभिक्षता हो जाती है अर्थात् अकाल आदि नहीं पड़ते हैं।
2. आकाश में गमन-कमल से चार अङ्गुल ऊपर विहार (गमन) होता है।
3. चतुर्दिग्मुख-एक मुख रहता है, किन्तु चारों दिशाओं में दिखता है।
4. अदया का अभाव अर्थात् दया का सद्भाव रहता है, आस-पास किसी प्रकार की हिंसा नहीं होती है।
5. उपसर्ग का अभाव - केवली भगवान् के ऊपर उपसर्ग नहीं होता, न ही उनकी सभा में उपसर्ग होता है। पहले से उपसर्ग चल रहा हो तो वह केवलज्ञान होते ही समाप्त हो जाता है। जैसे-भगवान् पार्श्वनाथ का हुआ था।
6. कवलाहार का अभाव - केवलज्ञान होने के बाद आहार (भोजन) का अभाव हो जाता है। अर्थात् उन्हें आहार की आवश्यकता ही नहीं पड़ती है।
7. समस्त विद्याओं का स्वामीपना।
8. नख- केश नहीं बढ़ना।
9. नेत्रों की पलकें नहीं झपकना।
10. शरीर की परछाई नहीं पड़ना।

6. अरिहंत परमेष्ठी के देवकृत 14 अतिशय बताइए ?

1. अर्धमागधी भाषा-भगवान् की अमृतमयी वाणी सब जीवों के लिए कल्याणकारी होती है तथा मागध जाति के देव उन्हें बारह सभाओं में विस्तृत करते हैं।
2. मैत्रीभाव-प्रत्येक प्राणी में मैत्री भाव हो जाता है। जिससे शेर-हिरण, सर्प-नेवला भी बैर-भाव भूलकर एक साथ बैठ जाते हैं।
3. दिशाओं की निर्मलता - सभी दिशाएँ धूल आदि से रहित हो जाती हैं।
4. निर्मल आकाश - मेघादि से रहित आकाश हो जाता है।
5. छः ऋतुओं के फल -फूल एक साथ आ जाते हैं।
6. एक योजन तक पृथ्वी का दर्पण की तरह निर्मल हो जाना।
7. चलते समय भगवान् के चरणों के नीचे स्वर्ण कमल की रचना हो जाना।
8. गगन जय घोष-आकाश में जय-जय शब्द होना।
9. मंद सुगन्धित पवन चलना।
10. गंधोदक वृष्टि होना।
11. भूमि की निष्कंटकता अर्थात् कंकड़, पत्थर, कंटक रहित भूमि का होना।
12. समस्त प्राणियों को आनंद होना।
13. धर्म चक्र का आगे-आगे चलना।
14. अष्ट मङ्गल द्रव्य का साथ-साथ रहना। जैसे-छत्र, चँवर, कलश, झारी, ध्वजा, पंखा, ठोना और दर्पण।

7. अष्ट प्रातिहार्य किसे कहते हैं और कौन-कौन से होते हैं ?

देवों के द्वारा रचित अशोक वृक्ष आदि को प्रातिहार्य कहते हैं।

वे आठ होते हैं-1. अशोक वृक्ष, 2. तीन छत्र, 3. रत्नजड़ित सिंहासन, 4. दिव्यध्वनि, 5. दुन्दुभिवाद्य, 6. पुष्पवृष्टि, 7. भामण्डल, 8. चौंसठ चँवर । (ति. प., 4/924-936)

1. **अशोक वृक्ष** - समवसरण में विराजित तीर्थङ्कर के सिंहासन के पीछे-मस्तक के ऊपर तक फैला हुआ, रत्नमयी पुष्पों से सुशोभित, लाल-लाल पत्रों से युक्त देवरचित अशोक वृक्ष होता है।
2. **तीन छत्र** - तीन लोक की प्रभुता के चिह्न, मोतियों की झालर से शोभायमान, रत्नमयी, ऊपर से नीचे की ओर विस्तार युक्त, तीन छत्र भगवान् के मस्तक के ऊपर स्थित रहते हैं।
3. **रत्न जड़ित सिंहासन**-उत्तम रत्नों से रचित, सूर्यादिक की कान्ति को जीतने वाला, सिंह जैसी आकृति वाला सिंहासन होता है, सिंहासन में रचित एक सहस्रदल कमल होता है। भगवान् उससे चार अङ्गुल ऊपर अधर में विराजते हैं।
4. **दिव्यध्वनि**- केवलज्ञान होने के पश्चात् प्रभु के मुख से एक विचित्र गर्जना रूप अक्षरी ओंकार ध्वनि खिरती है, जिसे दिव्यध्वनि कहते हैं। यह ध्वनि तिर्यञ्च, मनुष्य एवं देवों की भाषा के रूप में परिणत होने के स्वभाव वाली, मधुर, मनोहर, गम्भीर और विशद, भगवान् की इच्छा न होते हुए भी भव्य जीवों के पुण्य से सहज खिरती है, पर गणधरदेव की अनुपस्थिति में नहीं खिरती है।
5. **देवदुन्दुभि**-समुद्र के समान गम्भीर, समस्त दिशाओं में व्याप्त, तीन लोक के प्राणियों के शुभ समागम की सूचना देने वाली, तीर्थङ्करों का जयघोष करने वाली देवदुन्दुभि होती है।
6. **पुष्पवृष्टि** - समवसरण में आकाश से सुगन्धित जल की बूँदों से युक्त एवं सुखद मन्दार, सुन्दर, सुमेरू, पारिजात आदि उत्तम वृक्षों के सुगन्धित ऊर्ध्वमुखी दिव्य पुष्पों (फूलों) की वर्षा होती रहती है।
7. **भामण्डल** -तीर्थङ्कर के मस्तक के चारों ओर, प्रभु के शरीर को उद्योतन करने वाला अति सुन्दर, अनेक सूर्यों से भी अत्यधिक तेजस्वी और मनोहर भामण्डल होता है। इसकी तेजस्विता तीनों जगत् के द्युतिमान पदार्थों की द्युति का तिरस्कार करती है। इस भामण्डल में भव्यात्मा अपने सात भवों को देख सकता है (तीन अतीत के, तीन भविष्य के और एक वर्तमान का) (ति.प., 4/935)

   विशेष : वापिका के जल व भामण्डल में सात भव लिखे नहीं रहते, किन्तु तीर्थङ्कर की निकटता के कारण वापिका के जल व भामण्डल में इतना अतिशय हो जाता है कि उनके अवलोकन से अपने सात भवों के ज्ञान का क्षयोपशम हो जाता है। (पं. रतनचन्द्र मुख्तार, व्यक्तित्त्व और कृतित्त्व, पृ. 1214)
8. **चौंसठ चंवर**-तीर्थङ्कर के दोनों ओर सुन्दर सुसज्जित देवों द्वारा चौंसठ चंवर ढोरे जाते हैं। ये चंवर उत्तम रत्नों से जड़ित स्वर्णमय दण्ड वाले, कमल नालों के सुन्दर तन्तु जैसे-स्वच्छ, उज्ज्वल और सुन्दर आकार वाले होते हैं।

8. अनन्त चतुष्टय कौन-कौन से होते हैं ?

अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख और अनन्त वीर्य।

9. अतिशय किसे कहते हैं ?

चमत्कारिक, अद्‌भुत तथा आकर्षक विशेष कार्यों को अतिशय कहते हैं। अथवा सर्वसाधारण में न पाई जाने वाली विशेषता को अतिशय कहते हैं।

10. केवली कितने प्रकार के होते हैं ?

केवली 7 प्रकार के होते हैं–

1. **तीर्थङ्कर केवली** –2, 3 एवं 5 कल्याणक वाले केवली।
2. **सामान्य केवली** –कल्याणकों से रहित केवली।
3. **अन्तकृत केवली**–जो मुनि उपसर्ग होने पर केवलज्ञान प्राप्त करके लघु अन्तर्मुहूर्त काल में निर्वाण को प्राप्त होते हैं।
4. **उपसर्ग केवली**–जिन्हें उपसर्ग सहकर केवलज्ञान प्राप्त हुआ हो। जैसे–मुनि देशभूषणजी और मुनि कुलभूषणजी को हुआ था।
5. **मूक केवली**–केवलज्ञान होने पर भी वाणी नहीं खिरती।
6. **अनुबद्ध केवली**–एक को मोक्ष होने पर उसी दिन दूसरे को केवलज्ञान उत्पन्न होना। जैसे–गौतम स्वामी, सुधर्माचार्य और जम्बूस्वामी। ये तीन अनुबद्ध केवली हुए।
7. **समुद्घात केवली**–केवली भगवान् की आयु अन्तर्मुहूर्त एवं शेष कर्मों की स्थिति अधिक रहती है, अतः वे आयु कर्म के बराबर शेष कर्मों की स्थिति करने के लिए समुद्घात करते हैं।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. अरिहंत भगवान् के गर्भ के दस अतिशय होते हैं।
2. अष्ट प्रातिहार्य में अशोक वृक्ष आता है।
3. अरिहंत परमेष्ठी पर भी उपसर्ग होता है।
4. धर्मचक्र भगवान् के आगे-आगे चलना केवलज्ञान का अतिशय है।
5. नख-केश का बढ़ना केवलज्ञान का अतिशय है।

अष्ट मङ्गल द्रव्य

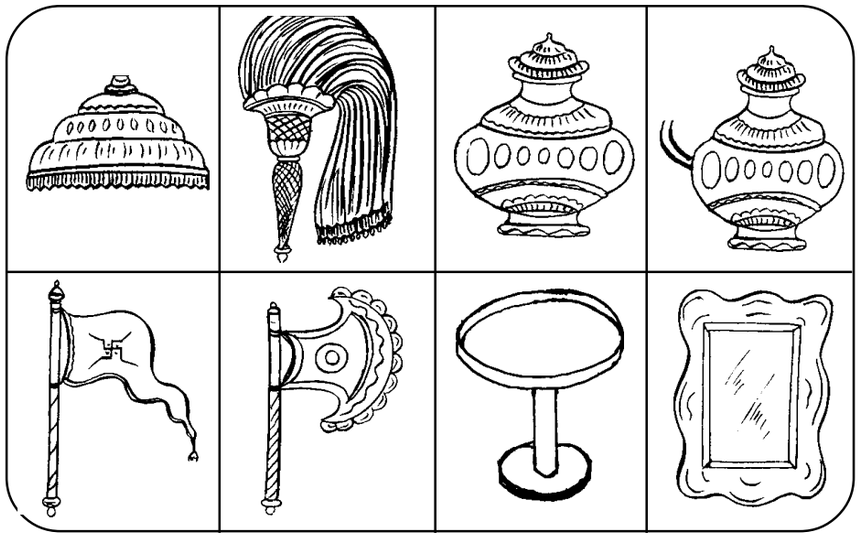

अध्याय 23

सिद्ध परमेष्ठी

द्वितीय परमेष्ठी के कितने मूलगुण होते हैं एवं अन्य गुण कौन–कौन से होते हैं, कितने समय में कितने जीव मोक्ष जाते हैं आदि का वर्णन इस अध्याय में है।

1. सिद्ध परमेष्ठी किसे कहते हैं ?

जिन्होंने अष्ट कर्मों को नाश कर दिया है, जो शरीर से रहित हैं तथा ऊर्ध्वलोक के अंत में शाश्वत विराजमान हैं, वे सिद्ध परमेष्ठी कहलाते हैं। या जो द्रव्यकर्म (ज्ञानावरणादि), भावकर्म (रागद्वेषादि) और नोकर्म (शरीरादि) से रहित हैं, उन्हें सिद्ध परमेष्ठी कहते हैं।

2. सिद्ध परमेष्ठी के कितने मूलगुण होते हैं ?

सिद्ध परमेष्ठी के 8 मूलगुण होते हैं :-

1. **अनन्तज्ञान गुण**–ज्ञानावरणकर्म के पूर्ण क्षय होने से अनन्त पदार्थों को युगपत् जानने की सामर्थ्य प्रकट होने को अनन्तज्ञानगुण कहते हैं।
2. **अनन्तदर्शन गुण**–दर्शनावरणकर्म के पूर्ण क्षय होने से अनन्त पदार्थों के सामान्य अवलोकन की सामर्थ्य के प्रकट होने को अनन्तदर्शनगुण कहते हैं।
3. **अव्याबाधत्व गुण**– वेदनीय कर्म के पूर्ण क्षय होने से अनन्तसुख रूप आनन्दमय सामर्थ्य को अव्या-बाधत्व गुण कहते हैं।
4. **क्षायिक सम्यक्त्वगुण**–मोहनीय कर्म के पूर्ण क्षय होने से प्रकट होने वाली आत्मीय सामर्थ्य को क्षायिक सम्यक्त्वगुण कहते हैं।
5. **अवगाहनत्व गुण**–आयु कर्म के पूर्ण क्षय होने से एक जीव के अवगाह क्षेत्र में अनन्त जीव समा जाएँ ऐसी स्थान देने की सामर्थ्य को अवगाहनत्वगुण कहते हैं।
6. **सूक्ष्मत्वगुण**–नाम कर्म के पूर्ण क्षय होने से इन्द्रियगम्य स्थूलता के अभाव रूप सामर्थ्य के प्रकट होने को सूक्ष्मत्वगुण कहते हैं।
7. **अगुरुलघुत्व गुण**–गोत्र कर्म के पूर्ण क्षय होने से प्रकट होने वाली सामर्थ्य को अगुरुलघुत्व गुण कहते हैं।
8. **अनन्तवीर्य गुण**–अन्तराय कर्म के पूर्ण क्षय होने से आत्मा में अनन्त शक्ति रूप सामर्थ्य के प्रकट होने को अनन्तवीर्यगुण कहते हैं।

3. क्या सिद्धों के अन्य गुण भी होते हैं ?

हाँ। सिद्धों के अन्य गुण भी होते हैं। सम्यक्त्वादि आठ गुण मध्यम रुचि वाले शिष्यों के लिए हैं। विस्तार रुचि वाले शिष्य के प्रति विशेष भेद नय के अवलंबन से गति रहितता, इन्द्रिय रहितता, शरीर रहितता, योग रहितता, वेद रहितता, कषाय रहितता, नाम रहितता, गोत्र रहितता तथा आयु रहितता आदि विशेष गुण और इसी प्रकार अस्तित्त्व, वस्तुत्व, प्रमेयत्व आदि सामान्य गुण इस तरह जैनागम के अनुसार अनंत गुण जानने चाहिए। (द्र.सं., 14/34)

4. मोक्ष के कितने भेद किए जा सकते हैं ? अथवा मोक्ष अभेद है ?

यों तो मोक्ष अभेद है। मोक्ष का कारण भी रत्नत्रयरूप एक मात्र है, अतः वह कार्यरूप मोक्ष भी सकल कर्मक्षयरूप एकविध है। तदपि मोक्ष की दृष्टि से द्रव्यमोक्ष एवं भावमोक्ष की अपेक्षा मोक्ष के दो भेद हैं। अथवा मोक्ष चार प्रकार का है। नाममोक्ष, स्थापनामोक्ष, द्रव्यमोक्ष एवं भावमोक्ष।

5. **मोक्ष का साधन क्या है ?**
सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र की एकता रूप रत्नत्रय मोक्ष का साधन है।

6. **कर्मों से छूटने का उपाय संक्षिप्त शब्दों में बताइए ?**
मात्र-ममता (मोह) से रहित होना ही कर्मों से छूटना है।

7. **कौन बंधता है और कौन छूटता है ?**
पर में आत्मा की बुद्धि करने वाला बहिरात्मा अपने आत्मस्वरूप से भ्रष्ट हुए बिना किसी संशय के अवश्य बंधन को प्राप्त होता है तथा अपने आत्मा के स्वरूप में अपने आत्मपने की बुद्धि रखने वाला अन्तरात्मा, ज्ञानी पर (शरीरादि एवं कर्म) से अलग होकर मुक्त हो जाता है।

8. **सिद्धों को कितना सुख है ?**
तीनों लोकों में मनुष्य और देवों के जो कुछ भी उत्तम सुख का सार है वह अनन्तगुण होकर के भी एक समय में अनुभव किए गए सिद्धों के सुख के समान नहीं है। अर्थात् समस्त संसार सुख के अनन्तगुणे से भी अधिक सुख को सिद्ध एक समय में भोगते हैं।

9. **मोक्ष की स्थिति कितनी है ?**
सादि अनन्त।

10. **अनादि से जीव मोक्ष प्राप्त करते आए हैं तो क्या यह जगत् कभी शून्य हो जाएगा ?**
नहीं। जिस प्रकार भविष्यकाल के समय क्रम-क्रम से व्यतीत होने से भविष्यकाल की राशि में कमी होती है तो भी उसका कभी भी अन्त नहीं होता है, न होगा। यह तो साधारण कोई भी प्राणी सोच सकता है। उसी प्रकार जीव के मोक्ष जाने पर यद्यपि जीवों की राशि में कमी आती है, फिर भी उसका कभी अन्त नहीं होता है। सब अतीतकाल के द्वारा जो सिद्ध हुए हैं, उनसे एक निगोद शरीर के जीव अनन्त गुणे हैं। कहा भी है- ''एकस्मिन्निगोत-शरीरे जीवाः सिद्धानामनन्त गुणाः'' तो फिर एक निगोद शरीर मात्र में स्थित जीवों को ही मोक्ष जाने में अतीतकाल का अनन्तगुणा काल लग जाएगा। (स.सि., 9/7/809) और अनन्तगुणाकाल अर्थात् 'भूतकाल गुणित अनन्त' आएगा नहीं अतः अन्त होगा नहीं।

11. **कितने समय में कितने जीव किस प्रकार से मोक्ष जाते हैं ?**
एक समय में जघन्य से एक और उत्कृष्ट से 108 जीव सिद्ध दशा को प्राप्त हो सकते हैं। छः माह और आठ समय में नियम से 608 ही जीव सिद्ध होते हैं, उससे कम अथवा अधिक नहीं हो सकते हैं। यदि छः माह का अन्तर पड़ गया तब लगातार आठ समयों में क्रमशः 32,48,60,72,84,96,108 तथा 108 जीव सिद्ध हो सकते हैं। अतः जघन्य से एक समय में एक एवं उत्कृष्ट से छः माह के अन्तर होने के बाद 8 समय में 608 जीव मुक्त होते हैं। (ति.प., 4/3004)

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. नाम कर्म के अभाव से सूक्ष्मत्व गुण प्राप्त होता है।
2. मोक्ष चार प्रकार का भी होता है।
3. सिद्धों को वेदना के अभाव से होने वाला सुख मिलता है।

अन्यत्र खोजिए -

1. मुक्त जीव ऊर्ध्वगमन क्यों करता है ? (त.सू., 10/6)
2. सभी सिद्ध समान हैं, फिर भी किस अपेक्षा से सिद्धों में अन्तर डाल सकते हैं ? (स.सि., 10/9/937)

अध्याय 24
आचार्य परमेष्ठी

रत्नत्रय प्रदाता आचार्य परमेष्ठी के कितने मूलगुण होते हैं, इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. **आचार्य परमेष्ठी किसे कहते हैं ?**
   जो पञ्चाचार का स्वयं पालन करते हैं एवं दूसरे साधुओं से पालन कराते हैं, उन्हें आचार्य परमेष्ठी कहते हैं। ये संघ के नायक होते हैं और शिष्यों को दीक्षा एवं प्रायश्चित्त देते हैं।
2. **आचार्य परमेष्ठी के कितने मूलगुण होते हैं ?**
   आचार्य परमेष्ठी के 36 मूलगुण होते हैं। 12 तप, 10 धर्म, 5 आचार, 6 आवश्यक एवं 3 गुप्ति।
3. **तप किसे कहते हैं ?**
   ''कर्मक्षयार्थं तप्यत इति तपः'' कर्मक्षय के लिए जो तपा जाता है, वह तप है। तप के मूल में दो भेद हैं - बाह्य तप और आभ्यंतर तप।
4. **बाह्य तप और आभ्यंतर तप किसे कहते हैं ?**
   बाह्य तप - बाह्य द्रव्य के आलम्बन से होता है और दूसरों के देखने में आता है, इसलिए इनको बाह्य तप कहते हैं।
   आभ्यंतर तप - आभ्यंतर तप (अंतरङ्ग तप) प्रायश्चित्तादि तपों में बाह्य द्रव्य की अपेक्षा नहीं रहती है। अंतरंग परिणामों की मुख्यता रहती है तथा इनका स्वयं ही संवेदन होता है। ये देखने में नहीं आते तथा इसको अनार्हत (अजैन) लोग धारण नहीं कर सकते। इसलिए प्रायश्चित्तादि को अंतरङ्ग तप माना है।
5. **बाह्य तप कितने होते हैं ?**
   बाह्य तप छः होते हैं-अनशन, अवमौदर्य, वृत्तिपरिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्तशय्यासन एवं कायक्लेश।
6. **अनशन तप किसे कहते हैं ?**
   अशन का अर्थ है-आहार और अनशन का अर्थ है, चारों प्रकार के आहार का त्याग यह एक दिन को आदि लेकर बहुत दिन तक के लिए किया जाता है।
7. **अनशन तप क्यों किया जाता है ?**
   प्राणि संयम व इन्द्रिय संयम की सिद्धि के लिए एवं कर्मों की निर्जरा के लिए अनशन तप किया जाता है।
8. **अवमौदर्य (ऊनोदर) तप किसे कहते हैं ?**
   भूख से कम खाना अवमौदर्य नामक तप है। पुरुष का स्वाभाविक आहार 32 ग्रास है उसमें से एक ग्रास को आदि लेकर कम करके लेना अवमौदर्य तप है। 1000 चावल का 1 ग्रास माना गया है। महिलाओं का स्वाभाविक आहार 28 ग्रास है। यह उत्तम, मध्यम और जघन्य, तीन प्रकार का होता है।
9. **अवमौदर्य तप क्यों किया जाता है ?**
   अवमौदर्य तप संयम को जागृत रखने, दोषों को प्रशम करने, संतोष और स्वाध्याय आदि की सुख पूर्वक सिद्धि के लिए किया जाता है।
10. **वृत्तिपरिसंख्यान तप किसे कहते हैं ?**
    जब मुनि आहार के लिए जाते हैं तब मन में संकल्प लेकर जाते हैं, जिसे आप लोग विधि कहते हैं। जैसे-

एक कलश, दो कलश से पड़गाहन होगा तो जाएंगे नहीं तो नहीं। एक मुहल्ला, दो मुहल्ला तक ही जाऊँगा। यह वृत्तिपरिसंख्यान तप है। ऐसा करें ही, यह नियम नहीं है। रोज (प्रतिदिन)करें, यह भी नियम नहीं है।

11. वृत्तिपरिसंख्यान तप क्यों किया जाता है ?

वृत्तिपरिसंख्यान तप आशा की निवृत्ति के लिए, अपने पुण्य की परीक्षा के लिए एवं कर्मों की निर्जरा के लिए किया जाता है।

12. रस परित्याग तप किसे कहते हैं ?

घी, दूध, दही, शक्कर, नमक, तेल, इन छः रसों में से एक या सभी रसों का त्याग करना रस परित्याग तप है। अथवा वनस्पति, दाल, बादाम, पिस्ता आदि का त्याग करना भी रस परित्याग तप है।

13. रस परित्याग तप क्यों किया जाता है ?

रस परित्याग तप रसना इन्द्रिय को जीतने के लिए निद्रा व प्रमाद को जीतने के लिए, स्वाध्याय की सिद्धि के लिए एवं कर्मों की निर्जरा के लिए किया जाता है।

14. विविक्तशय्यासन तप किसे कहते हैं ?

स्वाध्याय, ध्यान आदि की सिद्धि के लिए एकान्त स्थान पर शयन करना, आसन लगाना, विविक्तशय्यासन तप है।

15. विविक्तशय्यासन तप क्यों किया जाता है ?

विविक्तशय्यासन तप चित्त की शांति के लिए, निद्रा को जीतने के लिए एवं कर्मों की निर्जरा के लिए किया जाता है।

16. कायक्लेश तप किसे कहते हैं ?

शरीर को सुख मिले ऐसी भावना को त्यागना कायक्लेश तप है। अथवा वर्षाऋतु में वृक्ष के नीचे, ग्रीष्म ऋतु में धूप में बैठकर तथा शीत ऋतु में नदी तट पर कायोत्सर्ग करना, ध्यान लगाना कायक्लेश तप है।

17. कायक्लेश तप क्यों किया जाता है ?

कायक्लेश तप से कष्टों को सहन करने की क्षमता आती है, जिनशासन की प्रभावना होती है एवं कर्मों की निर्जरा हो इसलिए किया जाता है।

18. अंतरङ्ग तप कितने होते हैं ?

अंतरङ्ग तप छः होते हैं। प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग और ध्यान।

19. प्रायश्चित्त तप किसे कहते हैं ?

1. प्रमाद जन्य दोष का परिहार करना प्रायश्चित्त तप है।
2. व्रतों में लगे हुए दोषों को प्राप्त हुआ साधक, जिससे पूर्व किए अपराधों से निर्दोष हो जाय वह प्रायश्चित्त तप है।

20. विनय तप किसे कहते हैं ?

1. मोक्ष के साधन भूत सम्यग्ज्ञानादिक में तथा उनके साधक गुरुआदि में अपनी योग्य रीति से सत्कार आदि करना विनय तप है।
2. पूज्येष्वादरो विनयः – पूज्य पुरुषों का आदर करना, विनय तप है।

21. वैयावृत्य तप किसे कहते हैं ?

अपने शरीर व अन्य प्रासुक वस्तुओं से मुनियों व त्यागियों की सेवा करना, उनके ऊपर आई हुई आपत्ति को दूर करना, वैयावृत्य तप है।

22. स्वाध्याय तप किसे कहते हैं ?

1. ''ज्ञानभावनालस्यत्यागः स्वाध्यायः'' आलस्य त्यागकर ज्ञान की आराधना करना, स्वाध्याय तप है।
2. अङ्ग और अङ्गबाह्य आगम की वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षा, आम्नाय और धर्मकथा करना, स्वाध्याय तप है।

23. व्युत्सर्ग तप किसे कहते हैं ?

1. अहंकार ममकार रूप संकल्प का त्याग करना ही, व्युत्सर्ग तप है।
2. बाह्याभ्यन्तर परिग्रह का त्याग करना, व्युत्सर्ग तप है।

24. ध्यान तप किसे कहते हैं ?

उत्तम संहनन वाले का एक विषय में चित्तवृत्ति का रोकना ध्यान है, जो अन्तर्मुहूर्त तक होता है।

25. दस धर्म कौन-कौन से हैं ?

उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, संयम, तप, त्याग, आकिञ्चन्य और ब्रह्मचर्य।

1. **उत्तम क्षमा धर्म** - उपसर्ग आने पर, अपशब्द सुनने पर अथवा क्रोध का निमित्त मिलने पर भी क्रोध नहीं करना, उत्तम क्षमा धर्म है।
2. **उत्तम मार्दव धर्म**- उत्तम कुल, विद्या, बल आदि का गर्व नहीं करना, उत्तम मार्दव धर्म है।
3. **उत्तम आर्जव धर्म** - जो विचार मन में स्थित है वही वचन से कहना तथा शरीर से उसी के अनुसार करना अर्थात् मायाचारी नहीं करना, उत्तम आर्जव धर्म है।
4. **उत्तम शौच धर्म** - लोभ का त्याग करके आत्मा को पवित्र बनाना, उत्तम शौच धर्म है।
5. **उत्तम सत्य धर्म** - अच्छे पुरुषों के साथ साधु वचन बोलना, उत्तम सत्य धर्म है।
6. **उत्तम संयम धर्म** - अपनी इन्द्रियों व मन को वश में करना और षट्काय के जीवों की रक्षा करना ही, उत्तम संयम धर्म है।
7. **उत्तम तप धर्म** - कर्मों की निर्जरा हेतु बाह्य और आभ्यंतर बारह प्रकार के तपों को तपना, उत्तम तप धर्म है।
8. **उत्तम त्याग धर्म** - संयमी जीवों के योग्य ज्ञानादि का दान करना अथवा राग-द्वेष का त्याग करना उत्तम त्याग धर्म है।
9. **उत्तम आकिञ्चन्य धर्म** - आत्मा के अलावा, संसार का कोई भी पदार्थ मेरा नहीं है इस प्रकार ममत्व परिणाम से रहित होना, उत्तम आकिञ्चन्य धर्म है।
10. **उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म** - स्त्री सम्बन्धी राग का त्यागकर आत्मा के शुद्ध स्वरूप में लीन रहना, उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म है।

26. आचार का अर्थ क्या है एवं वे कौन-कौन से होते हैं ?

धार्मिक नियमों को आगम के अनुसार स्वयं पालन करना तथा शिष्यों से पालन कराना, आचार कहलाता है। वे आचार पाँच प्रकार के हैं-

1. **दर्शनाचार**-निःशंकादि आठ अङ्गों का निर्दोष पालन करना, दर्शनाचार है।
2. **ज्ञानाचार**-काल, विनयादि आठ अङ्गों सहित सम्यग्ज्ञान की आराधना करना तथा स्व-पर तत्त्व को आगमानुसार जानना, ज्ञानाचार है।
3. **चारित्राचार**-निर्दोष सम्यक् चारित्र का पालन करना, चारित्राचार है।
4. **तपाचार** - बारह तपों को निर्दोष पालन करना, तपाचार है।

5. **वीर्याचार**-परिषहादिक आने पर अपनी शक्ति को न छिपाकर उत्साहपूर्वक धीरता से साधना करना, वीर्याचार है।

27. छः आवश्यक कौन-कौन से हैं ?

समता या सामायिक, वंदना, स्तुति, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान एवं कायोत्सर्ग। ये छः आवश्यक मुनियों के समान होते हैं।

28. गुप्ति किसे कहते हैं एवं कितनी होती हैं ?

गुप्ति-संसार के कारणों से आत्मा के गोपन (रक्षण) को, गुप्ति कहते हैं।

1. **मनोगुप्ति** - मन को राग-द्वेष से हटाकर अपने वश में करना ।
2. **वचनगुप्ति** - अपने वचनों को वश में करना।
3. **कायगुप्ति** - अपने शरीर को वश में करना।

29. आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज ने आचार्य परमेष्ठी के लिए कौन-सा दोहा लिखा है ?

आचार्य श्री ने आचार्य परमेष्ठी के लिए सूर्योदय शतक में निम्न दोहा लिखा है-

ज्ञायक बन गायक नहीं, पाना है विश्राम। लायक बन नायक नहीं, जाना है शिवधाम ॥ 8 ॥

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. आचार्य परमेष्ठी के मूलगुणों में केशलोंच आता है।
2. बत्तीस ग्रास खाना ऊनोदर तप कहलाता है।
3. रसना इन्द्रिय को जीतने के लिए रस परित्याग तप किया जाता है।
4. निद्रा जीतने के लिए विविक्तशय्यासन तप नहीं किया जाता है।
5. स्तुति आचार्य परमेष्ठी का मूलगुण है।
6. भूशयन आचार्य परमेष्ठी का मूलगुण नहीं है।
7. वृत्तिपरिसंख्यान तप प्रतिदिन करे ही ऐसा नियम नहीं है।
8. शक्ति को छुपाना वीर्याचार है।
9. अनशन तप में जल ले सकते हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. गाँधीजी की माँ पुतलीबाई को जिस दिन सूर्य दिखता नहीं था, उस दिन भोजन नहीं करती थीं, यह कौन सा तप है ? (चिन्तन कीजिए)
2. पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज जब आहार के लिए जाते तब पड़गाहन से लेकर आहार के प्रारम्भ होने तक यदि वहाँ कुछ विघ्न आया तो अलाभ कर देते हैं, ऐसा करना कौन सा तप है ? (चिन्तन कीजिए)
3. श्रावक वृत्तिपरिसंख्यान तप किस प्रकार करता है ? (चिन्तन कीजिए)
4. कितने प्रकार के मुनियों की वैयावृत्ति की जाती है ? (त.सू., 9/24)
5. प्रायश्चित्त तप के कितने भेद हैं ? (त.सू., 9/22)
6. वैयावृत्ति न करने से क्या होता है ? (भ.आ., 309-310) एवं कौन से आचार्य ने पञ्चाचार को पञ्चाग्नि कहा है ? (पञ्चगुरु भक्ति प्राकृत)

अध्याय 25
उपाध्याय परमेष्ठी

चतुर्थ परमेष्ठी के कितने मूलगुण होते हैं इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. उपाध्याय परमेष्ठी किसे कहते हैं ?

जो चारित्र का पालन करते हुए संघ में पठन-पाठन के अधिकारी होते हैं, जो मुनियों के अतिरिक्त श्रावकों को भी अध्ययन कराते हैं, तथा ग्यारह अङ्ग और चौदह पूर्व के ज्ञाता होते हैं अथवा वर्तमान शास्त्रों के विशेष ज्ञाता होते हैं, वे उपाध्याय परमेष्ठी कहलाते हैं।

2. उपाध्याय परमेष्ठी के कितने मूलगुण होते हैं ?

उपाध्याय परमेष्ठी के 25 मूलगुण होते हैं। ग्यारह अङ्ग और चौदह पूर्व।

3. ग्यारह अङ्गों के नाम कौन-कौन से हैं ?

1. आचाराङ्ग, 2. सूत्रकृताङ्ग, 3. स्थानाङ्ग, 4. समवायाङ्ग, 5. व्याख्याप्रज्ञप्ति अङ्ग, 6. ज्ञातृधर्मकथाङ्ग, 7. उपासकाध्ययनाङ्ग, 8. अन्तकृद्दशाङ्ग 9. अनुत्तरोपपादकदशाङ्ग, 10. व्याकरणाङ्ग, 11. विपाकसूत्राङ्ग।

4. बारहवाँ अङ्ग कौन-सा है एवं उसके कितने भेद हैं ?

बारहवाँ अङ्ग दृष्टिवादाङ्ग है। इसके 5 भेद हैं। 1.परिकर्म, 2.सूत्र, 3. प्रथमानुयोग, 4. पूर्वगत, 5.चूलिका।

5. परिकर्म के कितने भेद हैं ?

पाँच भेद हैं। 1. चन्द्रप्रज्ञप्ति, 2. सूर्यप्रज्ञप्ति, 3. जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति, 4. द्वीपसागरप्रज्ञप्ति, 5. व्याख्याप्रज्ञप्ति।

6. चूलिका के कितने भेद हैं ?

पाँच भेद हैं। 1. जलगता चूलिका, 2. स्थलगता चूलिका, 3. मायागता चूलिका, 4. आकाशगता चूलिका, 5. रूपगता चूलिका।

7. पूर्वगत के कितने भेद हैं ?

चौदह भेद हैं -1. उत्पाद पूर्व, 2. आग्रायणीय पूर्व, 3. वीर्यानुप्रवाद पूर्व, 4. अस्तिनास्तिप्रवाद पूर्व, 5. ज्ञानप्रवाद पूर्व, 6. सत्यप्रवाद पूर्व, 7. आत्मप्रवाद पूर्व, 8. कर्मप्रवाद पूर्व, 9. प्रत्याख्यान पूर्व, 10. विद्यानुवाद पूर्व, 11. कल्याणानुवाद पूर्व, 12. प्राणानुप्रवाद पूर्व, 13. क्रियाविशाल पूर्व, 14. लोकबिन्दुसार पूर्व।

अभ्यास

सही या गलत बताइए-

1. परिकर्म बारहवाँ अङ्ग का भेद है।
2. चूलिका के पाँच भेद नहीं हैं।
3. ग्यारह अङ्ग एवं चौदह पूर्व को ही द्वाद्वशाङ्ग कहते हैं।

अध्याय 26
साधु परमेष्ठी (मुनिधर्म)

पञ्चम परमेष्ठी के कितने मूलगुण एवं उत्तरगुण होते हैं, इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. **साधु परमेष्ठी किसे कहते हैं ?**
   जो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्र रूप रत्नत्रयमय मोक्षमार्ग की निरन्तर साधना करते हैं तथा समस्त आरम्भ एवं परिग्रह से रहित होते हैं। पूर्ण नग्न दिगम्बर मुद्रा के धारी होते हैं जो ज्ञान,ध्यान और तप में लीन रहते हैं, उन्हें साधु परमेष्ठी कहते हैं।
2. **साधु परमेष्ठी के कितने मूलगुण होते हैं ?**
   साधु परमेष्ठी के 28 मूलगुण होते हैं - 5 महाव्रत, 5 समिति, 5 इन्द्रिय निरोध, 6 आवश्यक और 7 शेष गुण।
3. **साधु परमेष्ठी के पर्यायवाची नाम कौन-कौन से हैं ?**
   श्रमण, संयत, वीतराग, ऋषि, मुनि, साधु और अनगार।
   1. **श्रमण** - तपश्चरण करके अपनी आत्मा को श्रम व परिश्रम पहुँचाते हैं।
   2. **संयत** - कषाय तथा इन्द्रियों को शांत करते हैं, इसलिए संयत कहलाते हैं।
   3. **वीतराग** – वीत अर्थात् नष्ट हो गया है राग जिनका वे वीतराग कहलाते हैं।
   4. **ऋषि** - सप्त ऋद्धि को प्राप्त होते हैं, इसलिए ऋषि कहलाते हैं।
   5. **मुनि** - आत्मा अथवा अन्य पदार्थों का मनन करते हैं, इसलिए मुनि कहलाते हैं।
   6. **साधु** - रत्नत्रय को सिद्ध करते हैं, इसलिए साधु कहलाते हैं।
   7. **अनगार** - नियत स्थान में नहीं रहते हैं, इसलिए अनगार कहलाते हैं।
4. **महाव्रत किसे कहते हैं एवं उसके कितने भेद हैं ?**
   हिंसादि पाँचों पापों का मन, वचन, काय व कृत, कारित, अनुमोदना से त्याग करना महापुरुषों का महाव्रत है। इसके 5भेद हैं।
   1. **अहिंसा महाव्रत** - छः काय के जीवों को मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदना से पीड़ा नहीं पहुँचाना, सभी जीवों पर दया करना, अहिंसा महाव्रत है।
   2. **सत्य महाव्रत** - क्रोध, लोभ, भय, हास्य के कारण असत्य वचन तथा दूसरों को संताप देने वाले सत्य वचन का भी त्याग करना, सत्य महाव्रत है।
   3. **अचौर्य महाव्रत** - वस्तु के स्वामी की आज्ञा बिना वस्तु को ग्रहण नहीं करना, अचौर्य महाव्रत है।
   4. **ब्रह्मचर्य महाव्रत** - जो मन, वचन, काय एवं कृत, कारित, अनुमोदना से वृद्धा, बाला, यौवन वाली स्त्री को देखकर अथवा उनकी फोटो को देखकर उनको माता, पुत्री, बहिन समझ स्त्री सम्बन्धी अनुराग को छोड़ता है, वह तीनों लोकों में पूज्य ब्रह्मचर्य महाव्रत है।

5. **परिग्रह त्याग महाव्रत** –अंतरंग चौदह एवं बाहरी दस प्रकार के परिग्रहों का त्याग करना तथा संयम, ज्ञान और शौच के उपकरणों में भी ममत्व नहीं रखना, परिग्रह त्याग महाव्रत है।

5. समिति किसे कहते हैं एवं उसके कितने भेद हैं ?

'सम्'अर्थात् सम्यक् 'इति'अर्थात् गति या प्रवृत्ति को समिति कहते हैं। चलने-फिरने में, बोलने-चालने में, आहार ग्रहण करने में, वस्तुओं को उठाने-रखने में और मल-मूत्र का निक्षेपण करने में यत्न पूर्वक सम्यक् प्रकार से प्रवृत्ति करते हुए जीवों की रक्षा करना, समिति है।

1. **ईर्या समिति** - प्रासुक मार्ग से दिन में चार हाथ (छः फुट) प्रमाण भूमि देखकर चलना, यह ईर्या समिति है। भूमि देखकर चलने का अर्थ भूमि पर चलने वाले जीवों को बचाकर चलना।
2. **भाषा समिति** - चुगली, निंदा, आत्म प्रशंसा आदि का परित्याग करके हित, मित और प्रिय वचन बोलना, भाषा समिति है। जैसे-कपड़ा मीटर से नापते हैं और धान्य आदि बाँट से तौलते हैं, वैसे ही नाप-तौल कर बोलना चाहिए अर्थात् हमारे वाक्य ज्यादा लम्बे न हों फिर भी अर्थ ठोस निकले।
3. **एषणा समिति** - 46 दोष एवं 32 अंतराय टालकर सदाचारी उच्चकुलीन श्रावक के यहाँ विधि पूर्वक निर्दोष आहार ग्रहण करना, एषणा समिति है।
4. **आदाननिक्षेपण समिति** –शास्त्र, कमण्डलु, पिच्छी आदि उपकरणों को देखकर-शोधकर रखना और उठाना, आदाननिक्षेपण समिति है।
5. **उत्सर्ग समिति** - जीव रहित स्थान में मल-मूत्र आदि का त्याग करना, उत्सर्ग समिति है।

6. पञ्चेन्द्रिय निरोध किसे कहते हैं एवं उसके कितने भेद हैं ?

स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और श्रोत्र इन पाँच इन्द्रियों के मनोज्ञ-अमनोज्ञ विषयों में राग-द्वेष का परित्याग करना पञ्चेन्द्रिय निरोध है।

1. **स्पर्शन इन्द्रिय निरोध** –शीत-उष्ण, कोमल -कठोर, हल्का-भारी और स्निग्ध-रूक्ष इन स्पर्शन इन्द्रिय के विषयों में राग-द्वेष नहीं करना, स्पर्शनेन्द्रिय निरोध है।
2. **रसना इन्द्रिय निरोध** -खट्टा,मीठा, कडुवा, कषायला और चरपरा इन रसना इन्द्रिय के विषयों में राग-द्वेष नहीं करना, रसना इन्द्रिय निरोध है।
3. **घ्राण इन्द्रिय निरोध**-सुगंध और दुर्गंध इन घ्राण इन्द्रिय के विषयों में राग-द्वेष नहीं करना, घ्राण इन्द्रिय निरोध है।
4. **चक्षु इन्द्रिय निरोध** - काला, पीला, नीला, लाल और सफेद इन चक्षु इन्द्रिय के विषयों में राग-द्वेष नहीं करना, चक्षु इन्द्रिय निरोध है।
5. **श्रोत्र इन्द्रिय निरोध** - मधुर स्वर, गान, वीणा आदि को सुनकर राग नहीं करना एवं कठोर निंद्य, गाली आदि के शब्द सुनकर द्वेष नहीं करना, श्रोत्र इन्द्रिय निरोध है।

7. आवश्यक किसे कहते हैं एवं उसके कितने भेद हैं ?

1. अवश्य करने योग्य क्रियाएँ आवश्यक कहलाती हैं। साधु को अपने उपयोग की रक्षा के लिए नित्य ही छः क्रियाएँ करनी आवश्यक होती हैं, उन्हें ही छः (षट्) आवश्यक कहते हैं।

2. जो कषाय, राग-द्वेष आदि के वशीभूत न हो वह अवश है। उस अवश का जो आचरण होता है वह आवश्यक है, आवश्यक छः होते हैं।

1. **समता या सामायिक** - राग-द्वेष आदि समस्त विकार भावों का तथा हिंसा आरम्भ आदि समस्त बहिरङ्ग पाप कर्मों का त्याग करके जीवन-मरण, हानि-लाभ, सुख-दुःख आदि में साम्यभाव रखना समता या सामायिक है।
2. **स्तुति** - 24 तीर्थङ्करों के गुणों का स्तवन करना स्तुति है।
3. **वन्दना** - चौबीस तीर्थङ्करों में से किसी एक की एवं पञ्चपरमेष्ठियों में से किसी एक की मुख्य रूप से स्तुति करना वंदना है। यह दिन में तीन बार करते हैं।
4. **प्रतिक्रमण**-व्रतों में लगे दोषों की आलोचना करना प्रतिक्रमण है। अथवा ''मेरा दोष मिथ्या हो '' ऐसा कहना प्रतिक्रमण है। ''तस्स मिच्छा मे दुक्कडं''। प्रतिक्रमण भी दिन में तीन बार करते हैं। प्रतिक्रमण सात प्रकार के होते हैं। दैवसिक, रात्रिक, ईर्यापथिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक, संवत्सरिक (वार्षिक), औत्तमार्थिक प्रतिक्रमण जो सल्लेखना के समय होता है।
5. **प्रत्याख्यान** - आगामी काल में दोष न करने की प्रतिज्ञा करना प्रत्याख्यान है। अथवा सीमित काल के लिए आहारादि का त्याग करना प्रत्याख्यान है।
6. **कायोत्सर्ग** - परिमित काल के लिए शरीर से ममत्व का त्याग करना कायोत्सर्ग है। कायोत्सर्ग का अर्थ होता है शिथिलीकरण-रिलेक्सेशन। इससे शरीर की शक्ति शिथिल हो जाएगी एवं आत्मा की शक्ति सक्रिय हो जाएगी।

8. मुनियों के शेष 7 गुण कौन-कौन से हैं ?

1. **अस्नान व्रत** -स्नान करने का त्याग, साधु का शरीर धूल, पसीने से लिप्त रहता है, उसमें अनेक सूक्ष्म जीव रहते हैं, उनका घात न हो इससे स्नान नहीं करते हैं।
2. **भूमि शयन** - थकान दूर करने के लिए शयन आवश्यक है। रात्रि में एक करवट से थोड़ा शयन करने के लिए भूमि, शिला, लकड़ी के पाटे, तृण अर्थात् सूखी घास या चटाई का उपयोग करते हैं। और किसी का नहीं।
3. **अचेलकत्व** -वस्त्र, चर्म और पत्ते आदि से शरीर को नहीं ढकना अर्थात् नग्न रहना। दिशाएँ ही जिनके अम्बर अर्थात् वस्त्र हैं, वे दिगम्बर हैं।
4. **केशलोंच** - दो माह से चार माह के बीच में प्रतिक्रमण सहित दिन में उपवास के साथ अपने हाथों से सिर, दाढ़ी एवं मूँछों के केशों को उखाड़ना केशलोंच है। दो माह में करना उत्कृष्ट है, चार माह में करना जघन्य है एवं दोनों के बीच में करना मध्यम है।
5. **एक भुक्ति** -चौबीस घंटों में मात्र एक बार आहार करना। सूर्योदय के 3 घड़ी के बाद (72 मिनट) एवं सूर्यास्त से 3 घड़ी पहले। सामायिक का काल छोड़कर शेष काल में 3 मुहूर्त (2 घंटे 24 मिनट) तक आहार ले सकते हैं। (मू.प्र., 500-502)

6. **अदंतधावन** - अङ्गुली, नख, दातुन, छाल, मंजन, ब्रुश, पेस्ट आदि से दाँतों के मल का शोधन नहीं करना, इन्द्रिय संयम की रक्षा करने वाला अदंतधावन मूलगुण है।
7. **स्थिति भोजन** -दीवार आदि का सहारा लिए बिना खड़े होकर आहार करना। खड़े होते समय दोनों पैर के बीच 4 अङ्गुल का अंतर या पीछे 4 अङ्गुल एवं आगे 4 से 12 अङ्गुल तक का अंतर रह सकता है। (आ.पु., 18/3)

9. **मुनियों के उत्तर गुण कितने हैं ?**
   मुनियों के 34 उत्तर गुण होते हैं। 12 तप और 22 परीषहजय।
10. **क्या आचार्य, उपाध्याय परमेष्ठी के 28 मूलगुण नहीं होते हैं ?**
    साधु जिन 28 मूलगुणों का पालन करते हैं। उन 28 मूलगुणों का पालन आचार्य, उपाध्याय परमेष्ठी भी करते हैं, किन्तु आचार्य के अतिरिक्त 36 मूलगुण एवं उपाध्याय के अतिरिक्त 25 मूलगुण होते हैं।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. पिच्छी कमण्डलु से ममत्व रखना, परिग्रह त्याग महाव्रत है।
2. नाप-तौल कर बोलना भाषा समिति है।
3. प्रासुक स्थान में मल-मूत्र आदि का क्षेपण करना आदान निक्षेपण समिति है।
4. आचार्य भक्ति करना वंदना आवश्यक है।
5. प्रतिक्रमण प्रतिदिन तीन बार नहीं करते हैं।
6. सूखी घास पर शयन करना भूशयन नहीं है।
7. मुनि 2 घंटे 24 मिनट से कम समय में आहार नहीं कर सकते हैं।
8. स्थिति भोजन में दीवार का सहारा नहीं ले सकते हैं।
9. 60 दिनों में केशलोंच करना उत्कृष्ट है।
10. रत्नत्रय को सिद्ध करने वाले अनगार कहलाते हैं।

अन्यत्र खोजिए

1. पाँचों महाव्रतों के पालन करने के लिए कौन-कौन सी भावनाएँ हैं ? (त.सू., 7/4-8)
2. राजर्षि, ब्रह्मर्षि, देवर्षि और परमर्षि किसे कहते हैं ? (प्र.सा.ता.वृ., 249)

अध्याय 27
मुनि एवं मिलिट्री में समानता

मिलिट्री वाले अनुशासन का पालन न करें तो वे देश की रक्षा नहीं कर सकते, उसी प्रकार मुनि आगम की आज्ञा का पालन न करें तो वे अपने व्रतों की रक्षा नहीं कर सकते। अतः दोनों में क्या–क्या समानताएँ हैं इसका वर्णन इस अध्याय में है।

जिस प्रकार मुनि अपनी प्रत्येक क्रियाओं में सजग रहते हैं, उसी प्रकार मिलिट्री वाले भी अपनी क्रियाओं में सजग रहते हैं, दोनों की कुछ क्रियाओं में समानता है। उनके कुछ बिन्दु निम्नलिखित हैं–1. भोजन 2. अभ्यास 3. गुप्त मंत्रणा 4. कहाँ जाना है 5. जनसम्पर्क से दूर 6. शत्रुओं से रक्षा 7. ड्यूटी 8.रोड 9. स्थान परिवर्तन 10. आदेश का पालन 11. बगावत नहीं करते हैं 12. मरण से नहीं डरते हैं 13.सिर कटा सकते हैं पर सिर झुका सकते नहीं 14. क्रियाओं में कठोरता 15.यथालब्ध भोजन 16.अलाभ 17. विविक्त शय्यासन तप 18. कायक्लेश तप 19. एकल विहारी का निषेध 20. जीते जी मरण।

1. **भोजन** – मिलिट्री में भोजन सीमित दिया जाता है उसी प्रकार मुनि भी सीमित भोजन करते हैं, क्योंकि अधिक भोजन से प्रमाद आता है। मिलिट्री वाले जहाँ कहीं भी भोजन नहीं करते हैं, उन्हें तो PURE QUALITY का माल सरकार से मिलता है। उसी प्रकार मुनि भी उत्तम श्रावक के घर में जाकर PURE (प्रासुक, शुद्ध एवं भक्ष्य) भोजन करते हैं।
2. **अभ्यास** – जिस प्रकार मिलिट्री में हमेशा अभ्यास किया जाता है, जिससे युद्ध के समय जीत हो जाए एवं वाहनों का भी प्रयोग करते रहते हैं, जिससे वे जाम न हो जाएँ, उसी प्रकार मुनि भी परीषह उपसर्ग को सहन करते रहते हैं। परीषह उपसर्ग नहीं आते तो 12 तपों को तपते रहते हैं, जिससे समाधि के समय जीत हो जाए अर्थात् समाधि अच्छी तरह से हो जाए, क्योंकि मुनि मार्ग मंदिर है तो समाधि मंदिर पर कलश है। कलश बिना मंदिर अधूरा है, तो समाधि के बिना तपस्या अधूरी है।
3. **गुप्त मंत्रणा** – जो मिलिट्री वालों की गुप्त बातें हैं, वे किसी को नहीं बताते हैं। उसी प्रकार श्रावक कहते हैं कि महाराज 'आचार्य श्री' ने आपसे क्या कहा है ? यह मुनि नहीं बताते हैं, नहीं तो अनेक बार बड़ी परेशानी हो जाती है। मान लीजिए 'आचार्यश्री' ने कहा तीन स्थान में से एक स्थान पर वर्षायोग करना है, कहाँ करना, यह महाराज आपको नहीं बताएंगे, स्वयं निर्णय करेंगे।
4. **कहाँ जाना है** –मिलिट्री की ट्रेन कहाँ जाती है, वह कहते हैं, पता नहीं है, उसी प्रकार महाराज आप कहाँ जा रहे हैं, बताया नहीं जाता है, और अनेक बार तो रास्ता बीच में से भी CHANGE हो जाता है।
5. **जनसम्पर्क से दूर** – मिलिट्री वालों को जनसम्पर्क से दूर रखा जाता है, जनसम्पर्क करेंगे तो वह अपने कर्त्तव्य का सही पालन नहीं कर सकते। उसी प्रकार प्रवचनसार ग्रन्थ में आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी ने मुनियों के लिए जनसम्पर्क नहीं करने को कहा है।
6. **शत्रुओं से रक्षा** –जिस प्रकार सैनिक देश की सीमा में रहते हुए देश की रक्षा, शत्रुओं से करते हैं। उसी

प्रकार मुनि भी शत्रुओं से आत्मा (देश) की रक्षा करते हैं। शत्रुओं से आशय क्रोध, मान, माया, लोभ और कर्म आदि से है।

7. **ड्यूटी** - DUTY के समय यदि सैनिक ड्यूटी पर नहीं रहता तो उसे दण्ड दिया जाता है, दण्ड से आशय शारीरिक दण्ड से है। उसी प्रकार मुनि की ड्यूटी है कि समय पर प्रतिक्रमण, सामायिक, वंदना आदि आवश्यक करना ही है, नहीं तो प्रायश्चित्त रूपी दण्ड दिया जाता है। मुनि को भी आर्थिक नहीं शारीरिक दण्ड दिया जाता है। जैसे-अनशन, अवमौदर्य, रस परित्याग, कायोत्सर्ग आदि ।
8. **रोड** - मिलिट्री की अलग से रोड रहती है, उसी प्रकार मुनि भी प्रायः देखते हैं कि महाराज मार्ग (कच्चा रास्ता) मिल जाए, जंगलों के रास्ते में MILE STONE नहीं होते हैं, उसी प्रकार मिलिट्री रोड में भी MILE STONE नहीं होते हैं।
9. **स्थान परिवर्तन** - जिस प्रकार मुनि एक स्थान पर अधिक दिन तक नहीं रहते हैं, उसी प्रकार मिलिट्री वालों के लिए समय का विभाजन है, 3 वर्ष तक गर्म क्षेत्र में रहते हैं, 3 वर्ष तक शीत क्षेत्र में रहते हैं, 3 वर्ष तक शांति वाले क्षेत्र में रहते हैं एवं 3 वर्ष युद्ध के लिए जाते हैं।
10. **आदेश का पालन** - COMMANDER का आदेश पाते ही उसे वह कार्य करना होता है, चाहे कुछ भी हो, इसी प्रकार मुनि भी COMMANDER (गुरु) के आदेश से चलते हैं, कहीं-कहीं तो महीनों बैठे रहेंगे और कभी-कभी तो एक दिन में ही 40-40 किलोमीटर गमन करते हैं।
11. **बगावत नहीं करते हैं** - सैनिक कभी बगावत नहीं करते हैं, उसी प्रकार मुनि भी बगावत नहीं करते हैं, अर्थात् वह आगम और गुरु को अपने सामने रखते हैं।
12. **मरण से नहीं डरते** - सैनिक मरण से नहीं डरते बल्कि मरण होने पर राजकीय सम्मान के साथ अंतिम संस्कार किया जाता है, उसी प्रकार मुनि भी मरण से नहीं डरते वह भी हमेशा समाधि के लिए तैयार रहते हैं एवं समाधिमरण होने पर अर्थी नहीं बनाते बल्कि राजकीय सम्मान (विमान में बिठाकर) के साथ अंतिम संस्कार किया जाता है।
13. **सिर कटा सकते पर सिर झुका सकते नहीं** - सैनिक शत्रु के सामने झुक नहीं सकते भले ही सिर चला जाए, उसी प्रकार मुनि भी कर्म रूपी शत्रु के सामने झुक नहीं सकते भले ही प्राण चले जाएं।
14. **क्रियाओं में कठोरता** - सैनिक सामान्य कार्य भी सुविधापूर्वक नहीं करते हैं। एक बार सेना का वाहन फर्नीचर को लेने दुकान पर गया, फर्नीचर में पेच कसना बाकी था, दुकान पर मिस्तरी नहीं था, COMMANDER ने सैनिक से कहा पेच कसो, उसे औजार दिए गए, सैनिक ने लकड़ी में छिद्र किए बिना पेच कसना प्रारम्भ कर दिया, COMMANDER से पूछा कि सैनिक ऐसा क्यों कर रहा है, COMMANDER ने कहा कि युद्ध के समय तो इस्पात में पेच कसना पड़ता है, छिद्र किए बिना, ये तो लकड़ी है और मैंने आदेश में छिद्र करने को नहीं कहा है। इसी प्रकार मुनि भी अपनी क्रियाओं का कठोरता से पालन करते हैं, एक शिष्य को सामायिक करते समय बहुत प्रमाद आता था, गुरु ने कहा खड़े हो जाओ, वह मुनि 24 घंटे तक खड़े रहे क्योंकि गुरु ने बैठने के लिए नहीं कहा था।

मुनि केशलोंच करते समय कंडे की राख का प्रयोग करते हैं, एक बार मुनि को केशलोंच करना था,

राख उपलब्ध नहीं थी, अतः महाराज ने राख के बिना ही केशलोंच कर लिए ऐसी अनेक क्रियाओं को कठोरता के साथ करते हैं।

15. **यथालब्ध भोजन** - जिस प्रकार मुनि यथालब्ध भोजन करते हैं। यथालब्ध से आशय जैसा श्रावक देता है वैसा ही लेते जाते हैं। वैसे ही सैनिकों को युद्ध के समय ऊपर विमान आदि से जो भोजन दिया जाता है, वही भोजन करते हैं।
16. **अलाभ** - मुनियों को कई बार विधि न मिलने से, जंगलों में भटक जाने से अलाभ (आहार का न मिलना) हो जाते हैं। उसी प्रकार सैनिकों को युद्ध के समय अनेक बार भोजन न मिलने पर अलाभ हो जाते हैं।
17. **विविक्तशय्यासन तप** -जिस प्रकार मुनि निद्रा को जीतने के लिए एकान्त स्थान में शयन करते हैं, आसन लगाते हैं, उसी प्रकार सैनिक भी कंकरीली भूमि, कंटक भूमि, ऊँची-नीची भूमि पर अल्प निद्रा लेते हैं।
18. **कायक्लेश तप** - जिस प्रकार मुनि, वर्षा ऋतु में वृक्ष के नीचे, ग्रीष्म ऋतु में धूप में बैठकर, शीत ऋतु में नदी तट पर ध्यान लगाते हैं, उसी प्रकार सैनिक भी हमेशा शीत, उष्ण एवं वर्षा की बाधा को सहते रहते हैं।
19. **एकल विहारी का निषेध** - जिस प्रकार मुनियों के लिए एकल विहारी का निषेध किया है। उसी प्रकार मिलिट्री वालों के लिए भी एकल विहारी का निषेध किया है। उन्हें स्वयं का सामान लेने भी बाजार जाना है, तब भी दो सैनिक जायेंगे। क्योंकि एक तो सुरक्षा, दूसरा वह किसी को गुप्त बात न बता दे।
20. **जीते जी मरण** - जिस प्रकार मुनि समाधि लेते अर्थात् जीते जी अपने मरण को देखते हैं, उसी प्रकार सैनिक को भी रिटायर्ड से पूर्व अन्तिम संस्कार का भी पैसा दे दिया जाता है। इस प्रकार वह भी जीते जी अपने मरण को देखता है।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. समाधि मंदिर है।
2. मिलिट्री वाले 3 वर्ष शीत स्थान पर, 3 वर्ष वर्षा के स्थान पर, 3 वर्ष शांति वाले क्षेत्र पर एवं 3 वर्ष युद्ध के लिए जाते हैं।
3. मुनि की अंतिम यात्रा जेट विमान पर निकाली जाती है।
4. मुनियों को प्रायश्चित्त में आर्थिक दण्ड नहीं दिया जाता है।

अन्यत्र खोजिए -

1. जापानी सैनिकों के देशभक्ति के उदाहरण खोजिए ? (क.)
2. चाणक्य की देशभक्ति के उदाहरण खोजिए ? (क.)

अध्याय 28
आर्यिका

महिलाओं में सर्वोच्च पद आर्यिका का होता है, इनकी चर्या किस प्रकार की होती है। इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. आर्यिका किसे कहते हैं एवं इनकी चर्या किस प्रकार होती है ?

स्त्री पर्याय की अपेक्षा उत्कृष्ट संयमधारी स्त्रियाँ आर्यिका कहलाती हैं। ये मुनियों के समान दिगम्बरत्व को धारण नहीं कर सकती हैं, अतः एक 16 हाथ की सफेद साड़ी पहनती हैं तथा बैठकर ही कर पात्र में आहार करती हैं। शेष चर्या मुनियों के समान है। आर्यिकाओं के लिए वृक्षमूल, आतापन योग, अभ्रावकाश आदि विशेष योग निषिद्ध हैं। आर्यिकाओं को उपचार से महाव्रती कहा गया है। ये पञ्चम गुणस्थानवर्ती होती हैं। इनका पद एलक और क्षुल्लक से श्रेष्ठ है। श्रावक इन्हें वंदामि कहकर नमस्कार करते हैं। आर्यिकाएँ भी परस्पर में समाचार वंदामि कहकर करती हैं। इनकी वसतिका श्रावकों से, न अति दूर न अति पास रहती है। वसतिका में ये आर्यिकाएँ दो-तीन अथवा तीस-चालीस पर्यन्त भी एक साथ रहती हैं। मुनियों की वंदना एवं आहार आदि क्रियाओं में गणिनी या प्रमुख आर्यिका के साथ या उनसे पूछकर कुछ आर्यिकाओं के साथ जाती हैं।

2. आर्यिका पद के अयोग्य कौन-कौन से कार्य आर्यिकाएँ नहीं करती हैं ?

आर्यिका पद के अयोग्य रोना, नहलाना, खिलाना, भोजन बनाना, सिलाई-कढ़ाई करना, स्वेटर बुनना आदि गृहस्थों के योग्य कार्यों को आर्यिकाएँ नहीं करती हैं।

3. आर्यिकाएँ कौन-कौन से कार्य करती हैं ?

स्वाध्याय करने में, पाठ याद करने में और अनुप्रेक्षा के चिन्तन में तथा तप में और संयम में नित्य ही उद्यत रहती हुई ज्ञानाभ्यास में तत्पर रहती हैं।

4. आर्यिकाएँ एवं महिलाएं कितनी दूर से आचार्य, उपाध्याय एवं साधु परमेष्ठी को नमस्कार करती हैं ?

आचार्य परमेष्ठी को पाँच हाथ दूर से, उपाध्याय परमेष्ठी को छः हाथ दूर से एवं साधु परमेष्ठी को सात हाथ दूर से नमस्कार करती हैं।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. आर्यिकाएँ आचार्य परमेष्ठी को सात हाथ दूर से नमस्कार नहीं कर सकती ।
2. आर्यिकाएँ पञ्चम गुणस्थानवर्ती होती हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज द्वारा दीक्षित आर्यिकाएँ कौन-कौन से प्रदेश की हैं ? (वि.श.)
2. आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज ने सबसे ज्यादा आर्यिका दीक्षा कहाँ पर दीं ? (वि.श.)

अध्याय 29

सम्यग्दर्शन

जिस प्रकार नींव के बिना मकान का महत्व नहीं, उसी प्रकार सम्यग्दर्शन के बिना संसारी आत्माओं का महत्व नहीं। सम्यग्दर्शन किसे कहते हैं, यह कितने प्रकार का होता है, इसके कितने दोष हैं आदि का वर्णन इस अध्याय में है।

1. **सम्यग्दर्शन किसे कहते हैं ?**
   सच्चे देव, शास्त्र और गुरु का तीन मूढ़ता रहित, आठ मद से रहित और आठ अङ्ग सहित श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है।
2. **चार अनुयोगों में सम्यग्दर्शन की क्या परिभाषा है ?**
   प्रथमानुयोग - सच्चे देव-शास्त्र-गुरु पर श्रद्धान करना।
   करणानुयोग - सात प्रकृतियों के उपशम, क्षय, क्षयोपशम से होने वाले श्रद्धा रूप परिणाम।
   चरणानुयोग - प्रशम, संवेग, अनुकम्पा और आस्तिक्य का भाव होना।
   द्रव्यानुयोग - तत्त्वार्थ का श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है।
3. **सम्यग्दर्शन के कितने भेद हैं ?**
   सम्यग्दर्शन के दो भेद हैं -1. सराग सम्यग्दर्शन 2. वीतराग सम्यग्दर्शन।
   1. **सराग सम्यग्दर्शन**

   अ. धर्मानुराग सहित सम्यग्दर्शन सराग सम्यग्दर्शन है।
   ब. प्रशम, संवेग, अनुकम्पा औरआस्तिक्य आदि की अभिव्यक्ति इसका मुख्य लक्षण है। (ध.पु. 1/152)
   1. **प्रशम** - रागादि की तीव्रता का न होना।
   2. **संवेग** - संसार से भयभीत होना।
   3. **अनुकम्पा** - प्राणी मात्र में मैत्रीभाव रखना।
   4. **आस्तिक्य** -''जीवादि पदार्थ हैं'' ऐसी बुद्धि का होना।

   2. **वीतराग सम्यग्दर्शन** -राग रहित सम्यग्दर्शन वीतराग सम्यग्दर्शन कहलाता है, यह वीतराग चारित्र का अविनाभावी है। यहाँ श्रद्धान और चारित्र में एकता होती है। उदाहरण-रामचन्द्रजी सम्यग्दृष्टि थे। एक तरफ जब सीताजी का हरण हुआ तो वह सीताजी को खोजते हैं, वृक्ष, नदी आदि से भी पूछते हैं कि मेरी सीता कहाँ है ? दूसरी तरफ जब रामचन्द्रजी मुनि अवस्था में शुद्धोपयोग में लीन हो जाते हैं और सीता जी का जीव विचार करता है कि इनके साथ हमारा अनेक भवों का साथ रहा है, यदि ये ऐसे ध्यान में लीन रहे तो मुझसे पहले मोक्ष चले जाएंगे। अतः सम्यग्दृष्टि सीताजी का जीव मुनि रामचन्द्रजी के ऊपर उपसर्ग करता है पर रामचन्द्रजी ध्यान से च्युत नहीं हुए। तो विचार कीजिए कि पहले भी रामचन्द्रजी सम्यग्दृष्टि थे और मुनि अवस्था में भी सम्यग्दृष्टि थे, फिर अन्तर क्या रहा तो पहले उनके सम्यक्त्व के साथ राग था आस्था और आचरण में भेद था, इसलिए सीताजी

को खोज रहे थे। अतः सराग सम्यग्दर्शन था। जब मुनि थे तो आस्था और आचरण में एकता आ गई थी, वीतराग सम्यग्दृष्टि बन गए। इससे सीताजी के जीव द्वारा किए गए उपसर्ग को भी सहन करते रहे और केवलज्ञान को प्राप्त किया।

4. व्यवहार सम्यग्दर्शन और निश्चय सम्यग्दर्शन किसे कहते हैं ?

शुद्ध जीव आदि तत्त्वार्थों का श्रद्धानरूप सरागसम्यक्त्व व्यवहार सम्यक्त्व जानना चाहिए और वीतराग चारित्र के बिना नहीं होने वाला वीतराग सम्यक्त्व निश्चय सम्यक्त्व जानना चाहिए।

5. सम्यग्दर्शन के उत्पत्ति की अपेक्षा कितने भेद हैं ?

सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति की अपेक्षा दो भेद हैं –

1. **निसर्गज सम्यग्दर्शन** – जो पर के उपदेश के बिना जिनबिम्ब दर्शन, वेदना, जिनमहिमा दर्शन आदि से उत्पन्न होता है, उसे निसर्गज सम्यग्दर्शन कहते हैं।
2. **अधिगमज सम्यग्दर्शन**–जो गुरु आदि पर के उपदेश से उत्पन्न होता है, वह अधिगमज सम्यग्दर्शन है।

6. निसर्गज और अधिगमज में अंतरंग निमित्त क्या है ?

दोनों ही सम्यक्त्व में मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्प्रकृति और अनन्तानुबंधी चतुष्क इन सात प्रकृतियों का उपशम, क्षय व क्षयोपशम होना, अंतरङ्ग निमित्त है। (त.सू., 1/3)

7. अन्तरङ्ग निमित्त की अपेक्षा से सम्यग्दर्शन के कितने भेद हैं ?

तीन भेद हैं–1. उपशम सम्यग्दर्शन 2. क्षयोपशम सम्यग्दर्शन 3. क्षायिक सम्यग्दर्शन।

8. उपशम सम्यग्दर्शन के कितने भेद हैं ?

दो भेद हैं। 1. प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन 2. द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन।

1. **प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन**[1]–मिथ्यादृष्टि जीव को, जो दर्शन मोहनीय की तीन प्रकृति अर्थात् मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्प्रकृति एवं अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया और लोभ इन सात प्रकृतियों के उपशम से जो सम्यग्दर्शन होता है, उसे प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन कहते हैं। यह चारों गतियों के जीवों को हो सकता है।
2. **द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन**–क्षयोपशम सम्यग्दर्शन के अनन्तर जो उपशम सम्यग्दर्शन होता है, उसे द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन कहते हैं। यह भी सात प्रकृतियों के उपशम से होता है। सप्तम गुणस्थानवर्ती मुनि यदि उपशम श्रेणी चढ़े तब उसको क्षायिक सम्यग्दर्शन या द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन आवश्यक होता है।

   विशेष– अन्य आचार्यों के मतानुसार द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन चतुर्थ गुणस्थान से सप्तम गुणस्थानवर्ती क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि प्राप्त करता है। (ध.पु., 1/211, का.अ.टी., 484, मूलाचार, 205 टीका)

9. सर्वप्रथम जीव कौन-सा सम्यग्दर्शन प्राप्त करता है ?

सर्वप्रथम जीव प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन प्राप्त करता है।

10. प्रथमोपशम एवं द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन प्राप्त करने के स्वामी कौन हैं ?

प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन – संज्ञी, पञ्चेन्द्रिय, पर्याप्त, गर्भजन्म और उपपाद जन्म वाले मिथ्यादृष्टि ही प्राप्त करते हैं। संज्ञी पञ्चेन्द्रिय सम्मूर्च्छन जन्म वाले प्राप्त नहीं कर सकते हैं।

---

1. अनादि मिथ्यादृष्टि तो पाँच प्रकृतियों का उपशम करता है एवं सादि मिथ्यादृष्टि पाँच, छः या सात प्रकृतियों का उपशम करता है।

द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन –इसे क्षयोपशम सम्यग्दर्शन वाले मुनि या 4 से 7 गुणस्थान वाले क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि कर्मभूमि के मनुष्य ही प्राप्त कर सकते हैं। भोगभूमि के प्राप्त नहीं कर सकते।

11. प्रथमोपशम एवं द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन में क्या अंतर है ?

निम्नलिखित अंतर हैं –

प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन	द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन
1. धर्म का प्रारम्भ इससे ही होता है।	1. यह धर्म प्रारम्भ होने के बाद ही होता है।
2. यह चारों गतियों के जीवों को होता है।	2. यह मात्र साधु को होता है या 4 से 7 वें गुणस्थानवर्ती मनुष्यों को होता है।
3. इसमें गुणस्थान 4 से 7 तक होते हैं।	3. इसमें 4 से 11 गुणस्थान तक होते हैं।
4. किसी भी गति की अपर्याप्त अवस्था में नहीं रहता है।	4. मात्र देवगति की अपर्याप्त अवस्था में रह सकता है।
5. यह मिथ्यादृष्टि प्राप्त करता है।	5. यह क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि प्राप्त करता है।
6. इसमें मरण नहीं होता है।	6. इसमें मरण हो सकता है।
7. यह अर्धपुद्गल परावर्तन काल में असंख्यात बार हो सकता है।	7. यह एक भव में दो बार तथा संसार चक्र में कुल चार बार हो सकता है।
8. एक बार प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन होने के बाद पुनः प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन असंख्यात वर्ष के बाद ही हो सकता है।	8. यह अन्तर्मुहूर्त बाद पुनः हो सकता है।
9. अन्तर्मुहूर्त होने पर भी इसका काल कम है।	9. इसका काल प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन के काल से संख्यात गुणा अधिक है।
10. इसमें त्रिकरण परिणामों की शुद्धि हीन है।	10. इसमें प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन की अपेक्षा त्रिकरण परिणामों की शुद्धि अनन्तगुणी अधिक है।

12. क्षयोपशम सम्यग्दर्शन किसे कहते हैं ?

अनन्तानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ, मिथ्यात्व व सम्यग्मिथ्यात्व इन 6 प्रकृतियों के उदयाभावी क्षय व उपशम से तथा सम्यक्प्रकृति के उदय में जो सम्यग्दर्शन होता है, उसे क्षयोपशम सम्यग्दर्शन कहते हैं।

13. क्षयोपशम सम्यग्दर्शन प्राप्त करने के स्वामी कौन-कौन हैं ?

चारों गतियों वाले संज्ञी, पञ्चेन्द्रिय, पर्याप्त, गर्भजन्म, उपपाद जन्म एवं सम्मूर्च्छन जन्म वाले मिथ्यादृष्टि प्राप्त करते हैं। प्रथमोपशम, द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि एवं सम्यग्मिथ्यादृष्टि भी प्राप्त करते हैं।

विशेष : वर्तमान में प्रथमोपशम एवं क्षयोपशम सम्यग्दर्शन होता है, या हो सकता है।

14. क्षायिक सम्यग्दर्शन किसे कहते हैं ?

सात प्रकृतियों के क्षय (नाश) से जो सम्यग्दर्शन होता है, उसे क्षायिक सम्यग्दर्शन कहते हैं।

15. क्षायिक सम्यग्दर्शन प्राप्त कौन कर सकता है ?

मात्र कर्मभूमि का मनुष्य क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि केवली, श्रुतकेवली के पादमूल में प्राप्त करता है।

16. यदि क्षायिक सम्यग्दर्शन, मनुष्य प्राप्त करता है, तो चारों गतियों में क्षायिक सम्यग्दृष्टि कैसे पाए जाते हैं ?

जिस मनुष्य ने पहले नरकायु, तिर्यञ्चायु या मनुष्यायु का बंध कर लिया है और बाद में क्षायिकसम्यग्दर्शन प्राप्त किया है, वह मरण कर प्रथम नरक में ही जाएगा, भोगभूमि का तिर्यञ्च या मनुष्य होगा। जिसने देवायु का बंध किया है, या किसी भी आयु का बंध नहीं किया है, तो वह नियम से देवगति में ही जाएगा और वैमानिक ही होगा। इस प्रकार चारों गतियों में क्षायिक सम्यग्दृष्टि पाए जाते हैं। (र. क. श्रा., 35)

17. क्षायिक सम्यग्दृष्टि अधिक-से-अधिक कितने भवों में मोक्ष जा सकता है ?

चार भवों में। पहला मनुष्य (जिसमें प्राप्त किया था,) दूसरा भोगभूमि का तिर्यञ्च या मनुष्य, तीसरा देवगति, चौथा कर्मभूमि का मनुष्य होकर मोक्ष प्राप्त कर लेगा।

18. तीनों सम्यग्दर्शनों का काल कितना है ?

सम्यग्दर्शन	जघन्यकाल	उत्कृष्टकाल
प्रथमोपशम	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
द्वितीयोपशम	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
क्षयोपशम	अन्तर्मुहूर्त	66 सागर
क्षायिक	हमेशा (सादि अनन्त) (होने के बाद छूटता नहीं)	हमेशा (सादि अनन्त) (होने के बाद छूटता नहीं)

19. तीन सम्यग्दर्शन में कितने सराग एवं कितने वीतराग सम्यग्दर्शन हैं ?

क्षयोपशम सम्यग्दर्शन तो सराग सम्यग्दर्शन ही है, शेष दो सराग, वीतराग दोनों हैं।

20. तीनों सम्यग्दर्शनों में कितने निसर्गज एवं कितने अधिगमज हैं ?

तीनों सम्यग्दर्शन निसर्गज भी हैं एवं अधिगमज भी हैं।

21. क्षायिक सम्यग्दर्शन तो केवली, श्रुतकेवली के पादमूल में होता है, अतः अधिगमज हुआ। निसर्गज कैसे हुआ ?

दूसरे और तीसरे नरक से आकर जो जीव तीर्थङ्कर होते हैं, उनके लिए क्षायिक सम्यग्दर्शन की प्राप्ति में परोपदेश की आवश्यकता नहीं होती है, किन्तु परोपदेश के बिना ही उनके क्षायिक सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होती है, अतः यहाँ क्षायिक सम्यग्दर्शन निसर्गज हुआ।

22. सम्यग्दर्शन की प्राप्ति में अन्य हेतु क्या हैं ?

अन्य हेतु निम्नलिखित हैं -

1. जाति स्मरण	-	पूर्व जन्मों की स्मृति।
2. धर्मश्रवण	-	धर्म उपदेश का सुनना।
3. जिन बिम्ब दर्शन	-	जिनबिम्ब दर्शन से। सम्मेदशिखरजी, ऊर्जयन्तजी, चम्पापुरजी, पावापुरजी एवं लब्धि सम्पन्न ऋषियों के दर्शन भी जिनबिम्ब दर्शन में ही गर्भित हैं।
4. वेदनानुभव	-	तीव्र वेदना होने से।
5. देवर्द्धि दर्शन	-	अपने से अधिक ऋद्धि अन्य देवों के पास देखकर के।
6. जिनमहिमा दर्शन	-	तीर्थङ्करों के पञ्चकल्याणक के दर्शन से।

23. उपरोक्त छः हेतुओं में से किस गति में किन-किन हेतुओं से सम्यग्दर्शन उत्पन्न होता है ?

नरकगति में - जाति स्मरण, धर्मश्रवण (तीसरी पृथ्वी तक) और वेदनानुभव से।

तिर्यञ्चगति व मनुष्यगति में -जाति स्मरण, धर्मश्रवण और जिनबिम्ब दर्शन से।

विशेष - जिन बिम्ब दर्शन में जिनमहिमा भी गर्भित है।

देवगति में-जाति स्मरण, देवर्द्धिदर्शन (12 वें स्वर्ग तक), धर्मश्रवण, जिनमहिमा दर्शन (16 वें स्वर्ग तक)।

नवग्रैवेयक में -जाति स्मरण और धर्मश्रवण से।

नवअनुदिश एवं पञ्च अनुत्तरों में -सम्यग्दृष्टि ही रहते हैं। (रा.वा., 2/3/2)

भोगभूमि में- जाति स्मरण और धर्मश्रवण से। (देवों के द्वारा प्रतिबोधित करने से एवं चारण ऋद्धिधारी मुनि के उपदेश से)

24. दस प्रकार के सम्यग्दर्शन कौन-कौन से होते हैं ?

1. **आज्ञा सम्यग्दर्शन** -वीतराग भगवान् की आज्ञा से ही जो तत्त्व श्रद्धान होता है, वह आज्ञा सम्यग्दर्शन है।
2. **मार्ग सम्यग्दर्शन** - ग्रन्थ श्रवण के बिना जो कल्याणकारी मोक्षमार्ग का श्रद्धान होता है, उसे मार्ग सम्यग्दर्शन कहते हैं।
3. **उपदेश सम्यग्दर्शन** - 63 शलाका पुरुषों की जीवनी को सुनकर जो तत्त्व श्रद्धान उत्पन्न होता है, उसे उपदेश सम्यग्दर्शन कहते हैं।
4. **सूत्र सम्यग्दर्शन** - मुनियों की चर्या को बताने वाले ग्रन्थों को सुनकर जो श्रद्धान होता है, उसे सूत्र सम्यग्दर्शन कहते हैं।
5. **बीज सम्यग्दर्शन** - बीज पदों के श्रवण से उत्पन्न श्रद्धान को बीज सम्यग्दर्शन कहते हैं।
6. **संक्षेप सम्यग्दर्शन** - जो जीवादि पदार्थों के स्वरूप को संक्षेप से ही जान कर तत्त्व श्रद्धान को प्राप्त हुआ है, उसे संक्षेप सम्यग्दर्शन कहते हैं।
7. **विस्तार सम्यग्दर्शन** - जो भव्य जीव 12 अङ्गों को सुनकर तत्त्व श्रद्धानी हो जाता है, उसे विस्तार सम्यग्दर्शन कहते हैं।
8. **अर्थ सम्यग्दर्शन** - वचन विस्तार के बिना केवल अर्थ ग्रहण से जिन्हें सम्यग्दर्शन हुआ है, वह अर्थ सम्यग्दर्शन है।
9. **अवगाढ़ सम्यग्दर्शन** - श्रुतकेवली का सम्यग्दर्शन अवगाढ़ सम्यग्दर्शन कहलाता है।
10. **परमावगाढ़ सम्यग्दर्शन** - केवली का सम्यग्दर्शन परमावगाढ़ सम्यग्दर्शन कहलाता है। (रा. वा., 3/36)

25. सम्यग्दर्शन के 25 दोष कौन-कौन से हैं ?

3 मूढ़ता, 8 मद, 6 अनायतन और 8 शंकादि दोष (8 अङ्गों से उलटे दोष) ये 25 दोष सम्यग्दर्शन के हैं। (द्र.सं.टी., 41)

26. मूढ़ता किसे कहते हैं एवं कौन-कौन सी होती हैं ?

सम्यक्त्व में दोष उत्पन्न करने वाले विवेक रहित कार्य को मूढ़ता कहते हैं।

1. **लोक मूढ़ता** - धर्म बुद्धि से नदियों व समुद्रों में स्नान करना, बालू का ढेर लगाना, पर्वत से गिरना, अग्नि में जलना आदि लोक मूढ़ता है।
2. **देव मूढ़ता** - आशा-तृष्णा के वशीभूत होकर वांछित फल की प्राप्ति की अभिलाषा से रागी-द्वेषी देवी-देवताओं की पूजा करना देव मूढ़ता है।
3. **गुरु मूढ़ता** - आरम्भ, परिग्रह, हिंसा, भय से युक्त और संसार में डुबाने वाले कार्यों में लीन साधुओं की पूजा, सत्कार करना गुरु मूढ़ता है।

27. मद किसे कहते हैं एवं कितने होते हैं ?

अहंकार, गर्व, घमण्ड करने को मद कहते हैं। ये आठ प्रकार के होते हैं।

1. **ज्ञानमद** - मुझे तो इतना ज्ञान है कि मैं बता सकता हूँ कि श्री धवला, श्री जयधवला जैसे महान् ग्रन्थों के कौन से पृष्ठ पर क्या लिखा है, किन्तु इनको तो ये भी नहीं मालूम कि एकेन्द्रिय जीव किस गति में आते हैं, ऐसा कहना ज्ञानमद है।
2. **पूजामद** - मेरी पूजा, मेरा सम्मान तो प्रत्येक घर में होता है, यहाँ तक कि विदेशों में भी होता है एवं आपका सम्मान तो नगर क्या घर में भी नहीं होता है। ऐसा कहना पूजामद है।
3. **कुलमद**- मेरा जन्म तो उस कुल में हुआ है, जहाँ अनेक मुनि हो गए, अनेक आर्यिकाएँ हो चुकी हैं, किन्तु तुम्हारे कुल में तो कोई रात्रिभोजन का भी त्यागी नहीं हुआ है, ऐसा कहना कुलमद है।
4. **जातिमद** - मेरी माता तो उस घर में जन्मी है, जहाँ सदाचार का सदैव पालन होता है, एवं तुम्हारी माता तो उस घर में जन्मी है, जहाँ सदाचार का थोड़ा भी पालन नहीं होता है, ऐसा कहना जातिमद है।
5. **बलमद** - मेरे पास इतना बल है कि मैं सौ-सौ व्यक्तियों से युद्ध में जीत सकता हूँ एवं तुम्हारे पास तो इतना भी बल नहीं है कि तुम एक मक्खी से भी जीत सको, ऐसा कहना बलमद है।
6. **ऋद्धिमद** - मेरे पास अनेक प्रकार की ऋद्धियाँ हैं, जहाँ-जहाँ मेरे चरण पड़ जाते हैं, वहाँ से रोग, दुर्भिक्ष, महामारी आदि भाग जाते हैं एवं आपके पास तो कोई भी ऋद्धि नहीं है, ऐसा कहना ऋद्धिमद है। धन मद भी ऋद्धिमद में गर्भित है।
7. **तपमद** - मैं बहुत बड़ा तपस्वी हूँ, हर माह में कम-से-कम दस उपवास कर लेता हूँ लेकिन आप रोज-रोज आहार करने जाते हैं, ऐसा कहना तपमद है।
8. **रूपमद**- मैं बहुत रूपवान हूँ, सुंदर हूँ बिना क्रीम, पावडर के भी कामदेव के समान लगता हूँ एवं आप तो बिल्कुल अष्टावक्र एवं काले हैं, ऐसा कहना रूपमद है।

28. अनायतन किसे कहते हैं ?

आयतन का अर्थ होता है स्थान। यहाँ सम्यग्दर्शन का प्रकरण होने से आयतन का अर्थ धर्म का स्थान। इससे विपरीत अधर्म के स्थान को अनायतन कहते हैं।

अनायतन छः होते हैं। कुगुरु, कुगुरु सेवक, कुदेव, कुदेव सेवक, कुधर्म और कुधर्म सेवक। इनकी मन, वचन, काय से प्रशंसा, भक्ति, सेवा नहीं करना। यदि प्रशंसा, भक्ति, सेवा करते हैं तो यह सम्यग्दर्शन में दोष है।

29. शंकादि आठ दोष कौन-कौन से हैं ?

1. **शंका** - जिनेन्द्र देव द्वारा कथित तत्त्वों में विश्वास नहीं करना।
2. **कांक्षा** - धर्म के सेवन से, सांसारिक भोगों की वांछा करना।
3. **विचिकित्सा** - रत्नत्रयधारी मुनियों के शरीर को देखकर ग्लानि करना।
4. **मूढ़दृष्टि** - मिथ्यामार्ग और मिथ्यामार्गियों की मन से सहमति करना, वचन से प्रशंसा करना एवं काय से सेवा करना।
5. **अनुपगूहन** - धर्मात्माओं के दोषों को प्रकट करना।
6. **अस्थितिकरण** - धर्म से चलायमान लोगों को पुनः धर्म में स्थित नहीं करना।
7. **अवात्सल्य** - साधर्मी भाइयों से प्रेम न कर उनकी निंदा करना।
8. **अप्रभावना** - अपने खोटे आचरण से जिनशासन की अप्रभावना करना।

   नोट-ये शंकादि,सम्यग्दर्शन के 8 दोष हैं, इसके विपरीत निःशंकित, निःकांक्षित, निर्विचिकित्सा, अमूढ़दृष्टि, उपगूहन, स्थितिकरण, वात्सल्य और प्रभावना, ये सम्यग्दर्शन के 8 अङ्ग होते हैं।

30. सम्यग्दर्शन के आठ गुण कौन-कौन से होते हैं ?

सम्यग्दर्शन के आठ गुण इस प्रकार हैं-

1. **संवेग** - संसार के दुःखों से नित्य डरते रहना अथवा धर्म के प्रति अनुराग रखना ।
2. **निर्वेग** - भोगों में अनासक्ति।
3. **निंदा** - अपने दोषों की निंदा करना।
4. **गर्हा** - गुरु के समीप अपने दोषों को प्रकट करना।
5. **उपशम** - क्रोधादि विकारों को शांत करना।
6. **भक्ति** - पञ्च परमेष्ठी में अनुराग।
7. **वात्सल्य** - साधर्मियों के प्रति प्रीति भाव रखना।
8. **अनुकम्पा** - सभी प्राणियों पर दया भाव रखना। (चारित्रसार श्रावकाचार, 7)

31. सम्यग्दृष्टि जीव कहाँ-कहाँ उत्पन्न नहीं होता है ?

सम्यग्दृष्टि जीव नरक, तिर्यञ्च, भवनत्रिक देव, नपुंसक, स्त्री पर्याय, नीचकुल, विकलाङ्ग, अल्पायु, एकेन्द्रिय, विकलचतुष्क और दरिद्रता को प्राप्त नहीं होता है।

नोट - सम्यग्दृष्टि नारकी एवं तिर्यञ्च भी होता है, जैसा कि प्रश्न 16 में कहा था।

32. सम्यग्दृष्टि क्या-क्या प्राप्त करता है ?

देवों में श्रेष्ठ पद इन्द्र, मनुष्यों में श्रेष्ठ पद चक्रवर्ती एवं तीर्थङ्कर के पद को भी प्राप्त करता है।

33. सम्यग्दृष्टि की क्या पहचान है ?

आचार्य नेमिचन्द्र जी जीवकाण्ड में कहते हैं-

मिच्छंतं वेदंतो जीवो विवरीयदंसणो होदि।
ण य धम्मं रोचेदि हु महुरं खु रसं जहा जरिदो॥ (जीवकाण्ड, 17)

अर्थ-मिथ्यात्व का अनुभव करने वाला जीव विपरीत श्रद्धान वाला होता है। जैसे-

1. पित्तज्वर से युक्त जीव को मधुर रस भी रुचिकर नहीं होता है वैसे ही मिथ्यादृष्टि जीव को यथार्थ धर्म रुचिकर नहीं होता है। अर्थात् इस गाथा से स्पष्ट हो जाता है कि धर्म जिसे अच्छा लग रहा है वह सम्यग्दृष्टि है क्योंकि मिथ्यात्व रूपी ज्वर से ग्रसित व्यक्ति के लिए धर्म अच्छा नहीं लगता है।
2. जो अपनी प्रशंसा के साथ दूसरे की निंदा नहीं करते हैं वे भी सम्यग्दृष्टि हैं क्योंकि जो अपनी प्रशंसा के साथ दूसरे की निंदा करते हैं तो नीच गोत्र का बंध होता है एवं नीच गोत्र का बंध दूसरे गुणस्थान तक ही होता है। अतः अपनी प्रशंसा के साथ पर की निंदा करने वाला सम्यग्दृष्टि नहीं हो सकता है।

34. कौन से सम्यग्दर्शन से कौन-सा सम्यग्दर्शन उत्पन्न होता है ?

प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन से क्षयोपशम सम्यग्दर्शन।
द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन से क्षयोपशम सम्यग्दर्शन।
क्षयोपशम सम्यग्दर्शन से द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन एवं क्षायिक सम्यग्दर्शन।
क्षायिक सम्यग्दर्शन से कोई भी सम्यग्दर्शन नहीं होता है।

35. सम्यग्दर्शन के पर्यायवाची नाम कौन-कौन से हैं ?

श्रद्धा, आस्था, रुचि, प्रतीति आदि।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. सीताजी का जीव जो अभी स्वर्ग में है, उसके पास क्षायिक सम्यग्दर्शन है।
2. उपशम सम्यग्दर्शन के दो भेद नहीं हैं।
3. अयोग केवली के सम्यग्दर्शन को परमावगाढ़ सम्यग्दर्शन कहते हैं।
4. शरीर शुद्धि के लिए नदी में स्नान करना लोक मूढ़ता है।
5. अपनी प्रशंसा के साथ दूसरों की निंदा करने वाला सम्यग्दृष्टि नहीं हो सकता है।

अन्यत्र खोजिए -

1. कौन से आचार्य ने कौन से ग्रन्थ में क्षायिक सम्यग्दर्शन को वीतराग सम्यग्दर्शन कहा है ? (रा.वा., 1/2/31)
2. नारकियों को जाति स्मरण से सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति किस प्रकार होती है ? (ध.पु., 6/422)
3. नारकियों को वेदना से सम्यग्दर्शन किस प्रकार होता है ? (ध.पु., 6/423)
4. सम्यग्दर्शन के अतिचार कौन-कौन से हैं ? (त.सू., 7/23)
5. भाव नपुंसक वेद, भाव स्त्रीवेद एवं भाव पुरुषवेद के साथ क्षायिक सम्यग्दर्शन कितनी गतियों में रहता है ? (चौ.ठा.)

अध्याय 30

सच्चे देव – शास्त्र – गुरु

सच्चे देव–शास्त्र–गुरु पर श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन कहलाता है। इनका स्वरूप क्या है। इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. **आप्त किसे कहते हैं ?**
   सच्चे देव को आप्त कहते हैं।
2. **सच्चे देव कौन हैं ?**
   जो वीतरागी, सर्वज्ञ तथा हितोपदेशी होते हैं, वे ही सच्चे देव हैं।
3. **वीतरागी किसे कहते हैं ?**
   जिस महान् आत्मा में 18 दोष नहीं पाए जाते हैं, उन्हें वीतरागी कहते हैं। अथवा ''वीतो नष्टो रागो येषां ते वीतरागः''। जिनका राग नष्ट हो गया है, उन्हें वीतराग कहते हैं।
4. **सर्वज्ञ किसे कहते हैं ?**
   जो लोक के समस्त पदार्थों को और उनकी त्रिकालवर्ती अनन्त पर्यायों को युगपत् जानते हैं, ऐसे परमात्मा को सर्वज्ञ कहते हैं।
5. **हितोपदेशी किसे कहते हैं ?**
   जो रत्नत्रयरूप मोक्षमार्ग के नेता हैं तथा भव्य जीवों को मोक्षमार्ग पर लगाने के लिए हित का उपदेश देते हैं, उन परमात्मा को हितोपदेशी कहते हैं।
6. **वीतरागी एवं सर्वज्ञ कितने परमेष्ठी हैं ?**
   वीतरागी एवं सर्वज्ञ दो परमेष्ठी हैं–अरिहंत एवं सिद्ध।
7. **हितोपदेशी कौन से परमेष्ठी हैं ?**
   हितोपदेशी अरिहंत परमेष्ठी हैं।
8. **अठारह दोष कौन से हैं जो वीतरागी में नहीं पाए जाते हैं ?**
   आचार्य समन्तभद्र स्वामी ने रत्नकरण्ड श्रावकाचार में श्लोक 6 में अठारह दोष इस प्रकार बताए हैं–

   क्षुत्पिपासाजरातंक, जन्मान्तकभयस्मयाः।
   न राग-द्वेष-मोहाश्च, यस्याप्तः स प्रकीर्त्यते॥

   अर्थ – क्षुधा (भूख), पिपासा (प्यास), बुढ़ापा, रोग, जन्म, मरण, भय, घमण्ड, राग, द्वेष, मोह, और च से चिन्ता, अरति, आश्चर्य, निद्रा, खेद, शोक और पसीना ये अठारह दोष नहीं होते हैं।
9. **कोई यह मानते हैं कि केवली भगवान् कवलाहार करते हैं, उसी से एक पूर्व कोटि वर्ष तक जीवित रहते हैं ?**
   केवली (अरिहंत) को संसारी जीवों के समान कवलाहार कभी नहीं होता है, उनको कवलाहारी मानना मिथ्यात्व के बंध का कारण है। यदि केवली को कवलाहारी मानेंगे तो भूख, प्यास का सद्भाव मानना पड़ेगा, जिससे दोषों का सद्भाव होगा तथा वीतरागता भी नहीं रहेगी इसलिए उन्हें केवली भी नहीं कह सकते हैं।

10. केवली कवलाहारी नहीं होते हैं, सिद्ध कीजिए ?

केवली कवलाहारी नहीं हो सकते, इस तथ्य को निम्न प्रकार से सिद्ध कर सकते हैं-

1. क्षुधा की प्रवृत्ति वेदनीय कर्म के उदय से होती है, वेदनीय कर्म का फल मोहनीय कर्म के साहचर्य से मिलता है। मोहनीय कर्म का अभाव होने से केवली को क्षुधा लगती ही नहीं है।
2. आहार संज्ञा छठवें गुणस्थान तक होती है एवं आहार क्रिया सप्तम गुणस्थान में भी होती है, अतः वहाँ आहार संज्ञा नहीं है आहार क्रिया है। किन्तु सयोग केवली का तेरहवाँ गुणस्थान है, अतः वह आहार नहीं करते हैं।
3. केवली के पास केवलज्ञान है, लोक के अनन्तानन्त शुभाशुभ पदार्थ स्पष्ट दिख रहे हैं इसलिए अशुभ पदार्थों को देखने से अन्तराय का प्रसंग आ जाएगा। जब अशुभ पदार्थ देखने से सामान्य श्रावक भी अंतराय करते हैं तो केवली न करें, यह संभव नहीं है। (र.क.श्रा.टी., 6)
4. हमारे शरीर में अनन्त स्थावर एवं असंख्यात त्रसजीव भरे हुए हैं, वे हमारे शरीर में स्थित भोजन को करते हैं, जिससे हमारा शरीर निरन्तर क्षीण होता रहता है। उस कमी को दूर करने के लिए हमें आहार लेना आवश्यक होता है। केवली भगवान् के शरीर में अन्य कोई भी जीव नहीं पाया जाता है, अतः उनको कवलाहार की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

11. आहार के बिना केवली का शरीर कुछ कम एक पूर्व कोटि वर्ष तक कैसे स्थिर रहता है।

नोकर्माहार के माध्यम से। उनके शुद्ध परिणामों के निमित्त से निरन्तर शुद्ध पुद्गल वर्गणाएँ आती रहती हैं, जो नोकर्म रूप शरीर की स्थिति में सहायक होती है।

12. केवली नोकर्माहार करते हैं तो आहार कितने प्रकार के होते हैं तथा वे कौन-सा आहार करते हैं ?

आहार 6 प्रकार के होते हैं।

1. नोकर्माहार	-	केवली का।
2. कर्माहार	-	नारकियों का।
3. कवलाहार	-	मनुष्य एवं तिर्यञ्चों का (कवल अर्थात् ग्रास)
4. लेपाहार	-	वनस्पति आदि में।
5. ओज आहार	-	अण्डस्थ पक्षियों में।
6. मानसिक आहार	-	देवों में। (र.श्रा.वि., 6)

13. आप्त के पर्यायवाची नाम बताइए ?

परमेष्ठी, परंज्योति, वीतराग, विमल, कृती, सर्वज्ञ, अनादिमध्यान्त, सार्व, शास्ता अर्धनारीश्वर और जगन्नाथ आदि।

14. नवदेवता के नाम बताइए ?

अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, जिनधर्म, जिनागम, जिनचैत्य एवं जिनचैत्यालय, ये नवदेवता हैं।

15. आचार्य, उपाध्याय और साधु को देव क्यों कहते हैं ?

अरिहंत के पश्चात् छद्मस्थ ज्ञान के धारक उन्हीं के समान दिगम्बर रूप धारण करने वाले आचार्य, उपाध्याय एवं साधु हैं। वह भी देव हैं, क्योंकि अरिहंत में जो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्र

है, उस रत्नत्रय की एकदेश शुद्धता उनमें भी पाई जाती है और वे ही संवर, निर्जरा और मोक्ष का कारण है। इसलिए अरिहंत की भाँति ये तीनों भी एक देश रूप से निर्दोष हैं, वे मोक्षमार्ग के साधक हैं व उपदेश करने वाले हैं, पूज्य हैं, अतः उन्हें भी देव कहते हैं।

16. कोई कहता है सर्वज्ञ हैं ही नहीं, क्योंकि देखने में नहीं आते हैं ? इसका समाधान क्या है ?

यदि आप कहते हैं कि सर्वज्ञ नहीं हैं, तो मैं पूछता हूँ कि सर्वज्ञ कहाँ नहीं हैं? इस क्षेत्र में और इस काल में अथवा तीनों लोक में अथवा तीनों काल में ? यदि इस क्षेत्र में और इस काल में सर्वज्ञ नहीं हैं ऐसा कहो तो वह स्वीकार ही है। यदि तीनों लोक में और तीनों काल में सर्वज्ञ नहीं है। ऐसा कहो, तो बताइए वह आपने कैसे देखा-जाना ? यदि तीनों लोक को और तीनों काल को सर्वज्ञ के बिना आपने जान लिया तो आप ही सर्वज्ञ हो गए, क्योंकि जो तीन लोक और तीनों काल को जाने वही सर्वज्ञ है और यदि सर्वज्ञ रहित तीनों लोक और तीनों काल को आपने नहीं देखा-जाना है तो फिर तीन लोक और तीन काल में सर्वज्ञ नहीं है, ऐसा आप कैसे कह सकते हो ? इस प्रकार सिद्ध होता है कि तुम्हारे द्वारा किया गया सर्वज्ञ का निषेध उचित नहीं है।

सूक्ष्म अर्थात् परमाणु आदिक, अन्तरित अर्थात् काल की अपेक्षा से दूर राम-रावणादि और दूरस्थ सुमेरु आदि, किसी-न-किसी के प्रत्यक्ष अवश्य हैं, क्योंकि अनुमेय हैं। जैसे-अग्नि आदि पदार्थ अनुमान के विषय हैं सो ही किसी के प्रत्यक्ष भी अवश्य होते हैं। ऐसे सर्वज्ञ का भले प्रकार निश्चय होता है। अतः सर्वज्ञ की सिद्धि होती है। वेदान्ती और बौद्धों ने भी सर्वज्ञ को स्वीकार किया है।

17. सच्चे शास्त्र का स्वरूप क्या है ?

केवली भगवान् के द्वारा कहा गया तथा अतिशय बुद्धि, ऋद्धि के धारक गणधर देवों के द्वारा जो धारण किया गया है एवं आचार्य, उपाध्याय और साधु द्वारा लिपिबद्ध किए गए शास्त्र ही सच्चे शास्त्र कहलाते हैं।

18. सच्चे गुरु का स्वरूप बताइए ?

रत्नकरण्ड श्रावकाचार की कारिका 10 के अनुसार सच्चे गुरु का स्वरूप इस प्रकार है-

विषयाशावशातीतो निरारम्भोऽपरिग्रहः।
ज्ञानध्यान तपोरक्तस्तपस्वी स प्रशस्यते॥

अर्थ—जो पञ्चेन्द्रिय विषयों की आशा के वशीभूत नहीं हैं, आरम्भ तथा परिग्रह से रहित हैं, निरंतर ज्ञान-ध्यान तथा तप में लवलीन रहते हैं, वे ही सच्चे गुरु प्रशंसा के योग्य हैं।

19. गुरु शब्द का अर्थ क्या है ?

गुरु शब्द का अर्थ महान् होता है। लोक में शिक्षकों को गुरु कहते हैं। माता-पिता भी गुरु कहलाते हैं। परन्तु धार्मिक प्रकरण में आचार्य, उपाध्याय व साधु ही गुरु कहलाते हैं, क्योंकि वे जीव को उपदेश देकर अथवा बिना उपदेश दिए ही केवल अपने जीवन का दर्शन कराकर कल्याण का सच्चा मार्ग बताते हैं, जिसे पाकर वह सदा के लिए कृतकृत्य हो जाता है।

20. साधु का मुख्य लक्षण क्या है ?

साधु का मुख्य लक्षण प्रवचनसार की गाथा 241 के अनुसार इस प्रकार है-

समसत्तुबंधुवग्गो समसुहदुक्खो पसंसणिंदसमो।
समलोट्ठकंचणो पुण जीवितमरणे समो समणो॥

अर्थ – जिसे शत्रु और बंधु वर्ग समान हैं, सुख-दुःख समान हैं, प्रशंसा और निंदा के प्रति जिसको समता है, जिसे पत्थर और सोना (स्वर्ण) समान है तथा जीवन-मरण के प्रति जिसको समता है, वह श्रमण है।

21. साधु के अनेक सामान्य गुण कौन-कौन से हैं ?

श्री धवलाजी, पुस्तक 1 में साधु के अनेक सामान्य गुण इस प्रकार प्रदर्शित किए हैं-

सीह-गय-वसह-मिय-पसु-मारुद-सूरुवहिं मंदरिंदु-मणी।
खिदि-उरगंबर-सरिसा परम-पय-विमग्गया साहू॥

अर्थ – सिंह के समान पराक्रमी, गज के समान स्वाभिमानी, बैल के समान भद्रप्रकृति, मृग के समान सरल, पशु (गाय) के समान निरीह गोचरी वृत्ति करने वाले, पवन के समान निःसंग या सब जगह बेरोकटोक विचरने वाले, सूर्य के समान तेजस्वी या सकल तत्त्वों के प्रकाशक, सागर के समान गम्भीर, मेरु के समान अकम्प व अडोल, चन्द्रमा के समान शांतिदायक, मणि के समान प्रभापुंजयुक्त, क्षिति के समान सर्व प्रकार की बाधाओं को सहने वाले, सर्प के समान अनियत वसतिका में रहने वाले, आकाश के समान निरालम्बी, निर्लेप और सदाकाल परमपद का अन्वेषण करने वाले साधु होते हैं।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. सिद्ध परमेष्ठी आप्त नहीं है।
2. जिनने समस्त बाह्य परिग्रह का त्याग कर दिया, वे वीतरागी हैं।
3. दो परमेष्ठी सर्वज्ञ एवं वीतरागी हैं।
4. आप लेपाहार करते हैं।
5. पशु कवलाहारी होते हैं।
6. तिर्यञ्चगति के जीवों में तीन प्रकार का आहार नहीं होता है।

अन्यत्र खोजिए -

1. वे कौन मुनिराज थे जिन्हें सर्प के मुख में मेंढक को देखकर वैराग्य हुआ था ? (जै.सि.को., 3/81)
2. मासोपवास करना वनवास जाना।
   आतापनादि तपना तन को सुखाना॥
   सिद्धान्त का मनन मौन सदा निभाना।
   ये व्यर्थ हैं श्रमण के बिन साम्य बाना॥
   यह पद्यानुवाद किस ग्रन्थ का है एवं इसके रचयिता कौन हैं ? (नियमसार, 124, आचार्य श्री विद्यासागर जी)

अध्याय 31

मन्दिर किसका प्रतीक है ?

सम्यग्दृष्टि की आस्था का केन्द्र मन्दिर है, उसकी तुलना अनेक प्रकार से की गई है। उसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. **मन्दिर किसे कहते हैं ?**
   जहाँ जिन प्रतिमाओं की स्थापना की जाती है, उस स्थान को मन्दिर कहते हैं।

2. **मन्दिर किसका प्रतीक है ?**
   मन्दिर–समवसरण, नदी, चिकित्सालय, विद्यालय, जीवन बीमा निगम, टिकट घर, बैंक, धन की फैक्ट्री एवं संचार के साधन का प्रतीक है।
   समवसरण – जिस प्रकार समवसरण में तीर्थङ्कर का उपदेश प्राप्त होता है ठीक उसी प्रकार मन्दिर जी में जिन प्रतिमा के माध्यम से मौन उपदेश मिलता है, अतः मन्दिर समवसरण का प्रतीक है।
   नदी – जैसे नदी सबकी प्यास बुझाती है, चाहे गरीब हो या अमीर, पापी हो या पुण्यात्मा, हिंसक हो या अहिंसक सभी को भेदभाव से रहित होकर शांति प्रदान करती है। ऐसे ही संसार में भटकते हुए प्राणियों के लिए जिनमंदिर गरीब–अमीर, पापी–पुण्यात्मा के भेदभाव से रहित जन्म–जन्म के शारीरिक–मानसिक तपन को मिटा देता है।
   चिकित्सालय – जब मानव बीमार होता है तब डॉक्टर के यहाँ जाता है। डॉक्टर रोग को ठीक करना चाहता है। कुछ रोग तो ठीक हो जाते हैं , किन्तु कुछ रोग ठीक नहीं हो पाते और रोगी का अवसान हो जाता है, किन्तु मन्दिर के माध्यम से ऐसे रोग ठीक होते हैं, जो कहीं पर भी ठीक नहीं हो सकते हैं। वे रोग हैं–जन्म, जरा, मृत्यु। मन्दिर रोग के मूल स्रोत जन्म, जरा, मृत्यु को नष्ट कर देता है, फिर ये बाहरी रोग तो होते ही नहीं हैं।
   विद्यालय– जैसे–आप अपने बच्चों को पढ़ाने के लिए स्कूल, कॉलेज आदि भेजते हैं कि मेरा बेटा पढ़कर एम.बी.ए., इंजीनियर, डॉक्टर आदि की डिग्री प्राप्त कर ले। उसी प्रकार संस्कृति–संस्कार को जीवित रखने के लिए मन्दिर में पाठशाला रहती है, जहाँ पर आत्मा को परमात्मा बनाने की विधि सिखाई जाती है। लौकिक डिग्री तो एक भव के लिए रहती है किन्तु पाठशाला से प्राप्त ज्ञान परम्परा से केवलज्ञान की डिग्री को प्राप्त करा देता है, जो डिग्री अनंत भवों के लिए हो जाती है।
   जीवन बीमा निगम – एक किस्त भरने के बाद किसी का मरण हो जाता है, तब वह धन (जितने का बीमा था उतना) परिवार वालों को मिल जाता है, किसी वस्तु का बीमा भी होता है। एक किस्त (Policy) जमा करने के बाद वह वस्तु नष्ट हो जाती है तो नई वस्तु मिल जाती है। उसी प्रकार देवदर्शन करने से एक बार भी सम्यग्दर्शन प्राप्त हो गया है और शरीर नष्ट भी हो जाता है तो नया वैक्रियिक (देव का) शरीर प्राप्त हो जाता है। जिससे अर्धपुद्गल परावर्तन के अन्दर ही परम औदारिक शरीर को प्राप्त कर मुक्ति को प्राप्त हो जाता है।
   टिकट घर –टिकट लेकर विश्व का भ्रमण कर सकते हैं। वैसे ही सम्यक्त्व रूपी टिकट से केवलज्ञान

को प्राप्त कर बैठे-बैठे ही तीन लोक की यात्रा हो जाती है।

बैंक-बैंक में धन जमा करने से वह पाँच वर्ष में दूना होता है। किन्तु मन्दिर (दान) में जमा करने से वह वटवृक्ष के समान सहस्र गुना हो जाता है। कुछ बैंक तो रातों रात फेल हो जाते हैं। किन्तु यह बैंक कभी भी फेल नहीं होता है।

धन की फैक्ट्री -जिन्हें मन्दिर के दर्शन, पूजन, स्वाध्याय आदि के धार्मिक संस्कार नहीं रहते हैं, वे दिन भर दुकान, फैक्ट्री में धन कमाते हैं और रात्रि में सीधे मधुशाला या क्लब जाते हैं, वहाँ जाकर धन और चारित्र दोनों को नष्ट कर देते हैं और जिन्हें मन्दिर के दर्शन, पूजन, स्वाध्याय के धार्मिक संस्कार रहते हैं। वे भी दिन भर दुकान, फैक्ट्री में धन कमाते हैं और रात्रि में सीधे घर आते हैं, जिससे घर में धन की वृद्धि होती है, अतः मन्दिर धन की फैक्ट्री है।

संचार के साधन -जिस प्रकार संचार के साधनों से देश-विदेश के समाचार ज्ञात हो जाते हैं। उसी प्रकार मन्दिर में रखे शास्त्रों से तीन लोक का ज्ञान प्राप्त होता है और मन्दिरजी में अनेक स्थानों की पत्रिकाओं के माध्यम से ज्ञात हो जाता है, कौन से महाराज किस नगर में हैं एवं किस नगर में कौन-सा धार्मिक कार्य हो रहा है।

3. भगवान् को वेदी पर विराजमान क्यों करते हैं ?

समवसरण में तीन पीठ के ऊपर गंधकुटी होती है। गंधकुटी वह स्थान है, जहाँ पर तीर्थङ्कर का सिंहासन होता है। जिस पर तीर्थङ्कर चार अङ्गुल ऊपर अधर में विराजमान रहते हैं। अतः वेदी भी समवसरण की तीन पीठ का प्रतीक है, इसी कारण से भगवान् को वेदी में विराजमान करते हैं।

4. तीर्थङ्कर की प्रतिमा के ऊपर कितने छत्र लगते हैं और क्यों ?

तीर्थङ्कर की प्रतिमा के ऊपर तीन छत्र लगते हैं, क्योंकि तीर्थङ्कर भगवान् तीन लोक के स्वामी हैं। नीचे बड़ा छत्र, बीच में उससे छोटा छत्र एवं सबसे ऊपर सबसे छोटा छत्र रहता है, क्योंकि अधोलोक के अंत में लोक की चौड़ाई 7 राजू, ब्रह्मस्वर्ग में लोक की चौड़ाई 5 राजू एवं लोक के शीर्ष में चौड़ाई 1 राजू है।

5. तीर्थङ्कर की प्रतिमा के दोनों तरफ चँवर क्यों लगाते हैं ?

समवसरण में 64 चँवर ढुराए जाते हैं। इसलिए तीर्थङ्कर की प्रतिमा के दोनों तरफ एक-एक या दो-दो चँवर प्रतीक रूप लगाए जाते हैं।

6. तीर्थङ्कर की प्रतिमा के पीछे भामण्डल क्यों लगाते हैं ?

समवसरण में तीर्थङ्कर भगवान् के मस्तक के चारों ओर आभामण्डल रहता है, जिसमें प्रत्येक जीव को 3 पूर्व के,1 वर्तमान का और 3 भविष्य के कुल 7 भव दिखाई देते हैं। उसी दृष्टि को सामने रखकर तीर्थङ्कर की प्रतिमा के पीछे भामण्डल लगाते हैं।

7. मन्दिर में शिखर क्यों बनाते हैं ?

1. जो वस्तु विशेष होती है, उसे विशेष रूप से व्यक्त किया जाता है। मकान सामान्य होता है एवं मन्दिर विशेष। मकान और मन्दिर में अंतर दिखाने के लिए शिखर बनाए जाते हैं।
2. शिखर का आकार पिरामिड के समान होता है, जिससे ध्वनि तरंगें एकत्रित होती हैं, जिससे स्वभावतः मन में शांति मिलती है एवं सात्त्विक विचार उत्पन्न होने लगते हैं।

3. मन्दिर का उत्तुंग शिखर देखने से मनुष्यों का मान खण्डित होता है।
4. जिस स्थान पर भगवान् विराजमान होते हैं, उसके ऊपर किसी का पैर न पड़े।
5. शिखर के कारण जिनमन्दिर का ज्ञान दूर से ही हो जाता है।

8. मन्दिर के शिखर पर कलश क्यों चढ़ाते हैं ?

कलश के बिना मन्दिर अधूरा माना जाता है उसके बिना मंदिर की शोभा नहीं बनती, इसी कारण से कलश चढ़ाते हैं।

9. मन्दिर के शिखर पर कलश के ऊपर ध्वजा क्यों फहराते हैं ?

1. यदि मन्दिर के शिखर पर कलश के ऊपर ध्वजा न फहराई जाए तो मन्दिर में राक्षस देवों का आवास हो जाता है, इसलिए ध्वजा फहराते हैं।
2. जिस प्रकार देश की पहचान ध्वज से होती है, उसी प्रकार अपने आयतनों की पहचान धर्म ध्वज के माध्यम से होती है।

10. मन्दिर के बाहर मानस्तम्भ क्यों बनाते हैं ?

समवसरण के बाहरी भाग में चारों दिशाओं में एक-एक मानस्तम्भ होता है। जिसे देखकर मानी व्यक्ति का मान गलित हो जाता है। उसी दृष्टि को सामने रखकर मन्दिर के सामने एक ही दिशा में एक मानस्तम्भ बनाया जाता है, जिसमें अरिहंत परमेष्ठी की मूर्ति चारों दिशाओं में एक-एक रहती है।

11. मन्दिर एवं चैत्यालय में क्या अंतर है ?

दोनों का शाब्दिक अर्थ एक ही है। जिन प्रतिमाओं के स्थापना के स्थान को मन्दिर या चैत्यालय कहते हैं। किन्तु वर्तमान में शिखर सहित देवालय को मन्दिर एवं शिखर रहित देवालय को चैत्यालय कहते हैं।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. तीर्थङ्करों के सिंहासन रखने के स्थान को गंधकुटी कहते हैं।
2. शिखर पर कलश के बिना मन्दिर अधूरा नहीं माना जाता है।
3. दान देने से वह धन सहस्र गुना हो जाता है।
4. तीर्थङ्कर के बैठने के स्थान को गंधकुटी कहते हैं।
5. भामण्डल में वर्तमान का एक भव दिखाई देता है।
6. शिखर सहित देवालय को चैत्यालय नहीं कहते हैं।
7. मंदिर में ध्वजा फहराने से वहाँ व्यंतर देवों का आवास हो जाता है।

अन्यत्र खोजिए -

1. पाड़ाशाह ने किस शताब्दी में कहाँ-कहाँ मन्दिर बनवाएं ? (प्र.ऐ.जै.पृ., 247-248)
2. जीवराज पापड़ीवाल ने किस शताब्दी में अनेक जिन मन्दिरों में प्रतिमाएँ विराजमान कराई थी ? (प्र.ऐ.जै.पृ., 277)
3. बालि मुनि ने जिन मन्दिरों की रक्षा कैसे की थी ? (प.पू., 9/147-160)
4. सगर चक्रवर्ती के 60,000 पुत्रों ने कैलास पर्वत पर बने स्वर्णमयी जिनालय की रक्षा के लिए क्या किया था ? (आ., सगर चक्रवर्ती कथा)

अध्याय 32
मन्दिर जाने की विधि

जैन श्रावक प्रतिदिन देवदर्शन करने मन्दिर जाता है। अतः मन्दिर जाने की विधि का वर्णन इस अध्याय में है।

1. मन्दिर जाने की विधि क्या है ?

देवदर्शन हेतु प्रातःकाल स्नानादि कार्यों से निवृत्त होकर शुद्ध धुले हुए स्वच्छ वस्त्र (धोती-दुपट्टा अथवा कुर्ता-पायजामा) पहनकर तथा हाथ में धुली हुई स्वच्छ अष्ट द्रव्य लेकर मन में प्रभुदर्शन की तीव्र भावना से युक्त, नंगे पैर नीचे देखकर जीवों को बचाते हुए घर से निकलकर मन्दिर की ओर जाना चाहिए। रास्ते में अन्य किसी कार्य का विकल्प नहीं करना चाहिए । दूर से ही मन्दिर जी का शिखर दिखने पर सिर झुकाकर जिन मन्दिर को नमस्कार करना चाहिए, फिर मन्दिर के द्वार पर पहुँचकर शुद्ध छने जल से दोनों पैर धोना चाहिए ।

मन्दिर के दरवाजे में प्रवेश करते ही **ॐ** जय जय जय, निस्सही निस्सही निस्सही, नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु बोलना चाहिए, फिर मन्दिर जी में लगे घंटे को बजाना चाहिए। इसके पश्चात् भगवान् के सामने जाते ही हाथ जोड़कर सिर झुकावें, एवं बैठकर गवासन से तीन बार नमस्कार कर तथा खड़े होकर णमोकार मंत्र पढ़कर कोई स्तुति, स्तोत्र पाठ पढ़कर भगवान् की मूर्ति को एकटक होकर देखकर भावना करें जैसी आपकी छवि है, वैसी ही वीतरागता मुझे प्राप्त होवे, जैसे आप सिंहासन आदि अष्ट प्रातिहार्यों से निर्लिप्त हैं, वैसे ही मैं भी संसार से निर्लिप्त रहूँ, साथ में लाए पुञ्ज बंधी मुट्ठी से अंगूठा भीतर करके अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु, ऐसे पाँच पदों को बोलते हुए बीच में, ऊपर, दाहिने, नीचे, बाएँ तरफ ऐसे पाँच पुञ्ज चढ़ावें। फिर जमीन पर गवासन से बैठकर, जुड़े हुए हाथों को तथा मस्तक को जमीन से लगावें तीन बार नमस्कार कर तत्पश्चात् हाथ जोड़कर खड़े हो जावें और मधुर स्वर में स्पष्ट उच्चारण के साथ स्तुति आदि पढ़ते हुए अपनी बाईं ओर से चलकर वेदी की तीन परिक्रमा करें। तदनन्तर स्तोत्र पूरा होने पर बैठकर गवासन से तीन बार नमस्कार करें। परिक्रमा देते समय ख्याल रखें कोई नमस्कार कर रहा हो तो उसके आगे से न निकलकर, पीछे की ओर से निकलें। दर्शन करने इस तरह खड़े हों तथा इस तरह पाठ करें जिससे अन्य किसी को बाधा न हो। दर्शन कर लेने के बाद अपने दाहिने हाथ की मध्यमा और अनामिका अङ्गुलियों को गंधोदक के पास रखे शुद्ध जल से शुद्ध कर लेने पर अङ्गुलियों से गंधोदक लेकर उत्तमाङ्ग पर लगाएं फिर गंधोदक वाली अङ्गुलियों को पास में रखे जल में धो लेवें। गंधोदक लेते समय निम्न पंक्तियाँ बोलें -

निर्मलं निर्मलीकरणं, पवित्रं पाप नाशनम्।
जिन गंधोदकं वंदे, अष्टकर्म विनाशनम्॥

इसके पश्चात् नौ बार णमोकार मन्त्र पढ़ते हुए कायोत्सर्ग करें। फिर जिनवाणी के समक्ष ''प्रथमं करणं

चरणं द्रव्यं नमः'' ऐसा बोलते हुए चार पुञ्ज चढ़ावें। तथा गुरु के समक्ष ''सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक् चारित्रेभ्यो नमः'', ऐसा बोलकर तीन पुञ्ज चढ़ावें। तदुपरान्त शास्त्र स्वाध्याय करें एवं मन्त्र जाप करें, फिर भगवान् को पीठ न पड़े ऐसे विनय पूर्वक अस्सहि, अस्सहि, अस्सहि बोलते हुए मन्दिर से बाहर निकलें।

2. देवदर्शन किसे कहते हैं ?

देव का अर्थ वीतरागी 18 दोषों से रहित देव और दर्शन का सामान्य अर्थ होता है देखना, किन्तु यहाँ पूज्यता के साथ देखने का नाम दर्शन है। अतः पूज्य दृष्टि से देव को देखने का नाम देवदर्शन है।

3. मन्दिर जी आने से पहले स्नान क्यों आवश्यक है ?

गृहस्थ जीवन में पञ्च पाप होते रहते हैं, जिससे शरीर अशुद्ध हो जाता है। अतः शरीर की शुद्धि के लिए स्नान आवश्यक है।

4. मन्दिर जी में प्रवेश करते समय पैर धोना क्यों आवश्यक है ?

पैरों का सम्बन्ध सीधा मस्तिष्क से होता है, आँखों में दर्द, पेट में दर्द, अधिक थकावट से विश्राम पाने के लिए पैर के तलवे दबाये जाते हैं। जिन्हें रात्रि में स्वप्न आते हैं, उन्हें पैर धोकर सोना चाहिए। श्रावक जब मुनि महाराज की वैयावृत्ति करना चाहता है, तब अनेक मुनि महाराज कहते हैं कि तुम्हें घी, तेल लगाना हो तो मात्र पैर के तलवे में लगा दो वह मस्तिष्क तक आ जाता है। इन सब बातों से सिद्ध होता है कि पैरों का सम्बन्ध मस्तिष्क से है। यदि पैरों में अशुद्धि रहेगी तब मन में भी अशुद्धि रहेगी। अतः मन्दिर जी प्रवेश से पूर्व पैर धोना आवश्यक है।

5. मन्दिर जी में प्रवेश करते समय निस्सहि-निस्सहि-निस्सहि क्यों बोलना चाहिए ?

प्रथम कारण तो यह है कि मैं दर्शन करने आ रहा हूँ, अतः वहाँ कोई श्रावक या अदृश्य देव, दर्शन कर रहे हैं, वे मुझे दर्शन करने के लिए स्थान दें। दूसरा कारण यह है कि मैं शरीर पर वस्त्रों के अलावा शेष परिग्रह का निस्सहि अर्थात् निषिद्ध करके या ममत्व छोड़ करके पवित्र स्थान में प्रवेश कर रहा हूँ। तीसरा कारण यह है कि इस जिनालय को नमस्कार हो।

6. मन्दिर जी में घंटा क्यों बजाते हैं ?

मन्दिर जी में घंटा बजाने के प्रमुख कारण इस प्रकार हैं -

1. घंटा समवसरण में बजने वाली देव दुंदुभि का प्रतीक है।
2. जैसे ही घंटा बजाते हैं और घंटे के नीचे खड़े हो जाते हैं जिससे उसकी ध्वनि तरंगें एकत्रित हो जाती हैं, जिससे मन में शांति मिलती है एवं मन में अपने आप सात्त्विक विचार आने लगते हैं। घंटा पिरामिड के आकार का होता है। आज मन को शांत करने के लिए पिरामिड का बहुत प्रयोग किया जा रहा है।
3. अभिषेक करते समय घंटा बजाते हैं जो आस-पास के लोगों को जगाने का कार्य भी करता है कि अभिषेक प्रारम्भ हो गया है। मुझे मन्दिर जी जाना है। अतः घंटा समय का सूचक है।

7. मन्दिर जी में चावल ही क्यों चढ़ाते हैं ?

चावल ऊगता नहीं है, धान (छिलका सहित चावल) ऊगता है। अतः आगे हम भी न ऊगे अर्थात् हमारा भी जन्म न हो इसलिए चावल चढ़ाते हैं।

8. प्रदक्षिणा किसकी दी जाती है एवं कितनी दी जाती है ?

वीतरागी देव, तीर्थक्षेत्र, सिद्धक्षेत्र, अतिशय क्षेत्र एवं निर्ग्रंथ गुरु की तीन-तीन प्रदक्षिणा दी जाती हैं।

9. प्रदक्षिणा क्यों देते हैं ?

वेदी में विराजमान भगवान् समवसरण का प्रतीक है। समवसरण में भगवान् के मुख चार दिशाओं में अलग-अलग दिखते हैं। अतः चार दिशाओं में भगवान् के दर्शन के उद्देश्य से प्रदक्षिणा (परिक्रमा) देते हैं। तीन रत्नत्रय का प्रतीक है, अतः रत्नत्रय की प्राप्ति हो, इसलिए तीन प्रदक्षिणा देते हैं।

10. प्रदक्षिणा बाईं (Left) ओर से क्यों लगाते हैं ?

हमारे जो आराध्य हैं, पूज्य हैं, बड़े हैं, उन्हें सम्मान की दृष्टि से अपने दाहिने (Right) हाथ की ओर रखा जाता है। इसलिए प्रदक्षिणा बाईं ओर से लगाते हैं।

11. मन्दिर जी से वापस आते समय अस्सहि-अस्सहि-अस्सहि क्यों बोलते हैं ?

अस्सहि का अर्थ है कि अब मैं दर्शन करके वापस जा रहा हूँ देव आदि जिनने दर्शन करने के लिए स्थान दिया था वे अब अपना स्थान ग्रहण कर लें।

12. भगवान् के दर्शन करते समय किन-किन भावनाओं को भाना चाहिए ?

भगवान् के दर्शन करते समय निम्न भावनाओं को भाना चाहिए-

1. मैं भी आप जैसा बनूँ।
2. मेरे पाप कर्म शीघ्र नष्ट हों।
3. मुझे मोक्ष सुख की प्राप्ति हो।
4. संसार के सारे जीव सुखी रहें।
5. संसार के सभी जीव धर्म्यध्यान करें।
6. सारे नरक खाली हो जाएँ, सारे अस्पताल बंद हो जाएँ अर्थात् कोई बीमार ही न पड़े। सारे जेल बंद हो जाएँ अर्थात् कोई ऐसा कार्य न करे जिससे जेल जाना पड़े।
7. ओम् नमः सबसे क्षमा, सबको क्षमा, सभी आत्मा परमात्मा बनें।

13. भगवान् के दर्शन करते समय किस प्रकार के भावों का त्याग करना चाहिए ?

भगवान् के दर्शन करते समय निम्न प्रकार के भावों का त्याग करना चाहिए-

1. धन-वैभव, पद आदि की प्राप्ति के भावों का त्याग करना चाहिए।
2. स्त्री, पुत्र, आदि की प्राप्ति के भावों का त्याग करना चाहिए।
3. उसका मरण हो जाए, वह चुनाव में हार जाए, उसकी दुकान नष्ट हो जाए, उसकी नौकरी छूट जाए, वह परीक्षा में फेल हो जाए आदि बुरे भावों का त्याग करना चाहिए ।

14. पाषाण या धातु की मूर्ति में पूज्यता कैसे आती है ?

पञ्चम काल में भरत और ऐरावत क्षेत्रों में अरिहंत परमेष्ठी नहीं होते हैं। उन अरिहंतों के गुणों की स्थापना पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में आचार्य अथवा उपाध्याय, साधु परमेष्ठी सूरि मंत्र देकर करते हैं। अतः इससे मूर्ति में पूज्यता आ जाती है। जैसे-17.8 से.मी. लंबे, 7.3 से.मी.चौड़े कागज का मूल्य अधिकतम 50 पैसा होगा उसी कागज में गर्वनर (GOVERNOR) के हस्ताक्षर (SIGN) होने से उसका मूल्य 1000 रुपए हो जाता है वैसे ही कम मूल्य की धातु या पाषाण की मूर्ति, सूरि मंत्र पाते ही अमूल्य हो जाती है, अर्थात् पूज्य हो जाती है।

15. मन्दिर जी में कौन-कौन से कार्य नहीं करना चाहिए ?

मन्दिर जी में निम्न कार्य नहीं करना चाहिए -

1. देव-शास्त्र-गुरु से ऊँचे स्थान पर नहीं बैठना चाहिए।
2. कोई श्रावक दर्शन कर रहा हो तो उसके सामने से नहीं निकलना चाहिए।
3. पूजन, भजन, मंत्र इतनी जोर से नहीं पढ़ना चाहिए कि दूसरा जो पूजन, भजन, मंत्र कर रहा है वह अपना पाठ ही भूल जाए।
4. नाक, कान, आँख आदि का मैल नहीं निकालना चाहिए।
5. शौच आदि को पहनकर गए हुए वस्त्र पहनकर नहीं जाना चाहिए।
6. अशुद्ध पदार्थ लिपिस्टिक, नेलपालिश, क्रीम, सेन्ट आदि लगाकर नहीं जाना चाहिए।
7. क्रोध, अहंकार नहीं करना चाहिए।
8. किसी को गाली नहीं देना चाहिए।
9. सगाई, विवाह, खाने, पीने आदि की चर्चा नहीं करना चाहिए।
10. दुकान, आफिस, राजनीति आदि की चर्चा नहीं करना चाहिए।
11. जूठे मुख नहीं जाना चाहिए।
12. चमड़े तथा रेशम की वस्तुएँ पहनकर नहीं जाना चाहिए।
13. काले, नीले, लाल, भड़कीले वस्त्र पहनकर नहीं जाना चाहिए।
14. मोबाइल का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

16. दर्शन करने से कौन-कौन से लाभ होते हैं ?

दर्शन करने से निम्न लाभ होते हैं -

1. सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होती है, यदि सम्यग्दर्शन है तो वह और दृढ़ होता है।
2. अनेक उपवासों का फल मिलता है।
3. असंख्यात गुणी कर्मों की निर्जरा होती है।
4. पुण्य का आस्रव होता है।
5. मन के अशुभ भाव नष्ट हो जाते हैं।
6. प्रातःकाल दर्शन-पूजन करने से दिन अच्छी तरह व्यतीत होता है।

17. देवदर्शन करने से कितने उपवास का फल मिलता है ?

देवदर्शन करने का फल निम्न प्रकार है –

1. जिन प्रतिमा के दर्शन का विचार करने से	2 उपवास का
2. दर्शन करने की तैयारी की इच्छा से	3 उपवास का
3. जाने की तैयारी करने से	4 उपवास का
4. घर से जाने लगता उसे	5 उपवास का
5. जो कुछ दूर पहुँच जाता है उसे	12 उपवास का
6. जो बीच में पहुँच जाता है उस	15 उपवास का
7. जो मन्दिर के दर्शन करता है उसे	1 माह के उपवास का
8. जो मन्दिर के आँगन में प्रवेश करता है उसे	6 माह के उपवास का
9. जो द्वार में प्रवेश करता है उसे	1 वर्ष के उपवास का
10. जो प्रदक्षिणा देता है उसे	100 वर्ष के उपवास का
11. जो जिनेन्द्र देव के मुख का दर्शन करता है उसे	1000 वर्ष के उपवास का

12. और जो स्वभाव से अर्थात् निष्काम भाव से स्तुति करता है उसे अनन्त उपवास का फल मिलता है।

(प.पु. 32/178-182)

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. चावल ऊगता है, इसलिए मन्दिर में चढ़ाना चाहिए।
2. मन्दिर से वापस आते समय अस्सहि-अस्सहि बोलना चाहिए।
3. भगवान् के दर्शन करते समय मैं मुनि बन जाऊँ ऐसी भावना भाना चाहिए।
4. कोई मुनि न बने, ऐसी भावना नहीं भाना चाहिए।
5. नरक खाली न हो, ऐसी भावना भानी चाहिए।

अन्यत्र खोजिए -

1. एकाङ्ग, द्विअङ्ग, त्रिअङ्ग, चतुरङ्ग एवं पञ्चाङ्ग नमस्कार किस प्रकार से होते हैं ?

(अ.श्रा., 8/62-64)

2. पाँच प्रकार के स्नान कौन-कौन से होते हैं ? (जै.सि.को., 4/471)
3. भगवान् के दर्शन गजमोती चढ़ाकर करूँगी ऐसे नियम वाली कन्या की कथा खोजिए ?

(मनोवती की कथा)

4. एक मुनिराज ने श्रावक से कहा देवदर्शन नहीं कर सकते तो तुम्हारे घर के पीछे जो कुम्भकार का गधा है उसके मुख को देख लिया करो, ऐसी कथा खोजिए ? (क.)

अध्याय 33
रात्रि भोजन त्याग

मानव शरीर अन्न का कीड़ा है, मानव अन्न के बिना जीवित नहीं रह सकता है। अतः मनुष्य को भोजन करना अनिवार्य है, किन्तु कब करना, कब नहीं करना, कितना करना , इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. भोजन क्यों करते हैं ?

1. क्षुधा की वेदना को दूर करने के लिए।
2. अपने कर्तव्यों का पालन करने के लिए।
3. जिससे हम जीवित रह सकें।
4. दूसरों की सेवा करने के लिए।
5. संयम पालन करने के लिए।
6. दस धर्मों का पालन करने के लिए। (मू., 479)

2. भोजन कब करना चाहिए ?

भोजन दिन में करना चाहिए।

3. रात्रि में भोजन क्यों नहीं करना चाहिए ?

सूर्य की किरणों में Ultraviolet (अल्ट्रावायलेट) एवं Infrared (इन्फ्रारेड) नाम की किरणें रहती हैं। इन किरणों के कारण दिन में सूक्ष्म जीवों की उत्पत्ति नहीं होती है। सूर्य के अस्त होते ही रात्रि में जीवों की उत्पत्ति प्रारम्भ हो जाती है। यदि रात्रि में भोजन करते हैं, तब उन जीवों का घात हो जाता है, जिससे हमारा अहिंसा धर्म समाप्त हो जाता है एवं पेट में भोजन के साथ छोटे-छोटे जीव-जन्तु पहुँच जाते हैं, जिससे अनेक प्रकार की बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं।

4. क्या रात्रि में लाईट जलाकर भोजन कर सकते हैं ?

नहीं। क्योंकि यदि दिन में लाईट जलाते हैं, तो लाईट के आसपास कीड़े दिखाई नहीं देते हैं, क्योंकि दिन में कीड़े कम उत्पन्न होते हैं और वे सूर्य प्रकाश के कारण यहाँ-वहाँ छिप जाते हैं। रात्रि में लाईट जलाते हैं तब और भी ज्यादा कीड़े उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार रात्रि में लाईट जला कर भी भोजन नहीं करना चाहिए। दिन में लाईट अर्थात् सनलाईट Sunlight (सूर्य प्रकाश) में ही भोजन करना चाहिए।

5. वर्तमान विज्ञान रात्रिभोजन न करने के बारे में क्या कहता है ?

वर्तमान विज्ञान का कहना है कि सूर्य प्रकाश में ही भोजन का पाचन होता है। अतः दिन में ही भोजन करना चाहिए। भोजन करके शयन करने से भोजन का पाचन सही नहीं होता है। इससे शयन के 3 या 4 घंटे पहले भोजन कर लेना चाहिए।

6. आयुर्वेद रात्रिभोजन करने का समर्थन करता है कि नहीं ?

नहीं। आयुर्वेद में लंघन (उपवास) भी कराते हैं, तब उसकी पारणा भी दिन में ही कराते हैं एवं वैद्य भी औषध दिन में तीन बार लेने के लिए कहता है, प्रातः, मध्याह्न एवं संध्या को। रात्रि में नहीं।

7. प्राकृतिक चिकित्सा में रात्रिभोजन का समर्थन है कि नहीं ?

प्राकृतिक चिकित्सा में रात्रि में मात्र पेय आहार देते हैं अन्न आदि नहीं।

8. जैनधर्म के अलावा अन्य धर्मों में रात्रिभोजन का निषेध है या नहीं ?

जैनधर्म के अलावा अन्य धर्मों में रात्रिभोजन का निषेध किया है-

1. **महाभारत के शान्तिपर्व में कहा है -**

चत्वारि नरक द्वारं प्रथमं रात्रि भोजनम्।
परस्त्री गमनं चैव सन्धानानन्तकायिकम्॥

अर्थ – नरक जाने के चार द्वार हैं-पहला रात्रिभोजन, दूसरा परस्त्री सेवन, तीसरा सन्धान अर्थात् अमर्यादित अचार का सेवन करना एवं चौथा अनन्तकायिक अर्थात् जमीकंद खाना।

2. **मार्कण्डेय पुराण में कहा है -**

अस्तंगते दिवानाथे आपो रुधिर मुच्यते।
अन्नं मांस समं प्रोक्तं मार्कण्डेय महिर्षणा॥

अर्थ – सूर्य के अस्त होने के बाद जल के सेवन को खून के समान एवं अन्न के सेवन को माँस के समान कहा है।

3. **मार्कण्डेय पुराण में और भी कहा है -**

मृते स्वजन मात्रेऽपि सूतकं जायते किल।
अस्तंगते दिवानाथे भोजनं कथं क्रियते॥

अर्थ – स्वजन का अवसान हो जाता है तो सूतक लग जाता है, जब तक शव का संस्कार नहीं होता तो भोजन नहीं करते हैं। जब सूर्यनारायण अस्त हो गया तो सूतक लग गया अब क्यों भोजन करेंगे। अर्थात् नहीं करेंगे, नहीं करना चाहिए।

4. **ऋषीश्वर भारत में कहा है -**

मद्यमाँसाशनं रात्रौ भोजनं कंद भक्षणम्।
ये कुर्वन्ति वृथा तेषां, तीर्थयात्रा जपस्तपः॥
वृथा एकादशी प्रोक्ता वृथा जागरणं हरेः।
वृथा च पुष्करी यात्रा वृथा चान्द्रायणं तपः॥

अर्थ – मद्य, माँस का सेवन, रात्रि में भोजन एवं कंदमूल भक्षण करने वाले के तप, एकादशीव्रत, रात्रिजागरण, पुष्कर यात्रा तथा चन्द्रायण व्रतादि निष्फल हैं।

9. रात्रि भोजन के त्याग में अन्न का त्याग है या सभी पदार्थों का ?

रात्रिभोजन के त्याग का अर्थ रात्रि में चारों प्रकार के आहारों का त्याग अर्थात् खाद्य, पेय, लेह्य और स्वाद्य।

खाद्य – रोटी, बाटी, मोदक आदि।

पेय – दूध, पानी, शर्बत, ठंडाई आदि।

लेह्य – रबड़ी, आम का रस, कुल्फी आदि।

स्वाद्य – लौंग, इलायची, सौंफ आदि।

10. जिसका रात्रि में चारों प्रकार के आहार का त्याग है, उसे क्या फल मिलता है ?

जो रात्रि में चारों प्रकार के आहार का त्याग करता है उसे एक वर्ष में छः माह के उपवास का फल मिलता है।

11. भोजन कितना करना चाहिए ?

सभी डॉक्टर, वैद्य यही कहते हैं कि खूब भूख लगने पर, भूख से कम खाना चाहिए। मूलाचार ग्रन्थ में आचार्य श्री वट्टकेर स्वामी ने कहा है कि आधा पेट तो भोजन से भर लेना चाहिए। तीसरा भाग जल से भर लेना चाहिए एवं एक भाग खाली रखना चाहिए।

इसी प्रकार गुरुवर आचार्य श्री विद्यासागर जी ने मूकमाटी में कहा है-

आधा भोजन कीजिए, दुगुणा पानी पीव।
तिगुणा श्रम चउगुणी हँसी, वर्ष सवा सौ जीव॥

12. रात्रि में भोजन न करने से क्या लाभ हैं ?

रात्रि में भोजन न करने से अनेक लाभ हैं-

1. रात्रि में भोजन न करने से जीवों का घात नहीं होता है, अतः हम पाप से बच जाते हैं।
2. अनेक प्रकार की बीमारियाँ नहीं होती हैं, जिससे आपका धन भी बच जाता है, क्योंकि बीमार होने से आपका धन डॉक्टर एवं दवा विक्रेता या दवा निर्माता के यहाँ जाता है।
3. घर में शांति रहती है, क्योंकि आप रात्रि में भोजन करेंगे तो महिला वर्ग को रात्रि में बनाना पड़ेगा और उसके बाद बरतन आदि साफ करने पड़ेंगे। अधिक रात्रि होने से निद्रा भी आने लगती है, अतः गुस्सा आना स्वाभाविक है। अब वह गुस्सा कहाँ उतरेगा ? आपके ऊपर या बच्चों के ऊपर या फिर घर की सामग्री के ऊपर। अतः घर में शांति चाहते हो तो दिन में भोजन करना चाहिए।

13. रात्रि में भोजन करने से क्या-क्या हानियाँ होती हैं ?

पेट में अनेक प्रकार के जीव पहुँच जाते हैं, जिससे अनेक प्रकार की बीमारियाँ होती हैं। जैसे -

1. मक्खी जाने से वमन हो जाता है।
2. मकड़ी का अंश भी जाने से कोढ़ हो जाता है।
3. जूँ (जुआँ) जाने से जलोदर रोग हो जाता है।
4. बाल जाने से स्वर भंग हो जाता है।
5. बिच्छू जाने से तालु भंग हो जाता है।

14. जैनधर्म के अनुसार रात्रि में भोजन करने वाले कहाँ जाते हैं ?

उलूक-काक-मार्जार,-गृध्र-शम्बर-सूकराः।

अहि-वृश्चिक-गोधाश्च, जायन्ते निशिभोजनात्॥ (स. कौ., 443)

अर्थ – रात्रि में भोजन करने वाले उल्लू, कौआ, बिल्ली, गृध्र (गिद्ध), भेड़िया, सुअर, सर्प, बिच्छू, मगरमच्छ आदि पर्याय में जाते हैं।

15. रात्रि भोजन त्याग के दोष (अतिचार) कौन-कौन से हैं ?

रात्रि भोजन त्याग के दोष निम्नलिखित हैं -

1. दिन के समय अंधकार में बना भोजन करना।
2. रात्रि का बना भोजन दिन में करना।
3. रात्रि भोजन का त्याग करके, समय पर भोजन न मिलने से मन में सोचना कि मैंने क्यों रात्रि भोजन का त्याग कर दिया।
4. रात्रि में चारों प्रकार के आहारों का त्याग नहीं करना।
5. रात्रि में पीसा, कूटा, छना हुआ पदार्थ खाना।
6. दिन के प्रथम और अंतिम घड़ी (24 मिनट) में भोजन करना।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. रात्रि में हवा खाना रात्रि भोजन का त्याग नहीं है।
2. सैनिक देश की रक्षा के लिए भोजन करता है।
3. वैष्णव धर्म में रात्रि भोजन का निषेध नहीं है।
4. सन लाईट में भोजन कर सकते हैं।
5. आयुर्वेद में रात्रिभोजन का समर्थन है।
6. दस धर्मों का पालन करने के लिए साधु आहार करता है।
7. बाल जाने से तालु भंग हो जाता है।
8. रात्रि का बना भोजन दिन में नहीं करना चाहिए।

अन्यत्र खोजिए -

1. ऐसे तिर्यञ्च की कथा खोजें जिसने रात्रि भोजन के त्याग के कारण अंधकार मात्र देखने से पानी भी नहीं पिया और प्यास के कारण मरण हो गया ? (आ., रात्रिभोजन त्याग कथा)
2. सात्त्विक, राजसिक एवं तामसिक भोजन का अर्थ क्या है ? (चिन्तन कीजिए)
3. अमितगति श्रावकाचार में खोजिए कि रात्रि में भोजन करने वाली स्त्रियों को क्या फल मिलता है एवं दिन में भोजन करने वाली स्त्रियों को क्या फल मिलता है ? (5/65-66)
4. अमितगति श्रावकाचार में खोजिए कि रात्रि में भोजन करने वाले मनुष्यों को क्या फल मिलता है एवं दिन में भोजन करने वाले मनुष्यों को क्या फल मिलता है ? (5/57-64)

अध्याय 34

जलगालन (पानी छानकर पीना)

धार्मिक दृष्टि से, वैज्ञानिक दृष्टि से जल छानकर पीना चाहिए। अतः इस अध्याय में जल छानने की विधि का वर्णन है।

1. **जल क्यों छाना जाता है ?**
   जल में जो अनेक सूक्ष्म (त्रस) जीव रहते हैं, उनकी रक्षा के लिए जल को छाना जाता है। बिना छने जल का प्रयोग करने से उसमें रहने वाले जीवों का अवसान (मरण) होता है एवं जीव पेट में जाकर रोग भी उत्पन्न करते हैं। इससे छने पानी का प्रयोग करना चाहिए।
2. **पानी स्वयं जीव है, तो छानने से जीव कैसे बचेंगे ?**
   पानी छानने से त्रस जीवों की रक्षा होती है। जलकायिक की नहीं।
3. **एक बूँद जल में जैनधर्म के अनुसार कितने जीव हैं ?**
   एक बूँद जल में जैनधर्म के अनुसार संख्यात त्रस जीव एवं असंख्यात जलकायिक जीव हैं, जो कबूतर के बराबर होकर उड़ें तो पूरा जम्बूद्वीप भर जाएगा।
4. **वैज्ञानिक कैप्टन स्ववोर्सवी के अनुसार एक बूँद जल में कितने जीव हैं ?**
   वैज्ञानिक कैप्टन स्ववोर्सवी के अनुसार 36,450 त्रस जीव हैं।
5. **जल छानने की विधि क्या है ?**
   कुएँ में बालटी या कोई भी बरतन जोर से नहीं पटकते हुए पानी खीचें। वह बालटी फूटी भी न हो, और पानी गिरे भी नहीं। बालटी ऊपर लाने के बाद एक सूती छन्ने से छानना, वह छन्ना इतना मोटा हो कि उसमें से सूर्य की किरणें आर-पार न हो सकें। छन्ना इतना बड़ा हो कि जिस बरतन में पानी छाना जा रहा है,उसके मुख से बड़ा हो। इतनी सावधानी अवश्य रहे कि अनछना एक भी बूँद जल जमीन पर न गिरे। पानी छानने के बाद जिवानी को छने जल से धोकर ही, जहाँ की जिवानी हो उसी जगह डालना चाहिए। जिवानी ऊपर से नहीं फेंकना चाहिए, बल्कि बालटी में नीचे कड़ा होना चाहिए। जिससे जल की सतह पर जाकर जिवानी पहुँचे। अतः कड़े वाली बालटी का प्रयोग करना चाहिए।
6. **जेट, हैंडपंप आदि से पानी आने में घर्षण से जीव मर जाते हैं। फिर पानी छानने से क्या लाभ है ?**
   जेट, हैंडपंप से पानी आता है तो घर्षण से जीव मर तो जाते हैं किन्तु बिना छने जल में प्रतिसमय जीव उत्पन्न होते रहते हैं। अतः पानी छानना चाहिए।
7. **हैंडपंप की जिवानी कहाँ डालना चाहिए ?**
   हैंडपंप में जिवानी तो जा नहीं सकती। घर में टंकी, हौज आदि में जल हो तो उसमें डाल सकते हैं। जब तक उसमें जल रहेगा, तब तक जीव सुरक्षित रहेंगे। यह विधि ठीक नहीं है फिर भी जितनी रक्षा हो सके उतनी करें, जिससे पानी छानने के संस्कार बने रहेंगे।
8. **छने जल की मर्यादा कितनी है ?**
   एक मुहूर्त अर्थात् 48 मिनट। इसके बाद उसमें पुनः त्रस जीवों की उत्पत्ति होने लगती है। अतः पुनः छानना चाहिए।

9. **छने जल को लौंग, सौंफ आदि से प्रासुक किया जाता है तो उसकी मर्यादा कितनी है ?**
छने जल को लौंग, सौंफ आदि से प्रासुक किया जाता है तो उसकी मर्यादा छः घंटे हो जाती है, किन्तु छः घंटे के बाद वह अमर्यादित हो जाता है। अर्थात् उसमें त्रस जीवों की उत्पत्ति प्रारम्भ हो जाती है।

10. **उबले (Boiled) जल की मर्यादा कितनी है ?**
24 घंटे। इसके बाद वह अमर्यादित हो जाता है। इसे दुबारा गर्म भी नहीं करना चाहिए।

11. **नल में कपड़े की थैली दिन भर लगी रहती है, क्या यह उचित है ?**
नहीं। थैली नल में लगी-लगी ही सूख जाती है तो उसमें रहने वाले जीव मर जाते हैं।

12. **वर्षा का जल क्या शुद्ध है ?**
वर्षा का जल अन्तर्मुहूर्त तक तो शुद्ध है, उसमें जीव नहीं रहते हैं। अन्तर्मुहूर्त के बाद उसमें जीव उत्पन्न हो जाते हैं।

13. **जैनधर्म के अलावा और कहीं भी पानी छानने के बारे में कहा है ?**
हाँ। मनुस्मृति में लिखा है -अपनी दृष्टि से धरती को अच्छी तरह देखकर पैर रखे तथा जल को वस्त्र से छानकर पीना चाहिए। यथा- **दृष्टि पूतं न्यसेत् पादं, वस्त्र पूतं जलम् पिबेत्।** (6/46)

14. **पानी छानने के बारे में आज विज्ञान क्या कहता है ?**
पानी को छानकर फिर उबालकर (Boiled)ही पीना चाहिए।

15. **छना पानी पीने से क्या लाभ हैं ?**
छना पानी पीने से मुख्य लाभ हैं -1. अहिंसा धर्म का पालन होता है। 2. अनेक प्रकार की बीमारियों से स्वतः बच जाते हैं।

16. **गुरुवर आचार्य विद्यासागर जी महाराज के शब्दों में अनछना जल पीने से क्या होता है ?**
जिस प्रकार स्टोव में बिना छना तेल डालते हैं तो वह भभकता है, जिससे उसमें पिन करना पड़ती है। उसी प्रकार पेट में बिना छना जल डालते हैं तो उसमें पिन करना पड़ती है अर्थात् इंजेक्शन लगवाना पड़ता है, क्योंकि बीमार पड़ जाते हैं।

17. **भगवान् महावीर जैनी किसे कह गए ?**
महावीर कह गए सभी से जैनी वह कहलाएगा।
दिन में भोजन, छान के पानी, नित्य जिनालय जाएगा।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. मिनरल वाटर का पानी छना हुआ रहता है।
2. छने पानी में एकेन्द्रिय जीव हैं।
3. जैनधर्म के अनुसार एक बूँद पानी में 36,450 जीव हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. नारियल का पानी जलकायिक है, कि नहीं ? (चिन्तन कीजिए)
2. ऐसा दृष्टान्त खोजिए एक व्यक्ति जज के सामने पानी छानकर पी रहा था, इससे वह केस जीत गया था ? (क.)
3. ऐसे नगर का नाम खोजें जिस स्थान पर गुरुवर आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज ने एक बालक को सही विधि से जल छानते हुए देखा था ? (तालवेहट, उ.प्र.)

अध्याय 35
देवपूजन

जो वीतराग सर्वज्ञ और हितोपदेशी होते हैं, उन्हें आप्त कहते हैं, आप्त को देव भी कहते हैं। ऐसे सच्चे देव की श्रावक पूजन करता है। अतः इस अध्याय में देवपूजन विधि का वर्णन है।

1. पूजन का शाब्दिक अर्थ क्या है ?

'पू' धातु से पूजा शब्द बना है। पू का अर्थ अर्चना करना है। पञ्चपरमेष्ठियों के गुणों का गुणानुवाद करना पूजा कहलाती है।

2. पूजा के कितने भेद हैं ?

पूजा के दो भेद हैं-

1. **द्रव्य पूजा** - जल, चंदन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप, फल और अर्घ चढ़ाकर भगवान् का गुणानुवाद करना द्रव्य पूजा है।
2. **भाव पूजा** - अष्ट द्रव्य के बिना परम भक्ति के साथ जिनेन्द्र भगवान् के अनन्त चतुष्टय आदि गुणों का कीर्तन करना भाव पूजा है।

3. दर्शन, पूजन, अभिषेक आदि क्यों करते हैं ?

तत्त्वार्थ सूत्र के मङ्गलाचरण के अन्तिम पद में कहा है ''वन्दे तद् गुणलब्धये'' हे भगवान्! जैसे गुण आप में हैं, वैसे गुणों की प्राप्ति मुझे भी हो। इससे आपके दर्शन, पूजन, अभिषेक आदि करते हैं।

4. द्रव्य पूजा और भाव पूजा के अधिकारी कौन हैं ?

द्रव्य पूजा एवं भाव पूजा दोनों का अधिकारी गृहस्थ श्रावक है एवं भाव पूजा के अधिकारी मात्र श्रमण (आचार्य, उपाध्याय और साधु) आर्यिका, एलक, क्षुल्लक एवं क्षुल्लिका हैं।

5. पूजन के और कितने भेद हैं ?

पूजा के पाँच भेद हैं-

1. **नित्यमह पूजा** - प्रतिदिन शक्ति के अनुसार अपने घर से अष्ट द्रव्य ले जाकर जिनालय में जिनेन्द्रदेव की पूजा करना, चैत्य और चैत्यालय बनवाकर उनकी पूजा के लिए जमीन, जायदाद देना तथा मुनियों की पूजा करना नित्यमह पूजा है।
2. **चतुर्मुख पूजा** -मुकुटबद्ध राजाओं के द्वारा जो जिनपूजा की जाती है उसे चतुर्मुख पूजा कहते हैं, क्योंकि चतुर्मुख बिम्ब विराजमान करके चारों ही दिशा में पूजा की जाती है। बड़ी होने से इसे महापूजा भी कहते हैं। ये सब जीवों के कल्याण के लिए की जाती है, इसलिए इसे सर्वतोभद्र भी कहते हैं।
3. **कल्पवृक्ष पूजा** -याचकों को उनकी इच्छानुसार दान देने के पश्चात् चक्रवर्ती अर्हन्त भगवान् की जो पूजन करता है, उसे कल्पवृक्ष पूजा कहते हैं।
4. **अष्टाह्निका पूजा** -अष्टाह्निका पर्व में जो जिनपूजा की जाती है, वह अष्टाह्निका पूजा है।
5. **इन्द्रध्वज पूजा** -इन्द्रादिक के द्वारा जो जिनपूजा की जाती है, वह इन्द्रध्वज पूजा है।

(का.अ.टी., 391)

6. पूजा के पर्यायवाची नाम कौन-कौन से हैं ?

याग, यज्ञ, क्रतु, सपर्या, इज्या, अध्वर, मख और मह। ये सब पूजा के पर्यायवाची नाम हैं।

7. पूजा के कितने अङ्ग हैं ?

पूजा के छः अङ्ग हैं-अभिषेक, आह्वान, स्थापना, सन्निधिकरण, पूजन और विसर्जन।

8. अभिषेक किसे कहते हैं ?

''अभि मुख्यरूपेण सिंचयति इति अभिषेकः''। सम्पूर्ण प्रतिमा जल से सिञ्चित हो। इस प्रकार प्रासुक जल की धारा जिन प्रतिमा के ऊपर से करना अभिषेक है।

9. अभिषेक कितने प्रकार का होता है ?

अभिषेक चार प्रकार का होता है -

1. **जन्माभिषेक** - सौधर्म इन्द्र तीर्थङ्कर बालक को पाण्डुक शिला पर ले जाकर करता है।
2. **राज्याभिषेक** -जो तीर्थङ्कर राजकुमार को राज्यतिलक के समय किया जाता है।
3. **दीक्षाभिषेक** -यह तीर्थङ्कर को वैराग्य होने पर दीक्षा लेने के पूर्व किया जाता है।
4. **चतुर्थाभिषेक** - जिनबिम्ब प्रतिष्ठा में ज्ञान कल्याणक के पश्चात् किया जाता है, इस चतुर्थाभिषेक को ही जिनप्रतिमा अभिषेक कहते हैं। जो पूजन से पूर्व में किया जाता है।

   विशेष :- ये चारों अभिषेक मनुष्य गति की अपेक्षा से हैं।

10. जिन प्रतिमा अभिषेक कब से चल रहा है ?

जिन प्रतिमा अभिषेक अनादिकाल से चल रहा है, क्योंकि तीर्थङ्करों के पञ्चकल्याणक एवं अकृत्रिम चैत्यालय अनादिनिधन हैं। अनादिकाल से चतुर्निकाय के देव अष्टाह्निका पर्व में नंदीश्वरद्वीप जाकर अभिषेक एवं पूजन करते हैं। इस प्रकार अभिषेक की परम्परा अनादिनिधन है।

आचार्य श्री पूज्यपाद स्वामी नंदीश्वरभक्ति में लिखते हैं -

भेदेन वर्णना का सौधर्मः स्नपनकर्तृतामापन्नः।
परिचारकभावमिताः शेषेन्द्रारुन्द्रचन्द्र निर्मलयशसः॥ 15॥

अर्थ :- उस पूजा में सौधर्म इन्द्र प्रमुख रहता है, वही जिन प्रतिमाओं का अभिषेक करता है। शेष इन्द्र सौधर्म इन्द्र के द्वारा बताए गए कार्य करते हैं।

11. अभिषेक में वैज्ञानिक कारण क्या हैं ?

प्रत्येक धातु की अलग-अलग चालकता होती है। अतः जब धातु की प्रतिमा पर जल की धारा छोड़ते हैं तब धातु के सम्पर्क से जल का आयनीकरण होता है, उस आयनीकरण से युक्त जल अर्थात् गन्धोदक को उत्तमाङ्ग में लगाने से शरीर में स्थित हीमोग्लोबिन में वृद्धि करते हैं।

12. अभिषेक का फल बताइए ?

1. मैनासुंदरी ने गंधोदक से अपने पति श्रीपाल सहित 700 कोढ़ियों का कोढ़ दूर किया था।
2. जो मनुष्य जिनेन्द्रदेव का अभिषेक क्षीरसागर के जल से करता है, वह स्वर्ग विमान में उत्पन्न होता है।
3. जो भाव पूर्वक जिनेन्द्र भगवान् का अभिषेक करते हैं, वे मोक्ष के परम सुख को प्राप्त करते हैं।
4. जब विशल्या नामक कन्या के स्नान के जल से लक्ष्मण को लगी शक्ति दूर हो सकती है तब क्या जिनेन्द्र भगवान् के अभिषेक के जल से प्राप्त गंधोदक से अष्टकर्मों की शक्ति दूर नहीं हो सकती ? अवश्य ही होगी।

13. गंधोदक वंदनीय क्यों है ?

जिनबिम्ब प्रतिष्ठा की विधि में, पञ्चकल्याणक के माध्यम से, तप कल्याणक के दिन, अङ्गन्यास एवं ज्ञान कल्याणक के दिन बीजाक्षरों का आरोपण एवं मन्त्रन्यास विधि में प्रतिमा में मन्त्रों का आरोपण दिगम्बर मुनि के द्वारा किया जाता है। जलाभिषेक की धारा से जो जल प्रतिमा पर गिरता है, उन मन्त्रों एवं अभिषेक के समय उच्चारित मन्त्रों का प्रभाव जल में आ जाता है, इससे वह वंदनीय हो जाता है। (पु.)

14. आह्वान, स्थापना, सन्निधिकरण क्या है एवं किस प्रकार किया जाता है ?

आह्वान-भगवान् के स्वरूप को दृष्टि के समक्ष लाने का प्रयास करना आह्वान है।

स्थापना-उनके स्वरूप को हृदय में विराजमान करना स्थापना है।

सन्निधिकरण-हृदय में विराजे भगवान् के स्वरूप के साथ एकाकार होना सन्निधिकरण है।

सीधे दोनों हाथों को सही मिलाएं और अनामिका अङ्गुली के मूल भाग में अंगूठा रखकर आह्वान किया जाता है, उन्हीं हाथों को पलट लेना स्थापना है एवं अंगूठा ऊपर रखकर मुट्ठी बांध लें और दोनों अंगूठों को हृदय पर लगाना इसके बाद ठोना पर पुष्प क्षेपण करना चाहिए। आह्वान, स्थापना के बाद पुष्प क्षेपण नहीं करना चाहिए। पुष्पों की संख्या निश्चित नहीं है, जितने चाहें, बिना गिने क्षेपण कर सकते हैं।

15. ठोना की आवश्यकता क्यों है ?

1. पूजा का संकल्प किया है, उसको पूर्ण करने के लिए जब तक पूजा पूर्ण नहीं होगी, तब तक नहीं उठेंगे अर्थात् ठोना पूजा के संकल्प को याद दिलाता रहता है।
2. पावर हाउस से करेंट डायरेक्ट घर में नहीं आता है, ट्रांसफार्मर से आता है। उच्च शक्ति से निम्न शक्ति में परिवर्तित होकर आता है। ऐसे ही भगवान् से सम्बन्ध जोड़ना है तब ठोना को माध्यम बनाया जाता है। ठोना याद दिलाने के लिए है कि हमने भगवान् से सम्बन्ध जोड़ा है।

16. ठोना में क्या बनाना चाहिए ?

ठोना में स्वस्तिक या अष्ट पांखुड़ी वाला कमल बनाना चाहिए।

17. पूजन में अष्ट द्रव्य क्यों चढ़ाते हैं एवं वह हमें क्या संदेश देते हैं ?

1. **जल** - जल बाहरी गंदगी को दूर करने वाला है किन्तु आपके गुण रूपी जल मेरे राग-द्वेष रूपी मल को दूर करने वाले हैं। आत्मा में लगे ज्ञानावरणादि कर्म की रज को धोने के लिए चढ़ाया जाता है। जल हमें यह संदेश देता है कि हम उसकी तरह सभी के साथ घुल -मिलकर जीना सीखें एवं जल की तरह तरल एवं निर्मल होना सीखें।
2. **चंदन** - इस चंदन से तो तात्कालिक शांति होती है किन्तु आपकी अमृत वाणी शारीरिक और मानसिक दाह को सदा-सदा के लिए नष्ट कर देती है। मिलावट के इस युग में आज चंदन के स्थान पर हल्दी चल रही है, जो गर्म होती है, इससे संसार रूपी ताप का नाश नहीं हो रहा है अतः चंदन के स्थान पर हल्दी नहीं चढ़ाना चाहिए।

चंदन हमें यह संदेश देता है कि उसकी तरह सभी के प्रति शीतलता अपनाएं एवं चंदन के वृक्ष को कोई काटे तो वह सुगंध ही देता है। वैसे हम भी हो जाएँ। कोई मुझे मारे तो उसे सुगंध के समान मीठे वचन दे सकें।

3. **अक्षत** - हे भगवान् मुझे यह क्षत-विक्षत पद नहीं चाहिए मुझे तो आप जैसा शाश्वत पद प्राप्त हो जाए जिससे मुझे चौरासी लाख योनियों में न भटकना पड़े।
   अक्षत (चावल) यह संदेश देता है कि धान का छिलका हटाए बिना अक्षत प्राप्त नहीं होता है उसी प्रकार बाहरी परिग्रह छोड़े बिना हमें आत्मतत्त्व की प्राप्ति नहीं हो सकती है।
4. **पुष्प** -हे भगवान् ! इस काम दाह से सारा संसार पीड़ित है किन्तु आपने ऐसे काम रूपी विजेता को भी जीत लिया है इसलिए मैं भी उस काम भाव पर विजय प्राप्त करने के लिए आपके चरणों में पुष्प चढ़ाता हूँ, आप अवश्य ही मेरी भावना साकार करें।
   पुष्प यह संदेश देता है कि उसका जीवन दो दिन का है फिर उसे मुरझा जाना है। टूट कर गिर जाना है। हमारा जीवन भी दो दिन का है फिर यह देह मुरझाकर गिर जाएगी। यदि दो दिन के जीवन को शरीरगत क्षणिक कामवासनाओं में चला जाने देंगे तो मुरझाने और टूटकर गिर जाने के अलावा हमारे हाथ में कुछ भी नहीं रहेगा। इसलिए स्पर्श, रस, गंध, वर्ण आदि की सभी वासनाओं से मुक्त होने का प्रयास करना चाहिए।
5. **नैवेद्य**-मैंने इस क्षुधारोग का नाश करने के लिए दिन-रात भक्ष्य-अभक्ष्य पदार्थों का सेवन किया। फिर भी इस तन की भूख शांत नहीं हुई। यह तो अग्नि में घी डालने के समान दिनों-दिन बढ़ती जाती है किन्तु ऐसे क्षुधा रोग को आपने नष्ट कर दिया है। ऐसी शक्ति मुझे भी प्राप्त हो, जिससे मैं भी हमेशा के लिए क्षुधा रोग नष्ट कर सकूँ।
   नैवेद्य यह संदेश देता है कि मैं स्वयं नष्ट होकर दूसरों को जीवन देता हूँ। हम इतना कर लें कि दूसरे प्राणी भी जीवन जी सकें। हम उनके लिए बाधक न बनें।
6. **दीप** -यह जड़ दीपक तो बाह्य जगत् के अंधकार को नष्ट करता है, इसमें तो बार-बार तेल-बत्ती की आवश्यकता होती है और दिया तले अंधेरा ही रहता है। लेकिन आपका केवलज्ञान रूपी दीपक स्व-पर प्रकाशी, तेल और बत्ती से रहित, अखण्ड शाश्वत प्रकाशवान है। मेरे घट में भी केवलज्ञान की ज्योति जल जाए इसलिए मैं यह नश्वर दीप चढ़ा रहा हूँ।
   दीप यह संदेश देता है कि मैं जलकर भी दुनिया को प्रकाश देता हूँ तो हम भी यह शिक्षा लें कि कष्ट सहन कर दूसरों को सेवा प्रदान करें।
7. **धूप**-यह धूप तो बाह्य जगत् के वातावरण को स्वच्छ करती है। परन्तु प्रभो आपने तो अष्ट कर्मों की धूप को ही नष्ट कर दिया है। मेरे भी अष्ट कर्म नष्ट हो जाएं मुझे भी वह अष्ट कर्मों से रहित अवस्था प्राप्त हो। इससे धूप चढ़ाता हूँ।
   धूप से संदेश ले सकते हैं कि धूप अपनी सुगंध अमीर-गरीब और छोटे-बड़े का भेद किए बिना सभी के पास समान रूप से पहुँचाती है। ऐसे ही हम अपने जीवन में भेदभाव को छोड़कर सर्वप्रेम, सर्वमैत्री की सुगन्ध फैलाते रहें।

8. **फल** – हे प्रभु! इस संसार के सारे फल तो नश्वर हैं, अस्थिर हैं, छूट जाने वाले हैं। इन फलों को खाने से तात्कालिक आनंद आने के उपरान्त दुःख ही हाथ लगता है। मुझे शाश्वत मोक्ष रूपी फल प्राप्त हो जाए इसलिए आपके चरणों में फल चढ़ाता हूँ।

फल यह संदेश देता है कि सांसारिक फल की आकांक्षाएँ व्यर्थ हैं, क्योंकि वे तो कर्माश्रित हैं। अच्छे का अच्छा, बुरे का बुरा फल मिलता है। ध्यान रहे फल कभी भी फल नहीं चाहता है, वह कर्तव्य करता है। हम भी कोई कार्य करें तो कर्त्तव्य समझकर करें, फल की अपेक्षा न करें।

अर्घ – उस अनर्घ पद के सामने इस अर्घ का क्या मूल्य है, फिर भी भक्ति वशात् मैं उस अनर्घ पद को प्राप्त करने के लिए यह अर्घ चढ़ा रहा हूँ। अर्घ हमें एकता का संदेश देता है, उसमें आठों द्रव्य एक हैं हम सब भी एक हो जाएँ तो बड़े-से-बड़ा कार्य भी शीघ्र हो जाता है।

जयमाल –पञ्च परमेष्ठी, नवदेवताओं की अष्ट द्रव्य से पूजा के बाद विशेष भक्ति व श्रद्धा युक्त हो गुणों का स्मरण करना एवं गुणानुवाद करना, जयमाल है।

18. अष्ट द्रव्य हमें कैसे चढ़ाना चाहिए ?

जन्म, जरा, मृत्यु का नाश करने के लिए जल की तीन धारा छोड़ना चाहिए। चंदन चढ़ाते समय एक धारा छोड़ना चाहिए। अक्षत दोनों मुट्ठी बाँधकर अंगूठा अंदर रखकर चढ़ाना चाहिए। पुष्प दोनों हाथों की अंजुलि मिलाकर नीचे गिराते हुए छोड़ना चाहिए। नैवेद्य प्लेट में रखकर चढ़ाना चाहिए। दीप प्लेट में रखकर चढ़ाना चाहिए। धूप मध्यमा, अनामिका और अंगुष्ठ मिलाकर धूप घट में ही छोड़ना चाहिए। फल प्लेट में रखकर चढ़ाना चाहिए। अर्घ प्लेट में रखकर दोनों हाथ लगाकर चढ़ाना चाहिए।

जल

चंदन

अक्षत

पुष्प

नैवेद्य

दीप

धूप

फल

19. द्रव्य चढ़ाने वाली थाली में क्या बनाना चाहिए ?

थाली में ऊपर अर्ध चंद्राकार बिन्दु सहित उसके नीचे तीन बिन्दु तथा उसके नीचे स्वस्तिक बनाना चाहिए।

स्वस्तिक में प्रथम नीचे से ऊपर रेखा ऊर्ध्वगति प्राप्ति की भावना से लोक नाड़ी या संसार रेखा मानकर

खीचें। आड़ी रेखा जन्म-मरण की रेखा के रूप में खींचे। चारों मोड़ चार गतियों के प्रतीक हैं। अर्थात् लोक नाड़ी में जन्म मरण करके चारों गतियों में परिभ्रमण कर रहे हैं। चार बिन्दु चारों अनुयोग के प्रतीक हैं, जिससे ज्ञान प्राप्त करके मोक्षमार्ग रत्नत्रय रूप में तीन बिन्दु बनाते हैं। इस रत्नत्रय धारण की भावना के साथ सिद्धशिला की प्राप्ति की भावना से सिद्ध शिला एवं बिन्दु (बिन्दु सिद्ध भगवान् के प्रतीक) बनाते हैं।

20. विसर्जन क्या है ?

विश्वशान्ति की मङ्गल भावना के साथ शान्ति पाठ पढ़कर विसर्जन किया जाता है। विसर्जन का तात्पर्य पूजन के पश्चात् भगवान् का विसर्जन नहीं है। बल्कि पूजन में होने वाली त्रुटि (गलती) के प्रति क्षमायाचना करना है। पूजन समाप्ति पर विसर्जन पाठ पढ़ें-बिन जाने वा जानके --------- क्षमा करहुँ राखहुँ मुझे देहु चरण की सेव, पढ़ना चाहिए। अन्त में निम्न पद पढ़कर ठोने में पुष्प क्षेपण करें। यहाँ पुष्पों की संख्या निश्चित नहीं है, जितना चढ़ाना हो, चढ़ा सकते हैं।

श्रद्धा से आराध्य पद, पूजे शक्ति प्रमाण।
पूजा विसर्जन मैं करूँ, होय सतत कल्याण॥

नोट - संकल्पों के पुष्पों को निर्माल्य की थाली में क्षेपण कर दें, उन्हें अग्नि में नहीं जलाना चाहिए।

21. रात्रि में पूजन करना चाहिए या नहीं ?

जिस प्रकार रात्रिभोजन का निषेध है, उसी प्रकार रात्रि पूजन का भी निषेध है।

22. क्या देव रात्रि में पूजन करते हैं ?

स्वर्गों में दिन-रात का भेद नहीं है, किन्तु वे ही देव, जहाँ दिन-रात का भेद है, वहाँ पर रात्रि में जाकर पूजन नहीं करते हैं। दो सशक्त दृष्टान्त धवला पुस्तक 9 के हैं, जो इस प्रकार हैं।

1. चौदह पूर्व का ज्ञान होते ही उन मुनिराज की पूजन एवं श्रुत की पूजन करने देव आते हैं। चौदह पूर्व का ज्ञान संध्या के समय हो गया और मुनिराज रात्रि में कायोत्सर्ग में स्थित हो गए। किन्तु उस समय देव पूजन करने नहीं आए। दूसरे दिन प्रभात के समय में भवनवासी, वानव्यन्तर, ज्योतिषी और कल्पवासी देवों द्वारा शंख, काहला और तूर्य के शब्द से व्याप्त महापूजा की गई। (ध.पु., 9/13/71)
2. तीर्थङ्कर महावीर का निर्वाण कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी की पश्चिम रात्रि में हुआ था। किन्तु देव निर्वाण महोत्सव मनाने रात्रि में नहीं आए। सौधर्म इन्द्र ने अमावस्या के प्रातः आकर परिनिर्वाण पूजा की थी। (ध.पु., 9/44/125)

   जब भरत, ऐरावत और विदेहक्षेत्र में आकर देव भी रात्रि में पूजन नहीं करते तब श्रावक कैसे करेगा? अतः रात्रि में पूजन नहीं करना चाहिए।

   इसके अलावा अनेक ग्रन्थों में रात्रिपूजन का निषेध किया गया है।

1. प्रश्नोत्तर श्रावकाचार के श्लोक 210 में कहा है-

त्रिकालं-जिननाथान् ये, पूजयंति नरोत्तमाः।
लोकत्रयभवं शर्म, भुक्त्वा यांति परं पदम्॥

अर्थ—जो उत्तम पुरुष प्रातः, दोपहर एवं सायंकाल के समय भगवान् जिनेन्द्र देव की पूजा करते हैं।

वे तीनों लोकों में उत्पन्न होने वाले समस्त भोगों को भोगकर मोक्षपद में जा विराजमान होते हैं।

2. गुणभूषण श्रावकाचार के श्लोक 65 में इस प्रकार कहा है कि –

प्रातः पुनः शुचीभूय निर्माप्याप्ता आदि पूजनम्।
सोत्साहस्तदहोरात्रं सद्ध्यानाध्ययनैर्नयेत्॥

अर्थ – पुनः प्रातःकाल पवित्र होकर देव-शास्त्र-गुरु आदि का पूजन करके उत्साह के साथ उत्तम ध्यान और अध्ययन करते हुए उस दिन और रात्रि को व्यतीत करें।

विशेष-यहाँ प्रातःकाल पूजन करना कहा गया है और रात्रि को ध्यान एवं अध्ययन करने का विधान किया है।

3. धर्मोपदेश पीयूषवर्ष श्रावकाचार के श्लोक 73 में कहा है कि -

रात्रौ स्नान विवर्जनं।

अर्थ – रात्रि में स्नान करने का त्याग करें। क्योंकि स्नान बिना पूजन संभव नहीं है, अतः रात्रि में पूजन का निषेध प्राप्त होता है।

4. लाटी संहिता के 5/186 श्लोक में कहा है-(प्रसंग-तीनों संधि कालों अर्थात् प्रातः, दोपहर तथा सायंकाल भगवान् जिनेन्द्र की पूजा करें परन्तु) आधी रात्रि के समय भगवान् अरिहंत देव की पूजा नहीं करनी चाहिए, क्योंकि रात्रि में पूजा करने से जीवों की हिंसा अवश्य होती है, अतः रात्रि पूजा करने का निषेध है।

23. कितने गति के जीव पूजन करते हैं ?

तीन गति के जीव पूजन करते हैं - मनुष्यगति, देवगति एवं तिर्यञ्चगति।

24. पूजा को वैयावृत्य और अतिथि संविभाग में किस आचार्य ने रखा है ?

पूजा भगवान् की सेवा है, जिसका लक्ष्य आत्मतत्त्व की प्राप्ति है। इसलिए आचार्य श्री समन्तभद्रस्वामी ने पूजा को वैयावृत्य में शामिल किया है। पूजा अतिथि का स्वागत है, इसलिए आचार्य श्री रविषेण स्वामी ने अतिथि संविभाग में रखा है।

25. किस ग्रन्थ में पूजा को सामायिक व्रत व ध्यान कहा है ?

पूजा गहरी तल्लीनता और आत्मोपलब्धि में कारण बनती है। इसलिए उपासकाध्ययन में इसे सामायिक व्रत में रखा है। पूजा ध्यान है, ऐसा भावसंग्रह में आचार्य देवसेनजी ने कहा है। इसलिए इसे पदस्थ ध्यान में शामिल किया है।

26. पूजा के छः प्रकार कौन से हैं बताइए ?

1. **नाम पूजा**-अरिहंतादि का नाम उच्चारण करके विशुद्ध प्रदेश में जो पुष्प क्षेपण किए जाते हैं, वह नाम पूजा है।
2. **स्थापना पूजा**- आकारवान पाषाण आदि में अरिहंत आदि के गुणों का आरोपण करके पूजा करना स्थापना पूजा है।
3. **द्रव्य पूजा**- अरिहंतादि के उद्देश्य से जल, गंध, अक्षत आदि समर्पण करना द्रव्य पूजा है।
4. **क्षेत्र पूजा**- जिनेन्द्र भगवान् के जन्म कल्याणक आदि पवित्र भूमियों में पूर्वोक्त प्रकार से पूजा करना क्षेत्र पूजा है।

5. **काल पूजा**-तीर्थङ्करों के कल्याणकों की तिथियों में भगवान् का अभिषेक, पूजा आदि करना काल पूजा है।
6. **भाव पूजा**-मन से अरिहंतादि के गुणों का चिन्तन करना भाव पूजा है।

27. पूजन के लाभ बताइए ?

आचार्य श्री समन्तभद्र स्वामी ने रत्नकरण्ड श्रावकाचार में कहा है कि पूजन सभी मनोरथों को पूर्ण करने वाली और काम विकार को भस्म करने वाली तथा समस्त दु:ख को दूर करने वाली है।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. तीर्थङ्कर महावीर के तीन अभिषेक हुए थे।
2. ठोना ट्रांसफार्मर का प्रतीक है।
3. चंदन चढ़ाते समय जल की तीन धारा छोड़ना चाहिए।
4. ठोने में स्वस्तिक नहीं बनाना चाहिए।
5. धूप चढ़ाने में तीन अङ्गुलियों का प्रयोग होता है।
6. देव रात्रि में पूजन करते हैं।
7. भगवान् महावीर का जन्म रात्रि में नहीं हुआ था।
8. द्रव्य चढ़ाने की थाली में बने बिन्दु देव-शास्त्र-गुरु के प्रतीक हैं।
9. एक भी गति के जीव पूजन नहीं करते हैं।
10. पूजा के छः अङ्ग होते हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. पूजा में छः आवश्यक किस प्रकार गर्भित हो सकते हैं ? (चिन्तन कीजिए)
2. मंदिर के वस्त्र पहिनकर पूजा करने से क्या हानि हो सकती है ? (चिन्तन कीजिए)
3. पूजन में द्रव्य सामग्री कैसी होनी चाहिए ? (चिन्तन कीजिए)
4. अभिषेक करते समय किन-किन बातों पर ध्यान रखना चाहिए ? (चिन्तन कीजिए)

अध्याय 36

जिनवाणी

तीर्थङ्कर की वाणी को जिनवाणी कहते हैं, इसे कितने भागों में विभक्त किया है, इसमें क्या-क्या विषय हैं। इन सबका वर्णन इन अध्याय में है।

1. जिनवाणी किसे कहते हैं एवं जिनवाणी के अपर नाम कौन-कौन से हैं ?

''जयति इति जिनः'' जिन्होंने इन्द्रिय एवं कषायों को जीता है, उन्हें जिन कहते हैं तथा जिन की वाणी (वचन) को जिनवाणी कहते हैं। अपर नाम-आगम, ग्रन्थ, सिद्धान्त, श्रुतज्ञान, प्रवचन, शास्त्र आदि।

2. सच्चे शास्त्र का स्वरूप क्या है ?

1. आप्त अर्थात् वीतराग, सर्वज्ञ और हितोपदेशी का कहा हुआ हो।
2. वादी-प्रतिवादी के खण्डन से रहित हो।
3. प्रत्यक्ष व अनुमान से विरोध को प्राप्त न हो।
4. तत्त्वों का निरूपण करने वाला हो।
5. प्राणी मात्र का कल्याण करने वाला हो।
6. मिथ्यामार्ग का खण्डन करने वाला हो।
7. अहिंसा का उपदेश देने वाला हो। (र.क.श्रा., 9)

3. शास्त्र सच्चे देव का कहा हुआ ही क्यों होना चाहिए ?

अज्ञान और राग-द्वेष के कारण ही तत्त्वों का मिथ्या कथन होता है। जिन भगवान् अज्ञान और राग-द्वेष से रहित होते हैं। इससे वह जो कुछ भी कहते हैं, सत्य ही कहते हैं। जैसे-आप जङ्गल से गुजर (निकल) रहे थे, रास्ता भटक गए, आपने किसी से पूछा भाई शहर का रास्ता कौन-सा है, उस सज्जन को ज्ञात नहीं है तो वह आपको सही रास्ता नहीं बता सकता है और उस व्यक्ति को आपसे राग है तो कहेगा रास्ता यहाँ से नहीं यहाँ से है और वह आपको अपने नगर ले जाएगा एवं आपसे द्वेष है तो आपको विपरीत रास्ता बता देगा भटकने दो इसे। यदि आपसे राग-द्वेष नहीं है और उसे रास्ते का ज्ञान है, तो कहेगा श्रीमान् जी यह शहर का रास्ता है।

4. जिनागम को कितने भागों में विभक्त किया गया है ?

जिनागम को 4 भागों में विभक्त किया गया है-प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग एवं द्रव्यानुयोग ।

5. प्रथमानुयोग किसे कहते हैं ?

जिसमें तिरेसठ शलाका पुरुषों का वर्णन हो। 169 महापुरुषों का वर्णन, उनके आदर्श जीवन एवं पुण्य-पाप के फल को बताने वाला है। यह बोधि अर्थात् रत्नत्रय, समाधि अर्थात् समाधिमरण का निधान (खजाना) है। इसमें कथाओं के माध्यम से कठिन-से-कठिन विषय को भी सरल बनाया जाता है। इस कारण आबाल-वृद्ध सभी समझ जाते हैं। प्रथम का अर्थ प्रधान भी होता है। अतः पहले रखा है। (र.क.श्रा. 43)

6. प्रथमानुयोग में कौन-कौन से ग्रन्थ आते हैं ?

प्रथमानुयोग के प्रमुख ग्रन्थ इस प्रकार हैं-हरिवंशपुराण, पद्मपुराण, श्रेणिकचरित्र, उत्तरपुराण, महापुराण आदि।

7. करणानुयोग किसे कहते हैं ?

जो लोक-अलोक के विभाग को, कल्पकालों के परिवर्तन को तथा चारों गतियों के जानने में दर्पण के समान है, उसको करणानुयोग कहते हैं। (र.क.श्रा., 44)

8. करणानुयोग के अपर नाम क्या हैं ?

करणानुयोग के अपर नाम दो हैं-गणितानुयोग और लोकानुयोग।

9. करणानुयोग में कौन-कौन से ग्रन्थ आते हैं ?

करणानुयोग के प्रमुख ग्रन्थ इस प्रकार हैं-तिलोयपण्णत्ति, त्रिलोकसार, लोकविभाग, जम्बूदीवपण्णत्ति आदि।

10. चरणानुयोग किसे कहते हैं ?

जिसमें श्रावक व मुनियों के चारित्र की उत्पत्ति एवं वृद्धि कैसे होती है, किन-किन कारणों से होती है एवं चारित्र की रक्षा किन-किन कारणों से होती है एवं कौन-कौन से व्रतों की भावनाएँ कौन-कौन सी हैं, उसका विस्तार से वर्णन मिलता है। (र.क.श्रा., 45)

11. चरणानुयोग में कौन-कौन से ग्रंथ आते हैं ?

चरणानुयोग के प्रमुख ग्रन्थ इस प्रकार हैं-मूलाचार, मूलाचारप्रदीप, अनगारधर्मामृत, सागारधर्मामृत, रत्नकरण्ड श्रावकाचार आदि।

12. द्रव्यानुयोग किसे कहते हैं ?

जिसमें जीव-अजीव तत्त्वों का, पुण्य-पाप, बंध-मोक्ष का वर्णन हो एवं जिसमें मात्र आत्मा-आत्मा का कथन हो वह द्रव्यानुयोग है। प्रायः विद्वान् कर्म सिद्धान्त को करणानुयोग का विषय मानते हैं, जबकि वह द्रव्यानुयोग का विषय है। द्रव्यानुयोग को निम्न प्रकार विभक्त कर सकते हैं। (र.क.श्रा., 46)

द्रव्यानुयोग

आगम		**अध्यात्म**	
सिद्धान्त	**न्याय**	**भावना**	**ध्यान**
षट्खण्डागम, कषाय-पाहुड, कर्मकाण्ड, जीवकाण्ड, लब्धिसार, क्षपणासार आदि।	अष्टसहस्री प्रमेयकमलमार्तण्ड परीक्षामुख,आलाप-पद्धति,न्यायदीपिका आदि।	समयसार प्रवचनसार अष्टपाहुड परमात्म प्रकाश नियमसार आदि।	ज्ञानार्णव तत्त्वानुशासन आदि।

13. क्या जिनवाणी को माँ भी कहा है ?

हाँ। जिस प्रकार माँ हमेशा-हमेशा बेटे का हित चाहती है, उसे कष्टों से बचाकर सुख प्रदान करती है। उसी प्रकार जिनवाणी माँ भी अपने बेटों अर्थात् मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविकाओं को दुःखों से

बचाकर सुख प्रदान करती है, किन्तु कब, जब हम उस माँ की आज्ञा का पालन करें।

14. क्या जिनवाणी को औषध भी कहा है ?

हाँ। जैसे औषध के सेवन से रोग नष्ट हो जाते हैं। वैसे ही जिनवाणी के सेवन से अर्थात् जैसा जिनवाणी में कहा है, वैसा आचरण करने से, जन्म, जरा, मृत्यु जो बड़े भयानक रोग हैं, वे शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

15. जिनवाणी स्तुति लिखिए ?

जिनवाणी मोक्ष नसैनी है, जिनवाणी ॥ टेक ॥
जीव कर्म के जुदा करन को, ये ही पैनी छैनी है ॥ जिनवाणी ॥ 1 ॥
जो जिनवाणी नित अभ्यासे, वो ही सच्चा जैनी है ॥ जिनवाणी ॥ 2 ॥
जो जिनवाणी उर न धरत है, सैनी हो के असैनी है ॥ जिनवाणी ॥ 3 ॥
पढ़ो लिखो ध्यावो जिनवाणी, यदि सुख शांति लेनी है ॥ जिनवाणी ॥ 4 ॥

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. अरिहंत परमेष्ठी की वाणी को जिनवाणी कहते हैं।
2. प्रवचन जिनवाणी का अपर नाम नहीं है।
3. असत्य कथन राग-द्वेष के कारण भी होता है।
4. जिसमें आचार्य श्री शान्तिसागरजी का वर्णन हो, उसे प्रथमानुयोग कहते हैं।
5. करणानुयोग को गणितानुयोग भी कहते हैं।
6. चरणानुयोग में पार्श्वनाथपुराण आता है।
7. कर्मकाण्ड एवं जीवकाण्ड द्रव्यानुयोग के ग्रन्थ हैं।
8. जिनवाणी मोक्ष जाने की नसैनी है।

अन्यत्र खोजिए -

1. आचार्य श्री धरसेनस्वामी ने अपना श्रुतज्ञान जिन दो शिष्यों को दिया था, उनके नाम बताइए ? (ध.पु., 1, प्रस्तावना पृ. 15-17)
2. आचार्य श्री धरसेनस्वामी ने आगन्तुक शिष्यों की परीक्षा के लिए क्या किया था ? (ध.पु., 1/71)
3. षट्खण्डागम के नाम बताइए ? (ध.पु., 1/73)
4. जयउसुयदेवदा किसने कहा था ? (ध.पु., 1/69)

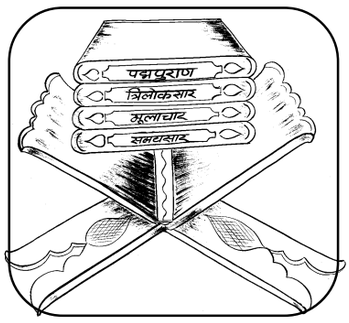

अध्याय 37

स्वाध्याय

स्वाध्याय को परम तप कहा है, इसके कितने भेद हैं तथा स्वाध्याय करने से क्या–क्या लाभ हैं। इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. स्वाध्याय किसे कहते हैं ?

सत् शास्त्र का पढ़ना, मनन करना या उपदेश देना आदि स्वाध्याय माना जाता है, इसे परम तप कहा है।

2. स्वाध्याय के कितने भेद हैं ?

स्वाध्याय के दो भेद हैं–निश्चय स्वाध्याय और व्यवहार स्वाध्याय।

3. निश्चय स्वाध्याय किसे कहते हैं ?

ज्ञानभावनालस्यत्यागः स्वाध्यायः–आलस्य त्यागकर ज्ञान की आराधना करना निश्चय स्वाध्याय है।

4. व्यवहार स्वाध्याय किसे कहते हैं ?

1. अङ्ग प्रविष्ट और अङ्ग बाह्य आगम की वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षा, आम्नाय और उपदेश करना व्यवहार स्वाध्याय है।
2. तत्त्वज्ञान को पढ़ना, स्मरण करना आदि व्यवहार स्वाध्याय है।

5. व्यवहार स्वाध्याय के कितने भेद हैं ?

स्वाध्याय के पाँच भेद हैं–

1. **वाचना** – निर्दोष ग्रन्थ (अक्षर) और अर्थ दोनों को प्रदान करना वाचना स्वाध्याय है।
2. **पृच्छना** – संशय को दूर करने के लिए अथवा जाने हुए पदार्थ को दृढ़ करने के लिए पूछना सो पृच्छना है। परीक्षा (पढ़ाने वाले की) के लिए या अपना ज्ञान बताने के लिए पूछना, पृच्छना नहीं है। वह तो पढ़ाने वाले का उपहास करना या अपने को ज्ञानी बतलाना है।
3. **अनुप्रेक्षा** –जाने हुए पदार्थ का बारम्बार चिंतन करना सो अनुप्रेक्षा है। जैसा कि किसी ने कहा है–

   बाटी जली क्यों, पान सड़ा क्यों ?
   घोड़ा अड़ा क्यों, विद्या भूली क्यों ?

   सबका एक ही उत्तर है, पलटा नहीं था।
4. **आम्नाय** –शुद्ध उच्चारण पूर्वक पाठ को पुनः–पुनः दोहराना आम्नाय स्वाध्याय है और पाठ को याद करना भी आम्नाय है। भक्तामर, णमोकार मंत्र आदि के पाठ इसी में गर्भित हैं।
5. **धर्मोपदेश**–आत्मकल्याण के लिए, मिथ्यामार्ग व संदेह दूर करने के लिए, पदार्थ का स्वरूप, श्रोताओं में रत्नत्रय की प्राप्ति के लिए धर्म का उपदेश देना धर्मोपदेश है। (त.सू., 9/25)

6. कौन–कौन सी गति के जीव स्वाध्याय करते हैं ?

मात्र दो गति के जीव स्वाध्याय करते हैं–मनुष्य और देव।

7. कौन–कौन सी गति के जीव धर्मोपदेश देते हैं ?

मनुष्य और देवगति के जीव धर्मोपदेश देते हैं।

8. कौन-कौन सी गति के जीव धर्मोपदेश सुनते हैं ?

चारों गतियों के जीव धर्मोपदेश सुनते हैं।

9. क्या नारकी भी धर्मोपदेश सुनते हैं ?

हाँ, सोलहवें स्वर्ग तक के देव तीसरे नरक तक धर्मोपदेश देने जा सकते हैं। जैसे-सीता का जीव लक्ष्मण के जीव को सम्बोधने के लिए तीसरे नरक गया था। (प्रथमानुयोग की अपेक्षा)

10. ज्ञान के कितने अङ्ग हैं परिभाषा बताइए ?

ज्ञान के 8अङ्ग हैं-

1. **व्यञ्जनाचार** - व्याकरण के अनुसार अक्षर, पद, मात्रा का शुद्ध पढ़ना, पढ़ाना व्यञ्जनाचार है।
2. **अर्थाचार** - सही-सही अर्थ समझकर पढ़ना-पढ़ाना अर्थाचार है।
3. **उभयाचार** - शुद्ध शब्द और अर्थ सहित आगम को पढ़ना-पढ़ाना उभयाचार है।
4. **कालाचार** - शास्त्र पढ़ने योग्य काल में ही पढ़ना-पढ़ाना। अयोग्य काल में सूत्र ग्रन्थ (सिद्धान्त ग्रन्थ) पढ़ने का निषेध है। जैसे-नंदीश्वर श्रेष्ठ महिम दिवसों में, अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या,पूर्णिमा तीनों संध्याकालों में, अपर रात्रि में, सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण, उल्कापात आदि में गणधरदेवों द्वारा और ग्यारह अङ्ग, 10 पूर्वधारियों के द्वारा रचित शास्त्र, श्रुतकेवली के द्वारा रचित शास्त्र पढ़ना-पढ़ाना वर्जित है। भावना ग्रन्थ, प्रथमानुयोग, चरणानुयोग, करणानुयोग पढ़ने का निषेध नहीं है।
5. **विनयाचार** -द्रव्य शुद्धि अर्थात् वस्त्र शुद्धि, काय शुद्धि एवं क्षेत्र शुद्धि के साथ विनयपूर्वक पढ़ना-पढ़ाना विनयाचार है।
6. **उपधानाचार** - धारणा सहित आराधना करना, स्मरण सहित स्वाध्याय करना भूलना नहीं अथवा नियम पूर्वक अर्थात् कुछ त्यागकर स्वाध्याय करना।
7. **बहुमानाचार**-ज्ञान का, ग्रन्थ का और पढ़ाने वालों का आदर करना, आगम को उच्चासन पर रख कर मङ्गलाचरण[1] पूर्वक पढ़ना, समाप्ति पर भी भक्ति (जिनवाणी स्तुति) करना आदि।
8. **अनिह्नवाचार**-जिस शास्त्र से, या जिन गुरु से आगम का ज्ञान हुआ है, उनके नाम को नहीं छुपाना। जैसे -किसी अल्प ज्ञानी गुरु से पढ़े तो उनका नाम लेने से हमारा महत्त्व घट जाएगा। इससे विशेष ज्ञानी या प्रसिद्ध गुरु का नाम लेना यह निह्नव है और ऐसा नहीं करना अनिह्नवाचार है। (मू., 269)

11. स्वाध्याय से कौन-कौन से लाभ हैं ?

स्वाध्याय करने से प्रमुख लाभ इस प्रकार हैं-

1. असंख्यात गुणी कर्मों की निर्जरा होती है।
2. ज्ञान एवं स्मरण शक्ति बढ़ती है।
3. सहनशीलता आती है।
4. अज्ञान का नाश होता है।
5. उलझे हुए प्रश्न सुलझ जाते हैं।
6. मन की चंचलता दूर होती है।

---

1. मङ्गलाचरण तीन बार किया जाता है – आदि, मध्य और अन्त में।

7. ज्ञान से चारित्र की प्राप्ति होती है, प्रत्याख्यान नामक 9 वें पूर्व का अध्ययन तीर्थङ्कर के पादमूल में वर्ष पृथक्त्व तक करता है तब उसे परिहार विशुद्धि संयम की प्राप्ति होती है।
8. देवों द्वारा पूजा भी होती है। जब आचार्य श्री धरसेनजी ने मुनि नरवाहनजी और मुनि सुबुद्धिजी को अध्ययन कराया, अध्ययन की समाप्ति पर भूत जाति के देवों ने पूजन की थी और एक महाराज की दंत पंक्ति सीधी की थी। इसके कारण उनका मुनि भूतबलीजी एवं मुनि पुष्पदन्तजी नाम आचार्य श्री धरसेनजी ने रखा था।
9. ज्ञान के कारण ही मुनि माघनन्दिजी का स्थितिकरण हुआ था। अर्थात् वह पुनः मुनि बन गए।
10. तत्त्व चिंतन के लिए नए-नए विषय प्राप्त होते हैं।
11. शास्त्र स्वाध्याय सुनते-सुनते एक अजैन बालक कालान्तर में क्षुल्लक गणेशप्रसाद वर्णी बने थे।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. व्यवहार स्वाध्याय के पाँच भेद हैं।
2. पढ़ाने वाले की परीक्षा लेने के लिए पूछना पृच्छना स्वाध्याय है।
3. लौकिक उपन्यास, पत्रिका पढ़ना वाचना स्वाध्याय है।
4. औदारिक शरीर एवं वैक्रियिक शरीर वाले स्वाध्याय करते हैं।
5. वैक्रियिक शरीर वाले धर्मोपदेश देते हैं।
6. मुनि ने मच्छर को धर्मोपदेश दिया तो मच्छर ने काटना बंद कर दिया।
7. नारकी दूसरे नारकी को धर्मोपदेश दे सकता है।
8. स्वाध्याय से निर्जरा होती है।
9. स्वाध्याय से ज्ञान घटता है।
10. स्वाध्याय करने से स्मरण शक्ति बढ़ती है।
11. ज्ञान से चारित्र की प्राप्ति होती है।
12. अज्ञान के कारण माघनंदिजी का स्थितिकरण हुआ था।

अन्यत्र खोजिए -

1. स्वाध्याय दिन में कितने बार करना चाहिए ? (मू.चा.टी., 99)
2. अकाल में सिद्धान्त ग्रन्थों का स्वाध्याय करने से क्या होता है ? (ध.पु. में उद्धृत 9/257-258)
3. स्वाध्याय करते समय क्या-क्या नहीं करना चाहिए ? (सुगम है)
4. कौन से आचार्य ने अन्तरंग परिग्रह चौदहवें गुणस्थान तक, किस रूप में माना है ?

(पाक्षिक प्रतिक्रमण मुनियों का)

अध्याय 38

श्रावक की ग्यारह प्रतिमाएँ

जिस प्रकार विद्यार्थी एक–एक कक्षा पास करके आगे बढ़ता जाता है। उसी प्रकार श्रावक भी क्रमशः प्रतिमाओं का पालन करके आगे बढ़ता जाता है। इस अध्याय में श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओं का वर्णन है।

1. श्रावक किसे कहते हैं ?

श्रद्धावान, विवेकवान एवं क्रियावान को श्रावक कहते हैं।

2. श्रावक के कितने भेद हैं ?

श्रावक के तीन भेद हैं–पाक्षिक श्रावक, नैष्ठिक श्रावक एवं साधक श्रावक।

1. **पाक्षिक श्रावक** – जो श्रावक के षट् आवश्यक का पालन करता हो, स्थूल रूप से अष्ट मूलगुणधारी हो और सप्तव्यसन का त्यागी हो। ऐसा जिनेन्द्र भगवान् का पक्ष लेने वाला पाक्षिक श्रावक कहलाता है। यह रात्रिभोजन का त्यागी होता है।
2. **नैष्ठिक श्रावक** – दर्शन प्रतिमा आदि ग्यारह प्रतिमाओं वाला श्रावक नैष्ठिक श्रावक कहलाता है।
3. **साधक श्रावक** – (अ) जो समाधिमरण की साधना में लगा है, वह साधक श्रावक कहलाता है। (ब) जो श्रावक आनन्दित होता हुआ जीवन के अंत में अर्थात् मृत्यु के समय शरीर, भोजन और मन, वचन, काय के व्यापार के त्याग से पवित्र ध्यान के द्वारा आत्मा की शुद्धि के लिए साधना करता है, वह साधक श्रावक है। (सा.ध., 1/20)

3. नैष्ठिक श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओं के नाम क्या है ?

दर्शन प्रतिमा, व्रत प्रतिमा, सामायिक प्रतिमा, प्रोषधोपवास प्रतिमा, सचित्त त्याग प्रतिमा, रात्रिभुक्ति त्याग प्रतिमा, ब्रह्मचर्य प्रतिमा, आरम्भ त्याग प्रतिमा, परिग्रह त्याग प्रतिमा, अनुमति त्याग प्रतिमा और उद्दिष्ट त्याग प्रतिमा। (र.क.श्रा., 136)

4. प्रतिमा किसे कहते हैं ?

श्रावक के विकासशील चारित्र का नाम प्रतिमा है।

5. दर्शन प्रतिमा किसे कहते हैं ?

जो सम्यग्दर्शन से शुद्ध है, संसार, शरीर और भोगों से उदास है, पञ्च परमेष्ठियों के चरणों की शरण जिसे प्राप्त हुई है तथा धारण किए हुए अष्ट मूलगुण एवं सप्त व्यसन के त्याग में अतिचार नहीं लगाता है। उसके दर्शन प्रतिमा होती है। यह शल्यों से रहित होता है। मर्यादा का भोजन नियम से प्रारम्भ हो जाता है। प्रतिमाधारी श्रावक सूर्य अस्त के दो घड़ी पहले भोजन कर लेता है एवं सूर्योदय के दो घड़ी बाद से भोजन प्रारम्भ कर सकता है।

6. शल्य किसे कहते हैं एवं कितनी होती हैं ?

जो आत्मा में काँटे की तरह चुभती हैं, दुःख देती हैं, उसे शल्य कहते हैं। शल्य तीन होती हैं–मिथ्या शल्य, माया शल्य और निदान शल्य। (स.सि., 7/18/697)

1. **मिथ्या शल्य**- अतत्वों का श्रद्धान मिथ्या शल्य है।
2. **माया शल्य**- मेरे अपध्यान को कोई नहीं जानता, इस अभिप्राय से बाह्य वेश का आचरण करके लोगों को आकर्षित करते हुए चित्त की मलिनता रखने को माया शल्य कहते हैं।
3. **निदान शल्य**-व्रतों के फलस्वरूप आगामी विषय भोगों की आकांक्षा रखना, निदान शल्य है।

7. व्रत प्रतिमा किसे कहते हैं ?

निरतिचार पूर्वक पाँच अणुव्रतों और सात शीलों का पालन करता है, वह व्रत प्रतिमाधारी श्रावक कहलाता है।

8. अणुव्रत एवं शीलव्रत किसे कहते हैं ?

हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह इन 5 पापों का स्थूल रूप से त्याग करने को अणुव्रत कहते हैं तथा 3 गुणव्रत एवं 4 शिक्षाव्रत का पालन करना शीलव्रत है।

9. 5 अणुव्रत और 7 शीलव्रत के नाम बताइए ?

अहिंसाणुव्रत, सत्याणुव्रत, अचौर्याणुव्रत, ब्रह्मचर्याणुव्रत और परिग्रह परिमाण व्रत तथा 7 शील अर्थात् 3 गुणव्रत और 4 शिक्षाव्रत।

10. अहिंसाणुव्रत किसे कहते हैं ?

जो मन, वचन व काय से संकल्प पूर्वक त्रस जीवों का घात न स्वयं करता है, न दूसरों से कराता है और न करने वाले की अनुमोदना करता है तथा निष्प्रयोजन पञ्चस्थावरों की हिंसा नहीं करता है, उसका अहिंसाणुव्रत कहलाता है। (र.क.श्रा., 53)

11. अतिचार एवं अनाचार किसे कहते हैं ?

व्रतों का एकदेश भङ्ग हो जाना, अतिचार है और व्रतों का सर्वथा भङ्ग हो जाना, अनाचार है।

12. अहिंसाणुव्रत के कितने अतिचार हैं ?

अहिंसाणुव्रत 5 अतिचार हैं -

1. **बंध** - मानव, पशु, पक्षियों को ऐसा बाँधना जिससे वह इच्छानुसार विचरण न कर सकें।
2. **वध**- हन्टर, चाबुक, छड़ी, हाथ-पैर आदि से पीटना। यहाँ वध से आशय प्राणों के वियोग से नहीं है, वह तो अनाचार है।
3. **छेद**- कषाय वश किसी के अङ्ग-उपाङ्गों का छेदन करना। शृंगार के लिए बालिकाओं के नाक-कान भी छेदे जाते हैं, वह इसमें नहीं आते हैं।
4. **अतिभारारोपण** - पशुओं पर शक्ति से ज्यादा भार लादना। नौकरों से ज्यादा काम लेना।
5. **अन्नपान निरोध** - समय पर पशुओं को भोजन नहीं देना। नौकरों को भी समय से भोजन के लिए नहीं जाने देना (स.सि., 7/25/711) एवं महिलाएँ समय से भोजन नहीं बनाती तो यह भी अन्नपान निरोध है।

13. सत्याणुव्रत किसे कहते हैं ?

स्थूल झूठ स्वयं नहीं बोलता और न दूसरों से बुलवाता है तथा ऐसा सत्य भी नहीं बोलता, जिससे कोई विपत्ति में आ जाएँ, उसे सत्याणुव्रत कहते हैं। (र.क.श्रा., 55)

14. स्थूल झूठ किसे कहते हैं ?

जिसे लोक व्यवहार में अच्छा नहीं माना जाता है। जैसे-

1. शपथ लेकर अन्यथा कथन करना।
2. पञ्च या जज के पद पर प्रतिष्ठित होकर झूठ बोलना। जैसे-राजा वसु ने किया था।
3. धर्मोपदेष्टा बनकर अन्यथा उपदेश देना। जैसे-पञ्चमकाल में मुनि नहीं होते और आज एक भी प्रतिमा का पालन नहीं हो सकता।
4. विश्वास देकर झूठ बोलना। जैसे-सत्यघोष ने किया था।

15. सत्याणुव्रत के कितने अतिचार हैं ?

सत्याणुव्रत के पाँच अतिचार हैं-

1. **मिथ्या उपदेश** - झूठा उपदेश देना।
2. **रहोभ्याख्यान** - स्त्री-पुरुष द्वारा एकान्त में किए गए आचरण विशेष का प्रकट कर देना।
3. **कूटलेख क्रिया** - नकली दस्तावेज रखना। कोरे कागज पर साइन करवाना। झूठे लेख लिखना।
4. **न्यासापहार** - किसी की धरोहर का अपहरण करना।
5. **साकार मंत्रभेद** - कोई आपस में चर्चा कर रहे थे, उनकी मुख की आकृति से जानकर, यह क्या बात कर रहे थे, कह देना जिससे उनकी बदनामी हो इसे चुगली भी कह सकते हैं। (स.सि., 7/26/712)

16. अचौर्याणुव्रत किसे कहते हैं ?

सार्वजनिक जल एवं मिट्टी के अलावा दूसरों की रखी हुई, गिरी हुई, भूली हुई अथवा नहीं दी हुई वस्तु को न तो स्वयं ग्रहण करता है। न दूसरों को देता है, वह अचौर्याणुव्रत कहलाता है।

17. अचौर्याणुव्रत के कितने अतिचार हैं ?

अचौर्याणुव्रत के पाँच अतिचार हैं-

1. **स्तेनप्रयोग** - चोरी के लिए प्रेरित करना तथा चोरी का तरीका बताना।
2. **तदाहृतादान** - चोरी का माल खरीदना।
3. **विरुद्ध राज्यातिक्रम** - राज्य नियम के विरुद्ध टैक्स चोरी करना, अधिक स्टॉक रखकर काला बाजारी करना आदि।
4. **हीनाधिक मानोन्मान** -तौलने के बाँट को मान कहते हैं, तराजू को उन्मान कहते हैं। बाँट तराजू दो प्रकार के रखना। कम से देना, अधिक से लेना।
5. **प्रतिरूपक व्यवहार** - एक-सी दिखने वाली सस्ती वस्तु को मिलाकर महंगे भाव में बेचना। जैसे- खसखस में सूजी, कालीमिर्च में पपीते के बीज, हल्दी में ज्वार का आटा। आज शास्त्रों में भी मिलावट आ गई है, ऊपर आचार्यों के नाम ज्यों-के-त्यों रहते हैं और हिन्दी टीका, भावार्थ एवं विशेषार्थों में अपने अर्थों को समाहित कर दिया जाता है।

18. ब्रह्मचर्याणुव्रत किसे कहते हैं ?

जिससे विवाह हुआ उस स्त्री के अलावा वह अन्य स्त्रियों को माता, बहिन एवं बेटी के समान समझता है अर्थात् सबसे विरक्त रहता है, उसके इस व्रत को स्वदार संतोष या ब्रह्मचर्याणुव्रत कहते हैं। अथवा जो

पाप के भय से दूसरे की स्त्री को नहीं चाहता और न दूसरों को ऐसा करने के लिए कहता है। अपनी स्त्री में ही संतुष्ट रहता है, उसे स्वदार संतोष व्रत या ब्रह्मचर्याणुव्रत कहते हैं। (र.क.श्रा., 59)

19. ब्रह्मचर्याणुव्रत के कितने अतिचार हैं ?

ब्रह्मचर्याणुव्रत के पाँच अतिचार हैं-

1. **परविवाहकरण** -अपनी या अपने आश्रित भाई आदि की संतान को छोड़कर अन्य लोगों की संतानों का विवाह प्रमुख बनकर करना। दलाली करना, कुण्डली मिलवाना आदि।
2. **इत्वरिकाअपरिगृहीतगमन** -पति रहित व्यभिचारिणी स्त्रियों के पास आना-जाना, लेन-देन रखना।
3. **इत्वरिकापरिगृहीतगमन** -पति सहित व्यभिचारिणी स्त्रियों के पास आना-जाना, लेन-देन रखना।
4. **अनङ्गक्रीड़ा** - कामसेवन के निश्चित अङ्गों को छोड़कर अन्य अङ्गों से काम सेवन करना।
5. **कामतीव्राभिनिवेश** - हमेशा काम की तीव्र लालसा रखना। (स.सि., 7/28/714)

20. परिग्रह परिमाणव्रत किसे कहते हैं ?

धन, धान्य आदि दस प्रकार के बाह्य परिग्रह का प्रमाण करके उससे अधिक में इच्छा रहित होना, परिग्रह परिमाणव्रत है। इसका दूसरा नाम इच्छा परिमाणव्रत भी है।

21. परिग्रह परिमाणव्रत के कितने अतिचार हैं ?

दस प्रकार के परिग्रह के प्रमाण का उल्लंघन करना। क्षेत्रवास्तु प्रमाणातिक्रम, हिरण्यसुवर्ण प्रमाणातिक्रम, धनधान्य प्रमाणातिक्रम, दासीदास प्रमाणातिक्रम और कुप्यभाण्ड प्रमाणातिक्रम।

22. पाँच अणुव्रतों के धारण करने का फल क्या है ?

कर्मों की निर्जरा होती है एवं वह नियम से देवगति में ही जाता है, वहाँ के वैभव को प्राप्त करता है।

23. पाँच अणुव्रतों में कौन-कौन प्रसिद्ध हुए हैं ?

क्रमशः यमपाल चाण्डाल, धनदेव सेठ, वारिषेण राजकुमार, नीली और जयकुमार राजा। (र.क.श्रा., 64)

24. गुणव्रत किसे कहते हैं एवं कितने होते हैं ?

जिससे अणुव्रतों में वृद्धि हो वह गुणव्रत हैं। जैसे-खेती की रक्षा के लिए जो बाड़ का स्थान है, वही पाँच अणुव्रतों की रक्षा के लिए गुणव्रत का स्थान है। गुणव्रत तीन होते हैं। दिग्विरति व्रत, देशविरति व्रत और अनर्थदण्डविरति व्रत। (त.सू., 7/21)

25. दिग्विरति व्रत किसे कहते हैं एवं उसके कितने अतिचार हैं ?

सूक्ष्म पापों से बचने के लिए मरणपर्यन्त दसों दिशाओं में सीमा कर लेना और उससे आगे न जाना दिग्विरति व्रत है। जैसे-पूर्व में कलकत्ता, दक्षिण में मद्रास, पश्चिम में मुम्बई और उत्तर में काश्मीर। इसके पाँच अतिचार हैं।

1. **ऊर्ध्वव्यतिक्रम** - अज्ञान, प्रमाद अथवा लोभ के वश ऊपर की सीमा का उल्लङ्घन करना।
2. **अधोव्यतिक्रम** - अज्ञान, प्रमाद अथवा लोभ के वश नीचे की सीमा का उल्लङ्घन करना।
3. **तिर्यग्व्यतिक्रम** - अज्ञान, प्रमाद अथवा लोभ के वश तिर्यग्सीमा का उल्लङ्घन करना।
4. **क्षेत्रवृद्धि** - लोभ के कारण सीमा की वृद्धि करने का अभिप्राय रखना।
5. **विस्मरण** - निर्धारित सीमा को भूल जाना। (स.सि., 7/30/717)

26. देश विरति व्रत किसे कहते हैं एवं इसके कितने अतिचार हैं ?

जीवन पर्यन्त के लिए किए हुए दिग्व्रत में और भी संकोच करके घड़ी, घंटा, दिन, महीना आदि तक किसी मुहल्ले, चौराहे आदि तक सीमा रखना, यह देश विरति व्रत कहलाता है। (र.क.श्रा., 68)

इसके पाँच अतिचार होते हैं -

1. **आनयन** - सीमा से बाहर की वस्तु को किसी से मँगवाना।
2. **प्रेष्यप्रयोग** - सीमा से बाहर क्षेत्र में किसी को भेजकर काम कराना।
3. **शब्दानुपात** - सीमा के बाहर क्षेत्र में किसी को खाँसी, चुटकी, ताली, फोन, फैक्स आदि से इशारा करके बुलाना।
4. **रूपानुपात** - सीमा के बाहर अपना रूप, शरीर, हाथ, वस्त्र आदि दिखाकर इशारा करना।
5. **पुद्गलक्षेप** - सीमा के बाहर कंकड़, पत्थर आदि फेंककर बुलाना। (स.सि., 7/31/718)

27. अनर्थदण्डविरति व्रत किसे कहते हैं एवं इसके कितने अतिचार हैं ?

जिससे अपना कुछ प्रयोजन तो सिद्ध न हो और व्यर्थ ही पाप का संचय होता है ऐसे कार्यों को अनर्थदण्ड कहते हैं और उनके त्याग को अनर्थदण्डविरति व्रत कहते हैं। इसके पाँच अतिचार हैं-

1. **कन्दर्प** - राग की अधिकता होने से हास्य के साथ अशिष्ट वचन बोलना।
2. **कौत्कुच्य** - हास्य और अशिष्ट वचन के साथ शरीर से भी कुचेष्टा करना।
3. **मौखर्य** - धृष्टता पूर्वक बहुत बकवास करना।
4. **असमीक्ष्याधिकरण** - बिना विचारे अधिक कार्य करना।
5. **उपभोग-परिभोग अनर्थक्य** - अधिक उपभोग-परिभोग सामग्री का संग्रह करना। (स.सि., 7/32/719)

28. अनर्थदण्ड के कितने भेद हैं ?

अनर्थदण्ड के 5 भेद हैं-

1. **पापोपदेश** - खोटे व्यापार आदि पाप क्रियाओं का उपदेश देना। जैसे-मछली की खेती करो, बूचड़खाने खोलो आदि। ऐसी चर्चा करना कि अमुक जङ्गल में हिरण बहुत अच्छे थे, कसाई ने सुन लिया तो क्या हुआ वह वहाँ गया और सारे हिरणों का वध कर दिया।
2. **हिंसादान** - हिंसक उपकरणों का देना, व्यापार करना। जैसे-बम, पिस्तौल, फरसा, पटाखा, जे.सी.बी. मिट्टी खोदने की मशीन, क्रेशर, ब्लास्टिंग के उपकरणों को लेना-देना एवं हिंसक पशुओं का पालन करना। जैसे-बिल्ली, कुत्ता, मुर्गा, सर्प आदि।
3. **अपध्यान** - पर के दोषों को ग्रहण करना, पर की लक्ष्मी को चाहना, पर की स्त्री को चाहना आदि। द्वेष के कारण वह मर जाए, उसकी दुकान नष्ट हो जाए, उसकी खेती जल जाए, वह चुनाव में हार जाए, उसके यहाँ डाका पड़ जाए आदि।
4. **प्रमादचर्या** - बिना प्रयोजन के जमीन खोदना, जल फेंकना, अग्नि जलाना, हवा करना, वनस्पति तोड़ना, घूमना, घुमाना आदि।
5. **दुःश्रुति** - चित्त को कलुषित करने वाला अश्लील साहित्य पढ़ना, सुनना, गीत सुनना, नाटक, टेलीविजन एवं सिनेमा आदि देखना दुःश्रुति नामक अनर्थदण्ड है।

29. शिक्षाव्रत किसे कहते हैं एवं कितने होते हैं ?

जिससे मुनि, आर्यिका बनने की शिक्षा मिले, वह शिक्षाव्रत है। शिक्षाव्रत चार होते हैं-सामायिक, प्रोषधोपवास, उपभोग-परिभोग परिमाण एवं अतिथि संविभाग।

30. सामायिक शिक्षाव्रत किसे कहते हैं एवं इसके कितने अतिचार होते हैं ?

समता भाव धारण करना सामायिक है। मुनि हमेशा समता धारण करते हैं। किन्तु श्रावक हमेशा समता धारण नहीं रख सकता,अतः वह श्रावक स्वयं समय की सीमा रखकर निश्चित समय तक मन-वचन-काय एवं कृत-कारित-अनुमोदना से पाँचों पापों का त्याग करके परमात्म स्वरूप चिन्तन करना सामायिक है, इस व्रत का धारी, दिन में दो बार अथवा तीन बार सामायिक करता है। इसके पाँच अतिचार हैं-

1. **मनःदुष्प्रणिधान** - सामायिक करते हुए मन में अशुभ संकल्प-विकल्प करना।
2. **वचन दुष्प्रणिधान** -मन्त्र, सामायिक आदि पाठ का अशुद्ध उच्चारण करना, जल्दी-जल्दी पढ़ना आदि।
3. **काय दुष्प्रणिधान** - सामायिक में हाथ-पैर हिलाना, यहाँ-वहाँ देखना आदि।
4. **अनादर** - उत्साह रहित हो, मात्र नियम की पूर्ति करना।
5. **स्मृत्यनुपस्थान** - सामायिक का काल ही भूल जाना एवं सामायिक पाठ पढ़ते-पढ़ते भक्तामर का पाठ पढ़ने लगना। (स.सि., 7/33/720)

31. प्रोषधोपवास शिक्षाव्रत किसे कहते हैं एवं इसके कितने अतिचार हैं ?

प्रोषध का अर्थ पर्व के दिन से है। पर्व के दिन उपवास करना, प्रोषधोपवास कहलाता है। उपवास के दिन समस्त आरम्भ का त्याग कर वन में या मंदिर में रहकर धर्म्यध्यान करना चाहिए। उस दिन मंजन, स्नान भी नहीं करना चाहिए। शिक्षा ले रहे हैं तो पूरी शिक्षा लें। मुनि मंजन, स्नान नहीं करते तो श्रावक भी उपवास के दिन न करे। (र.क.श्रा.,106-109) यह शिक्षाव्रत तीन प्रकार का होता है।

उत्कृष्ट	सप्तमी एकाशन	अष्टमी उपवास	नवमी एकाशन
	त्रयोदशी एकाशन	चतुर्दशी उपवास	अमा./पूर्णमासी एकाशन
मध्यम	सप्तमी दो बार भोजन	अष्टमी उपवास	नवमी दो बार भोजन
	त्रयोदशी दो बार भोजन	चतुर्दशी उपवास	अमा./पूर्णमासी दो बार भोजन
	(का.आ.टी., 373-76)		
जघन्य	सप्तमी दो बार भोजन	अष्टमी एकाशन	नवमी दो बार भोजन
	त्रयोदशी दो बार भोजन	चतुर्दशी एकाशन	अमा./पूर्णमासी दो बार भोजन
	(वसु.श्रा., 292)		

नोट -उपवास में चारों प्रकार के (खाद्य, पेय, लेह्य और स्वाद्य)आहार का त्याग होता है।

इसके पाँच अतिचार हैं -

1. **अप्रत्यवेक्षित अप्रमार्जित उत्सर्ग** - बिना देखी और बिना शोधी हुई जमीन में मल-मूत्र आदि करना।
2. **अप्रत्यवेक्षित अप्रमार्जित आदान** - बिना देखे-बिना शोधे उपकरण आदि ग्रहण करना।

3. **अप्रत्यवेक्षित अप्रमार्जित संस्तरोपक्रमण** -बिना देखी बिना शोधी भूमि पर संस्तर आदि बिछाना।
4. **अनादर**-उपवास के कारण भूख-प्यास से पीड़ित होने से आवश्यक क्रियाओं में उत्साह न होना।
5. **स्मृत्यनुपस्थान** - आवश्यक क्रियाओं को ही भूल जाना। (स.सि., 7/34/721)

32. उपभोग-परिभोग परिमाण किसे कहते हैं एवं इससे मुनि बनने के लिए क्या शिक्षा मिलती है ?

परिग्रह परिमाण व्रत में आजीवन के लिए नियम किया था। उन वस्तुओं से राग घटाने के लिए प्रतिदिन उस नियम के ही अंतर्गत यह नियम करना, मैं आज इतनी वस्तुओं का उपभोग एवं परिभोग करूँगा।

उपभोग-जो वस्तु एक बार भोगने में आती है। जैसे-भोजन, पानी आदि।

परिभोग-जो वस्तु बार-बार भोगने में आती है। जैसे-वस्त्र, आभूषण, वाहन, यान आदि। (स.सि., 7/21/703)

इससे यह शिक्षा मिलती है कि जब मुनि बनेंगे तो मौसम के अनुकूल, स्वास्थ्य के अनुकूल आहार, पानी नहीं मिलता हो तो पहले से ही अभ्यास रहना चाहिए।

33. क्या भक्ष्य-अभक्ष्य दोनों का नियम किया जाता है ?

भक्ष्य का नियम किया जाता है। अभक्ष्य का तो वह त्यागी ही होता है।

34. अभक्ष्य कितने प्रकार के होते हैं ?

अभक्ष्य 5 प्रकार के होते हैं। इसका वर्णन अभक्ष्य पदार्थ अध्याय में किया गया है।

35. उपभोग-परिभोग परिमाण व्रत के कितने अतिचार हैं ?

उपभोग-परिभोग परिमाण व्रत के 5 अतिचार होते हैं-

1. **सचित्त आहार** - सचेतन हरे फल, फूल, पत्र आदि का सेवन करना।
2. **सचित्त सम्बन्ध आहार** - सचित्त पदार्थों से सम्बन्धित आहार का सेवन करना।
3. **सचित्त सम्मिश्र आहार** - सचित्त पदार्थ से मिले हुए पदार्थ आदि का सेवन करना।
4. **अभिषव आहार** - इन्द्रियों को मद उत्पन्न करने वाले गरिष्ठ पदार्थों आदि का सेवन करना।
5. **दु:पक्वाहार** - अधपके, अधिक पके एवं जले हुए पदार्थों आदि का सेवन करना। (स.सि., 7/35/722)

36. अतिथि संविभाग व्रत किसे कहते हैं एवं इसके कितने अतिचार हैं ?

संयम की विराधना न करते हुए जो गमन करता है, उसे अतिथि कहते हैं या जिसके आने की कोई तिथि नहीं उसे अतिथि कहते हैं। ऐसे साधुओं को आहार, औषधि, उपकरण एवं वसतिका देना यह अतिथि संविभाग व्रत कहलाता है। इसके पाँच अतिचार हैं-

1. **सचित्त निक्षेप** - सचित्त कमल के पत्ते आदि पर रखा आहार देना।
2. **सचित्त अपिधान** - सचित्त पत्ते आदि से ढका आहार देना।
3. **पर व्यपदेश** - स्वयं न देकर दूसरों से दिलवाना अथवा दूसरे की वस्तु का दान देना।
4. **मात्सर्य** - दूसरे दाताओं से ईर्ष्या रखना।
5. **कालातिक्रम** - आहार के काल का उल्लङ्घन कर देना। (स.सि., 7/36/723)

37. सामायिक प्रतिमा किसे कहते हैं ?

अपने स्वरूप का, जिनबिम्ब का, पञ्चपरमेष्ठी के वाचक अक्षरों का अथवा बारह भावनाओं का चिन्तन करते हुए ध्यान करता है, उसके सामायिक प्रतिमा होती है।

38. सामायिक करने की क्या विधि है ?

सर्वप्रथम पूर्व दिशा में खड़े होकर नौ बार णमोकार मंत्र पढ़कर फिर दोनों हाथ जोड़कर बाएँ से दाएँ की ओर तीन बार घुमाना (प्रदक्षिणा रूप)आवर्त कहलाता है। इसे चारों दिशाओं में क्रमशः (पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर में) किया जाता है। आवर्त करने के बाद खड़े-खड़े ही नमस्कार करना प्रणाम है, यह भी चारों दिशाओं में किया जाता है। पूर्व दिशा में आवर्त, प्रणाम के बाद बैठकर नमस्कार (गवासन से) करना निषद्य है। यह पूर्व एवं उत्तर दिशा में किया जाता है। आवर्त करते समय यह बोलना चाहिए कि पूर्व दिशा और इसकी विदिशा में जितने केवली, जिन, सिद्ध, साधु एवं ऋद्धिधारी मुनि हैं, उन सबको मेरा मन से, वचन से और काय से नमस्कार हो।

दक्षिण आदि दिशा में आवर्त करते समय उस दिशा और उसकी विदिशा में बोलना चाहिए। ऐसा चारों दिशाओं में करने के बाद उत्तर मुख या पूर्व मुख बैठकर सामायिक प्रारम्भ करें। इसी प्रकार सामायिक का समापन भी करना चाहिए।

39. सामायिक के लिए आसन, स्थान कैसा हो ?

सामायिक के लिए दो आसन बताए हैं, पद्मासन एवं खड्गासन। स्थान एकान्त हो, एकान्त के अनेक अर्थ हैं, जहाँ कोई भी न हो। दूसरा अर्थ जहाँ स्त्री, पशु, नपुंसक न हों और जहाँ कोलाहल, डाँस, मच्छर, बिच्छू आदि न हों। सामायिक के लिए वन, नदी का तट अच्छा माना गया है। वह न हो तो घर, मंदिर आदि में भी कर सकते हैं।

40. सामायिक में क्या करें ?

शत्रु-मित्र, लाभ-अलाभ, जीवन-मरण में समता रखने का नाम सामायिक है। श्रावक भी सामायिक के समय समता रखें । उपसर्ग होते हैं, सर्दी-गर्मी लगती है, उसे समता से सहन करें। सामायिक में संसार, शरीर, भोग के बारे में चिन्तन करें, बारह भावनाओं का चिन्तन करें, पञ्च नमस्कार मंत्र का जाप करें। जाप करते-करते मन भटकता है तो दूसरे क्रम में जाप करें। उल्टे क्रम से भी कर सकते हैं। जैसे-णमो लोए सव्वसाहूणं। मध्य में से भी कर सकते हैं जैसे – णमो आइरियाणं। जहाँ की आपने तीर्थयात्रा की है, उसका चिन्तन करें आदि। एक, दो, तीन क्या होते हैं। जैसे-एक आत्मा, दो जीव, तीन रत्नत्रय आदि करके जहाँ तक बने चिंतन करते जाएं।

41. सामायिक कैसे करें ?

कैसे से आशय हमारी सामायिक निरवद्य हो। अवद्य का अर्थ पाप होता है। निर् उपसर्ग रहित के अर्थ में है। अर्थात् पाप से रहित सामायिक हो। सामायिक करते समय पंखा, टी.व्ही., कूलर, हीटर, सिगड़ी चालू करके न बैठें एवं टेपरिकार्ड भी न चलाएं।

42. सामायिक का काल (समय) क्या है तथा कितनी बार करनी चाहिए ?

सूर्योदय के तीन घड़ी (1:12 मिनट) पहले से तीन घड़ी बाद तक। मध्याह्न में भी तीन घड़ी पूर्व से तीन

घड़ी पश्चात् तक इसी प्रकार सन्ध्या में भी सूर्यास्त से तीन घड़ी पूर्व से तीन घड़ी पश्चात् तक सामायिक का उत्कृष्ट काल है। मध्यम काल 2-2 घड़ी और जघन्यकाल 1-1 घड़ी है। इस प्रतिमाधारी को तीनों कालों में सामायिक करना आवश्यक होता है।

43. सामायिक का मध्याह्न काल कैसे निकालते हैं ?

जैसे-सूर्योदय 6 बजे एवं सूर्यास्त 6 बजे होता है, तब सामायिक का मध्याह्न काल उत्कृष्ट होगा 10:48 से 1:12 तक। जघन्य निकालना है तो 11:36 से 12:24 तक 48 मिनट।

44. सामायिक शिक्षाव्रत एवं सामयिक प्रतिमा में क्या अंतर है ?

1. सामायिक शिक्षाव्रत में वह सामायिक दिन में दो बार भी कर सकता है, किन्तु सामायिक प्रतिमा में सामायिक तीन बार का नियम है।
2. सामायिक शिक्षाव्रत में सामायिक अतिचार सहित भी होती है किन्तु सामायिक प्रतिमा में सामायिक अतिचार रहित होती है।
3. सामायिक शिक्षाव्रत में सामायिक 24 मिनट भी कर सकता है। किन्तु सामायिक प्रतिमा में सामायिक कम-से-कम 48 मिनट तो अवश्य ही करेगा।
4. सामायिक शिक्षाव्रत में आवर्त आदि का नियम नहीं है। किन्तु सामायिक प्रतिमा में सामायिक में बैठते समय आवर्त आदि का नियम है।

45. प्रोषधोपवास प्रतिमा किसे कहते हैं ?

जो प्रत्येक माह की अष्टमी व चतुर्दशी को अपनी शक्ति न छिपाकर नियम पूर्वक प्रोषधोपवास करता है वह प्रोषधोपवास प्रतिमाधारी श्रावक है।

46. प्रोषधोपवास शिक्षाव्रत व प्रोषधोपवास प्रतिमा में क्या अंतर है ?

व्रत प्रतिमा वाला श्रावक कभी प्रोषधोपवास करता तथा कभी नहीं भी करता है किन्तु प्रोषधोपवास प्रतिमाधारी श्रावक नियम से प्रोषधोपवास करता है। (र.क.श्रा., 140)

47. सचित्त त्याग प्रतिमा किसे कहते हैं ?

चित्त का अर्थ जीव होता है अर्थात् सचित्त त्याग प्रतिमा का धारी वनस्पति आदि को जीव रहित करके ही खाता है। वह श्रावक अब कच्चा जल, कच्ची वनस्पति आदि नहीं खाता है। वह पानी भी प्रासुक करके ही प्रयोग में लेता है एवं वनस्पति भी अग्नि पक्व या यन्त्र से पेलित अर्थात् रस को लेता है। यद्यपि सचित्त को अचित्त करके खाने में प्राणिसंयम नहीं पलता, किन्तु इन्द्रिय संयम पालने की दृष्टि से सचित्त त्याग आवश्यक है। यह प्रतिमा भी शिक्षाव्रत के रूप में है, क्योंकि मुनि प्रासुक (अचित्त) भोजन ही करते हैं। अतः इस श्रावक ने अभी से साधना करना प्रारम्भ कर दी है। (र.क.श्रा., 141)

48. रात्रि भुक्ति त्याग प्रतिमा किसे कहते हैं ?

रात्रि भोजन का त्याग तो प्रथम प्रतिमा में ही हो जाता है, किन्तु अब वह श्रावक रात्रि में चारों प्रकार का आहार दूसरों को भी नहीं खिलाता और न ही खाने वालों की अनुमोदना करता है। (का.आ., 382) इस प्रतिमा का अपर नाम दिवा मैथुन त्याग भी है, अतः वह दिन में मैथुन भी नहीं करता है।

49. ब्रह्मचर्य प्रतिमा किसे कहते हैं ?

मन, वचन, काय एवं कृत, कारित, अनुमोदना से जो श्रावक मैथुन का त्याग करता है, उसे ब्रह्मचर्य प्रतिमाधारी श्रावक कहते हैं। (का.आ., 383) ब्रह्मचर्याणु व्रत में स्व स्त्री से सम्बन्ध रहता है किन्तु ब्रह्मचर्य प्रतिमा में स्व स्त्री से भी विरक्त हो जाता है।

50. आरम्भ त्याग प्रतिमा किसे कहते हैं ?

इस प्रतिमा में खेती, व्यापार, नौकरी सम्बन्धी समस्त आरम्भ का त्याग हो जाता है। (र.क.श्रा., 144) किन्तु वह पूजन, अभिषेक एवं भोजन बनाने के आरम्भ का त्यागी नहीं होता है। आरम्भ त्यागी बैंक बैलेंस नहीं रखता है किन्तु वह मकान का किराया एवं पेन्शन ले सकता है।

51. आरम्भ किसे कहते हैं ?

जिस कार्य के करने से षट्काय जीवों की हिंसा होती है, उसे आरम्भ कहते हैं।

52. परिग्रहत्याग प्रतिमा किसे कहते हैं ?

जो पूजन के बर्तन, शौच उपकरण एवं वस्त्रों का परिग्रह रखकर शेष सब परिग्रह को छोड़ देता है उस श्रावक की परिग्रह त्याग प्रतिमा कहलाती है।

53. अनुमति त्याग प्रतिमा किसे कहते हैं ?

इस प्रतिमा का धारी श्रावक अब किसी भी सांसारिक कार्य की अनुमति नहीं देता है। (र.क.श्रा., 146) घर में रहकर घर के कार्यों में अनुमति नहीं देना यही उसकी परीक्षा है, अनुमति त्याग की परीक्षा घर में होती है, जङ्गल में नहीं। यह प्रतिमा भी शिक्षाव्रत के रूप में है। आगे मुनि होने के बाद सांसारिक कार्य के उपदेश में मौन रहता है। उसी प्रकार वह श्रावक भी अभी से साधना कर रहा है। दस प्रतिमाधारी श्रावक भी घर में रह सकता है।

54. उद्दिष्टत्याग प्रतिमा किसे कहते हैं ?

यह प्रतिमाधारी श्रावक सम्पूर्ण रूप से घर का त्यागकर मुनियों के समूह में जाकर व्रतों को ग्रहण कर तपस्या करता हुआ भिक्षा भोजन करने वाला होता है एवं एक खण्ड वस्त्र धारण करता है। (र.क.श्रा., 147)

इस प्रतिमा के दो भेद हैं- एलक एवं क्षुल्लक। एलक करपात्र में ही आहार करते हैं, केशलोंच करते हैं, किन्तु केशलोंच उपवास के साथ करे यह नियम नहीं है। मात्र वे एक लंगोट (कोपीन) धारण करते हैं। क्षुल्लक लंगोट के साथ एक चादर या दुपट्टा भी रखते हैं वह चादर या दुपट्टा खण्ड होता है, अर्थात् सिर ढके तो पैर न ढके, पैर ढके तो सिर न ढके। वे भोजन पात्र में भी कर सकते हैं एवं कर पात्र में भी कर सकते हैं। केशलोंच करने का नियम नहीं है। वे मुण्डन भी करा सकते हैं। प्राचीन समय में इनकी आहार चर्या ऐसी थी कि सात घरों से अपने पात्र में आहार माँगकर लेते थे एवं कोई श्रावक कह दे कि यहीं बैठकर आहार कर लीजिए तो वहीं पर बैठकर कर लेते थे। नहीं कहा तो वे अपनी वसतिका में भी कर सकते हैं, किन्तु वर्तमान में ऐसी परम्परा नहीं है, वे भी मुनियों के समान आहार चर्या को निकलते हैं।

55. कौन से प्रतिमाधारी श्रावक जघन्य, मध्यम एवं उत्कृष्ट कहलाते हैं ?

प्रथम प्रतिमाधारी से छठवीं प्रतिमा तक जघन्य श्रावक, सातवीं से नवमी प्रतिमा तक मध्यम श्रावक तथा दसवीं-ग्यारहवीं प्रतिमा वाला उत्कृष्ट श्रावक कहलाता है।

56. ग्यारह प्रतिमाधारी स्त्रियों को क्या कहते हैं ?

ग्यारह प्रतिमाधारी स्त्रियों को क्षुल्लिका कहते हैं, यह एक सफेद साड़ी और एक खण्ड वस्त्र रखती हैं, शेष चर्या क्षुल्लक के समान है।

57. श्रावक को कितने स्थानों पर मौन रखना चाहिए ?

श्रावक को सात स्थानों पर मौन रखना चाहिए। भोजन, वमन, स्नान, मैथुन, मल-मूत्र क्षेपण, जिनपूजा आदि छः आवश्यक करते समय और जहाँ पाप कार्य की संभावना हो, वहाँ पर मौन रखना चाहिए ।

58. किसे क्या कहकर वन्दना करनी चाहिए ?

मुनिराज को नमोस्तु, आर्यिकाओं को वन्दामि, एलक, क्षुल्लक, क्षुल्लिका एवं दशमी प्रतिमाधारी श्रावक को इच्छामि तथा अन्य प्रतिमाधारी श्रावक को वन्दना करना चाहिए। साधर्मी जनों से जयजिनेन्द्र कहना चाहिए।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. प्रथम प्रतिमा में तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत होते हैं।
2. दर्शन प्रतिमा वाला रात्रि में जल ले सकता है।
3. समय से भोजन नहीं बनाना भी अहिंसाणुव्रत का अतिचार है।
4. 100 वर्ष के लिए भारत से बाहर नहीं जाना दिग्व्रत है।
5. चौथी प्रतिमा का नाम सामायिक प्रतिमा है।
6. सामायिक शिक्षाव्रत में तीन बार सामायिक कर सकते हैं।
7. सचित्त त्याग प्रतिमाधारी श्रावक खेती कर सकता है।
8. सामायिक प्रतिमा के पाँच अतिचार हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. आचार्य श्री समन्तभद्र स्वामी ने गुणव्रत और शिक्षाव्रत कौन से बताए हैं ? (र.श्रा., 67, 91)
2. पण्डित आशाधरजी ने अष्ट मूलगुण कौन से बताए हैं ? (सा.ध., 2/18)
3. आचार्य श्री सोमदेव सूरि के अनुसार अष्टमूलगुण कौन से हैं ? (य.च.उ., 7/255)
4. आचार्य श्री समन्तभद्रजी ने परिग्रह परिमाण व्रत के अतिचार कौन से बताए हैं ? (र.श्रा., 61)
5. आचार्य श्री सोमदेव सूरि के उपासकाध्ययन में तीसरी, पाँचवीं एवं आठवीं प्रतिमा के क्या नाम हैं ? (य.च.उ., 8/821-822)

अध्याय 39

अभक्ष्य पदार्थ

मानव जीवन बिना भोजन के नहीं चलता। अतः भोजन करना अनिवार्य है, किन्तु जो भोजन धार्मिक एवं शारीरिक दृष्टि से ठीक नहीं है ऐसा अभक्ष्य भोजन कदापि नहीं करना चाहिए। उसी अभक्ष्य भोजन के बारे में इस अध्याय में उसका वर्णन है।

1. अभक्ष्य किसे कहते हैं ?

जो पदार्थ खाने (भक्षण करने) योग्य नहीं होता, उसे अभक्ष्य कहते हैं।

2. अभक्ष्य कितने प्रकार के होते हैं ?

अभक्ष्य 5 प्रकार के होते हैं। त्रसघातकारक, प्रमादवर्धक, बहुघातकारक, अनिष्टकारक और अनुपसेव्य।

1. **त्रसघात कारक**-जिस पदार्थ के खाने से त्रसजीवों का घात हो। जैसे-बड़, पीपल, पाकर, ऊमर, कठूमर, माँस, मधु, अमर्यादित भोजन और घुना अन्न आदि।
2. **प्रमादवर्धक**-जिस पदार्थ के खाने-पीने से प्रमाद और आलस्य आता है। जैसे-शराब, गाँजा, भाँग हेरोइन, चरस, कोकीन, ब्राउन शुगर, अफीम, बीड़ी, सिगरेट, गुटखा और जर्दा आदि नशाकारक पदार्थ।

   नोट- बीयर आदि भी शराब हैं।
3. **बहुघातकारक**-जिसमें फल तो अल्प हो और बहुत त्रसजीवों का घात हो। जैसे-गीला अदरक, मूली, नीम के फूल, केवड़े के फूल, मक्खन एवं समस्त जमीकंद आदि।
4. **अनिष्टकारक**-जो आपकी प्रकृति-विरुद्ध हैं। जैसे-खाँसी में दही का सेवन, बुखार में घी का सेवन, हृदय रोग में घी और तेल का सेवन, डायबिटीज में शक्कर का सेवन, मोतीझिरा बुखार में अन्न का सेवन और ब्लडप्रेशर बढ़ने पर नमक का सेवन करना आदि अनिष्टकारक हैं।
5. **अनुपसेव्य**-जो सज्जन पुरुषों के सेवन करने योग्य नहीं हैं। जैसे-गोमूत्र, ऊँटनी का दूध, शङ्खचूर्ण, पान का उगाल, लार, मूत्र, पुरीष और खकार आदि।

3. द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव अभक्ष्य किसे कहते हैं ?

द्रव्य-जैसे-किसी ने प्रासुक भोजन बनाया और उस भोजन को कुत्ता, बिल्ली आदि ने जूठा कर दिया तो वह अभक्ष्य हो गया या उसमें कोई अशुद्ध पदार्थ गिर गया।

क्षेत्र-अपवित्र स्थान पर बैठकर भोजन करना क्षेत्र अभक्ष्य है।

काल-काल की अपेक्षा तो स्पष्ट है मर्यादा के बाद वह पदार्थ अभक्ष्य है। लीस्टर देश में 8 घंटे के बाद मिठाई फेंक देते हैं।

भाव-भोजन करते समय यह भोज्य वस्तु माँस, रुधिर और मदिरा के सदृश है, ऐसा स्मरण होते ही वह भोजन भाव अभक्ष्य है।

4. चलित रस अभक्ष्य किसे कहते हैं ?

जो पदार्थ स्पर्श, रस, गन्ध और वर्ण से चलायमान हो गए हैं, ऐसे पदार्थों को भी नहीं खाना चाहिए, क्योंकि ऐसे पदार्थों में अनेक त्रस जीवों की और अनन्त निगोद राशि की उत्पत्ति अवश्य हो जाती है। (लाटी संहिता, 56)

5. पञ्च उदुम्बरों के त्यागी को क्या-क्या त्याग कर देना चाहिए ?

जिसने पञ्च उदुम्बरों का त्याग किया है, उसे समस्त प्रकार के अज्ञात (अजान) फलों का त्याग कर देना चाहिए।[1] अजान फलों (वस्तुओं) के खाने से पूर्व में अनेक व्यक्तियों के मरण हो चुके हैं।

6. दही भक्ष्य है या अभक्ष्य ?

दही भक्ष्य है। जो दही इस विधि से तैयार किया है, वह भक्ष्य है-दूध दुहने के प्रथम समय से लेकर अन्तर्मुहूर्त के अंदर उबाल लिया है, ऐसे दूध में 24 घंटे के अन्दर चाँदी का सिक्का, बादाम, खड़ी लाल-मिर्च, अमचूर आदि डालकर दही जमाया जाता है, ऐसे दही में बैक्टेरिया नहीं होते हैं, यह दही भक्ष्य है।

7. नवनीत (मक्खन) भक्ष्य है या अभक्ष्य ?

मद्य, माँस, मधु एवं नवनीत को महाविकृति कहा है। अतः यह अभक्ष्य है।[2] नवनीत की मर्यादा अन्तर्मुहूर्त एवं पंडित आशाधरजी ने दो मुहूर्त कहा है। वह घी बनाने के उद्देश्य से कहा है, खाने के उद्देश्य से नहीं।[3]

8. अष्टपाहुड की टीका करने वाले आचार्य श्रुतसागरजी सूरि ने चारित्रपाहुड की टीका 21 में द्विदल अभक्ष्य किसे कहा है ?

द्विदलान्न मिश्रं दधितक्रं स्वादितं सम्यक्त्वमपि मलिनयेत्-द्विदलान्न के साथ मिलाकर खाए हुए दही और तक्र (छाछ) सम्यग्दर्शन को भी मलिन कर देता है, अतः इनका त्याग कर देना चाहिए।

9. अभक्ष्य इतने ही हैं कि और भी हैं ?

वर्तमान में विवाह और जन्मदिन आदि की पार्टियों में दाल बाफले, तंदूरी, छोले-भटूरे आदि चलते हैं, इनमें दही मिलाया जाता है, अतः द्विदल है तथा बाजार में मिलने वाले पदार्थों में बहुत से पदार्थ अभक्ष्य हैं। जैसे-बन्द डिब्बों की आइसक्रीम, जिलेटिन, चाँदी का वर्क, अजीनोमोटो, साबूदाना, नींबू का सत्त्व (टाटरी) और मैगी आदि।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. मक्खन बहुघात अभक्ष्य है।
2. पञ्च उदुम्बर बहुघात अभक्ष्य हैं।
3. डायबिटीज में शक्कर खाना अभक्ष्य है।
4. घी से दुर्गन्ध आ रही है तब वह अभक्ष्य है।

अन्यत्र खोजिए -

1. बन्द डिब्बों की आइसक्रीम, जिलेटिन, चाँदी का वर्क, अजीनोमोटो, साबूदाना और नींबू का सत्त्व अभक्ष्य क्यों है ? (हम कितने शाकाहारी - मुनि विराटसागर जी)
2. द्विदल कितने प्रकार के होते हैं ? (जै.सि.को., 3/203)
3. तरबूज (कलींदा) को कौन-कौन से ग्रन्थ में अभक्ष्य कहा है ? (व्र.श्रा., 237, श्रा. 3/92)
4. कमलनाल को कौन से आचार्य ने अभक्ष्य कहा है ? (व्र.श्रा., 239)

---

1. सा.ध., 3/14 2. पु.सि., 71 3. श्रा.सं. 4, 4/166

आहार की वस्तुओं की मर्यादा

	सामग्री	शीत ऋतु	ग्रीष्म ऋतु	वर्षा ऋतु
1.	बूरा	1 माह	15 दिन	7 दिन
2.	**अ.** दूध (दुहने के पश्चात्)	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
	ब. दुहने के समय से अन्तर्मुहूर्त में उबाला हुआ	24 घण्टे	24 घण्टे	24 घण्टे
3.	दही, छाछ (गर्म दूध का)	24 घण्टे	24 घण्टे	24 घण्टे
4	**अ.** छाछ बिलोते समय पानी डालने पर	12 घण्टे	12 घण्टे	12 घण्टे
	ब. बाद में पानी डालने पर	48 मिनिट	48 मिनिट	48 मिनिट
5.	मीठे पदार्थ मिला दही	48 मिनिट	48 मिनिट	48 मिनिट
6.	घी	जब तक स्वाद न बिगड़े		
7.	तेल	जब तक स्वाद न बिगड़े		
8.	गुड़	जब तक स्वाद न बिगड़े		
9.	आटा सभी प्रकार का	7 दिन	5 दिन	3 दिन
10.	पिसे हुए मसाले	7 दिन	5 दिन	3 दिन
11.	पिसा नमक	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
	मसाला मिला नमक	6 घण्टे	6 घण्टे	6 घण्टे
12.	नमक मिला कच्चा भोजन	9 घण्टे	6 घण्टे	6 घण्टे
13.	नमक मिला पक्का भोजन (पुड़ी, पपड़िया, कचौरी आदि)	24 घण्टे	24 घण्टे	24 घण्टे
14.	दाल, भात, कढ़ी आदि	6 घण्टे	6 घण्टे	6 घण्टे
15.	रोटी	12 घण्टे	12 घण्टे	12 घण्टे*
16.	बिना पानी के पकवान	7 दिन	5 दिन	3 दिन
17.	गुड़ मिला दही	सर्वदा अभक्ष्य		
18.	अचार	24 घण्टे	24 घण्टे	24 घण्टे

(श्रा.सं. प्रस्तावना, 4-5/137 एवं जै.सि.को., 3/202)

विशेष- 1. भैंस का दूध 15 दिन तक, गाय का दूध 10 दिन तक एवं बकरी का दूध बच्चे को जन्म देने के बाद 8 दिन तक अभक्ष्य है।

2. मर्यादा अष्टाह्निका से अष्टाह्निका तक जानना चाहिए।

* रोटी प्रात थकीलों सांज खइए भवि मरजादा मांज।
पीठें सीला वासी दोष, तजो भव्य जे शुभ वृषपोष ।। 81।। (किशनसिंह कृत क्रियाकोष)

अध्याय 40

सल्लेखना

जो जन्म लेता है उसका मरण निश्चित है क्योंकि यह जीवन की एक अनिवार्य घटना है, किन्तु सल्लेखना के साथ मरण करने वाला शीघ्र ही मोक्ष प्राप्त करता है।
उसी सल्लेखना का वर्णन इस अध्याय में है।

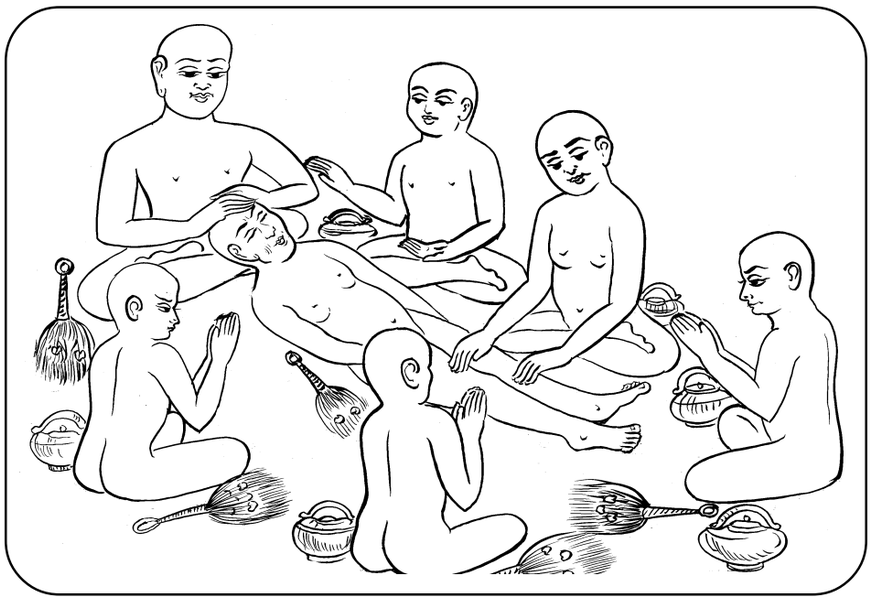

1. सल्लेखना क्या है ?

1. अच्छे प्रकार से काय और कषाय का लेखन करना अर्थात् कृश करना सल्लेखना है। 2. बाहरी शरीर को और भीतरी कषायों के उत्तरोत्तर पुष्ट करने वाले कारणों को घटाते हुए भले प्रकार से लेखन करना अर्थात् कृश करना सल्लेखना है। (स.सि., 7/22/705)

2. सल्लेखना की क्या आवश्यकता है ?

मरण किसी को इष्ट नहीं है। प्रधानमंत्री भी चाहता है कि हमारी सीट पाँच वर्ष तक सुरक्षित रहे, मुख्यमंत्री भी यही चाहता है, एक व्यापारी भी यही चाहता है कि मेरी दुकान का मरण न हो, अर्थात् वह चलती रहे। सर्विस करने वाला भी यही चाहता है मेरी सर्विस 60 वर्ष तक चलती रहे। उसी प्रकार संयमी भी चाहता है कि मेरा रत्नत्रय सुरक्षित रहे किन्तु रत्नत्रय भावों के साथ शरीर का भी साथ चाहता है। अब शरीर कहता है कि मुझे अस्पताल ले चलो, किन्तु संयमी कहता है, भाई तुम्हें मेरा साथ नहीं देना तो मत दो, मैं परलोक तो जा सकता हूँ, किन्तु तुम्हें (शरीर) अस्पताल नहीं भेज सकता हूँ। शरीर साथ देना बंद कर देता है, तो वह शरीर को भी धीरे-धीरे आहार-पानी देना बंद कर देता है अर्थात् काय और कषाय का लेखन अर्थात् कृश करना प्रारम्भ कर देता है और एक दिन वह अपने रत्नत्रय को न छोड़कर शरीर को ही छोड़कर यहाँ से विदा ले लेता है।

3. किन-किन कारणों के उपस्थित होने पर सल्लेखना ली जाती है ?

आचार्य समन्तभद्र स्वामी ने रत्नकरण्ड श्रावकाचार में सल्लेखना के निम्न कारणों का उल्लेख किया है-

उपसर्गे दुर्भिक्षे जरसि रुजायां च निःप्रतीकारे।
धर्माय तनुविमोचनमाहुः सल्लेखनामार्याः ॥ 122 ॥

अर्थ – उपसर्ग आने पर, दुर्भिक्ष आने पर, बुढ़ापा आने पर और असाध्य रोग आने पर, धर्म की रक्षा के लिए सल्लेखना ली जाती है।

1. **उपसर्ग** - उपसर्ग हो गया, जीवित रहने की संभावना नहीं है, तब चारों प्रकार के आहार का त्याग कर दिया जैसे-मुनि सुकौशल, मुनि सुकुमाल आदि ने किया था। एक संक्षेप प्रत्याख्यान भी होता है, कोई उपसर्ग हो गया, जब तक दूर नहीं होगा, तब तक के लिए चारों प्रकार के आहार का त्याग। जैसे-अकम्पनाचार्य आदि 700 मुनिराजों ने किया था।
2. **दुर्भिक्ष**-अकाल के समय। जब श्रावकों को ही खाने के लिए नहीं है तब वह साधु को कैसे देगा। जब बारह वर्ष का अकाल पड़ा तब 12,000 मुनिराजों का संघ दक्षिण भारत चला गया। उनका वहाँ निर्वाह हो गया किन्तु जो यहाँ रहे थे, उन्हें सल्लेखना लेनी थी। नहीं ली तो क्या हुआ। दिगम्बर संघ से एक अर्धफालक संघ का जन्म हुआ जो कालान्तर में श्वेताम्बर संघ में विलीन हो गया।
3. **जरसि**- जरसि अर्थात् बुढ़ापा में शरीर शिथिल पड़ गया। जब दिखाई नहीं देता, न चला जाता, न खड़े हो सकते हैं। ऐसे मरणान्त उपस्थित होने पर सल्लेखना ग्रहण कर लेनी चाहिए।
4. **असाध्य रोग होने पर**-असाध्य रोग होने पर जो ठीक हो ही नहीं सकता, तब सल्लेखना ग्रहण कर लेनी चाहिए।

4. सल्लेखना करने की क्या विधि है ?

जो सल्लेखना धारण करता है, वह क्षपक कहलाता है। वह क्षपक सबसे राग, द्वेष, मोह और परिग्रह को छोड़कर प्रियवचनों से स्वजन, परिजन, सबसे क्षमा माँगे एवं सबको क्षमा कर दे। अपने सम्पूर्ण जीवन के पापों की आलोचना करके, आजीवन के लिए पाँचों पापों का त्याग करे। शोक, भय, विषाद आदि को छोड़कर श्रुत रूपी अमृत का पान करे और क्रमशः इस प्रकार कषायों को कृश करता हुआ अपनी काया को कृश करने के लिए सर्वप्रथम इष्ट रस, इष्ट वस्तु का त्याग करे, पुनः गरिष्ठ रसों का त्याग करके, मोटे (ठोस)अनाज का त्याग करके पेय को बढ़ाए, फिर छाछ एवं गरम जल को ग्रहण करे, ऐसा करता हुआ जल का भी त्याग करके उपवास धारण करे एवं पञ्च नमस्कार का जाप, पाठ, ध्यान करते हुए देह का विसर्जन करे।

5. शरीर कितने प्रकार से छूटता है ?

शरीर तीन प्रकार से छूटता है-

1. **च्युत** -कारण के बिना केवल आयु पूर्ण होने पर जो शरीर छूटता है, उसे च्युत कहते हैं।
2. **च्यावित** -विष भक्षण, शस्त्रघात, श्वास निरोध आदि अकाल मरण के कारण मिलने से आयु पूर्ण होने से पहले संन्यास विधि से रहित जो शरीर छूटता है, उसे च्यावित कहते हैं।
3. **त्यक्त**-अकालमरण अथवा अकाल मरण के बिना, संन्यास विधि से शरीर छूटना उसे त्यक्त कहते हैं। (गो.क., 56, 58)

6. संन्यास मरण के कितने भेद हैं ?

संन्यास मरण के तीन भेद हैं-

1. **भक्त प्रत्याख्यान** - आहार का त्याग करके इसमें वैयावृत्ति स्वयं भी करता है एवं दूसरों से भी कराता है।
2. **इंगिनीमरण** - इसमें वैयावृत्ति स्वयं करता है, दूसरों से नहीं कराता है।
3. **प्रायोपगमन** - इसमें वैयावृत्ति न स्वयं करते हैं, न दूसरों से करवाते हैं। जिस आसन में बैठता है, उसी आसन से शरीर को छोड़ देता है। (गो.क., 60-61)

नोट-इंगिनीमरण, प्रायोपगमन हीन संहनन वालों के नहीं होता है। अतः इस पञ्चम काल में मात्र भक्त प्रत्याख्यान संन्यास मरण ही होता है।

7. पाँच प्रकार के मरण कौन-कौन से होते हैं ?

बाल - बाल मरण, बाल मरण, बाल -पण्डित मरण, पण्डित मरण, पण्डित-पण्डित मरण।

1. मिथ्यादृष्टि और सासादन सम्यग्दृष्टि के मरण को बाल-बाल मरण कहते हैं।
2. अविरत सम्यग्दृष्टि के मरण को बाल मरण कहते हैं।
3. देशव्रती श्रावक के मरण को बाल - पण्डित मरण कहते हैं।
4. मुनि (6 वें गुणस्थान से 11वें गुणस्थान तक) के मरण को पण्डित मरण कहते हैं।
5. अयोगकेवली भगवान् के मरण को पण्डित-पण्डित मरण कहते हैं।

8. बारह वर्ष की सल्लेखना का क्रम बताइए ?

निमित्तज्ञान के ज्ञाता, आयु का निर्धारण करके बारह वर्ष की सल्लेखना देते हैं। चार वर्ष तक कायक्लेश तप करता है। चार वर्ष तक दूध आदि रसों का त्याग करता है। दो वर्ष तक आचाम्ल (चावल एवं इमली का पानी) और निर्विकृति (छाछ) लेता है। एक वर्ष तक आचाम्ल। छः माह तक मध्यम तप करता है। छः माह तक उत्कृष्ट तप करता है। (भ.आ., 254-256)

9. सल्लेखना एवं आत्महत्या में क्या अन्तर है ?

आत्महत्या कषायों से प्रेरित होकर की जाती है तो सल्लेखना का मूल आधार समता है। आत्मघाती को आत्मा की अविनश्वरता का भान नहीं होता है। वह तो शरीर के नष्ट हो जाने को ही जीवन मुक्ति समझता है। जबकि सल्लेखना का प्रमुख आधार आत्मा की अमरता को समझकर अपनी परलोक यात्रा को सुधारना है। सूर्योदय की लाली सल्लेखना के समान है जो हमें प्रकाश की ओर ले जाती है एवं सूर्यास्त की लाली आत्मघात के समान है जो हमें अंधकार की ओर ले जाती है।

10. सल्लेखना के अतिचार कौन-कौन से हैं ?

आचार्य उमास्वामी ने तत्त्वार्थसूत्र में सल्लेखना के पाँच अतिचार कहे हैं-

जीवितमरणाशंसामित्रानुरागसुखानुबन्ध निदानानि ॥ 7/37 ॥

अर्थ – जीवितआशंसा, मरणआशंसा, मित्रानुराग, सुखानुबंध और निदान ।

1. **जीवितआशंसा**-समाधि लेने के बाद अधिक जीने की इच्छा करना । कई बार ऐसा होता है कि

असाध्य रोग था, सल्लेखना में आहार की मात्रा घटने से रोग थोड़ा-थोड़ा ठीक होने लगता है, तब लगता है, समाधि क्यों ले ली अभी तो और भी जी सकते हैं।

2. **मरणआशंसा** -सल्लेखना के समय विशेष वेदना होती है, तब जल्दी-जल्दी मरण हो जाए ऐसी इच्छा करना।
3. **मित्रानुराग** -अपना बचपना याद करना। जैसे-मेरे ऐसे मित्र थे, जिनके साथ में क्रिकेट, व्हॉलीबाल, हॉकी, वीडियो गेम, बैडमिंटन और टेबिल टेनिस आदि खेला करता था।
4. **सुखानुबंध** -पूर्व में अनुभव किए हुए स्त्री, पुत्र, वैभव, नेता और अभिनेता जनित विविध सुखों का पुनः-पुनः स्मरण करना सुखानुबंध है।
5. **निदान**-इस तप का फल मुझे आगामी भव में भोग आदि मिले ऐसी आकांक्षा रखना। (स.सि., 7/37/724)

11. सल्लेखना का फल क्या है ?

अतिचार से रहित सल्लेखना करने वाला नियम से स्वर्ग जाता है, वहाँ के सुखों को भोगकर मनुष्य होकर मोक्ष को प्राप्त होता है। जिसने एक बार सल्लेखना धारण कर मरण किया है, वह अधिक -से -अधिक 7-8 भव में एवं जघन्य से 2-3 भव में नियम से मोक्ष चला जाता है। (र.क.श्रा., 130)

12. कितनी गति के जीव सल्लेखना ले सकते हैं ?

दो गति के जीव सल्लेखना ले सकते हैं-मनुष्य एवं तिर्यञ्चगति। सिंह, सर्प, गज आदि भी सल्लेखना लेकर स्वर्ग सम्पदा को प्राप्त करते हैं। ऐसे अनेक उदाहरण आगम में भी मिलते हैं।

13. एक मुनि की सल्लेखना कितने मुनि कराते हैं ?

एक मुनि की सल्लेखना को 48 मुनि कराते हैं-

4 मुनि क्षपक के हाथ-पैर दबाना, सुलाना, बैठाना, खड़ा करना आदि कार्य करते हैं।
4 मुनि विकथाओं का त्याग कराकर धर्मोपदेश देते हैं।
4 मुनि क्षपक के योग्य श्रावकों के यहाँ से आहार लेकर आते हैं।
4 मुनि क्षपक के योग्य श्रावकों के यहाँ से पीने योग्य पेय लेकर आते हैं।
4 मुनि उस आहार की रक्षा करते हैं।
4 मुनि क्षपक को मल-मूत्र कराने तथा उसकी वसतिका संस्तर उपकरणों को शोधने का कार्य करते हैं।
4 मुनि वसतिका के द्वार का रक्षण करते हैं, जिससे वहाँ असंयमी प्रवेश न कर सकें।
4 मुनि क्षपक के पास रात्रि में जागरण करते हैं।
4 मुनि उस नगर की शुभाशुभ वार्ता का निरीक्षण करते हैं।
4 मुनि धर्मोपदेश देने के मण्डप के द्वार की रक्षा करते हैं।
4 मुनि श्रोताओं को सभामण्डप में आक्षेपणी आदि कथाओं का तथा स्व-पर मत का सावधानी पूर्वक उपदेश देते हैं।
4 मुनि जो वादी मुनियों की रक्षार्थ सभा में इधर-उधर घूमते रहते हैं। (भ.आ., 648-669)

नोट - अधिकतम 48 मुनि और कम-से-कम 2 मुनि भी सल्लेखना करा सकते हैं।

14. आचार्य एवं उपाध्याय परमेष्ठी सल्लेखना लेने के पूर्व सर्वप्रथम क्या करते हैं ?

आचार्य एवं उपाध्याय पद का त्याग करते हैं, क्योंकि साधु पद से ही मुक्ति होती है। आचार्य एवं उपाध्याय विशेष पद हैं, संघ की व्यवस्था के लिए आवश्यक हैं। कषाय कृश करने का अर्थ यह भी है कि इन पदों का त्याग करे और संघ को छोड़कर अन्यत्र समाधि के लिए जाए, क्योंकि शिष्यों को राग तो रहेगा ही, अतः समाधि में बाधा आ सकती है या सङ्घ को वहाँ से अन्यत्र विहार करा दें जैसा कि आचार्य श्री धरसेनजी ने किया था। आगम के निर्माता तीर्थङ्कर भी आगम की आज्ञा का पालन करते हैं। अर्थात् वे भी योग निरोध के लिए समवसरण का त्याग कर देते हैं। उसी प्रकार आचार्य एवं उपाध्याय भी पद एवं संघ का त्याग कर देते हैं। आचार्य श्री विद्यासागरजी के गुरुआचार्य श्री ज्ञानसागरजी ने भी सल्लेखना के पूर्व आचार्य पद का त्याग कर अपने ही शिष्य को अपना आचार्य पद देकर उन्हें अपना गुरु (आचार्य) माना और उन्हें ही निर्यापक आचार्य बनाकर समाधिमरण किया। यह इतिहास की विशेष घटना थी।

15. जो आचार्य समाधि कराते हैं, उन्हें क्या बोलते हैं ?

समाधि कराने वाले आचार्य को निर्यापक आचार्य कहते हैं।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. काय और कषाय को कृश करने का नाम सल्लेखना नहीं है।
2. सर्दी, बुखार के होने पर सल्लेखना ले सकते हैं।
3. आँखों से दिखाई न देने पर सल्लेखना ले सकते हैं।
4. समाधिमरण में अकालमरण भी सम्भव है।
5. तीर्थङ्करों के शरीर छूटने को च्युत नहीं कहते हैं।
6. आर्यिकाओं के मरण को पण्डित मरण कहते हैं।
7. देवों में तीन प्रकार के मरण नहीं होते हैं।
8. सयोग केवली के मरण को पण्डित-पण्डित मरण कहते हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. निर्यापक आचार्य में कौन-कौन से गुण होते हैं ? (भ.आ., 419-420)
2. सल्लेखना के लिए सबसे अच्छी ऋतु कौन-सी है ? (भ.आ., 630)
3. यम सल्लेखना किसे कहते हैं ? (सुगम है)
4. ऐसे अजैन व्यक्ति का नाम बताइए जिसकी जैनदर्शन के अनुसार सल्लेखना हुई थी ?(विनोवा भावे)
5. क्षुल्लक जिनेन्द्र वर्णी जी की सल्लेखना कहाँ एवं किसके सान्निध्य में हुई थी ? (वि.श.)

अध्याय 41

द्रव्य

जिसका कभी नाश नहीं होता वह द्रव्य है। लोकाकाश सभी द्रव्यों से भरा है, ये द्रव्य कितने होते हैं, इनका क्या लक्षण है, इनका क्या उपकार है। इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. द्रव्य किसे कहते हैं ?

1. जो गुण और पर्याय वाला होता है, उसे द्रव्य कहते हैं। जैसे–स्वर्ण पुद्गल द्रव्य है, रूपवान होना उसका गुण है। हार, मुकुट, कङ्कन आदि द्रव्य की पर्याय हैं तथा पीलापन उसके रूप गुण की पर्याय है। द्रव्य के बिना गुण और पर्याय नहीं होती है, उसी प्रकार गुण व पर्याय के बिना द्रव्य भी नहीं होता है।
2. जो पहले भी था, आज भी है और आगे भी रहेगा अर्थात् जिसका कभी नाश नहीं होता है, उसे द्रव्य कहते हैं।

2. वर्तमान विज्ञान द्रव्य को किस रूप में मानता है ?

वर्तमान विज्ञान कहता है कि हम किसी पदार्थ को न बना सकते हैं और न मिटा सकते हैं, इस सिद्धान्त को अविनाशता के सिद्धान्त से जाना जाता है।

3. द्रव्य कितने होते हैं ?

द्रव्य छः होते हैं –जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल।

4. जीव द्रव्य किसे कहते हैं ?

जिसमें दर्शन, ज्ञान रूप चेतना पाई जाती है, वह जीव द्रव्य है। अथवा जो जीता था, जी रहा है एवं जिएगा, उसे जीव कहते हैं।

5. पुद्गल द्रव्य किसे कहते हैं ?

जिसमें स्पर्श, रस, गंध, वर्ण पाए जाते हैं, जो संवेदन से रहित है, पूरण और गलन स्वभाव वाला है, (पूरण अर्थात् मिलने वाला तथा गलन अर्थात् मिटने वाला है) उसे पुद्गल द्रव्य कहते हैं।

6. पुद्गल को विज्ञान की भाषा में क्या कहते हैं ?

जिस पदार्थ का फ्यूजन एवं फिशन होता है, उसे पुद्गल कहते हैं। फ्यूजन का अर्थ है– एक रूप होना, संयोग पाना और फिशन का अर्थ है – टूटकर फैलना। फ्जूयन एवं फिशन को क्रम से इन्टीग्रेशन और डिसइन्टीग्रेशन भी कहते हैं। इसे मेटर भी कहते हैं।

7. पुद्गल के कितने भेद हैं ?

पुद्गल के 2 भेद हैं –अणु और स्कन्ध।

1. **अणु** – अविभागी 1 प्रदेशी पुद्गल द्रव्य को अणु या परमाणु कहते हैं। अणु 1 प्रदेशी होने से काय नहीं है, अतः शुद्ध अस्तिकाय तो 4 हैं। पुद्गल परमाणु को उपचार से अस्तिकाय कहा है। इस प्रकार अस्तिकाय 5 होते हैं। अस्ति का अर्थ 'है' और काय का अर्थ 'बहु प्रदेशी'।

2. **स्कन्ध** - 2, 3, 4, 8, संख्यात, असंख्यात तथा अनन्त परमाणुओं के पिण्ड को स्कन्ध कहते हैं। स्कन्ध के 6 भेद हैं।

1. **बादर-बादर** - जो पदार्थ छिन्न-भिन्न कर देने पर स्वयं नहीं जुड़ सकते, वे बादर-बादर हैं। जैसे- पत्थर, लकड़ी, धातु, कपड़ा आदि।
2. **बादर** - जो पदार्थ छिन्न-भिन्न कर देने पर स्वयं जुड़ जाते हैं, वे बादर कहलाते हैं। जैसे-जल, दूध, पारा आदि।
3. **बादर-सूक्ष्म** - जो नेत्रों के द्वारा देखा तो जा सके, किन्तु पकड़ में न आ सके, वह बादर-सूक्ष्म है। जैसे-छाया, प्रकाश, अन्धकार, चाँदनी आदि।
4. **सूक्ष्म-बादर**-जो नेत्रों से नहीं दिखते किन्तु शेष इन्द्रियों के द्वारा अनुभव किए जाते हैं, वे सूक्ष्म-बादर हैं। जैसे-हवा, गन्ध आदि।
5. **सूक्ष्म**-जो किसी भी इन्द्रिय का विषय न हो। जैसे-कार्मण स्कन्ध।
6. **सूक्ष्म-सूक्ष्म** -अत्यन्त सूक्ष्म द्वि अणुक को सूक्ष्म-सूक्ष्म स्कन्ध कहते हैं। यह स्कन्ध की अंतिम इकाई है।

8. धर्म द्रव्य किसे कहते हैं ?

जो गतिशील जीव और पुद्गल के गमन, हलन, चलन, आगमन में सहकारी कारण है, उसे धर्म द्रव्य कहते हैं। यह उदासीन रहता है। यह अमूर्त तथा संवेदन शून्य है। यह किसी भी इन्द्रिय का विषय नहीं बनता है, मात्र केवलज्ञानी जानते हैं। जैसे- मछली के तैरने में जल सहायक होता है। हवाई जहाज के चलने में आकाश सहायक है एवं रेल के चलने में पटरी सहायक है।

9. धर्म द्रव्य के बारे में वैज्ञानिकों की क्या मान्यता है ?

विज्ञान इसे ईथर के रूप में स्वीकार करता है। ईथर को अमूर्तिक, व्यापक, निष्क्रिय और अदृश्य के साथ-साथ उसे गति का आवश्यक माध्यम मानता है।

आइंस्टीन ने भी गति हेतुत्व को स्वीकार करते हुए कहा है,''लोक परिमित है, लोक से अलोक अपरिमित है। लोक के परिमित होने का कारण यह है कि द्रव्य अथवा शक्ति लोक के बाहर नहीं जा सकती, लोक के बाहर उस शक्ति का अभाव है, जो गति में सहायक होती है।''

10. अधर्म द्रव्य किसे कहते हैं ?

जो ठहरते हुए जीव और पुद्गलों को रुकने में सहायक है, वह अधर्म द्रव्य है। यह भी उदासीन, अमूर्त, संवेदन शून्य एवं लोकव्यापी है। जैसे-वृक्ष बटोही (पथिक) को रुकने में सहायक है।

11. धर्म द्रव्य तथा अधर्म द्रव्य उदासीन न होते तो क्या होता ?

धर्म द्रव्य तथा अधर्म द्रव्य उदासीन न होते तो आपस में झगड़ा प्रारम्भ हो जाता, क्योंकि धर्म द्रव्य तो जीव तथा पुद्गल को चलने के लिए प्रेरित करता और अधर्म द्रव्य रुकने के लिए प्रेरित करता। इससे व्यवस्था बिगड़ जाती और फिर हम सब न चल पाते, न रुक पाते। अच्छा है, ये उदासीन हैं। कोई चलना चाहे तो धर्म द्रव्य सहायक है। कोई रुकना चाहे तो अधर्म द्रव्य सहायक है।

12. धर्म द्रव्य और अधर्म द्रव्य कहाँ रहते हैं ?

. धर्म और अधर्म द्रव्य समस्त लोकाकाश में व्याप्त हैं। जैसे-तिल में तेल, दूध में घी सर्वत्र ही पाया जाता है, वैसे ही दोनों द्रव्य सम्पूर्ण लोकाकाश में पाए जाते हैं।

13. आकाश द्रव्य किसे कहते हैं ?

जो जीवादि सभी द्रव्यों को अवकाश (स्थान) देता है, वह आकाश द्रव्य है। यह भी अमूर्तिक, संवेदन शून्य एवं निष्क्रिय है।

यद्यपि जीव और पुद्गल भी एक दूसरे को अवकाश देते हैं, किन्तु उन सबका आधार आकाश ही है।

नोट-ऊपर दिखने वाला नीला-नीला यह आकाश नहीं, यह तो पुद्गलों का संचय बादल है।

14. अन्य दर्शन एवं विज्ञान ने आकाश द्रव्य माना कि नहीं ?

अन्य दर्शनों ने भी आकाश द्रव्य को स्वीकार किया है, किन्तु वे उसके लोक, अलोक का भेद नहीं मानते हैं, इसी कारण से उनके यहाँ धर्म और अधर्म द्रव्य की भी मान्यता नहीं है। आधुनिक विज्ञान ने भी आकाश द्रव्य के दोनों भेदों को माना है। जैसे कि धर्म द्रव्य के कथन में आइंस्टीन का दृष्टांत दिया गया है।

15. आकाश के कितने भेद हैं ?

आकाश के दो भेद हैं-

लोकाकाश - जहाँ पर छः द्रव्य रहते हैं।

अलोकाकाश - जहाँ मात्र एक आकाश द्रव्य है।

16. काल द्रव्य किसे कहते हैं ?

वर्तना (परिवर्तन) जिसका प्रमुख लक्षण है। अर्थात् जो स्वयं परिणमन करते हुए अन्य द्रव्यों के परिणमन में उदासीन रूप से सहकारी कारण होता है। पदार्थों में परिवर्तन यह जबरदस्ती नहीं कराता, बल्कि इसकी उपस्थिति में पदार्थ स्वयं परिवर्तित होते हैं। यह तो कुम्हार के चाक के नीचे रहने वाली कील के समान है, जो स्वयं नहीं चलती, न ही चाक को चलाती है, फिर भी कील के अभाव में चाक घूम नहीं सकता है। इसी प्रकार दूसरा उदाहरण भी है-पंखे (सीलिंग फेन) में हेन्डिल जो स्वयं नहीं चलता, न वह पंखे को चलाता है, किन्तु उसके बिना भी पंखा नहीं चलता है। यह भी उदासीन, अमूर्त, संवेदनशून्य एवं लोकव्यापी है।

17. काल के कितने भेद हैं ?

काल के दो भेद हैं -

1. **व्यवहार काल** - मिनट, घंटा, दिन आदि व्यवहार काल हैं।
2. **निश्चय काल** -जो प्रत्येक द्रव्य में प्रति समय परिणमन कराने में सहकारी कारण है, उस द्रव्य को निश्चय काल कहते हैं।

18. समय किसे कहते हैं ?

काल की सबसे छोटी इकाई को समय कहते हैं अथवा एक परमाणु मंदगति से एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश पर जाने में जो काल लगता है, उसे समय कहते हैं।

19. समय तो सत्य है किन्तु निश्चय काल कुछ प्रतीत नहीं होता है ?

यदि समय ही समय मानते तो वह शाश्वत नहीं है, वह उत्पन्न होता है और दूसरे क्षण नष्ट होता है अतः समय पर्याय सिद्ध हुई। अब वह समय नामक पर्याय जिस द्रव्य की है, उसी द्रव्य का नाम निश्चयकाल है।

20. प्रत्येक द्रव्य की संख्या एवं प्रदेश कितने हैं ?

जीव द्रव्य अनन्तानन्त हैं एवं एक जीव असंख्यात प्रदेशी होता है। पुद्गल द्रव्य भी अनन्तानन्त हैं किन्तु जीव द्रव्य से अनन्त गुने होते हैं। पुद्गल द्रव्य संख्यात, असंख्यात एवं अनन्त प्रदेशी भी होते हैं। धर्म द्रव्य एक है वह असंख्यात प्रदेशी है। अधर्म द्रव्य एक है यह भी असंख्यात प्रदेशी है। आकाश द्रव्य एक अखण्ड द्रव्य है। यह अनन्त प्रदेशी है किन्तु लोकाकाश के असंख्यात प्रदेश हैं। काल द्रव्य असंख्यात हैं। यह लोकाकाश में रत्नों की राशि के समान एक-एक प्रदेश पर एक-एक व्याप्त होकर रहते हैं। यह स्वयं एक प्रदेशी है।

21. प्रदेश किसे कहते हैं ?

एक परमाणु आकाश का जितना स्थान घेरता है, वह प्रदेश कहलाता है।

द्रव्यों की संख्या एवं उनके प्रदेशों के लिए तालिका देखें -

द्रव्य	संख्या	प्रदेश
जीव	अनन्तानन्त	असंख्यात प्रदेशी
पुद्गल	अनन्तानन्त	संख्यात, असंख्यात एवं अनन्त प्रदेशी
धर्म	एक	असंख्यात प्रदेशी
अधर्म	एक	असंख्यात प्रदेशी
आकाश	एक (अखण्ड द्रव्य)	अनन्त प्रदेशी
काल	असंख्यात	एक प्रदेशी
आकाश के भेद		
अलोकाकाश	एक	अनन्त प्रदेशी
लोकाकाश	एक	असंख्यात प्रदेशी

22. जीव द्रव्य का क्या उपकार है ?

जीव परस्पर में उपकार करते हैं। आचार्य श्री उमास्वामी महाराज ने तत्त्वार्थसूत्र में कहा है **''परस्परोपग्रहो जीवानाम्''** जैसे-मालिक मुनीम को वेतन देकर उपकार करता है, मुनीम भी ईमानदारी से काम करता है तो दुकान में चार चाँद लग जाते हैं अर्थात् सेठ को ज्यादा लाभ होता है, यह मुनीम का उपकार सेठ के ऊपर है। इसी प्रकार गुरु-शिष्य। भगवान्-भक्त में भी परस्पर उपकार होता है एवं अंधा-लंगड़ा भी आपस में उपकार करते हैं।

23. पुद्गल द्रव्य के उपकार क्या हैं ?

जीव को सुख-दुःख, जीवन-मरण, शरीर, मन, वचन, प्राण और अपान। ये सब पुद्गल द्रव्य के उपकार जीव के ऊपर हैं। पुद्गल का उपकार पुद्गल के ऊपर जैसे-साबुन से कपड़े धोना, राख से बर्तन साफ करना आदि। शेष चार द्रव्यों के लक्षण ही उनके उपकार हैं।

24. लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अनन्तानन्त जीव और अनन्तानन्त पुद्गल कैसे रहते हैं ?

लोकाकाश में अवगाहन शक्ति होने एवं पुद्गल के अणुओं में सूक्ष्म रूप से परिणमन होने के कारण। जैसे-दूध से भरा बर्तन है, उसमें एक बूँद भी दूध डालेंगे तो दूध बाहर आ जायेगा, किन्तु उसमें थोड़ी-थोड़ी शक्कर डालें तो वह घुल जाती है अब उसमें धीरे-धीरे राजगिर के दाने डालें तो वह भी समाहित हो जाएंगे। इसी प्रकार असंख्यात प्रदेशी लोक में अनन्तानन्त जीव, पुद्गल समाहित हो जाते हैं। उदाहरण दूसरा - एक कमरे में एक बल्ब का प्रकाश रहता है, वहाँ हजारों बल्बों का प्रकाश भी समाहित हो जाता है।

25. पुद्गल द्रव्य की पर्याय कौन-कौन सी हैं ?

पुद्गल द्रव्य की निम्न पर्याय हैं- शब्द, बंध, सूक्ष्म, स्थूल, संस्थान, भेद, तम, छाया, आतप और उद्योत आदि हैं।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. द्रव्य का नाश नहीं होता है।
2. स्कन्ध की सबसे छोटी इकाई अणु है।
3. धर्म द्रव्य किसी को जबरदस्ती नहीं चलाता है।
4. आइंस्टीन ने आकाश द्रव्य को माना है।
5. काल की सबसे छोटी इकाई समय नहीं है।

अन्यत्र खोजिए -

1. लोकाकाश का अवगाहन शक्ति के लिए क्षीर-मधु का दृष्टान्त कौन से ग्रन्थ में दिया है ? (ध.पु., 4/23)
2. एक जीव लोकाकाश के कितने प्रदेश में रहता है ? (त.सू., 5/8)
3. काल द्रव्य से अलोकाकाश में कैसे परिवर्तन होता है। दृष्टान्त सहित बताइए ? (पं.का.ता.वृ., 24)

अध्याय 42
जीव

जीव का कभी मरण नहीं होता है, मात्र पर्याय बदलती रहती है। ऐसे जीव के भेद – प्रभेद एवं तीन प्रकार की आत्माओं का वर्णन इस अध्याय में है।

1. जीव किसे कहते हैं ?

जिसमें चेतना पाई जाती है, जो सुख-दुःख का संवेदन करता है, वह जीव है अथवा जो व्यवहार से इन्द्रिय आदि दस प्राणों के द्वारा जीता था, जी रहा है एवं जिएगा, उसे जीव कहते हैं।

2. शुद्ध जीव किसे कहते हैं ?

आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी ने समयसार ग्रन्थ की 54 वीं गाथा में शुद्ध जीव का लक्षण इस प्रकार कहा है-

अरसमरूवमगंधं अव्वत्तं चेदणागुण मसद्दं।
जाण अलिंगग्गहणं जीव मणिद्दिट्ठ संठाणं॥

अर्थ – शुद्ध जीव तो ऐसा है कि जिसमें न रस है, न रूप है, न गन्ध है और न इन्द्रियों के गोचर ही है। केवल चेतना गुण वाला है। शब्द रूप भी नहीं है। जिसका किसी भी चिह्न द्वारा ग्रहण नहीं हो सकता और जिसका कोई निश्चित आकार भी नहीं है।

3. जीव के पर्यायवाची नाम कौन-कौन से हैं ?

जीव के पर्यायवाची नाम निम्न हैं-

प्राणी - इन्द्रिय, बल, श्वासोच्छ्वास और आयु प्राण विद्यमान रहने से यह प्राणी कहलाता है।
आत्मा - नर-नारकादि पर्यायों में 'अतति' अर्थात् निरन्तर गमन करते रहने से आत्मा कहा जाता है।
जन्तु - बार-बार जन्म धारण करने से जन्तु कहलाता है।
पुरुष - पुरु अर्थात् अच्छे-अच्छे भोगों में शयन करने से अर्थात् प्रवृत्ति करने से पुरुष कहा जाता है।
पुमान् - अपनी आत्मा को पवित्र करने से पुमान् कहा जाता है।
अन्तरात्मा - ज्ञानावरणादि आठ कर्मों के अन्तर्वर्ती होने से अन्तरात्मा कहा जाता है।
ज्ञानी - ज्ञान गुण सहित होने से ज्ञानी कहा जाता है।
सत्त्व - अच्छे-बुरे कर्मों के फल से जो नाना योनियों में जन्मते और मरते हैं, वे सत्त्व हैं।
संकुट - अति सूक्ष्म देह मिलने से संकुचित होता है, इसलिए संकुट है।
असंकुट - सम्पूर्ण लोकाकाश को व्याप्त करता है, इसलिए असंकुट है।
क्षेत्रज्ञ - अपने स्वरूप को क्षेत्र कहते हैं, उस क्षेत्र को जानने से यह क्षेत्रज्ञ है।
विष्णु - प्राप्त हुए शरीर को व्याप्त करने से विष्णु है।
स्वयंभू - स्वतः ही उत्पन्न होने से स्वयंभू है।
शरीरी - संसार अवस्था में शरीर सहित होने से शरीरी है।

4. जीव के कितने भेद हैं ?

जीव के दो भेद हैं-

1. **संसारी जीव** - जो चार गति रूप संसार में परिभ्रमण कर रहे हैं, वे संसारी जीव हैं।
2. **मुक्त जीव** - आठ कर्मों से रहित जीवों को मुक्त जीव कहते हैं।

5. संसारी जीव के कितने भेद हैं ?

संसारी जीव के दो भेद होते हैं-

1. **त्रस**- जिनके त्रस नाम कर्म का उदय है, वे त्रस जीव कहलाते हैं।
2. **स्थावर**-जो अपनी रक्षा के लिए भाग-दौड़ न कर सकें। अथवा जिनका स्थावर नाम कर्म का उदय होता है, वे स्थावर कहलाते हैं।

6. त्रस जीव के कितने भेद हैं ?

त्रस जीव के चार भेद हैं- दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय एवं पाँच इन्द्रिय।

7. दो इन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?

जिसके स्पर्शन और रसना ये दो इन्द्रियाँ होती हैं, उसे दो इन्द्रिय जीव कहते हैं। जैसे-लट, केंचुआ, जोंक, सीप, कौड़ी, शंख आदि।

8. तीन इन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?

जिसके स्पर्शन, रसना और घ्राण ये तीन इन्द्रियाँ होती हैं, उसे तीन इन्द्रिय जीव कहते हैं। जैसे-चींटी, खटमल, बिच्छू , घुन, गिंजाई आदि।

9. चार इन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?

जिसके स्पर्शन, रसना,घ्राण और चक्षु, ये चार इन्द्रियाँ होती हैं, उसे चार इन्द्रिय जीव कहते हैं। जैसे-भौंरा, मच्छर, टिड्डी, मधुमक्खी, मक्खी, बर्र, ततैया आदि।

10. पाँच इन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?

जिसके स्पर्शन, रसना,घ्राण,चक्षु और कर्ण, ये पाँच इन्द्रियाँ होती हैं, उसे पाँच इन्द्रिय जीव कहते हैं। जैसे-मनुष्य, सर्प, हाथी, घोड़ा, तोता आदि।

11. पञ्चेन्द्रिय के कितने भेद हैं ?

पञ्चेन्द्रिय के दो भेद हैं-

1. **संज्ञी पञ्चेन्द्रिय** - जो जीव शिक्षा, उपदेश और आलाप को ग्रहण करता है।
2. **असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय** - जो जीव शिक्षा, उपदेश और आलाप को ग्रहण नहीं करता है।

12. संज्ञी जीव कितनी गति में होते हैं ?

संज्ञी जीव चारों गतियों में होते हैं।

13. असंज्ञी जीव कौन-सी गति में होते हैं ?

असंज्ञी जीव मात्र तिर्यञ्चगति में होते हैं। एकेन्द्रिय, दोइन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय तो असंज्ञी ही होते हैं एवं पञ्चेन्द्रिय में कुछ तोता एवं कुछ सरीसृप आदि असंज्ञी होते हैं।

14. स्थावर जीव के कितने भेद हैं ?

स्थावर जीव के 5 भेद हैं-

1. **पृथ्वीकायिक** - पृथ्वी ही जिन जीवों का शरीर है, वे पृथ्वीकायिक हैं। जैसे-मिट्टी, रेत, कोयला, सोना, चाँदी, पत्थर, अभ्रक आदि।
2. **जलकायिक** - जल ही जिन जीवों का शरीर है, उन्हें जलकायिक जीव कहते हैं। जैसे-जल, ओला, कुहरा, ओस आदि।
3. **अग्निकायिक** - अग्नि ही जिन जीवों का शरीर है, उन्हें अग्निकायिक जीव कहते हैं। जैसे-ज्वाला, अङ्गार, दीपक की लौ, कंडे की आग, वज्राग्नि आदि।
4. **वायुकायिक** - वायु ही जिन जीवों का शरीर है, उन्हें वायुकायिक जीव कहते हैं। जैसे-सामान्य पवन, घनवातवलय, तनुवातवलय आदि।
5. **वनस्पतिकायिक**-वनस्पति ही जिन जीवों का शरीर है, वे वनस्पतिकायिक हैं। जैसे-पेड़ आदि।

15. वनस्पतिकायिक के कितने भेद हैं ?

वनस्पतिकायिक के दो भेद हैं।

1. **प्रत्येक वनस्पति** - जिन वनस्पतिकायिक जीवों का शरीर प्रत्येक है अर्थात् एक शरीर का स्वामी एक ही जीव है , उन्हें प्रत्येक वनस्पति कायिक कहते हैं।
2. **साधारण वनस्पति** - जिन वनस्पतिकायिक जीवों का शरीर साधारण है अर्थात् एक शरीर के स्वामी अनेक जीव हैं, उन्हें साधारण वनस्पति कायिक कहते हैं। इनको निगोदिया जीव भी कहते हैं।

16. प्रत्येक वनस्पतिकायिक के कितने भेद हैं ?

प्रत्येक वनस्पतिकायिक के दो भेद हैं -

1. **सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति** - जिस एक शरीर में जीव के मुख्य रहने पर भी उसके आश्रय से अनेक निगोदिया जीव रहें, वह सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति है।
2. **अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति** -जिसके आश्रय से कोई भी निगोदिया जीव न हों, वह अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति है।

17. सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति और साधारण वनस्पति में क्या अंतर है ?

जिनके आश्रय से बादर निगोदिया जीव रहते हैं, वे सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति हैं और जहाँ एक शरीर में अनन्तानन्त जीव रहते हैं, उन्हें साधारण वनस्पति कहते हैं।

18. साधारण वनस्पति के कितने भेद हैं ?

साधारण वनस्पति के 2 भेद हैं-

1. **नित्य निगोद** - जिन्होंने अनादिकाल से आज तक निगोद के अलावा कोई पर्याय प्राप्त नहीं की है, वे नित्य निगोद हैं।
2. **इतर निगोद** - जो नित्य निगोद से निकलकर, अन्य पर्याय प्राप्त कर पुनः निगोद में आ गए हैं, वे इतर (अनित्य) निगोद हैं।

19. दूध जीव है कि अजीव ?

दूध अजीव है।

20. भव्य जीव किसे कहते हैं ?

जिसके सम्यग्दर्शन आदि भाव प्रकट होने की योग्यता है, वह भव्य है।

21. भव्य जीव कितने प्रकार के होते हैं ?

भव्य जीव तीन प्रकार के होते हैं- 1. आसन्न भव्य 2. दूर भव्य 3. अभव्य सम भव्य।

22. आसन्न भव्य किसे कहते हैं ?

जो जीव ''केवली भगवान् का सुख सर्वसुखों में उत्कृष्ट है'' इस वचन का इसी समय विश्वास करते हैं, वे शिवश्री के भाजन आसन्न भव्य हैं।

23. दूर भव्य किसे कहते हैं ?

जो जीव ''केवली भगवान् का सुख सर्वसुखों में उत्कृष्ट है'' इस वचन पर आगे जाकर विश्वास करेंगे, वे दूर भव्य हैं।

24. अभव्यसमभव्य (दूरानुदूर भव्य) किसे कहते हैं ?

दूरानुदूर भव्य को सम्यक्त्व की प्राप्ति नहीं होती है, उनको भव्य इसलिए कहा गया है कि उनमें शक्ति रूप से तो संसार विनाश की संभावना है किन्तु उसकी व्यक्ति नहीं होती है। ये अनादिकाल से अनन्तकाल तक नित्य निगोद पर्याय में ही रहते हैं।

25. अभव्य किसे कहते हैं ?

1. जिसके सम्यग्दर्शन आदि भाव प्रकट होने की योग्यता नहीं है, उसे अभव्य कहते हैं।
2. जो भविष्यत काल में स्वभाव-अनन्त चतुष्टयात्मक सहज ज्ञानादि गुणों रूप से परिणमन के योग्य नहीं हैं, वे अभव्य हैं।

नोट - जीवों के भेद के लिए तालिका देखिए।

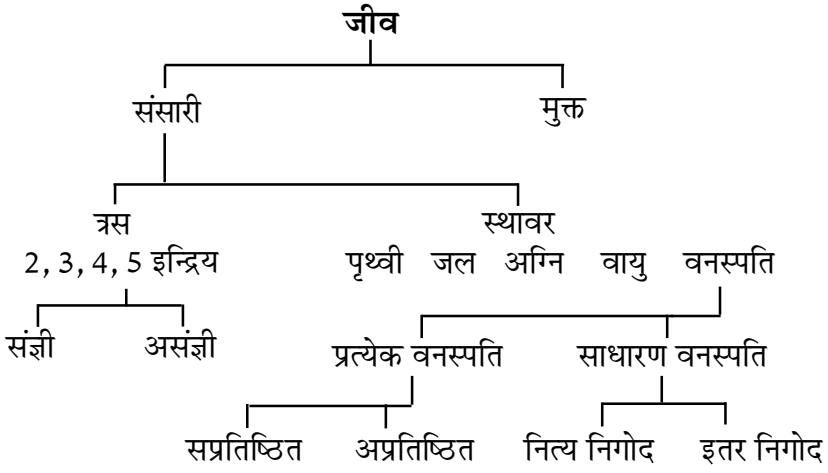

26. पृथ्वीकायिकादि पाँच स्थावरों के कितने-कितने भेद हैं ?

पृथ्वीकायिकादि पाँच स्थावरों के चार-चार भेद हैं -

सामान्यपृथ्वी, पृथ्वीजीव, पृथ्वीकायिक और पृथ्वीकाय।
सामान्यजल, जलजीव, जलकायिक और जलकाय।
सामान्यवायु, वायुजीव, वायुकायिक और वायुकाय।
सामान्यअग्नि, अग्निजीव, अग्निकायिक और अग्निकाय।
सामान्य वनस्पति, वनस्पति जीव, वनस्पतिकायिक और वनस्पतिकाय। (मू.चा.टी., 5/8)

27. पृथ्वीकायिक में चार भेद कैसे बनेंगे ?

पृथ्वीकायिक में चार भेद इस प्रकार बनते हैं-

1. **सामान्यपृथ्वी** - यह सामान्य है, इसमें जीव नहीं है, जैसे-देवों की उपपाद शय्या।
2. **पृथ्वीजीव** - विग्रहगति (कार्मण काययोग)में स्थित जीव है, जो पृथ्वी को अपनी काया बनाने जा रहा है।
3. **पृथ्वीकायिक**-जिसने पृथ्वी में आकर जन्म धारण कर लिया है।
4. **पृथ्वीकाय** -यह भी जीव रहित है। जिसमें से जीव चला गया, मात्र काया पड़ी है, वह पृथ्वीकाय है। जैसे-ईंट, स्वर्ण के आभूषण आदि। (जीवकाण्ड मुख्तारी टीका, गाथा 182)

नोट-इसमें सामान्यपृथ्वी और पृथ्वीकाय तो अचेतन हैं एवं पृथ्वीजीव तथा पृथ्वीकायिक चेतन हैं।

28. जलकायिक के चार भेद कैसे बनेंगे ?

जलकायिक के 4 भेद इस प्रकार बनते हैं-

1. **सामान्यजल** - वर्षा का जल सामान्य जल है। जिसमें अन्तर्मुहूर्त तक जीव नहीं आता है। जिस प्रकार हाइड्रोजन, आक्सीजन के मेल से उत्पन्न H_2O जलसामान्य है। इसमें भी अन्तर्मुहूर्त तक जीव नहीं आता है।
2. **जलजीव** - जो जीव विग्रह गति (कार्मण काय योग) में है, जो जल को अपनी काया बनाने जा रहा है।
3. **जलकायिक** - जिसने जल में आकर जन्म धारण कर लिया है।
4. **जलकाय** - जिसमें से जीव चला गया, मात्र काया पड़ी है-जैसे प्रासुक उबला हुआ जल।

इसी प्रकार अग्निकायिक, वायुकायिक एवं वनस्पतिकायिक में भी 4-4 भेद बनाना चाहिए।

29. निगोदिया जीव कहाँ-कहाँ नहीं होते हैं ?

पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, देव तथा नारकी के शरीर में, आहारक शरीर में, और केवली भगवान् (सयोग, अयोग केवली) के शरीर, इन आठ स्थानों में बादर निगोदिया जीव नहीं होते हैं। सूक्ष्म निगोदिया जीव पूरे लोक में भरे हुए हैं।

30. तीन प्रकार के जीव कौन-कौन से होते हैं, उदाहरण सहित बताइए।

बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा की अपेक्षा जीव तीन प्रकार के होते हैं।

1. **बहिरात्मा** - जिसकी आत्मा मिथ्यात्व रूप परिणत हो, तीव्र कषाय से अच्छी तरह आविष्ट हो और जीव एवं शरीर को एक मानता हो, वह बहिरात्मा है।

   विशेष- प्रथम गुणस्थान में स्थित जीव उत्कृष्ट बहिरात्मा है, दूसरे गुणस्थान वाले मध्यम बहिरात्मा हैं और तीसरे गुणस्थान वाले जघन्य बहिरात्मा हैं। (का.अ.टी., 193)

2. **अन्तरात्मा**- जो जीव जिन वचन में कुशल है, जीव और शरीर के भेद को जानता है तथा जिसने अष्ट दुष्ट मदों को जीत लिया है, वह अन्तरात्मा है।

   विशेष- सातवें गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक के जीव उत्तम अन्तरात्मा हैं, पाँचवें और छठवें गुणस्थान वाले जीव मध्यम अन्तरात्मा हैं तथा चतुर्थ गुणस्थान वाले जीव जघन्य अन्तरात्मा हैं। (का.अ., 195-197)

3. **परमात्मा**- केवलज्ञान के द्वारा सब पदार्थों को जान लेने वाले शरीर सहित अरिहंत और सर्वोत्तम सुख को प्राप्त कर लेने वाले ज्ञानमय शरीर वाले सिद्ध परमात्मा हैं।

   उदाहरण निम्न प्रकार से है-

	बहिरात्मा	अन्तरात्मा	परमात्मा
1.	वृक्ष के शरीर की आत्मा	लौकान्तिक देव	सीमंधर स्वामी
2.	द्वीन्द्रिय के शरीर की आत्मा	सौधर्मेन्द्र	महावीर स्वामी
3.	चींटी	सर्वार्थसिद्धि के देव	हनुमान (कैवल्य अवस्था में)
4.	मिथ्यादृष्टि नारकी की आत्मा	शची	रामचन्द्रजी (कैवल्य अवस्था में)

31 बहिरात्मा अन्तरात्मा के उदाहरण बताइए ?

	बहिरात्मा	अन्तरात्मा
1.	म्यान में तलवार है इसीलिए म्यान को ही तलवार मानता है इसी प्रकार बहिरात्मा मनुष्य शरीर में आत्मा है अतः शरीर को ही आत्मा मानता है।	1. म्यान में तलवार है यह सत्य है पर म्यान, म्यान है। तलवार, तलवार है। मनुष्य शरीर में आत्मा है, पर आत्मा, आत्मा है। शरीर, शरीर है ऐसा मानता है।
2.	छिलका के अंदर मूंगफली है लेकिन छिलके को ही मूंगफली मान लेना।	2 .छिलके में मूंगफली दाना है। ये सत्य है। पर दाना, दाना है। छिलका, छिलका है।
3.	वायर अलग है, करेन्ट अलग है पर वायर को ही करेन्ट मानना।	3 .वायर को वायर और करेन्ट को करेन्ट मानना।
4.	टोंटी के माध्यम से पानी आता है। टोंटी से नहीं। टोंटी से पानी आता। ऐसा मानना	4 .पानी तो टंकी में है। टोंटी के माध्यम से आता है। टोंटी अलग है। पानी अलग है। साभार- आगम की छाँव में : पं. रतनलालजी शास्त्री, इंदौर
5.	ऐसा मानना नरेटी के अन्दर भेला (नारियल) है, किन्तु नरेटी को ही भेला मान लेना	5 .नरेटी में भेला है ये सत्य है,पर भेला, भेला है। नरेटी नरेटी है।
6.	पेन के अन्दर स्याही है, किन्तु पेन को ही स्याही मान लेना।	6 पेन में स्याही है ये सत्य है, पर पेन, पेन है, स्याही स्याही है।

32. अध्यात्म में उपयोग कितने प्रकार के होते हैं ?

अध्यात्म में उपयोग तीन प्रकार के होते हैं। 1. अशुभोपयोग 2. शुभोपयोग 3. शुद्धोपयोग

1. **अशुभोपयोग** - जिसका उपयोग विषय-कषाय में मग्न है, कुश्रुति, कुविचार और कुसङ्गति में लगा हुआ है, उग्र है तथा उन्मार्ग में लगा हुआ है, उसके अशुभोपयोग है। (प्र.सा., 2/66)

2. **शुभोपयोग** – देव-शास्त्र-गुरु की पूजा में तथा दान में एवं सुशीलों में और उपवासादिक में लीन आत्मा शुभोपयोगात्मक है। (प्र.सा., 69)

   जो अरिहंतों को जानता है, सिद्धों तथा अनगारों की श्रद्धा करता है अर्थात् पञ्च परमेष्ठियों में अनुरक्त है और जीवों के प्रति अनुकम्पा युक्त है, उसके शुभोपयोग है। (प्र.सा., 157)

3. **शुद्धोपयोग**- जीवन-मरण आदि में समता भाव रखना ही है लक्षण जिसका ऐसा परम उपेक्षा संयत शुद्धोपयोग है अथवा शुभ-अशुभ से ऊपर उठकर केवल अन्तरात्मा का आश्रय लेना शुद्धोपयोग है।

33. शुद्धोपयोगी कौन हैं ?

सुविदिदपदत्थसुत्तो संजमतवसंजदो विगदरागो।
समणो समसुहदुक्खो भणिदो सुद्धोवओगो त्ति॥ 14 ॥

अर्थ – जिन्होंने पदार्थों को और सूत्रों को भली-भाँति जान लिया है, जो संयम और तपयुक्त हैं, जो वीतराग अर्थात् राग रहित हैं और जिन्हें सुख-दुःख समान हैं, ऐसे श्रमण को शुद्धोपयोगी कहा गया है। (प्र.सा., 14)

34. शुद्धोपयोग के अपर नाम कौन-कौन से हैं ?

उत्सर्गमार्ग, निश्चय मार्ग, सर्व परित्याग, परमोपेक्षा संयम, वीतराग चारित्र और शुद्धोपयोग ये सब पर्यायवाची नाम हैं।

35. कौन से उपयोग का क्या फल है ?

अशुभोपयोग से पाप का सञ्चय होता है, शुभोपयोग से पुण्य का सञ्चय होता है और शुद्धोपयोग से उन दोनों का सञ्चय नहीं होता है। (प्र.सा., 156)

36. कौन-सा उपयोग किन-किन गुणस्थानों में होता है ?

प्रथम गुणस्थान से तृतीय गुणस्थान तक घटता हुआ अशुभोपयोग रहता है, चतुर्थ गुणस्थान से छठवें गुणस्थान तक बढ़ता हुआ शुभोपयोग रहता है तथा सप्तम गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक बढ़ता शुद्धोपयोग रहता है। तेरहवें एवं चौदहवें गुणस्थान में शुद्धोपयोग का फल रहता है। (प्र.सा.टी., 9)

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. आपके दस प्राण हैं, इससे आपको प्राणी कहते हैं।
2. पञ्चेन्द्रिय के दो भेद नहीं हैं।
3. असंज्ञी जीव मात्र एक गति में पाए जाते हैं।
4. संज्ञी जीव तीन गति में पाए जाते हैं।
5. छना हुआ जल जलकाय है।
6. अनार का रस वनस्पति काय है।
7. चींटी के शरीर में निगोदिया जीव नहीं हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. आत्मा की चार अवस्थाएँ होती हैं, संसार, असंसार, नो संसार (ईषत् संसार), विलक्षण संसार। यह कौन-से आचार्य ने कौन-से ग्रन्थ में कहा है ? (रा.वा., 9/7/3)

अध्याय 43

इन्द्रिय

जिसके माध्यम से संसारी जीव सुख–दुःख का अनुभव करता है वह इन्द्रिय है, इसके भेद–प्रभेद, आकार, अवगाहना आदि का वर्णन इस अध्याय में है।

1. **इन्द्रिय किसे कहते हैं ?**
   जिसके द्वारा संसारी जीवों की पहचान होती है, उसे इन्द्रिय कहते हैं।
2. **इन्द्रियाँ कितनी होती हैं ?**
   इन्द्रियाँ 5 होती हैं –
   1. **स्पर्शन इन्द्रिय** – जिसके द्वारा आत्मा स्पर्श करता है, वह स्पर्शन इन्द्रिय है। स्पर्शन इन्द्रिय का विषय स्पर्श है, वह आठ प्रकार का होता है। शीत, उष्ण, रूखा, चिकना, कोमल, कठोर, हल्का और भारी।
   2. **रसना इन्द्रिय** – जिसके द्वारा आत्मा स्वाद लेता है, वह रसना इन्द्रिय है। रसना इन्द्रिय का विषय रस है, वह पाँच प्रकार का होता है। खट्टा, मीठा, कडुवा, कषायला और चरपरा।
   3. **घ्राण इन्द्रिय** – जिसके द्वारा आत्मा सूंघता है, वह घ्राण इन्द्रिय है। घ्राण इन्द्रिय का विषय गन्ध है, वह दो प्रकार की होती है। सुगन्ध और दुर्गन्ध।
   4. **चक्षु इन्द्रिय** – जिसके द्वारा आत्मा देखता है, वह चक्षु इन्द्रिय है, चक्षु इन्द्रिय का विषय वर्ण है। वह पाँच प्रकार का होता है। काला, नीला, पीला, लाल और सफेद।
   5. **श्रोत्र इन्द्रिय** – जिसके द्वारा आत्मा सुनता है, वह श्रोत्र इन्द्रिय है। श्रोत्र इन्द्रिय का विषय शब्द है। वह सात प्रकार का होता है। षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत और निषाद। इन्हें सा, रे, गा, मा, प, ध, नि भी कहते हैं।
3. **स्पर्शन आदि पाँच इन्द्रियों का आकार कैसा है ?**
   स्पर्शन इन्द्रिय अनेक आकार वाली है। रसना इन्द्रिय खुरपा के समान। घ्राण इन्द्रिय तिल के पुष्प के समान। चक्षु इन्द्रिय मसूर के समान और श्रोत्र इन्द्रिय जव की नली के समान।
4. **एकेन्द्रिय आदि जीवों की अवगाहना एवं आयु कितनी है ?**

इन्द्रिय	अवगाहना उत्कृष्ट[1]	अवगाहना जघन्य	उत्कृष्ट किसकी	उत्कृष्ट कहाँ रहता	आयु उत्कृष्ट	आयु जघन्य
एकेन्द्रिय	साधिक1000 योजन[2]	एकेन्द्रिय घनाङ्गुल के असंख्यातवें भाग[3]	कमल	स्वयंभूरमण समुद्र एवं द्वीप में	10,000 वर्ष	अन्तर्मुहूर्त
द्वीन्द्रिय	12 योजन	शेष सब घनाङ्गुल के संख्यातवें भाग[4]	शंख		12 वर्ष	अन्तर्मुहूर्त
त्रीन्द्रिय	3 कोस		कुम्भी		49 दिन	अन्तर्मुहूर्त
चतुरिन्द्रिय	1 योजन		भंवरा		6 माह	अन्तर्मुहूर्त
पञ्चेन्द्रिय	1000 योजन		महामत्स्य		1 पूर्व कोटि	अन्तर्मुहूर्त

नोट – पञ्चेन्द्रिय में महामत्स्य (तिर्यञ्च) की अपेक्षा एक पूर्व कोटि की आयु है। वैसे पञ्चेन्द्रिय की उत्कृष्ट आयु 33 सागर की होती है।

1. त्रि.सा. 325 2. दो कोस अधिक मू.टी. 1072 3. कार्तिकेयानुप्रेक्षा, गाथा 166 4. जीवकाण्ड गाथा 96

5. एकेन्द्रिय के पाँच स्थावरों में आयु, अवगाहना एवं आकार कैसा है ?

जीव	आकार	आयु (उ.)	आयु (ज.)	अवगाहना (उ.)	अवगाहना (ज.)
खर पृथ्वीकायिक	मसूर के समान	22000 वर्ष	सर्वत्र अन्तर्मुहूर्त	घनाङ्गुल के असंख्यातवें भाग	सर्वत्र घनाङ्गुल के असंख्यातवें भाग
शुद्ध पृथ्वीकायिक	,,	12000 वर्ष		,,	
जल	मोती के समान	7,000 वर्ष		,,	
अग्नि	सुई की नोक के समान	3 दिन-रात		,,	
वायु	पताका के समान	3,000 वर्ष		1000 योजन	
वनस्पति	अनेक प्रकार	10,000 वर्ष			

6. चार स्थावरों की जघन्य एवं उत्कृष्ट अवगाहना एक-सी कैसे ?

अङ्गुल के असंख्यातवें भाग के असंख्यात भेद हैं क्योंकि असंख्यात संख्या भी असंख्यात प्रकार की होती है। सामान्य से अङ्गुल के असंख्यातवें भाग हैं तथापि विशेष दृष्टि से उनमें परस्पर में हीनाधिकता है। (जीवकाण्ड, गाथा 184, हिन्दी-रतनचन्द मुख्तार)

7. पाँच इन्द्रियों के अन्तर्भेद कितने-कितने होते हैं, नाम सहित बताइए ?

प्रत्येक दो-दो प्रकार की होती हैं, द्रव्येन्द्रिय एवं भावेन्द्रिय।

8. द्रव्येन्द्रिय किसे कहते हैं ?

निर्वृत्ति और उपकरण को द्रव्येन्द्रिय कहते हैं।

निर्वृत्ति- प्रदेशों की रचना विशेष को निर्वृत्ति कहते हैं, यह दो प्रकार की होती है। बाह्य निर्वृत्ति और आभ्यन्तर निर्वृत्ति।

बाह्य निर्वृत्ति- इन्द्रियों के आकार रूप पुद्गल की रचना विशेष को बाह्य निवृत्ति कहते हैं।

आभ्यन्तर निर्वृत्ति-आत्मा के प्रदेशों की इन्द्रियाकार रचना विशेष को आभ्यन्तर निर्वृत्ति कहते हैं।

9. उपकरण किसे कहते हैं ?

जो निर्वृत्ति का उपकार (रक्षा) करता है, उसे उपकरण कहते हैं। उपकरण दो प्रकार के होते हैं-

1. **बाह्य उपकरण**-नेत्रेन्द्रिय के पलक की तरह, जो निर्वृत्ति का उपकार करे, उसे बाह्य उपकरण कहते हैं।
2. **आभ्यन्तर उपकरण** - नेत्रेन्द्रिय में कृष्ण-शुक्ल मंडल की तरह सभी इन्द्रियों में जो निर्वृत्ति का उपकार करे, उसे आभ्यन्तर उपकरण कहते हैं।

10. भावेन्द्रिय किसे कहते हैं ?

लब्धि और उपयोग को भावेन्द्रिय कहते हैं। ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम को लब्धि कहते हैं एवं जिसके संसर्ग से आत्मा द्रव्येन्द्रिय की रचना के लिए उद्यत होता है, तन्निमित्तक आत्मा के परिणाम को उपयोग कहते हैं।

11. प्राण किसे कहते हैं एवं कितने होते हैं ?

जिस शक्ति के माध्यम से प्राणी जीता है, उसे प्राण कहते हैं। प्राण के मूल में 4 भेद हैं। इन्द्रिय प्राण, बल प्राण, श्वासोच्छ्वास प्राण एवं आयु प्राण। इनके प्रभेद दस हो जाते हैं-1. स्पर्शन इन्द्रिय प्राण, 2. रसना इन्द्रिय प्राण, 3. घ्राण इन्द्रिय प्राण, 4. चक्षु इन्द्रिय प्राण, 5. श्रोत्र इन्द्रिय प्राण, 6. मनोबल प्राण

7. वचन बल प्राण 8. काय बल प्राण 9. श्वासोच्छ्वास प्राण 10. आयु प्राण।

12. एकेन्द्रिय जीवों में कितने प्राण होते हैं ?

एकेन्द्रिय जीवों में 4 प्राण होते हैं- स्पर्शन इन्द्रिय, काय बल, श्वासोच्छ्वास एवं आयु प्राण।

13. दो इन्द्रिय जीवों में कितने प्राण हैं ?

दो इन्द्रिय जीवों में 6 प्राण होते हैं-स्पर्शन, रसना इन्द्रिय, काय बल, वचन बल, श्वासोच्छ्वास एवं आयु प्राण होते हैं।

14. तीन इन्द्रिय जीवों के कितने प्राण होते हैं ?

तीन इन्द्रिय जीव के 7 प्राण होते हैं- स्पर्शन, रसना, घ्राण इन्द्रिय, काय बल, वचन बल, श्वासोच्छ्वास एवं आयु प्राण होते हैं।

15. चार इन्द्रिय जीवों के कितने प्राण होते हैं ?

चार इन्द्रिय जीव के 8 प्राण होते हैं-स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु इन्द्रिय, काय बल, वचन बल, श्वासोच्छ्वास एवं आयु प्राण होते हैं।

16. असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीवों के कितने प्राण होते हैं ?

असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय के 9 प्राण होते हैं- स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र इन्द्रिय, काय बल, वचन बल, श्वासोच्छ्वास एवं आयु प्राण होते हैं।

17. संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीवों के कितने प्राण होते हैं ?

संज्ञी पञ्चेन्द्रिय के 10 प्राण होते हैं।

18. अपर्याप्त अवस्था में कौन-कौन से प्राण नहीं होते हैं ?

अपर्याप्त अवस्था में 3 प्राण नहीं होते हैं। वचन बल, मन बल एवं श्वासोच्छ्वास प्राण।

19. सयोग केवली के कितने प्राण होते हैं ?

सयोग केवली के भावेन्द्रिय एवं भावमन के अभाव में मात्र 4 प्राण होते हैं। काय बल, वचन बल, आयु एवं श्वासोच्छ्वास प्राण।

20. अयोग केवली के कितने प्राण होते हैं ?

अयोग केवली के मात्र 1 आयु प्राण रहता है।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. आम खाने में ठंडा लगा यह रसना इन्द्रिय का विषय है।
2. स्पर्शन इन्द्रिय का आकार खम्भे (स्तम्भ) के समान भी है।
3. चक्षु इन्द्रिय का आकार मसूर की दाल के समान है।
4. एकेन्द्रिय की अवगाहना 1000 योजन (उत्कृष्ट) नहीं है।
5. अग्निकायिक जीवों की आयु 72 घंटे है।

अन्यत्र खोजिए -

1. सूरदासजी के पास कितने प्राण होते हैं ? (चिन्तन कीजिए)
2. कौन-से गुणस्थान में कितने प्राण होते हैं ? (गो.जी.जी., 701)

अध्याय 44

कषाय

जो आत्मा को संसार में परिभ्रमण कराती है, वह कषाय कहलाती है, ऐसी कषाय कितनी होती हैं, उनका स्वरूप क्या है, उनका फल क्या है आदि का वर्णन इस अध्याय में है।

1. कषाय किसे कहते हैं ?

1. जो आत्मा के चारित्र गुण का घात करे, उसे कषाय कहते हैं।
2. कषाय शब्द दो शब्दों के मेल से बना है। 'कष+आय'। कष का अर्थ संसार है क्योंकि इसमें प्राणी अनेक दु:खों के द्वारा कष्ट पाते हैं और आय का अर्थ है 'लाभ'। इस प्रकार कषाय का अर्थ हुआ कि जिसके द्वारा संसार की प्राप्ति हो, वह कषाय है।
3. आत्मा के भीतरी कलुष परिणामों को कषाय कहते हैं, इनके द्वारा जीव चारों गतियों में परिभ्रमण करता हुआ दु:ख प्राप्त करता है। कषाय चुम्बक के समान है, जिसके द्वारा कर्म चिपक जाते हैं।

2. कौन-सी गति में जीव के उत्पन्न होते समय कषाय कौन सी रहती है ?

नरकगति में उत्पन्न जीवों के प्रथम समय में क्रोध का उदय, मनुष्यगति में मान का उदय, तिर्यञ्चगति में माया का उदय और देवगति में लोभ का उदय नियम से रहता है (आ. श्री यतिवृषभ के अनुसार) तथा इन गतियों में इन्हीं कषायों की बहुलता रहती है, किन्तु स्त्रियों में माया कषाय की बहुलता रहती है।

3. कषाय कितने प्रकार की होती हैं ?

कषाय सामान्य से चार प्रकार की होती हैं। क्रोध, मान, माया, लोभ। इनमें अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ। अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ। प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ एवं संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ।

4. अनन्तानुबन्धी कषाय किसे कहते हैं ?

अनन्त भवों को बाँधना ही जिसका स्वभाव है, वह अनन्तानुबन्धी कषाय कहलाती है। यह कषाय सम्यक्त्व और चारित्र दोनों का ही घात करती है। (गो.क., 45)

5. अप्रत्याख्यानावरण कषाय किसे कहते हैं ?

जो देशसंयम का घात करती है, वह अप्रत्याख्यानावरण कषाय है। अप्रत्याख्यान अर्थात् देशसंयम को जो आवरण करे, देशसंयम को न होने दे, वह अप्रत्याख्यानावरण कषाय है। (गो.क., 45)

6. प्रत्याख्यानावरण कषाय किसे कहते हैं ?

जो सकल संयम का घात करती है, वह प्रत्याख्यानावरण कषाय है। प्रत्याख्यान अर्थात् संयम को जो आवरण करे, संयम को न होने दे, वह प्रत्याख्यानावरण कषाय है। (गो.क., 45)

7. संज्वलन कषाय किसे कहते हैं ?

जिस कषाय के रहते सकल संयम तो रहता है किन्तु यथाख्यात संयम प्रकट नहीं हो पाता है, वह संज्वलन कषाय है।

8. कषायों की शक्तियों के दृष्टान्त व फल कौन-कौन से हैं ?

निम्न तालिका में देखें -

कषाय	दृष्टान्त
अनन्तानुबन्धी क्रोध	पत्थर की रेखा के समान।
अप्रत्याख्यानावरण क्रोध	भूमि की रेखा के समान। (पानी से मिट जाती है)
प्रत्याख्यानावरण क्रोध	बालू की रेखा। (हवा से मिट जाती है)
संज्वलन क्रोध	जल की रेखा।
अनन्तानुबन्धी मान	पत्थर का स्तम्भ।
अप्रत्याख्यानावरण मान	अस्थि स्तम्भ। (पुरुषार्थ से मुड़ जाती है)
प्रत्याख्यानावरण मान	काष्ठ का स्तम्भ। (पिच्छी की डंडी)
संज्वलन मान	लता स्तम्भ।
अनन्तानुबन्धी माया	बाँस की जड़।
अप्रत्याख्यानावरण माया	मेढ़े के सींग समान। (बांस की जड़ से कम टेढ़ी)
प्रत्याख्यानावरण माया	गोमूत्र के समान (गो के मूत्र की वक्र रेखा के समान)
संज्वलन माया	खुरपे के समान या लेखनी के समान[1]।
अनन्तानुबन्धी लोभ	कृमिराग के रंग समान।
अप्रत्याख्यानावरण लोभ	गाड़ी का ओंगन। (केरोसिन से साफ हो जाता है)
प्रत्याख्यानावरण लोभ	कीचड़ के समान। (जल से धुल जाता है)
संज्वलन लोभ	हल्दी का रंग।

फल - अनन्तानुबन्धी कषाय का फल नरकगति, अप्रत्याख्यानावरण कषाय का फल तिर्यञ्चगति, प्रत्याख्यानावरण कषाय का फल मनुष्यगति एवं संज्वलन कषाय का फल देवगति है। (गो.जी., 284-287)

9. कषायों का संस्कार काल कितना है ?

अनन्तानुबन्धी कषाय का संस्कार काल छः माह से ज्यादा तथा संख्यात-असंख्यात एवं अनंत भवों तक रहता है। अप्रत्याख्यानावरण का संस्कार काल छः माह तक है। प्रत्याख्यानावरण का संस्कार काल एक पक्ष अर्थात् 15 दिन तक है एवं संज्वलन का संस्कार काल अन्तर्मुहूर्त है। (गो.जी., 46)

10. क्रोध कषाय किसे कहते हैं ?

अपने और पर के उपघात या अनुपकार आदि करने के क्रूर परिणाम क्रोध हैं। इससे किसी का अहित हो या न हो, स्वयं का अवश्य हो जाता है। क्रोध जलते हुए अङ्गारे की तरह है, जिसे दूसरों पर फेंकने से वह जले या न जले, स्वयं का हाथ जल ही जाता है। इसमें हृदय की धड़कन बढ़ जाती है। हाथ-पैर कांपने लगते हैं, आँखें लाल हो जाती हैं, हित-अहित का विवेक समाप्त हो जाता है।

11. क्रोध कषाय के कौन-कौन से कारण हैं ?

क्रोध कषाय के निम्न कारण हैं-1. कषाय का उदय होना, 2. भूख-प्यास के कारण, 3. इच्छा पूर्ति नहीं होना, 4. मेरे सही को कोई गलत कहे, 5. अज्ञान के कारण।

---

1. राजवार्तिक, 8/9/5

12. क्रोध कषाय का फल बताइए ?

1. द्वीपायन मुनि क्रोध के कारण अग्नि कुमार देव हुए।
2. क्रोध के समय किया गया भोजन-पानी भी विष बन जाता है।
3. राजा अरविन्द क्रोध के कारण नरक गया।

13. क्रोध कषाय से कैसे बच सकते हैं ?

क्रोध कषाय से निम्न प्रकार से बच सकते हैं-

1. पर की वेदना को अपनी वेदना समझें।
2. वस्तु स्थिति जानें। नेवला-सर्प-बालक-महिला की कहानी।
3. स्थान परिवर्तन कर देना चाहिए। जैसे-श्रवणकुमार ने किया था।
4. जवाब न देना-मौनेन कलहो नास्ति।
5. कुछ क्षण के लिए ऊपर आकाश की ओर देखें।

14. किसका क्रोध कब तक रहता है ?

1. गुरुजनों का क्रोध प्रणाम करने पर्यन्त रहता है, प्रणाम करने के पश्चात् नष्ट हो जाता है।
2. क्षत्रियों का क्रोध मरण पर्यन्त अर्थात् चिरकाल तक रहता है अथवा उनका क्रोध प्राणों को नष्ट करने वाला होता है।
3. ब्राह्मणों का क्रोध दान पर्यन्त रहता है, दान मिलने से शांत हो जाता है।
4. वणिकों का क्रोध प्रियभाषण पर्यंत होता है, ये लोग मीठे वचनों द्वारा क्रोध को त्यागकर शांत हो जाते हैं।
5. जमींदारों (साहूकारों) का क्रोध उनका कर्जा चुका देने से शांत हो जाता है। (नीतिवाक्यामृत)
6. विद्वानों का क्रोध तब तक रहता है, जब तक वह अपनी प्रशंसा नहीं सुन लेता। प्रशंसा सुनते ही क्रोध शांत हो जाता है।
7. बच्चों का क्रोध तब तक रहता है, जब तक उन्हें उनकी प्रिय वस्तु नहीं मिलती। वह वस्तु मिलते ही क्रोध शांत हो जाता है।
8. महिलाओं का क्रोध तब तक रहता है, जब तक उन्हें मन पसन्द साड़ी और आभूषण नहीं मिलते। ये मिलते ही क्रोध शान्त हो जाता है।

15. मान कषाय किसे कहते हैं ?

रोष से अथवा विद्या, तप और जाति आदि के मद से दूसरों के प्रति नम्र न होने को मान कहते हैं। (ध.पु., 1/351)

16. मान कषाय का क्या फल है ?

रावण विद्याधर मान के कारण नरक गया, दुर्गन्धा नामक बालिका ने अनेक दु:ख भोगे तथा मरीचि को अहंकार के कारण अनेक दुर्गतियों में भटकना पड़ा।

17. मान कषाय को कैसे रोक सकते हैं ?

8 मदों में से जिसका भी मद हो तो अपने से बड़ों को देखो तो मद अपने आप नहीं होगा। ज्ञान का मद है

तो केवलज्ञानी को देखें। धन का मद है तो चक्रवर्ती को देखें। रूप का मद है तो कामदेव को देखें। बल का मद है तो भीम, रावण को देखें। इसी प्रकार और भी जानना चाहिए।

18. माया कषाय किसे कहते हैं ?

1. दूसरे को ठगने के लिए जो कुटिलता या छल आदि किए जाते हैं, वह माया कषाय है।
2. अपने हृदय में विचार को छुपाने की जो चेष्टा की जाती है, उसे माया कषाय कहते हैं। मन, वचन, काय की प्रवृत्ति में एकरूपता नहीं होने को मायाचार कहते हैं। ऐसे व्यक्ति ठगी या मायावी कहलाते हैं। माता-पिता, भाई-बहिन तक उसकी बातों का विश्वास नहीं करते हैं।

19. माया कषाय का क्या फल है ?

1. मायाचार के कारण मृदुमति महाराज भी हाथी की पर्याय में गए।
2. युधिष्ठिर के नाम पर कलंक लगा क्योंकि उन्होंने युद्ध में कहा था ''अश्वत्थामा हतो नरो वा कुञ्जरो''।

20. माया कषाय को कैसे रोक सकते हैं ?

आज तक किसी का मायाचार छिपा नहीं है, वह प्रकट हो ही जाता है। अतः सादगी, सरलता, ईमानदारी, स्पष्टवादिता, कथनी-करनी में एकरूपता, अपने गुणों को छिपाना और दोषों का निकालना आदि के प्रयोग करने से तथा हमेशा याद रखना, दगा किसी का सगा नहीं।

21. लोभ कषाय किसे कहते हैं ?

1. धन आदि की तीव्र आकांक्षा को लोभ कषाय कहते हैं।
2. बाह्य पदार्थों में जो यह मेरा है, इस प्रकार अनुराग रूप बुद्धि होती है, वह लोभ है।
   इसे पाँचों पापों का बाप (पिता) कहा है- लोभी कभी सुखी नहीं होता है, सदा और मिले- सदा और मिले वह चाह की आग में जलता रहता है, न स्वयं भोग पाता है न दूसरों को भोगने देता है।

22. लोभ कषाय का फल क्या है ?

1. लोभ के कारण कौरवों को भी नरक जाना पड़ा।
2. पाप का बाप कौन है, इस प्रश्न के उत्तर में पंडित जी को नगरनारी के द्वारा अपमानित होना पड़ा।
3. वह किसान जिसे 1000 रूबल (रूस की मुद्रा) में इच्छित भूमि मिलने वाली थी लोभ में दौड़-दौड़ कर मर गया।

23. लोभ कषाय से कैसे बच सकते हैं ?

हजारों नदियों से समुद्र की तृप्ति नहीं हुई, हजारों टन ईंधन से अग्नि की तृप्ति नहीं हुई। सागरोपम काल तक स्वर्गों में भोग भोगने से तृप्ति नहीं हुई तो यहाँ 60-70 वर्ष की उम्र में क्या हो सकता है ? भरत चक्रवर्ती भी भाई से लड़े अंत में राज्य छोड़ना पड़ा तो हम सब इसके पीछे क्यों पड़े हैं और अपना जीवन बर्बाद कर रहे हैं। ऐसा विचार करें।

24. नो कषाय किसे कहते हैं ?

नो अर्थात् ईषत् (किंचित्) कषाय का वेदन करावे, उसे नोकषाय या अकषाय कहते हैं।

25. नो कषाय कितनी होती हैं ?

नो कषाय 9 होती हैं -हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद एवं नपुंसकवेद।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. नरकगति में क्रोध कषाय के साथ उत्पन्न नहीं होता है।
2. प्रत्याख्यानावरण के उदय में देशसंयम नहीं रहता है।
3. संज्वलन माया का दृष्टान्त लेखनी के समान है।
4. अनन्तानुबंधी माया का दृष्टान्त बाँस की छाल के समान है।
5. क्रोध के कारण द्वीपायन मुनि अग्निकुमार देव नहीं हुए।
6. गुरुजनों को क्रोध आता है।

अन्यत्र खोजिए -

1. क्रोध कषाय में बन्ध एवं उदय योग्य कितनी प्रकृतियाँ हैं ? (गो.क.जी., 119, 322)

पुत्र

पुत्र चार प्रकार के होते हैं -

1. **लेनदार पुत्र** -जो पिछले जन्म का लेनदार था। पुत्र होकर आ गया। अब उसे पढ़ाओ-लिखाओ, विवाह करो, उसका लेन-देन पूरा होगा और वह चल बसेगा।
2. **दुश्मन पुत्र** - पिछले जन्म का दुश्मन भी पुत्र होकर आ जाता है। ऐसा पुत्र कदम-कदम पर दुःख देता है। जैसे-श्रेणिक का पुत्र कुणिक।
3. **उदासीन पुत्र** - ऐसा पुत्र जो माता-पिता को न सुख देता है, न दुःख। मात्र कहने को पुत्र होता है।
4. **सेवक पुत्र** - पिछले जन्म में तुमने किसी की सेवा की, वही तुम्हारा पुत्र बनकर आया ऐसा पुत्र माता-पिता को बड़ा सुख देता है। जैसे-श्रवणकुमार, राम, भीष्म पितामह आदि।

अध्याय 45

पाप

जिसे सर्वत्र बुरा कहा जाता है ऐसा कार्य पाप कहलाता है। वे कितने होते हैं एवं उनका फल क्या है, इसका वर्णन इस अध्याय में है। पाप के बारे में इतना ही याद रखना कि पाप और पारा कभी पचता नहीं है।

1. **पाप किसे कहते हैं एवं कितने होते हैं ?**
   जिस कार्य के करने से इस लोक में एवं परलोक में अनेक प्रकार के दु:खों को सहन करना पड़ता है और निंदा एवं अपयश को सहन करना पड़ता है, उसे पाप कहते हैं। पाप 5 होते हैं–हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह।
2. **पाप की शाब्दिक परिभाषा क्या है ?**
   ''पाति रक्षति आत्मानं शुभादिति पापम्''। ''तदसद्वेद्यादि''। जो आत्मा को शुभ से बचाता है, वह पाप है। जैसे–असातावेदनीय आदि।
3. **हिंसा किसे कहते हैं ?**
   मन, वचन, काय से किसी भी प्राणी को मारना, दु:ख देना हिंसा कहलाती है एवं स्वयं का घात करना भी हिंसा कहलाती है।
4. **हिंसा कितने प्रकार की होती है ?**
   हिंसा चार प्रकार की होती है–संकल्पी हिंसा, आरम्भी हिंसा, उद्योगी हिंसा एवं विरोधी हिंसा।
   1. **संकल्पी हिंसा** – संकल्प पूर्वक किसी भी प्राणी को मारने का भाव करना यह संकल्पी हिंसा है। संकल्प करने के बाद जीव मरे या न मरे पाप अवश्य ही लगता है। किसी जीव की बलि चढ़ाना, पुतला दहन करना, काष्ठादि में बने चित्रों को मारना, चिड़िया आदि आकार के गोली बिस्कुट खाना, बूचड़खाने की हिंसा, कीटनाशक दवाइयों का प्रयोग करना, वीडियो गेम में चिड़िया को मारना, लक्ष्मण रेखा,मच्छर मारने के बेट आदि का प्रयोग करना, एन्टी पेस्ट इमल्सन कराना संकल्पी हिंसा है।
   2. **आरम्भी हिंसा** –गृहस्थ को भोजन बनाने के लिए पानी भरना, अग्नि जलाना, हवा करना, वनस्पति छीलना, बनाना। घर की सफाई करना, शरीर की सफाई करना, वस्त्र की सफाई करना आदि में षट्काय जीवों की विराधना होती है। यह आरम्भी हिंसा कहलाती है। श्रावक के लिए यह हिंसा क्षम्य है, किन्तु विवेक पूर्वक करें।
   3. **उद्योगी हिंसा** – श्रावक का जीवन धन के बिना नहीं चल सकता है। धन प्राप्ति के लिए वह खेती, व्यापार, सरकारी सेवा आदि कार्य करता है। इसमें जो हिंसा होती है, वह उद्योगी हिंसा है, यह भी श्रावक के लिए क्षम्य है। उद्योगी हिंसा एवं हिंसा के उद्योग में स्वर्ग–पाताल का अंतर है। बूचड़खाने, मछली पालन, मुर्गी पालन आदि के करने में महापाप है, इसे उद्योगी हिंसा में नहीं ले सकते हैं। यह संकल्पी हिंसा है।
   4. **विरोधी हिंसा** – स्वयं की रक्षा, परिवार की रक्षा, समाज की रक्षा, संस्कृति की रक्षा, धर्म आयतनों की रक्षा एवं राष्ट्र की रक्षा के लिए, किसी से युद्ध करना पड़ता है और युद्ध में कोई मर भी जाता है,

तो वह विरोधी हिंसा है। जैसे-लक्ष्मण ने रावण को मारा था। यह हिंसा भी श्रावक के लिए क्षम्य है। श्रावक का मात्र संकल्पी हिंसा का त्याग होता है। आरंभी, उद्योगी एवं विरोधी हिंसा का नहीं।

5. हिंसा का समीकरण क्या है ?

1. **हिंसा न करते हुए हिंसक**- जैसे-धीवर मछली पकड़ने गया। एक भी मछली जाल में नहीं फँसी फिर भी वह हिंसक कहलाएगा। कोई किसी को मारने के उद्देश्य से निकला और वह व्यक्ति नहीं मिला तो भी मारने का पाप लगेगा।
2. **हिंसा हो जाने पर भी हिंसक नहीं** - जैसे-डॉक्टर रोगी का ऑपरेशन कर रोगी को बचाना चाह रहा था, किन्तु वह मरण को प्राप्त हो गया फिर भी डॉक्टर हिंसक नहीं। इसी प्रकार ईर्यासमिति से चलता साधु, फायर ब्रिगेड की गाड़ी, एम्बुलेंस आदि।
3. **हिंसा एक करे- फल अनेक भोगते हैं** - बलि एक व्यक्ति चढ़ा रहा है, हजारों उसकी अनुमोदना (प्रशंसा) कर रहे हैं। सबको पाप लगेगा और सामूहिक पाप का फल भूकम्प, बाढ़, ट्रेन, प्लेन दुर्घटना में हजारों का मरण होना। इसी प्रकार पशु-पक्षियों की लड़ाई में आनंद मानना, पुतला दहन में आनंद मानना आदि।
4. **बहुत से हिंसा करें किन्तु फल एक को** - एक राज्य का स्वामी दूसरे राज्य पर आक्रमण करके उसके साथ युद्ध छेड़ देता है। हजारों सैनिक एक-दूसरे को मारते हुए मर जाते हैं। सबका पाप राजा को लगेगा, सैनिक तो केवल अपनी आजीविका चलाने के लिए शस्त्र चलाते हैं। विवाह में जो भी आरम्भ होता है, उसका पाप दूल्हा एवं दुल्हन को लगता है।
5. **कार्य वही किन्तु परिणामों में अंतर** - पहले कोई आलू-प्याज खाता था एवं स्वयं बनाता भी था। उसने अब आलू-प्याज खाना बंद कर दिया, किन्तु परिवार के लिए बनाना पड़ता है, मजबूरी है। पहले कषाय तीव्र थी, अब मंद कषाय है।

6. हिंसा किन-किन कारणों से होती है ?

हिंसा मुख्य चार कारणों से होती है-

1. **क्रोध के कारण** - जैसे-द्वीपायन मुनि को क्रोध आने के कारण द्वारिका भस्म हो गई थी। तोता-राजा की कहानी। सर्प-नेवला-बेटा, महिला की कहानी आदि।
2. **मान के कारण**-भरतचक्रवर्ती ने बाहुबली पर चक्र चला दिया।
3. **माया के कारण** -1.कई ऐसे व्यक्ति मिलेंगे धन के कारण बालक का अपहरण किया था। पकड़ने के डर से लोग क्या कहेंगे हमारा मायाचार जान लेंगे इस कारण उसे मार देते हैं। 2. स्त्री का दुराचार ज्ञात हो गया तो पति वैराग्य धारण की बात घर में कहता है। स्त्री समझ जाती है, मेरा दुराचार ज्ञात हो गया। इससे दीक्षा ले रहे हैं। वह सोचती ये मेरा मायाचार प्रकट कर देंगे। अतः भोजन में विष मिला देती है और वही भोजन पति को दे देती है। जिससे पति का मरण हो जाता है। 3. गर्भपात भी मायाचार के कारण होता है।
4. **लोभ के कारण** - पाण्डवों को लाक्षागृह में बन्द कर दिया और वहाँ आग लगा दी। भले ही वे सुरंग से निकल गए । बूचड़खाने में जो हिंसा हो रही है, वह भी लोभ के कारण हो रही है।

7. हिंसा त्याग का फल क्या होता है ?

1. खदिरसार भील (राजा श्रेणिक के जीव ने) मात्र कौवे के माँस का त्याग किया था। जिसके कारण अगले ही भव में तीर्थङ्कर पद को प्राप्त करने वाला होगा।

2. यमपाल चाण्डाल ने भी एक दिन (चतुर्दशी) के लिए हिंसा का त्याग करके स्वर्गीय सम्पदा को प्राप्त किया था।

8. हिंसा करने का क्या फल है ?

हिंसा ही दुर्गति का द्वार है,पाप का समुद्र है तथा माँसभक्षी जीव नरकों के दु:खों को भोगते हैं एवं यहाँ भी जेल आदि में यातनाओं को सहन करते हैं। (ज्ञा., 8/17-18)

9. झूठ पाप किसे कहते हैं ?

आँखों से जैसा देखा हो, कानों से जैसा सुना हो वैसा नहीं कहना झूठ है, जिससे किसी का जीवन ही चला जाए, ऐसा सत्य भी नहीं बोलना चाहिए एवं अंधे से अंधा, चोर से चोर, डाकू से डाकू कहना भी असत्य (झूठ) है। क्योंकि अंधे से अंधा कहने में उसे पीड़ा होती है। किसी ने कहा है -

अंधे से अंधा कहो, तुरतई परहै टूट।
धीरे-धीरे पूछ लो, कैसे गई है फूट॥

10. झूठ बोलने के क्या-क्या कारण हैं ?

अज्ञान, क्रोध, लोभ, भय, मान, स्नेह आदि के कारण झूठ बोला जाता है।

लोभ- सत्यघोष नामक पुरोहित लोभ के कारण झूठ बोलता था।

स्नेह- गुरु पत्नी से स्नेह होने के कारण राजा वसु झूठ बोला था। गुरु क्षीरकदम्ब का पुत्र पर्वत, सेठ का पुत्र नारद और राजा का पुत्र वसु की कहानी।

11. झूठ बोलने का फल क्या होता है ?

सत्यघोष ने झूठ बोला। यहाँ अपमान को सहन किया और अब नरकों के दु:खों को सहन कर रहा है।

12. चोरी पाप किसे कहते हैं ?

दूसरों की रखी हुई, गिरी हुई, भूली हुई अथवा नहीं दी हुई वस्तु को लेना या लेकर के दूसरों को देना चोरी कहलाती है। दस प्राण तो सभी जानते हैं, किन्तु 11 वाँ प्राण अन्न है। अन्न के बिना प्राण ठहरते नहीं है। अत: उसे भी प्राण कहा है। अन्न धन से प्राप्त होता है, अत: धन को बारहवाँ प्राण कहा है। अत: किसी के धन की चोरी करने का अर्थ है, उसके प्राण ही ले लेना।

13. चोरी करने के क्या कारण हैं ?

गरीबी के कारण, धनवान बनने के लिए एवं कोई धनवान न रहे गरीब हो जाए, इन तीन कारणों से जीव चोरी करता है।

14. चोरी करने का क्या फल है ?

जब पकड़े जाते हैं तो अनेक प्रकार के दण्ड भोगने पड़ते हैं और कभी किसी को फाँसी भी हो जाती हैं एवं परलोक में नरक आदि के दु:खों को सहन करना पड़ता है।

15. कुशील पाप किसे कहते हैं ?

जिनका परस्पर में विवाह हुआ है, ऐसे स्त्री-पुरुष का एक दूसरे को छोड़कर अन्य स्त्री-पुरुष से सम्बन्ध रखना कुशील कहलाता है एवं गालियाँ देना भी कुशील पाप कहलाता है।

16. कुशील पाप क्यों होता है ?

एक तो चारित्रमोहनीय का तीव्र उदय, दूसरा इन्द्रिय सुख मिले, इस कारण यह कुशील पाप होता है।

17. कुशील पाप का क्या फल है ?

परस्त्री सेवन करने वालों को नरकों में लोहे की गर्म-गर्म पुतलियों से आलिङ्गन करवाया जाता है एवं यहाँ एड्स जैसी बीमारी भी इसी कारण से होती है।

18. परिग्रह पाप किसे कहते हैं ?

क्षेत्र-वास्तु, हिरण्य-सुवर्ण, धन-धान्य, दासी-दास, और कुप्य-भाण्ड इन पदार्थों में मूर्च्छा (तीव्र लालसा) रखना परिग्रह पाप है।

19. परिग्रह क्यों इकट्ठा करते हैं ?

दुनिया में सबसे बड़ा व्यक्ति बनूँ इस भावना को लोग परिग्रह को इकट्ठा करते हैं।

20. परिग्रह के बिना श्रावक का कैसे जीवनयापन होगा ?

जितना आवश्यक है, उतना रखना तो ठीक है। कुछ ज्यादा भी रखते हैं तो समय पर राष्ट्र, धर्म, साधर्मी के लिए दान देना, यह तो संचय कहलाएगा, किन्तु आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का संग्रह करना परिग्रह है।

21. परिग्रह पाप का क्या फल है ?

बहुत परिग्रह जब नष्ट होता है तब मानव आकुल-व्याकुल हो जाता है एवं जब सरकार की ओर से छापे पड़ते हैं तब धन भी चला जाता है और बदनामी भी होती है एवं बहुत परिग्रह वाला नरक आयु का भी बंध करता है।

22. पाँच पापों में प्रसिद्ध होने वालों के नाम बताइए ?

हिंसा पाप में धनश्री नाम की सेठानी, झूठ पाप में सत्यघोष नाम का पुरोहित, चोरी पाप में एक तापसी, कुशील पाप में यमदण्ड नाम का कोतवाल और परिग्रह पाप में श्मश्रुनवनीत नामक वणिक प्रसिद्ध हुए। (र.क.श्रा., 65)

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. जो शुभ से नहीं बचाता है, वह पाप है।
2. श्रावक का चार प्रकार की हिंसा में से एक का भी त्याग नहीं होता है।
3. बूचड़खाने में हो रही पशुओं की हत्या, संकल्पी हिंसा है।
4. खेती में कीटनाशक दवाओं से कीटों को मारना संकल्पी हिंसा है।
5. अन्धे से अन्धा कहना असत्य है।
6. टैक्स चोरी करना, चोरी नहीं है।
7. गालियाँ देना कोई भी पाप नहीं है।
8. कुशील पाप से एड्स की बीमारी होती है।
9. साधु देखकर चल रहा है कोई जीव पैर के नीचे आकर मर गया तो साधु को पाप लगता है।

अन्यत्र खोजिए -

1. पाँच पापों में प्रसिद्ध होने वालों की कथा खोजिए ? (र.श्रा.टी., 65)
2. पाँच पाप दुःख ही हैं, ऐसा सूत्र कौन-से ग्रन्थ में आता है ? (त.सू., 7/10)
3. सत्य बोलने वाला चोरी कर सकता है कि नहीं ? (चिन्तन कीजिए)

अध्याय 46
पर्याप्ति

जिसके माध्यम से संसारी जीव का जीवन चलता है ऐसी पर्याप्ति कितनी होती है, उनका क्या लक्षण है, आदि का वर्णन इस अध्याय में है।

1. पर्याप्ति किसे कहते हैं एवं उसके कितने भेद हैं ?

(अ) परिसमन्तात् आप्ति-पर्याप्तिः शक्तिनिष्पत्तिरित्यर्थः(गो.जी.जी.प्र.2)। चारों तरफ से प्राप्ति को पर्याप्ति कहते हैं, अर्थात् शक्ति का प्राप्त करना पर्याप्ति है।

(ब) जन्म के प्रथम समय से पुद्गल परमाणुओं को ग्रहण कर जीवन धारण में विशेष प्रकार की पौद्गलिक शक्ति की प्राप्ति को पर्याप्ति कहते हैं। पर्याप्ति के छः भेद हैं-

1. **आहार पर्याप्ति** - एक शरीर को छोड़कर नवीन शरीर के साधनभूत जिन नोकर्म वर्गणाओं को जीव ग्रहण करता है। उन वर्गणाओं के परमाणुओं को ठोस (Solid) और तरल (Liquid) रूप में परिणमन (परिवर्तन) के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को आहार पर्याप्ति कहते हैं।
2. **शरीर पर्याप्ति** - जिन परमाणुओं को ठोस रूप परिवर्तित किया था, उसको हड्डी आदि कठिन अवयव रूप और जिनको तरल रूप परिवर्तित किया था, उनको रुधिरादि रूप में परिवर्तित करने के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को शरीर पर्याप्ति कहते हैं।
3. **इन्द्रिय पर्याप्ति** - आहार वर्गणा के परमाणुओं को इन्द्रिय आकार रूप परिवर्तित करने को तथा इन्द्रिय द्वारा विषय ग्रहण करने के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को इन्द्रिय पर्याप्ति कहते हैं।
4. **श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति** - आहार वर्गणा के परमाणुओं को श्वासोच्छ्वास रूप परिवर्तित करने के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति कहते हैं।
5. **भाषा पर्याप्ति** - भाषा वर्गणा के परमाणुओं को वचन रूप परिवर्तित करने के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को भाषा पर्याप्ति कहते हैं।
6. **मनःपर्याप्ति** - मनोवर्गणा के परमाणुओं को हृदयस्थान में अष्टपाखुड़ी के कमलाकार मनरूप परिवर्तित करने को तथा उसके द्वारा यथावत् विचार करने के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को मनःपर्याप्ति कहते हैं।

इन सब पर्याप्तियों में प्रत्येक का काल अन्तर्मुहूर्त है और सबका मिलाकर काल भी अन्तर्मुहूर्त ही है। (मू.चा.टी., 1047)

2. पर्याप्तक, निर्वृत्यपर्याप्तक और लब्ध्यपर्याप्तक किसे कहते हैं ?

पर्याप्तक - पर्याप्त नाम कर्म के उदय से युक्त जिन जीवों की सभी पर्याप्ति पूर्ण हो जाती हैं, उसे पर्याप्तक जीव कहते हैं।

विशेष - किन्हीं आचार्यों ने सभी पर्याप्ति पूर्ण होने पर पर्याप्तक कहा है। किन्हीं आचार्यों ने शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने पर पर्याप्तक कहा है।

निर्वृत्यपर्याप्तक - पर्याप्त नाम कर्म के उदय से युक्त जिन जीवों की पर्याप्तियाँ प्रारम्भ हो गई हैं एवं नियम से पूर्ण होंगी एवं जब तक शरीर पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती है तब तक उन्हें निर्वृत्यपर्याप्तक जीव कहते हैं। (गो.जी., 121)

लब्ध्यपर्याप्तक - अपर्याप्त नाम कर्म के उदय से युक्त जीव, जिसने पर्याप्तियाँ प्रारम्भ की हैं, किन्तु एक भी पर्याप्ति पूर्ण नहीं करता और मरण हो जाता है, उसे लब्ध्यपर्याप्तक जीव कहते हैं। (गो.जी., 122) इनकी आयु श्वास के 18 वें भाग मात्र होती है। (गो.जी.जी., 125)

3. लब्ध्यपर्याप्तक जीव एक अन्तर्मुहूर्त में अधिक-से-अधिक कितने भव धारण कर सकता है ?

एक लब्ध्यपर्याप्तक जीव यदि निरन्तर जन्म-मरण करे तो एक अन्तर्मुहूर्त में अधिक-से-अधिक 66,336 बार जन्म और उतने ही बार मरण कर सकता है। इन भवों में प्रत्येक भव का काल क्षुद्रभव प्रमाण अर्थात् एक श्वास (नाड़ी धड़कन)का अठारहवाँ भाग है, अतः 66,336 भवों के श्वासों का प्रमाण $3685^{1}/_{3}$ होता है। इतने काल में

पृथ्वीकायिक बादर	6012 भव
पृथ्वीकायिक सूक्ष्म	6012 भव
जलकायिक बादर	6012 भव
जलकायिक सूक्ष्म	6012 भव
अग्निकायिक बादर	6012 भव
अग्निकायिक सूक्ष्म	6012 भव
वायुकायिक बादर	6012 भव
वायुकायिक सूक्ष्म	6012 भव
साधारण वनस्पति बादर	6012 भव
साधारण वनस्पति सूक्ष्म	6012 भव
प्रत्येक वनस्पति	6012 भव
एकेन्द्रिय के कुल	66,132 भव
द्वीन्द्रिय	80 भव
त्रीन्द्रिय	60 भव
चतुरिन्द्रिय	40 भव
असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च	8 भव
संज्ञी पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च	8 भव
मनुष्य	8 भव
	66,336 भव (गो.जी., 123-25)

सब मिलकर एक अन्तर्मुहूर्त काल में उत्कृष्ट 66,336 भव होते हैं।

4. लब्ध्यपर्याप्तक, निर्वृत्यपर्याप्तक और पर्याप्त अवस्था किन-किन गुणस्थानों में होती है ?

लब्ध्यपर्याप्तक अवस्था मात्र मिथ्यात्व गुणस्थान में होती है वह भी सम्मूर्च्छन जन्म से उत्पन्न होने वाले मनुष्यगति और तिर्यञ्चगति के जीवों के होती है, अन्य जीवों के नहीं होती है।

निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था मिथ्यात्व, सासादन सम्यक्त्व, अविरत सम्यक्त्व, प्रमत्तविरत (आहारक शरीर की अपेक्षा) और सयोगकेवली (समुद्घात केवली की अपेक्षा) के होती है। पर्याप्त अवस्था सभी गुणस्थानों में होती है।

5. कौन से गुणस्थान में एवं कौन से जीव में कितनी पर्याप्तियाँ होती हैं ?

सभी गुणस्थानों में 6 पर्याप्तियाँ होती हैं किन्तु एकेन्द्रिय में भाषा और मन के बिना 4 पर्याप्तियाँ होती हैं। द्वीन्द्रिय से असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय तक मन के बिना 5 पर्याप्तियाँ होती हैं। संज्ञी पञ्चेन्द्रिय में 6 पर्याप्तियाँ होती है एवं कार्मण काययोग में एक भी पर्याप्ति नहीं होती है। (मू.चा., 1048-49)

6. अनेक स्थानों में अपर्याप्त अवस्था का कथन आता है, वहाँ लब्धि अपर्याप्त या निर्वृत्ति-अपर्याप्त कौन-सा लेना है ?

प्रसंग के अनुसार ही अर्थ लिया जाता है। देव, नारकी, आहारक मिश्र काययोग, कपाट समुद्घात में अपर्याप्त का अर्थ निर्वृत्ति-अपर्याप्त है एवं प्रथम गुणस्थान के मनुष्य, तिर्यञ्चों में, दोनों में से, एक जीव में एक रहेगा, किन्तु द्वितीय, चतुर्थ गुणस्थान में अपर्याप्त का अर्थ निर्वृत्ति-अपर्याप्त ही है। तथा कार्मण काययोग में पर्याप्ति का अभाव होने से सामान्य रूप से अपर्याप्त लिया जाता है।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. भाषा वर्गणा के परमाणुओं को श्वासोच्छ्वास रूप परिवर्तित करने के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को भाषा पर्याप्ति कहते हैं।
2. छठवें गुणस्थान में निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था भी बनती है।
3. प्रत्येक वनस्पति सूक्ष्म लब्ध्यपर्याप्तक के 6012 भव होते हैं।
4. स्थावर कायिक लब्ध्यपर्याप्तक के 66312 भव होते हैं।
5. एक पर्याप्ति पूर्ण होने में अन्तर्मुहूर्त लगता है।
6. असंज्ञी जीवों में 6 पर्याप्तियाँ भी होती हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. कौन सी गति से आने वाले जीव शीघ्र पर्याप्तियाँ पूर्ण कर लेते हैं ? (ध.पु., 4/422)
2. कार्माण काययोग में जीव अनाहारक होता है, वहाँ एक भी पर्याप्ति नहीं होती है किन्तु अयोग केवली गुणस्थान में भी जीव अनाहारक होता है तो वहाँ सभी पर्याप्तियाँ क्यों होती हैं ? (चौ.ठा.)

अध्याय 47
कर्म

संसार में सबसे ज्यादा ईमानदार है तो वह है कर्म। मुनि हो, श्रावक हो, राजा हो या रंक, युवा हो या वृद्ध, कर्म किसी के साथ पक्षपात नहीं करता। जीव जैसा कर्म करता है वैसा ही उसे फल मिलता है। कर्म किसे कहते हैं, कितने होते हैं, उनका बन्ध किन कारणों से होता है, आदि का वर्णन इस अध्याय में है।

1. कर्म किसे कहते हैं ?

जिसके द्वारा आत्मा परतंत्र किया जाता है, उसे कर्म कहते हैं।

2. कर्म के अस्तित्व को कैसे जान सकते हैं ?

जीव और कर्म का अनादिकाल से सम्बन्ध चला आ रहा है। मैं हूँ इस अनुभव से जीव जाना जाता है। संसार में कोई गरीब है, कोई अमीर है, कोई बुद्धिमान है, कोई बुद्धिहीन है, कोई रोगी है, कोई स्वस्थ है, इस विचित्रता से कर्म के अस्तित्व को जान सकते हैं।

3. कर्म किस प्रकार आते हैं ?

जैसे अग्नि से गर्म किया हुआ लोहे का गोला पानी में डालते ही सब तरफ से पानी को ग्रहण करता है, वैसे ही संसारी आत्मा मन–वचन–काय की क्रियाओं से प्रति समय आत्म प्रदेशों से कर्म ग्रहण करता है, हमारे ही राग–द्वेष परिणाम से कर्म आते हैं।

4. कर्म कितने प्रकार के होते हैं ?

कर्म आठ प्रकार के होते हैं–

1. **ज्ञानावरण कर्म** – जो आत्मा के ज्ञान गुण को ढकता है, वह ज्ञानावरण कर्म है।
2. **दर्शनावरण कर्म** – जो आत्मा के दर्शन गुण को ढकता है, वह दर्शनावरण कर्म है।
3. **वेदनीय कर्म** – जो सुख–दु:ख का वेदन (अनुभूति) कराता है, वह वेदनीय कर्म है।
4. **मोहनीय कर्म**– जो आत्मा के सम्यक्त्व और चारित्र गुण को घातता है, वह मोहनीय कर्म है।
5. **आयु कर्म** – जो प्राणी को मनुष्य आदि के शरीर में रोके रखता है, वह आयु कर्म है।
6. **नाम कर्म** – जो अच्छे–बुरे शरीर की संरचना करता है, वह नाम कर्म है।
7. **गोत्र कर्म** – जिस कर्म के उदय से जीव को नीच व उच्च गोत्र की प्राप्ति होती है, वह गोत्र कर्म है।
8. **अंतराय कर्म** – जो दान, लाभ, भोग, उपभोग एवं वीर्य में विघ्न डालता है, वह अंतराय कर्म है।

5. आठ कर्मों के कार्यों को दर्शाने के लिए कौन–कौन से उदाहरण दिए गए हैं ?

आठ कर्मों के कार्यों को दर्शाने के लिए निम्न उदाहरण दिए गए हैं–

ज्ञानावरण कर्म	–	देवता के मुख पर ढके वस्त्र के समान।
दर्शनावरण कर्म	–	द्वारपाल के समान।
वेदनीय कर्म	–	शक्कर की चाशनी से लपेटी तलवार के समान।
मोहनीय कर्म	–	मदिरा के समान।

आयु कर्म – बेड़ी के समान।
नाम कर्म – चित्रकार (पेंटर) के समान।
गोत्र कर्म – कुम्भकार के समान।
अन्तराय कर्म – भण्डारी के समान।

6. इन आठ कर्मों में कितने घातिया और कितने अघातिया हैं ?

घातिया कर्म भी चार हैं एवं अघातिया कर्म भी चार हैं –

1. **घातिया कर्म**–जो जीव के गुणों को घातते हैं, वे घातिया कर्म हैं। वे चार हैं:–ज्ञानावरण कर्म, दर्शनावरण कर्म, मोहनीय कर्म और अन्तराय कर्म। (गो.क., 9)
2. **अघातिया कर्म** – जो उस प्रकार से जीव के गुणों का घात नहीं करते हैं, वे अघातिया कर्म हैं। वे चार हैं :– वेदनीय कर्म, आयु कर्म, नाम कर्म और गोत्र कर्म। (गो.क., 9)

7. ज्ञानावरण कर्म का बंध किन-किन कारणों से होता है ?

ज्ञानावरण कर्म का बंध निम्न कारणों से होता है –

1. शिक्षा गुरु का नाम छिपाना।
2. किसी के अध्ययन में बाधा डालना । जैसे–बिजली बंद कर देना, पुस्तक फाड़ देना, पुस्तक की चोरी कर लेना आदि।
3. किसी के ज्ञान की महिमा को सुनने के बाद मुख से कुछ न कहकर अंतरंग में ईर्ष्या भाव रखना।
4. ज्ञान के साधनों का दुरुपयोग करना।
5. किसी कारण से मैं नहीं जानता ऐसा कहकर ज्ञान का न देना।
6. ज्ञान होने पर भी ईर्ष्या के कारण ज्ञान न देना।
7. दूसरे के द्वारा प्रकाशित ज्ञान को रोकना। (त.सू., 6/10)
8. शास्त्र विक्रय करना आदि कारणों से ज्ञानावरण कर्म का बंध होता है। (रा.वा., 6/10/20)

8. दर्शनावरण कर्म का बंध किन-किन कारणों से होता है ?

दर्शनावरण कर्म का बंध निम्न कारणों से होता है –दर्शन मात्सर्य, दर्शन अन्तराय, आँखें फोड़ना, इन्द्रियों के विपरीत प्रवृत्ति, दृष्टि का गर्व, दीर्घ निद्रा, दिन में सोना, आलस्य, नास्तिकता, सम्यग्दृष्टि में दूषण लगाना, कुतीर्थ की प्रशंसा, हिंसा करना और यतिजनों के प्रति ग्लानि का भाव आदि दर्शनावरण कर्म के बंध के कारण हैं। (रा.वा., 6/10/20)

9. वेदनीय कर्म का बंध किन-किन कारणों से होता है ?

वेदनीय कर्म का बंध निम्न कारणों से होता है –अपने में, दूसरे में, या दोनों में विद्यमान दु:ख, शोक, ताप, आक्रन्दन, वध और परिदेवन आदि असाता वेदनीय कर्म के बंध के कारण हैं तथा सभी प्राणियों पर अनुकम्पा रखने से, व्रतियों पर अनुकम्पा रखने से, दान देने से, सराग संयम, देशसंयम, बालतप, हृदय में शान्ति रखने से और लोभ का त्याग करने से, साता वेदनीय का बंध होता है। (त.सू., 6/11–12)

10. मोहनीय कर्म का बंध किन-किन कारणों से होता है ?

मोहनीय कर्म का बंध निम्न कारणों से होता है –केवली भगवान्, श्रुत, संघ,धर्म एवं देवों में झूठे दोष लगाने से दर्शनमोहनीय अर्थात् मिथ्यात्व का बंध होता है तथा कषायों की तीव्रता से, किसी को चारित्र लेने से रोकने में, चारित्र से भ्रष्ट करने आदि से चारित्र मोहनीय का बंध होता है। (त.सू., 6/13–14)

11. आयु कर्म का बंध किन-किन कारणों से होता है ?

आयु कर्म का बंध निम्न कारणों से होता है -

1. **नरकायु**- बहुत आरम्भ एवं बहुत परिग्रह से। (त.सू., 6/15)
2. **तिर्यञ्चायु** - मायाचारी, अतिसंधान, विश्वासघात, विपरीत मार्ग का उपदेश देने से, (स.सि.,6/16/640) किसी का कर्ज न चुकाने आदि से।
3. **मनुष्यायु** - स्वभाव से मृदुस्वभावी हो, पात्रदान में प्रीति युक्त हो, अल्प आरम्भ, अल्प परिग्रह वाला हो आदि से। (रा.वा., 6/17)
4. **देवायु** - संयम पालन करने से, कषाय की मंदता से, दान देने से, तीर्थों की सेवा से, अकामनिर्जरा, बालतप आदि से। (त.सू., 6/20)

12. नाम कर्म का बंध किन-किन कारणों से होता है ?

नाम कर्म के बंध के निम्न कारण हैं -मन, वचन, काय की कुटिलता अर्थात् सोचना कुछ, बोलना कुछ और करना कुछ, चुगलखोरी, चित्त की अस्थिरता, झूठे मापतौल का प्रयोग करने से, किसी को धोखा देने से, अशुभ नाम कर्म का बंध होता है। (रा.वा., 6/22/1-4) इसके विपरीत मन, वचन, काय की सरलता, चुगलखोरी का त्याग,चित्त की स्थिरता आदि से शुभ नाम कर्म का बंध होता है तथा सोलहकारण भावना से तीर्थङ्कर शुभ नाम कर्म का बन्ध होता है। (त.सू., 6/23)

13. गोत्र कर्म का बंध किन-किन कारणों से होता है ?

गोत्र कर्म के बंध के निम्न कारण हैं -परनिंदा, आत्म प्रशंसा, दूसरे के विद्यमान गुणों को ढकना तथा अपने अविद्यमान गुणों को प्रकट करना, अरिहंत आदि में भक्ति का न होना आदि से नीच गोत्र का बंध होता है तथा इससे विपरीत अपनी निंदा, दूसरे की प्रशंसा, अपने गुणों का आच्छादन (ढकना) तथा पर के गुणों का उद्भावन (प्रकट) करना, अरिहंत आदि में भक्ति युक्त होना, आदि से उच्च गोत्र का बंध होता है। (त.सू., 6/25-26)

14. अन्तराय कर्म का बंध किन-किन कारणों से होता है ?

अन्तराय कर्म के बंध के निम्न कारण हैं -दान आदि में बाधा उपस्थित करने से, जिन पूजा का निषेध करने से, निर्माल्य द्रव्य का सेवन करने से तथा अपनी शक्ति को छिपाने से अंतराय कर्म का बंध होता है। (त.सू., 6/27)

15. द्रव्य कर्म, भावकर्म एवं नोकर्म किसे कहते हैं ?

1. **द्रव्य कर्म** - पुद्गल पिण्ड को द्रव्य कर्म कहते हैं। (गो.क., 6) या सब शरीरों की उत्पत्ति के मूल कारण कार्मण शरीर को कर्म (द्रव्य कर्म) कहते हैं। (रा.वा., 2/25/3)
2. **भाव कर्म** - पुद्गल पिण्ड में जो फल देने की शक्ति है वह भाव कर्म है (गो.का., 6)अथवा राग-द्वेष आदि परिणामों को भाव कर्म कहते हैं।
3. **नोकर्म** - औदारिक, वैक्रियिक , आहारक और तैजस नाम कर्म के उदय से चार प्रकार के शरीर होते हैं। वे नोकर्म शरीर हैं। पाँचवाँ जो कार्माण शरीर है, वह तो कर्म रूप ही है। (गो.जी.,244)

16. ज्ञानावरणादि कर्म क्या कहते हैं ?

1. **ज्ञानावरण कर्म**- ज्ञानावरण कर्म कहता है, मैंने बाहुबली जैसे महापराक्रमी को एक वर्ष तक खड़ा रखा केवलज्ञान नहीं होने दिया।

2. **दर्शनावरण कर्म** – दर्शनावरण कर्म कहता है मैंने यथाख्यात चारित्र वाले को भी आत्मा का दर्शन नहीं होने दिया और उसे नरक निगोद की यात्रा पुनः करा दी।
3. **वेदनीय कर्म** – वेदनीय कर्म कहता है मैंने सनतकुमार मुनिराज के शरीर में सात सौ वर्ष तक कुष्ठ रोग कराया। मुनि वादिराज के शरीर में सौ वर्ष तक कुष्ठ रोग कराया। श्रीपाल जैसे कोटिभट्ट को कोढ़ी बनाकर निकलवाया।
4. **मोहनीय कर्म**– मोहनीय कर्म कहता है मैंने राम जैसे महान् पुरुष को लक्ष्मण के मृतक शरीर को लेकर 6 माह तक कंधे पर रखकर घुमवाया। सीता की जङ्गलों–जङ्गलों में खोज कराई। उपशम श्रेणी तक के मुनिराज को भी प्रथम गुणस्थान में भिजवाया।
5. **आयु कर्म**–आयु कर्म कहता है मैंने राजाश्रेणिक जैसे क्षायिक सम्यग्दृष्टि को एवं रावण, सुभौमचक्रवर्ती आदि जीवों को भी नरक में रोक रखा है।
6. **नाम कर्म** – नाम कर्म कहता है, मैंने अनेक को गूँगा, कुबड़ा, काला, अष्टावक्र (आठ अङ्ग टेड़े) बनाया ।
7. **गोत्र कर्म** – गोत्र कर्म कहता है, मैंने बहुतों को ऊँच–नीच कुल में डाला।
8. **अंतराय कर्म** – अंतराय कर्म कहता है, मैंने आदिनाथ मुनि को 7 माह 9 दिन तक आहार नहीं मिलने दिया।

17. एक जीव के कितने कर्मों का उदय होता है ?

प्रथम गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक आठों कर्मों का तथा ग्यारहवें और बारहवें गुणस्थान में मोहनीय कर्म के अलावा सात कर्मों का एवं तेरहवें और चौदहवें गुणस्थान में चार कर्मों का उदय रहता है।

अभ्यास

सही या गलत बताइए –

1. चींटी के पास आठ कर्म हैं।
2. जल के पास आठ कर्म नहीं हैं।
3. शास्त्र विक्रय से ज्ञानावरण कर्म का बंध होता है।
4. अंतराय कर्म कहता है मैंने आदिनाथ मुनि को 9 माह 7 दिन तक आहार नहीं मिलने दिया।
5. मोहनीय कर्म का उदाहरण बेड़ी के समान है।
6. ज्ञानावरण कर्म का उदाहरण भण्डारी के समान नहीं है।
7. गोत्र कर्म का उदाहरण पेन्टर के समान है।
8. दिन में शयन करने से दर्शनावरण कर्म का बंध होता है।
9. चारित्र लेने से रोकने में दर्शन मोहनीय कर्म का बंध होता है।
10. मोहनीय कर्म कहता है मैंने सीताजी की जङ्गलों – जङ्गलों में खोज कराई।

अन्यत्र खोजिए –

1. आठ कर्म की प्रकृतियाँ कितनी हैं ? (स.सि., 8/6–12/742–757)
2. मुनिराज को आपके यहाँ अंतराय आया तो आपके और महाराज के कौन से अंतराय कर्म का उदय था? (चिन्तन कीजिए)
3. औदारिक आदि चार शरीरों की '' नोकर्म'' संज्ञा क्यों है ? (गो.जी.जी., 244)
4. किस गति में किन–किन गोत्रों का उदय रहता है ? (सू., 8/12)

अध्याय 48
कर्मों की दस अवस्थाएँ

कर्मों का बन्ध जीव स्वयं करता है, स्वयं ही भोगता है, कर्मों की अवस्थाएँ कौन–कौन सी हैं, इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. कर्मों की दस अवस्थाएँ कौन-कौन सी हैं ?

कर्मों की दस अवस्थाएँ इस प्रकार हैं-

1. **बंध** -(अ) ''बंधो णाम दुभाव परिहारेण एयत्तावत्तो'' द्वित्व का त्याग करके एकत्व की प्राप्ति का नाम बंध है। (ब) पुद्गल द्रव्य (कार्मण वर्गणा) का कर्मरूप होकर आत्मप्रदेशों के साथ संश्लेष सम्बन्ध होना बंध है। कर्मों की दस अवस्थाओं में यह प्रथम अवस्था है। बंध के बाद ही अन्य अवस्थाएँ प्रारम्भ होती हैं। गुणस्थान 1 से 13 तक।
2. **सत्त्व** - कर्म बंध के बाद और फल देने से पूर्व बीच की स्थिति को सत्त्व कहते हैं। सत्त्व काल में कर्म का अस्तित्त्व रहता है पर सक्रिय नहीं होता है। जैसे-औषध खाने के बाद वह तुरन्त असर नहीं करती है किन्तु कुछ समय बाद प्रभाव दिखाती है, वैसे ही कर्म भी बंधन के बाद कुछ काल तक सत्ता में बना रहता है बाद में फल देता है। गुणस्थान 1 से 14 तक।
3. **उदय** - (अ) द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के अनुसार कर्मों का फल देना उदय कहलाता है। (ब) आबाधा पूर्ण होने पर निषेक रचना के अनुसार कर्मों का फल प्राप्त होना उदय कहलाता है। गुणस्थान 1 से 14 तक।
4. **उदीरणा** - (अ) उदयावली के बाहर स्थित द्रव्य का अपकर्षण पूर्वक उदयावली में लाना उदीरणा है। (ब) आबाधा काल के पूर्व कर्मों का उदय में आ जाना उदीरणा है। जैसे-कोर्ट में गए आपकी फाइल नीचे रखी थी उसका नम्बर शाम तक आता आपने 50 रुपए दिए (पुरुषार्थ किया) आपकी फाइल 12 बजे ही आ गई। गुणस्थान 1 से 13 तक।
5. **उत्कर्षण** - पूर्व बद्ध कर्मों की स्थिति और अनुभाग में वृद्धि हो जाना उत्कर्षण है। जिस प्रकृति का जब बंध होता है तभी उत्कर्षण होता है। गुणस्थान 1 से 13 तक। जैसे-खदिरसार का उदाहरण चारित्रसार गत श्रावकाचार 17 की टीका में आता है।
6. **अपकर्षण** - पूर्वबद्ध कर्मों की स्थिति व अनुभाग में हानि का होना अपकर्षण है। यह अपकर्षण कभी भी हो सकता है, जैसे-राजा श्रेणिक ने 33 सागर की आयु का बंध किया था। बाद में क्षायिक सम्यग्दर्शन के परिणाम से 84,000 वर्ष की आयु कर ली अर्थात् शेष आयु का अपकर्षण कर लिया। गुणस्थान 1 से 13 तक।
7. **संक्रमण** - जिस प्रकृति का पूर्व में बंध किया था, इसका अन्य प्रकृति रूप परिणमन हो जाना संक्रमण है। गुणस्थान 1 से 10 तक किन्तु 11 वें गुणस्थान में मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व का संक्रमण होता है।

विशेष -

1. मूल प्रकृतियों का परस्पर में संक्रमण नहीं होता है। जैसे-मोहनीय कर्म का संक्रमण वेदनीय में नहीं होता है इसी प्रकार और भी।
2. दर्शनमोहनीय का चारित्रमोहनीय में संक्रमण नहीं होता है।
3. आयु कर्म में संक्रमण नहीं होता है।
8. **उपशम** -जो कर्म उदयावली में प्राप्त न किया जाए अथवा उदीरणा अवस्था को प्राप्त न हो सके वह उपशम करण है। गुणस्थान 1 से 8 तक।
9. **निधत्ति** - कर्म का उदयावली में लाने या अन्य प्रकृति रूप संक्रमण करने में समर्थ न होना निधत्ति है। गुणस्थान 1 से 8 तक।
10. **निकाचित** - कर्म का उदयावली में लाने, अन्य प्रकृति रूप संक्रमण करने में, उत्कर्षण एवं अपकर्षण करने में असमर्थ होना निकाचित है। गुणस्थान 1 से 8 तक।

2. दस करणों के उदाहरण बताइए ?

1. **बन्ध** - 17 अगस्त 2005 को किसी फैक्ट्री में 10 वर्ष के लिए नौकरी पक्की हो जाना।
2. **सत्त्व** - 17 अगस्त 2005 से 1 अक्टूबर 2015 तक का समय।
3. **उदय** - 2 अक्टूबर 2005 से नौकरी पर जाना प्रारम्भ हो जाना।
4. **उपशम**- फैक्ट्री तो पहुँच गए किन्तु फैक्ट्री के ताले की चाबी न मिलने से कुछ समय रुकना पड़ा ।
5. **उदीरणा** - 1अक्टूबर 2005 को ही फैक्ट्री पहुँच जाना।
6. **अपकर्षण** - 10 वर्ष के लिए नौकरी मिली थी, किन्तु बाद में 9 वर्ष के लिए कर दी।
7. **उत्कर्षण** - 10 वर्ष के लिए नौकरी मिली थी, किन्तु बाद में 11 वर्ष के लिए हो गई।
8. **संक्रमण** - फैक्ट्री मालिक ने दूसरी फैक्ट्री में भेज दिया।
9. **निधत्ति** - न 1 अक्टूबर 2005 से नौकरी पर गए न मालिक ने दूसरी फैक्ट्री भेजा यथासमय गए यथास्थान पर रहे।
10. **निकाचित** - न 1 अक्टूबर 2005 से नौकरी पर गए न मालिक ने दूसरी फैक्ट्री भेजा, न ही नौकरी 9 वर्ष की और न ही नौकरी 11 वर्ष की। अर्थात् कार्य सही समय पर सही स्थान में सही समय तक चलता रहा।

3. क्या निधत्ति निकाचित का फल भोगना ही पड़ता है ?

नहीं। जिस प्रकार किसी को मृत्यु दण्ड मिला हो तो राष्ट्रपति उसे अभयदान दे सकता है अर्थात् मृत्युदण्ड को वापस ले सकता है। उसी प्रकार आचार्य श्री वीरसेनस्वामी, श्री धवला, पुस्तक 6 में कहते हैं- **जिणबिंबदंसणेण णिधत्तणिकाचिदस्स वि मिच्छत्तादिकम्मकलावस्स खय दंसणादो।** अर्थात् जिनबिम्ब के दर्शन से निधत्ति और निकाचित रूप भी मिथ्यात्वादि कर्मकलाप का क्षय होता देखा जाता है तथा नौवें गुणस्थान में प्रवेश करते ही दोनों प्रकार के कर्म स्वयमेव समाप्त हो जाते हैं।

4. संक्रमण को भी एक प्रकार से बंध कहा है, क्यों ?

बंध के दो भेद हैं –

1. **अकर्म बंध**–जो कार्मण वर्गणाओं में अकर्मरूप से स्थित परमाणुओं का ग्रहण होता है, वह अकर्म बंध है।
2. **कर्म बंध** – कर्मरूप से स्थित पुद्गलों का अन्य प्रकृति रूप से परिणमन होना कर्म बंध है। इसी से संक्रमण को भी बंध कहा है। जैसे–सातावेदनीय का असाता वेदनीय हो जाना।

5. अपकर्षण एवं उत्कर्षण को भी संक्रमण में क्यों गर्भित किया है ?

अपकर्षण एवं उत्कर्षण में भी कर्म, कर्मरूपता का त्याग किए बिना ही स्थिति अनुभाग रूप से पुनः बंधते हैं, अतः अपकर्षण, उत्कर्षण को भी संक्रमण में गर्भित किया है।

अभ्यास

सही या गलत बताइए –

1. पूर्व बद्ध कर्म स्थिति में वृद्धि होना अपकर्षण है।
2. अग्रिम जमानत कराना उदीरणा है।
3. बंध करण 14 वें गुणस्थान तक नहीं होता है।
4. द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के अनुसार कर्मों का फल देना बंध है।
5. उत्कर्षण गुणस्थान 1–13 तक होता है।
6. राजा श्रेणिक का आयु कर्म का अपकर्षण हुआ था।
7. 11 वें गुणस्थान में संक्रमण नहीं होता।
8. फैक्ट्री मालिक ने दूसरी फैक्ट्री में भेज दिया, यह संक्रमण का उदाहरण है।
9. संक्रमण को एक प्रकार का बंध नहीं कहा है।
10. बंध के दो भेद हैं।

अन्यत्र खोजिए –

1. संक्रमण कितने प्रकार के होते हैं ? (गो.क., 409)
2. स्तिुवक संक्रमण कहाँ पर होता है ? (ल.सा.जी.प्र., 273)

अध्याय 49

आयु बन्ध

सात कर्मों का बन्ध प्रति समय होता रहता है किन्तु आयु कर्म का बन्ध कब होता है, उसकी आबाधा कितनी है, अकाल मरण क्या है आदि का वर्णन इस अध्याय में है।

1. आयु कर्म किसे कहते हैं ?

(अ) जिसके द्वारा जीव नारकादि भवों को जाता है,वह आयु कर्म है।

(ब) जो भव धारण के लिए ले जाता है, वह आयु कर्म है।

(स) जो जीव को गति विशेष में रोके रखता है, वह आयु कर्म है।

2. आयु कर्म का बन्ध कितने अपकर्ष काल में होता है एवं अपकर्ष काल किसे कहते हैं ?

आयु कर्म का बन्ध आठ अपकर्ष काल में होता है। आयु बन्ध के योग्य काल को अपकर्ष काल कहते हैं।

3. कर्मभूमि के मनुष्यों एवं तिर्यञ्चों में आयु बन्ध कब होता है ?

आयु के त्रिभाग में आठ अपकर्ष पड़ते हैं। जैसे-किसी मनुष्य की आयु 729 वर्ष की है, तो 486 वर्ष तक आयु बन्ध होगा ही नहीं, शेष 243 वर्ष के प्रथम समय से लेकर अन्तर्मुहूर्त तक आयु बन्ध होगा। यहाँ न हुआ तो इसी प्रकार आगे-आगे क्रमशः त्रिभाग करेंगे।

243 वर्ष - 162 वर्ष तक नहीं होगा। शेष 81 वर्ष के प्रथम समय से लेकर अन्तर्मुहूर्त तक।

81 वर्ष - 54 वर्ष तक नहीं होगा। शेष 27 वर्ष के प्रथम समय से लेकर अन्तर्मुहूर्त तक।

27 वर्ष - 18 वर्ष तक नहीं होगा। शेष 9 वर्ष के प्रथम समय से लेकर अन्तर्मुहूर्त तक।

9 वर्ष - 6 वर्ष तक नहीं होगा। शेष 3 वर्ष के प्रथम समय से लेकर अन्तर्मुहूर्त तक।

3 वर्ष - 2 वर्ष तक नहीं होगा। शेष 1 वर्ष के प्रथम समय से लेकर अन्तर्मुहूर्त तक।

1 वर्ष - 8 माह तक नहीं होगा। शेष 4 माह के प्रथम समय से लेकर अन्तर्मुहूर्त तक।

120 दिन - 80 दिन तक नहीं होगा । शेष 40 दिन के प्रथम समय से लेकर अन्तर्मुहूर्त तक।

इन आठ अपकर्ष काल में आयु बन्ध नहीं हुआ तो असंक्षेपाद्धाकाल[1] (आँवली का संख्यातवाँ भाग) प्रमाण आयु शेष रहने पर नियम से आयुबन्ध होगा। जैसे-रेल्वे स्टेशन के टिकट घर में लिखा रहता है, गाड़ी छूटने के पाँच मिनट पहले टिकट घर बन्द हो जाएगा। अर्थात् पहले टिकट लो, फिर गाड़ी में बैठो। उसी प्रकार पहले आयु बन्ध कीजिए बाद में दूसरी गति के लिए गाड़ी छूटेगी अर्थात् मरण होगा। आयु कर्म का बन्ध प्रथम अपकर्षकाल से लेकर आठों अपकर्ष कालों में भी हो सकता है।

4. देव एवं नारकियों में आयु बन्ध कब होता है ?

भुज्यमान (वर्तमान) आयु के अंतिम छः माह के आठ अपकर्ष काल में ही आयु बन्ध होता है।

5. भोगभूमि के मनुष्यों एवं तिर्यञ्चों में आयु बन्ध कब होता है ?

इनका भी आयु बन्ध आयु के अंतिम 6 माह के 8 अपकर्ष कालों में होता है एवं किन्हीं के मत से अंतिम नौ माह के आठ अपकर्ष कालों में होता है।

---

1. ध.पु. 14/165

6. अकाल मरण क्या है ?

भुज्यमान आयु (जो आयु वर्तमान में भोग रहे हैं) जितनी थी, उससे पहले मरण हो जाना अकाल मरण है।

7. अकाल मरण किन-किन कारणों से होता है ?

आचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी ने भावपाहुड, गाथा 25 में अकाल मरण के निम्न कारण कहे हैं-

विसवेयण रत्तक्खय भय सत्थग्गहण संकिलेसाणं।
आहारुस्सासाणं णिरोहणा खिज्जए आउ॥

अर्थ—विष की वेदना, रक्तक्षय, भय, शस्त्र की चोट, संक्लेश तथा आहार एवं श्वासोच्छ्वास के निरोध से आयु क्षीण हो जाती है, उसे अकाल मरण या कदलीघात मरण कहते हैं।

8. अकाल मरण क्या चारों गतियों में होता है ?

नहीं। देव, नारकी एवं भोगभूमि के मनुष्य-तिर्यञ्चों का अकाल मरण नहीं होता है। मात्र कर्मभूमि के मनुष्यों एवं तिर्यञ्चों का होता है।

9. क्या सभी मनुष्यों एवं तिर्यञ्चों का अकाल मरण होता है ?

नहीं। जिस जीव ने आगामी आयु का बन्ध (बद्धायुष्क) कर लिया है, उसका अकाल मरण नहीं होता है एवं चरमोत्तम देह वालों का भी नहीं होता, किन्तु चरम देह वालों का अकाल मरण हो सकता है, जैसे- पाण्डव आदि। उत्तम देह वालों का भी अकाल मरण हो सकता है, जैसे-सुभौम चक्रवर्ती, कृष्ण, ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती का हुआ था। जो चरम देह एवं उत्तम देह वाले भी हैं, ऐसे चरमोत्तम देहधारी मात्र तीर्थङ्कर को छोड़कर सभी का अकालमरण संभव है। (त.वृ., 2/53/110) किन्तु आचार्य अकलंकदेव ने राजवार्तिक ग्रन्थ (2/53/6-9) में चरम शब्द उत्तम का विशेषण लिया है। अतः चरमदेह वालों की अकाल मृत्यु नहीं होती है।

10. अकाल मरण कैसे होता है, उदाहरण द्वारा बताइए ?

एक मिट्टी का घड़ा है, उसमें पानी भरा हुआ है। उस घड़े में एक छिद्र है, जिसमें से एक-एक बूँद पानी गिर रहा है, वह घड़ा मान लीजिए 24 घंटे में खाली होता है। उस घड़े को किसी ने पत्थर मार दिया तो पूरा पानी एक साथ बाहर आ गया । उसी प्रकार आयु कर्म के निषेक (एक समय में जितने कर्म परमाणु उदय में आते हैं उनका समूह) हैं, प्रतिसमय खिर (निकल) रहे हैं। इसी प्रकार किसी ने शरीर का घात आदि कर दिया तो एक साथ सारे निषेक खिर जाते हैं। यही अकाल मरण है।

11. भुज्यमान आयु किसे कहते हैं एवं क्या हम भुज्यमान आयु का अपकर्षण-उत्कर्षण कर सकते है ?

जो आयु वर्तमान में भोग रहे वह भुज्यमान आयु है। भुज्यमान आयु का उत्कर्षण तो नहीं हो सकता है किन्तु अपकर्षण हो सकता है।

12. क्या बध्यमान आयु का अपकर्षण-उत्कर्षण होता है ?

बध्यमान आयु का उत्कर्षण एवं अपकर्षण भी होता है। उत्कर्षण तो अपकर्ष काल में ही होता है किन्तु अपकर्षण कभी भी हो सकता है। जैसे-रेत से भरा एक ट्रक जा रहा है, उसमें से थोड़ी-थोड़ी रेत गिर रही

है, अर्थात् अपकर्षण हो रहा है, किन्तु उत्कर्षण करना है अर्थात् उस ट्रक में और रेत डालना है, तो ट्रक को खड़ा करना पड़ेगा तब उसमें और रेत डाल सकते हैं। अर्थात् उत्कर्षण अपकर्ष काल में ही होता है एवं अपकर्षण कभी भी हो सकता है।

13. आठ अपकर्ष कालों में बंधी आयु का समीकरण क्या है ?

पहले अपकर्ष काल में 100 वर्ष की आयु का बन्ध किया, दूसरे अपकर्ष काल में 120 वर्ष की आयु का बन्ध किया तो मुख्यता 120 वर्ष की रहेगी। इसी प्रकार प्रथम अपकर्ष काल में 100 वर्ष की आयु का बन्ध किया, दूसरे अपकर्ष काल में 80 वर्ष की आयु का बंध किया तो मुख्यता 100 वर्ष की रहेगी। (गो.क.जी., 643)

14. आयु कर्म की आबाधा कितनी है ?

आयु कर्म की उत्कृष्ट आबाधा एक पूर्व कोटि का त्रिभाग है एवं जघन्य आबाधा असंक्षेपाद्धा काल प्रमाण (आँवली का संख्यातवां भाग) होती है। (गो.क., 917)

15. आबाधा किसे कहते हैं ?

कर्मबन्ध होने के बाद जब तक वह उदय में नहीं आता है, तब तक उसे आबाधा काल कहते हैं। जैसे- खीर बनकर तैयार हो गयी किन्तु तुरन्त (उसी समय) नहीं खा सकते हैं, जब थोड़ी ठंडी हो जाती है, तब खाते हैं। जो ठंडी होने का समय है, उसे आबाधाकाल कहते हैं।

16. क्या संक्लेश परिणामों से अकालमरण होता है ?

हाँ। अधिक तनाव, अत्यधिक परिश्रम एवं पारिवारिक कलह से बढ़ता हुआ संक्लेश भी अकालमरण का कारण बनता है।

17. बध्यायुष्क किसे कहते हैं एवं क्या बध्यायुष्क सम्यग्दर्शन प्राप्त कर सकता है ?

जिसने आगामी आयु का बन्ध कर लिया, वह बध्यायुष्क कहलाता है। चारों आयु में से किसी भी आयुबन्ध के बाद जीव सम्यग्दर्शन प्राप्त कर सकता है। (गो.क., 334)

18. क्या बध्यायुष्क संयम प्राप्त कर सकता है ?

किसी भी आयु का बन्ध नहीं किया है तो जीव देशसंयम और सकल संयम प्राप्त कर सकता है। देवायु का बन्ध करने के बाद भी जीव देशसंयम और सकल संयम प्राप्त कर सकता है, किन्तु नरकायु, तिर्यञ्चायु एवं मनुष्यायु का बन्ध कर लिया है तो जीव देशसंयम या सकल संयम प्राप्त नहीं कर सकता है। (गो.क., 334)

19. मरण के बाद जीव को पुनः नवीन शरीर प्रारम्भ करने में कितना समय लगता है ?

अधिक-से-अधिक तीन समय। पश्चात् चौथे समय में शरीर की रचना प्रारम्भ कर ही लेता है। मरण के बाद जीव का गमन श्रेणी के अनुसार होता है। लोक के मध्य से लेकर ऊपर नीचे और तिरछे क्रम से स्थित आकाश प्रदेशों की पंक्ति को श्रेणी कहते हैं। जैसे-ग्राफ पेपर या वस्त्र में ताने-बाने होते हैं।

20. जीव मरण के बाद सीधा ही गमन करता है या मुड़ता भी है ?

दोनों प्रकार से। जिसमें जीव को मुड़ना पड़ता है, उसे विग्रहगति कहते हैं या विग्रह अर्थात् शरीर के लिए जो गति होती है, उसे विग्रहगति कहते हैं। जिसमें जीव को मुड़ना नहीं पड़ता, उसे ऋजुगति कहते हैं। (स.सि., 2/25/310)

21. विग्रह गतियाँ कितने प्रकार की हैं ?

विग्रहगतियाँ चार प्रकार की हैं –

1. **इषुगति**–धनुष से छूटे हुए वाण के समान मोड़े से रहित गति को इषुगति कहते हैं। इसमें एक समय लगता है।
2. **पाणिमुक्ता गति** –जैसे–हाथ से छोड़े गए द्रव्य की एक मोड़े वाली गति को पाणिमुक्ता गति कहते हैं। इसमें दो समय लगते हैं।
3. **लाङ्गलिका गति** – जैसे–हल में दो मोड़े होते हैं। उसी प्रकार दो मोड़े वाली गति को लाङ्गलिका गति कहते हैं। इसमें तीन समय लगते हैं।
4. **गोमूत्रिका गति** –जैसे–गाय चलते समय मूत्र (पेशाब) करती है, तब अनेक अर्थात् तीन मोड़े हो जाते हैं, उसी प्रकार तीन मोड़े वाली गति को गोमूत्रिका गति कहते हैं। इसमें चार समय लगते हैं।

22. विग्रह और अविग्रह गति के स्वामी कौन हैं ?

मुक्त जीव की गति विग्रह रहित ही होती है और संसारी जीवों की गति विग्रह रहित व विग्रह सहित दोनों प्रकार की होती है।

अभ्यास

सही या गलत बताइए –

1. अकाल मरण होने वाले जीव की आत्मा भटकती है।
2. आगामी आयुबन्ध के बिना मरण हो सकता है।
3. देवों की भुज्यमान आयु 6 माह शेष रहने पर आयुबन्ध हो सकता है।
4. भुज्यमान आयु का अपकर्षण हो सकता है।
5. बध्यमान आयु का अपकर्षण नहीं हो सकता है।
6. गोमूत्रिका गति में 4 समय लगते हैं।
7. इषुगति में 1 समय नहीं लगता है।
8. मनुष्यों में कदलीघात मरण संभव है।
9. वर्तमान आयु को बध्यमान आयु कहते हैं।
10. संसारी जीव की विग्रह रहित भी गति होती है।

अन्यत्र खोजिए –

1. देवों में आठ अपकर्ष कब–कब होते हैं ? (सुगम है)
2. देव, नारकियों में आयु कर्म की उत्कृष्ट आबाधा कितनी होती है ? (सुगम है)
3. भोगभूमि के मनुष्यों में आयु कर्म की उत्कृष्ट आबाधा कितनी होती है। दोनों मान्यताओं से ?

   (गो.क.जी., 158)
4. सप्तम पृथ्वी में कौन से गुणस्थान में आयु बंध होता है ? (गो.क., 106)

अध्याय 50
गति – आगति

संसारी जीव मरण कर किस–किस गति में जाते हैं एवं उस गति में जीव मरण कर कहाँ–कहाँ से आते हैं और पञ्चम गति अर्थात् मोक्ष कौन प्राप्त करता है। इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. गति-आगति किसे कहते हैं ?

गति का अर्थ जाना अर्थात् उस गति से मरण कर जीव कौन-कौन सी गति में जाते हैं। आगति का अर्थ आना अर्थात् उस गति में जीव कौन-कौन सी गति से मरणकर आते हैं।

2. नरकगति से जीव मरणकर कहाँ-कहाँ जाते हैं एवं नरकगति में जीव मरण कर कहाँ-कहाँ से आते हैं ?

नरकगति से नारकी मरण कर मनुष्य एवं तिर्यञ्चगति में जाते हैं तिर्यञ्च में भी संज्ञी पञ्चेन्द्रिय, पर्याप्त एवं गर्भज ही बनते हैं।

विशेष-सप्तम पृथ्वी से आने वाले जीव तिर्यञ्च ही बनते हैं, किन्तु वह अपने जीवन में सम्यग्दर्शन प्राप्त नहीं कर सकते हैं। छठवीं पृथ्वी से आने वाले मनुष्य और तिर्यञ्च बनते हैं, ये सम्यग्दर्शन और देशसंयम प्राप्त कर सकते हैं किन्तु मनुष्य महाव्रती नहीं बन सकते हैं। पाँचवीं पृथ्वी से आने वाले मनुष्य और तिर्यञ्च बनते हैं, तिर्यञ्च देशव्रती भी बन सकते हैं, मनुष्य देशव्रती, महाव्रती तो बन सकते हैं, किन्तु मोक्ष नहीं जा सकते हैं। चतुर्थ पृथ्वी से आने वाले मनुष्य और तिर्यञ्च बनते हैं, तिर्यञ्च देशव्रती भी बन सकते हैं, मनुष्य महाव्रती बनकर मोक्ष भी जा सकते हैं, किन्तु वह तीर्थङ्कर नहीं बन सकते हैं। तृतीय, द्वितीय एवं प्रथम पृथ्वी से आने वाले, मनुष्य और तिर्यञ्च बनते हैं। तिर्यञ्च देशव्रती भी हो सकते हैं, मनुष्य तीर्थङ्कर भी बन सकते हैं। (रा.वा., 3/6/7)

नरकगति में आने वाले जीव मनुष्य एवं तिर्यञ्च गति से ही आते हैं। किन्तु असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय प्रथम पृथ्वी से आगे नहीं जा सकते हैं। सरीसृप, गोह, द्वितीय पृथ्वी से आगे नहीं जा सकते हैं। पक्षी तृतीय पृथ्वी से आगे नहीं जा सकते हैं। भुजंगादि सर्प चतुर्थ पृथ्वी से आगे नहीं जा सकते हैं। सिंह पञ्चम पृथ्वी से आगे नहीं जा सकते हैं। स्त्रियाँ छठवीं पृथ्वी से आगे नहीं जा सकती हैं। मनुष्य एवं तंदुल मत्स्य सप्तम पृथ्वी तक जा सकते हैं। (त्रि.सा., 205)

3. तिर्यञ्चगति से जीव मरणकर कहाँ-कहाँ जाते हैं एवं तिर्यञ्चगति में जीव मरणकर कहाँ-कहाँ से आते हैं ?

तिर्यञ्चगति से जीव मरणकर चारों गतियों में जाते हैं, किन्तु देवगति में सोलहवें स्वर्ग से आगे नहीं जा सकते हैं। (गो.क., 541)

असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय भी मरणकर चारों गतियों में जाते हैं, किन्तु नरकगति में प्रथम पृथ्वी से आगे नहीं जाते हैं एवं देवगति में भवनवासी एवं व्यंतरों में जाते हैं एवं तिलोयपण्णत्ती, त्रिलोकसार ग्रन्थ के अनुसार

भवनत्रिक में जाते हैं, कल्पवासी में नहीं। एकेन्द्रिय एवं विकलेन्द्रिय मरणकर मनुष्य एवं तिर्यञ्चगति में जाते हैं, किन्तु अग्निकायिक, वायुकायिक मरणकर मात्र तिर्यञ्च ही बनते हैं।

तिर्यञ्चगति में आने वाले चारों गतियों से आते हैं, किन्तु बारहवें स्वर्ग तक के देव तिर्यञ्चगति में आते हैं, उससे ऊपर वाले नहीं। असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय में मनुष्य एवं तिर्यञ्चगति से आते हैं। विकलेन्द्रिय में जीव मनुष्य एवं तिर्यञ्च गति से आते हैं। एकेन्द्रिय में जीव तिर्यञ्च, मनुष्य एवं देवगति से आते हैं किन्तु दूसरे स्वर्ग तक के देव आते हैं उससे ऊपर वाले नहीं तथा एकेन्द्रिय के अग्निकायिक, वायुकायिक जीव तिर्यञ्चगति एवं मनुष्यगति से आते हैं।

4. **मनुष्यगति से मरणकर जीव कहाँ-कहाँ जाते हैं एवं मनुष्यगति में जीव कहाँ-कहाँ से आते हैं ?**

मनुष्यगति से मनुष्य मरणकर चारों गतियों में जाते हैं एवं पञ्चमगति (सिद्धगति) अर्थात् मोक्ष भी जाते हैं। श्रावक सोलहवें स्वर्ग से ऊपर नहीं जा सकते हैं। द्रव्यलिंगी मुनि नवग्रैवेयक तक जा सकते हैं एवं भावलिंगी मुनि प्रथम स्वर्ग से सर्वार्थसिद्धि विमान तक जाते हैं। द्रव्यलिंगी मुनि के गुणस्थान 1 से 5 तक एवं भावलिंगी के गुणस्थान 6 से 12 तक किन्तु बारहवें गुणस्थान में मरण नहीं होता है।

मनुष्य गति में जीव चारों गतियों से आते हैं किन्तु सप्तम पृथ्वी से आने वाले जीव मनुष्य नहीं बनते हैं एवं अग्निकायिक, वायुकायिक, जीव भी मरण करके मनुष्य नहीं बनते हैं।

5. **देवगति से मरण कर जीव कहाँ-कहाँ जाते हैं एवं देवगति में जीव कहाँ-कहाँ से आते हैं ?**

देवगति से मरणकर जीव मनुष्यगति एवं तिर्यञ्चगति में जाते हैं। दूसरे स्वर्ग तक के देव एकेन्द्रिय भी बनते हैं, किन्तु पृथ्वीकायिक, जलकायिक, वनस्पतिकायिक बनते हैं। अग्निकायिक, वायुकायिक नहीं। बारहवें स्वर्ग तक के देव तिर्यञ्च भी बनते हैं, किन्तु इससे ऊपर वाले मनुष्यगति में ही आते हैं। नव ग्रैवेयक तक के देव, स्त्री और नपुंसक भी होते हैं। इसके ऊपर वाले पुरुषवेदी ही होते हैं। (गो.क., 542-543)

नोट-देव विकलचतुष्क में नहीं आते हैं।

देवगति में जीव मनुष्यगति एवं तिर्यञ्चगति से आते हैं, तिर्यञ्च सोलहवें स्वर्ग तक आते हैं किन्तु असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय भवनत्रिक तक आते हैं, इससे ऊपर नहीं। मनुष्य सर्वार्थसिद्धि तक आते हैं।

6. **भोगभूमि के मनुष्य एवं तिर्यञ्च मरणकर कौन-कौन सी गति में जाते हैं एवं भोगभूमि में मनुष्य एवं तिर्यञ्च कौन-कौन सी गति से मरणकर आते हैं ?**

भोगभूमि के मनुष्य एवं तिर्यञ्च मरण कर देवगति में ही जाते हैं, किन्तु मिथ्यादृष्टि और सासादन सम्यग्दृष्टि भवनत्रिक में ही जाते हैं एवं अविरत सम्यग्दृष्टि प्रथम एवं दूसरे स्वर्ग में जाते हैं।

कर्मभूमि के मनुष्य एवं तिर्यञ्च ही भोगभूमि के मनुष्य एवं तिर्यञ्च होते हैं।

7. **कर्मभूमि के कौन से तिर्यञ्च भोगभूमि के मनुष्य एवं तिर्यञ्च होते हैं ?**

कर्मभूमि के संज्ञी पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च ही भोगभूमि के मनुष्य एवं तिर्यञ्च होते हैं।

8. **महापुरुष मरणकर कौन-कौन सी गतियों में जाते हैं एवं कौन-कौन सी गतियों के जीव मरणकर महापुरुष होते हैं ?**

महापुरुष	गति	आगति
तीर्थङ्कर	मोक्षगति	नरकगति और देवगति।
चक्रवर्ती	नरकगति, देवगति और मोक्षगति	देवगति।
बलभद्र	देवगति और मोक्षगति	देवगति।
नारायण (वासुदेव)	नरकगति	देवगति।
प्रतिनारायण (प्रतिवासुदेव)	नरकगति	देवगति।
कुलकर	देवगति	मनुष्यगति।
नारद	नरकगति	
रुद्र	नरकगति	
कामदेव	मोक्षगति	
तीर्थङ्कर की माता	देवगति	
तीर्थङ्कर के पिता	देवगति और मोक्षगति	

9. अन्य मतावलम्बी साधु मरणकर कौन से स्वर्ग तक जाते हैं ?

चरक	ब्रह्मोत्तर स्वर्ग तक	(त्रि.सा., 547)
परिव्राजक	ब्रह्म स्वर्ग तक	(रा.वा., 4/21/10)
आजीवक	सहस्रार स्वर्ग तक	,,
तापस	भवनत्रिक तक	(त्रि.सा., 546)

चरक - नग्नाण्ड है जिनका लक्षण, ऐसे चरक कहलाते हैं।

परिव्राजक -एक दण्डि, त्रि दण्डि, ऐसे परिव्राजक कहलाते हैं।

आजीवक - काँजी का भोजन करने वाले नग्न आजीवक होते हैं। काँजी अर्थात् खट्टा किया हुआ जल। (त्रि.सा., 547 का विशेषार्थ)

तापस - पञ्चाग्नि तप तपने वाले तपस्वी तापस कहलाते हैं।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. सोलहवें स्वर्ग से आने वाले देव तिर्यञ्च बन सकते हैं।
2. चींटी मरणकर दूसरे स्वर्ग तक जा सकती है।
3. भोगभूमि के मनुष्य मरणकर दूसरे स्वर्ग तक जाते हैं।
4. प्रथम पृथ्वी का नारकी मरणकर असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय में आ सकता है।
5. मनुष्य मरणकर अग्निकायिक जीवों में उत्पन्न हो सकता है।

अन्यत्र खोजिए -

1. आजीवक सोलहवें स्वर्ग तक उत्पन्न हो सकता है, ऐसा कौन-कौन से ग्रन्थों में लिखा है ?

(त्रि.सा.टी, 547)

2. कौन से ग्रन्थ में लिखा है कि सप्तम पृथ्वी से आने वाला सम्यग्दर्शन प्राप्त कर सकता है ?

(त्रि.प., 2/292)

अध्याय 51

जन्म

संसारी जीव का मरण के बाद नियम से जन्म होता है। वह जन्म कितने प्रकार का होता है। योनि एवं जन्म में क्या भेद है आदि का वर्णन इस अध्याय में है।

1. जन्म किसे कहते हैं ?

पूर्व शरीर को त्यागकर नवीन शरीर धारण करने को जन्म कहते हैं।

2. जन्म के कितने भेद हैं ?

जन्म के तीन भेद हैं –

1. **सम्मूर्च्छन जन्म** – जो चारों ओर के वातावरण से शरीर के योग्य पुद्गलों को ग्रहण करते हैं, वह सम्मूर्च्छन जन्म है। जैसे –चुम्बक अपने योग्य लोह कण को ग्रहण करता है।
2. **गर्भ जन्म** – माता के उदर में रज और वीर्य के परस्पर गरण अर्थात् मिश्रण को गर्भ कहते हैं। अथवा माता के द्वारा उपभुक्त आहार के गरण होने को गर्भ कहते हैं। और इससे होने वाले जन्म को गर्भ जन्म कहते हैं।
3. **उपपाद जन्म** –देव–नारकियों के उत्पत्ति स्थान विशेष को उपपाद और उनके जन्म को उपपाद जन्म कहते हैं। (स.सि., 3/31/322)

3. गर्भ जन्म के कितने भेद हैं ?

गर्भ जन्म के तीन भेद हैं –

1. **जरायुज** – जन्म के समय प्राणियों के ऊपर जाल की तरह खून और माँस की जाली सी लिपटी रहती है, उसे जरायु कहते हैं और जरायु से उत्पन्न होने वाले जरायुज कहलाते हैं। जैसे–गाय, भैंस, मनुष्य, बकरी आदि।
2. **अण्डज** – जो नख की त्वचा के समान कठिन (कठोर) है, गोल है और जिसका आवरण शुक्र और शोणित से बना है, उसे अण्ड कहते हैं और जो अण्डों से पैदा होते हैं, वे अण्डज कहलाते हैं। जैसे– कबूतर, चिड़िया, छिपकली और सर्प आदि।
3. **पोत** – जो जीव जन्म लेते ही चलने–फिरने लगते हैं, उनके ऊपर कोई आवरण नहीं रहता है, उन्हें पोत कहते हैं। जैसे–हिरण, शेर आदि।

नोट–जरायुज में माँस की थैली में उत्पन्न होता है और अण्डज में अण्डे के भीतर उत्पन्न होकर बाहर निकलता है वैसे पोत में किसी आवरण से युक्त नहीं होता, इसलिए पोतज नहीं कहलाता है, पोत कहलाता है। (रा.वा., 3/33 /1–5)

4. कौन से जीवों का कौन–सा जन्म होता है ?

देव और नारकियों का	–	उपपाद जन्म।
मनुष्यों और तिर्यञ्चों का	–	गर्भ जन्म और सम्मूर्च्छन जन्म।

1, 2, 3, 4 इन्द्रियों का – सम्मूर्च्छन जन्म।
लब्धि अपर्याप्तक मनुष्य एवं तिर्यञ्चों का – सम्मूर्च्छन जन्म।

5. योनि किसे कहते हैं ?

जिसमें जीव जाकर उत्पन्न हो, उसका नाम योनि है।

6. योनि और जन्म में क्या भेद है ?

योनि आधार है और जन्म आधेय है।

7. योनि के मूल में कितने भेद हैं ?

योनि के मूल में 2 भेद हैं। गुण योनि और आकार योनि। गुण योनि के मूल में 9 भेद और उत्तर भेद 84 लाख हैं।

गुण योनि के 9 भेद इस प्रकार हैं :-

1. सचित्त योनि – जो योनि जीव प्रदेशों से अधिष्ठित हो।
2. अचित्त योनि – जो योनि जीव प्रदेशों से अधिष्ठित न हो।
3. सचित्ताचित्त योनि – जो योनि कुछ भाग में जीव प्रदेशों से अधिष्ठित हो और कुछ भाग जीव प्रदेशों से अधिष्ठित न हो।
4. शीत योनि – जिस योनि का स्पर्श शीत हो।
5. उष्ण योनि – जिस योनि का स्पर्श उष्ण हो।
6. शीतोष्ण योनि – जिस योनि का कुछ भाग शीत हो, कुछ भाग उष्ण हो।
7. संवृत योनि – जो योनि ढकी हो।
8. विवृत योनि – जो योनि खुली हो।
9. संवृतविवृत योनि – जो योनि कुछ ढकी हो कुछ खुली हो।

8. आकार योनि के कितने भेद हैं ?

आकार योनि के तीन भेद हैं –

1. **शंखावर्त** – इसमें गर्भ रुकता नहीं है।
2. **कूर्मोन्नत** – इसमें तीर्थङ्कर, चक्रवर्ती, अर्द्धचक्रवर्ती, बलदेव तथा साधारण मनुष्य भी उत्पन्न होते हैं।
3. **वंशपत्र** – इसमें शेष सभी गर्भ जन्म वाले जीव जन्म लेते हैं।

9. कौन से जीव की कौन-सी योनि होती है ?

देव और नारकियों की अचित्त योनि होती है, क्योंकि उनके उपपाद देश के पुद्गल प्रचयरूप योनि अचित्त है। गर्भजों की मिश्र योनि होती है, क्योंकि उनकी माता के उदर में शुक्र और शोणित अचित्त होते हैं, जिनका सचित्त माता की आत्मा से मिश्रण है इसलिए वह मिश्रयोनि है। संमूर्च्छनों की तीन प्रकार की योनियाँ होती हैं। किन्हीं की सचित्त योनि होती है अन्य की अचित्त योनि होती है और दूसरों की मिश्र योनि होती है। साधारण शरीर वाले जीवों की सचित्त योनि होती है, क्योंकि ये एक-दूसरे के आश्रय से रहते हैं। इनसे अतिरिक्त शेष संमूर्च्छन जीवों के अचित्त और मिश्र दोनों प्रकार की योनियाँ होती हैं। देव और नारकियों की शीत और उष्ण दोनों प्रकार की योनियाँ होती हैं; क्योंकि उनके कुछ उपपादस्थान शीत

हैं और कुछ उष्ण। अग्निकायिक जीवों की उष्ण योनि होती है। इनसे अतिरिक्त जीवों की योनियाँ तीनों प्रकार की होती हैं। देव, नारकी और एकेन्द्रियों की संवृत योनियाँ होती हैं। विकलेन्द्रियों की विवृत योनि होती है तथा गर्भजों की मिश्र योनियाँ होती हैं। (स.सि., 2/32/324)

सुविधा के लिए तालिका देखिए-

सचित्त योनि	–	साधारण शरीर
अचित्त योनि	–	देव, नारकी
मिश्र योनि	–	गर्भज
अचित्त और मिश्र योनि	–	शेष संमूर्च्छनों की
शीत और उष्ण योनि	–	देव, नारकी
उष्ण योनि	–	अग्निकायिक
शीत, उष्ण और मिश्रयोनि	–	इनके अतिरिक्त
संवृत योनि	–	देव, नारकी, एकेन्द्रिय
विवृत योनि	–	विकलेन्द्रिय एवं शेष संमूर्च्छनों की
मिश्र योनि	–	गर्भजों की

10. चौरासी लाख योनि कौन सी हैं ?

चौरासी लाख योनि निम्न हैं-

1.	नित्य निगोद	7 लाख
2.	इतर निगोद	7 लाख
3.	पृथ्वीकायिक	7 लाख
4.	जलकायिक	7 लाख
5.	अग्निकायिक	7 लाख
6.	वायुकायिक	7 लाख
7.	वनस्पतिकायिक	10 लाख
8.	दो इन्द्रिय	2 लाख
9.	तीन इन्द्रिय	2 लाख
10.	चार इन्द्रिय	2 लाख
11.	नारकी	4 लाख
12.	तिर्यञ्च	4 लाख
13.	देव	4 लाख
14.	मनुष्य	14 लाख
	कुल योग	84 लाख

11. कुल किसे कहते एवं उसके कितने भेद हैं ?

योनि को जाति भी कहते हैं और जाति के भेदों को कुल कहते हैं। कुल 199.5 लाख कोटि होते हैं।

1.	पृथ्वीकायिक	22 लाख कोटि	9.	पञ्चेन्द्रिय	तिर्यञ्चों में
2.	जलकायिक	7 लाख कोटि	अ.	जलचर	12.5 लाख कोटि
3.	अग्निकायिक	3 लाख कोटि	ब.	थलचर	19 लाख कोटि
4.	वायुकायिक	7 लाख कोटि	स.	नभचर	12 लाख कोटि
5.	वनस्पतिकायिक	28 लाख कोटि	10.	नारकी	25 लाख कोटि
6.	दो इन्द्रिय	7 लाख कोटि	11.	देव	26 लाख कोटि
7.	तीन इन्द्रिय	8 लाख कोटि	12.	मनुष्य	14 लाख कोटि
8.	चार इन्द्रिय	9 लाख कोटि			**कुल योग 199.5 लाख कोटि**

अभ्यास

सही या गलत बताइए –

1. पञ्चेन्द्रिय में जन्म के तीनों भेद हैं।
2. चार इन्द्रिय में जन्म का एक भेद नहीं है।
3. जन्म और योनि में आधार-आधेय का सम्बन्ध है।
4. पञ्चेन्द्रिय की 26 लाख योनि हैं।
5. बाहुबली कामदेव का जन्म कूर्मोन्नत योनि में हुआ था ।
6. रावण का जन्म शंखावर्त योनि में हुआ था।
7. चींटी का जन्म वंश पत्र योनि में हुआ था।
8. पृथ्वीकायिक की संवृत योनि होती है।
9. छिपकली का जन्म अण्डज नहीं है।
10. बिल्ली का जन्म सचित्ताचित्त योनि में हुआ था।
11. ब्राह्मी (भरत की बहिन) का जन्म कूर्मोन्नत योनि में हुआ था।
12. देव की अचित्त, शीत, उष्ण एवं संवृत योनि नहीं होती है।

अन्यत्र खोजिए –

1. विग्रहगति में जीव का नवीन जन्म प्रारम्भ हो जाता है या मिश्र अवस्था से ? (रा.वा., 2/34/1)
2. तीर्थङ्करों के चिह्न वाले जीव कितने लाख योनियों में गर्भित हो सकते हैं ? (चिन्तन कीजिए)
3. मोरनी किस प्रकार गर्भ धारण करती है ? (चिन्तन कीजिए)

अध्याय 52
शरीर

संसारी जीव शरीर के माध्यम से ही सुख–दुःख का अनुभव करता है। ये शरीर कितने प्रकार के होते हैं, शरीर किसके लिए उपकारी है आदि का वर्णन इस अध्याय में है।

1. शरीर किसे कहते हैं ?

जो विशेष नाम कर्म के उदय से प्राप्त होकर शीर्यन्ते अर्थात् गलते हैं, वे शरीर हैं। अथवा अनन्तानन्त पुद्गलों के समवाय का नाम शरीर है।

2. शरीर कितने प्रकार के होते हैं ?

शरीर पाँच प्रकार के होते हैं–

1. **औदारिक शरीर** – मनुष्य और तिर्यञ्चों का जो शरीर सड़ता, गलता है, वह औदारिक शरीर है। यह उराल अर्थात् स्थूल होता है। इसलिए औदारिक कहलाता है। उराल, स्थूल एकार्थवाची हैं। (ध.पु. 14/322)
2. **वैक्रियिक शरीर** – छोटा, बड़ा, हल्का, भारी, अनेक प्रकार का शरीर बना लेना विक्रिया कहलाती है। विक्रिया ही जिस शरीर का प्रयोजन है, वह वैक्रियिक शरीर कहलाता है।
3. **आहारक शरीर** – छठवें गुणस्थानवर्ती मुनि को सूक्ष्म तत्त्व के विषय में जिज्ञासा होने पर उनके मस्तक से एक हाथ ऊँचा पुतला निकलता है, जहाँ कहीं भी केवली, श्रुत केवली होते हैं, वहाँ जाकर अपनी जिज्ञासा का समाधान करके वापस आ जाता है। इसे आहारक शरीर कहते हैं। आहारक शरीर छठवें (प्रमत्तविरत गुणस्थान) गुणस्थानवर्ती मुनि के होता है एवं भाव पुरुषवेद वाले मुनि को होता है। इसके साथ उपशम सम्यग्दर्शन, मनःपर्ययज्ञान एवं परिहार विशुद्धि संयम का निषेध है।
4. **तैजस शरीर**–औदारिक,वैक्रियिक और आहारक इन तीनों शरीरों को कान्ति देने वाला तैजस शरीर कहलाता है। यह दो प्रकार का होता है।

1. **अनिस्सरणात्मक तैजस** – जो संसारी जीवों के साथ हमेशा रहता है।
2. **निस्सरणात्मक तैजस** – जो मात्र ऋद्धिधारी मुनियों के होता है, यह दो प्रकार का होता है।

अ. शुभ तैजस – जगत् को रोग, दुर्भिक्ष आदि से दुःखित देखकर जिसको दया उत्पन्न हुई है, ऐसे महामुनि के शरीर के दाहिने कंधे से सफेद रंग का सौम्य आकार वाला एक पुतला निकलता है, जो 12 योजन में फैले दुर्भिक्ष, रोग आदि को दूर करके वापस आ जाता है।

ब. अशुभ तैजस – मुनि को तीव्र क्रोध उत्पन्न होने पर 12 योजन तक विचार की हुई विरुद्ध वस्तु को भस्म करके और फिर उस संयमी मुनि को भस्म कर देता है। यह मुनि के बाएँ कंधे से निकलता है यह सिंदूर की तरह लाल रंग का बिलाव के आकार का 12 योजन लंबा सूच्यंगुल के संख्यात भाग प्रमाण मूल विस्तार और नौ योजन चौड़ा रहता है। अथवा लाऊडस्पीकर के आकार का।

5. कार्मण शरीर - ज्ञानावरणादि 8 कर्मों के समूह को कार्मण शरीर कहते हैं।

3. औदारिक शरीर तो स्थूल होता है फिर और शरीर कैसे होते हैं ?

आगे-आगे के शरीर सूक्ष्म होते हैं। औदारिक शरीर से वैक्रियिक शरीर सूक्ष्म होता है। वैक्रियिक शरीर से आहारक शरीर सूक्ष्म होता है। आहारक शरीर से तैजस शरीर सूक्ष्म होता है। तैजस शरीर से कार्मण शरीर सूक्ष्म होता है। (त.सू., 2/37)

4. आगे-आगे के शरीर सूक्ष्म होते हैं, तो उनके प्रदेश (परमाणु) भी कम-कम होते होंगे ?

नहीं। औदारिक शरीर से असंख्यात गुणे परमाणु वैक्रियिक शरीर में होते हैं। वैक्रियिक शरीर से असंख्यात गुणे परमाणु आहारक शरीर में होते हैं। आहारक शरीर से अनन्त गुणे परमाणु तैजस शरीर में होते हैं और तैजस शरीर से अनन्त गुणे परमाणु कार्मण शरीर में होते हैं। (त.सू., 2/38-39) मान लीजिए पाँच प्रकार के मोदक हैं , जो आकार में क्रमशः सूक्ष्म हैं, किन्तु उनमें प्रदेश (दाने) ज्यादा – ज्यादा हैं। जैसे-मक्का की लाई (दाने)से बना लड्डू, ज्वार की लाई से बना लड्डू, नुकती (बूंदी) का लड्डू, राजगिर का लड्डू एवं मगद (वेसन) का लड्डू। मक्का के लड्डू से आगे-आगे के लड्डू सूक्ष्म होते हैं किन्तु उनमें प्रदेश (दाने) ज्यादा हैं। इसी प्रकार क्रमशः शरीर सूक्ष्म, किन्तु प्रदेश ज्यादा हैं।

5. एक साथ एक जीव में अधिक-से-अधिक कितने शरीर हो सकते हैं ?

एक जीव में दो को आदि लेकर चार शरीर तक हो सकते हैं। किसी के दो शरीर हों तो तैजस और कार्मण। तीन हों तो तैजस, कार्मण और औदारिक अथवा तैजस, कार्मण और वैक्रियिक। चार हों तो तैजस, कार्मण, औदारिक और वैक्रियिक शरीर (ध.पु., 14/237-238) अथवा तैजस, कार्मण, औदारिक और आहारक। एक साथ पाँच शरीर नहीं हो सकते क्योंकि वैक्रियिक तथा आहारक ऋद्धि एक साथ नहीं होती है।

6. कौन से शरीर के स्वामी कौन-सी गति के जीव हैं ?

तैजस और कार्मण	-	सभी संसारी जीव।
औदारिक	-	मनुष्य एवं तिर्यञ्च।
वैक्रियिक	-	नारकी एवं देव।
वैक्रियिक	-	मनुष्य (लब्धि वाला[1])एवं तिर्यञ्च। (रा.वा., 2/47/4)
आहारक	-	मनुष्य (प्रमत्त गुणस्थान वाले मुनि)
तैजस (लब्धि वाला)	-	मनुष्य (प्रमत्त गुणस्थान वाले मुनि)

7. कौन-कौन से शरीर अनादिकाल से जीव के साथ लगे हैं ?

जैसे-चन्द्र, सूर्य के नीचे राहु, केतु लगे हुए हैं, वैसे ही प्रत्येक जीव के साथ तैजस और कार्मण शरीर अनादिकाल से लगे हुए हैं।

8. कौन-कौन से शरीर को हम चक्षु इन्द्रिय से देख सकते हैं ?

चक्षु इन्द्रिय से हम मात्र औदारिक शरीर को देख सकते हैं। वैक्रियिक शरीर को हम नहीं देख सकते,

---

1. तप विशेष से प्राप्त होने वाली ऋद्धि को लब्धि कहते हैं।

किन्तु देव विक्रिया के माध्यम से दिखाना चाहें तो दिखा सकते हैं। आहारक शरीर को भी हम नहीं देख सकते हैं। तैजस और कार्मण तो और भी सूक्ष्म हैं।

9. कौन-कौन से शरीर किसी से प्रतिघात को प्राप्त नहीं होते हैं ?

तैजस और कार्मण शरीर किसी से प्रतिघात को प्राप्त नहीं होते हैं। प्रतिघात- मूर्तिक पदार्थों के द्वारा दूसरे मूर्तिक पदार्थ को जो बाधा आती है, उसे प्रतिघात कहते हैं।

10. कौन-कौन से शरीर भोगने में आते हैं ?

जिनमें इन्द्रियाँ होती हैं। जिनके द्वारा जीव विषयों को भोगता है। ऐसे तीन शरीर भोगने योग्य हैं। औदारिक, वैक्रियिक एवं आहारक। शेष दो शरीर (तैजस तथा कार्मण) भोगने योग्य नहीं है।

11. क्या शरीर दु:ख का कारण है ?

हाँ। हे आत्मन् ! इस जगत् में संसार से उत्पन्न जो-जो दु:ख जीवों को सहने पड़ते हैं, वे सब इस शरीर के ग्रहण से ही सहने पड़ते हैं। इस शरीर से निवृत्त होने पर कोई दु:ख नहीं है।

12. शरीर किसके लिए उपकारी है ?

जिसने संसार से विरक्त होकर इस शरीर को धर्म पालन करने में लगा दिया है। उसके लिए यह मानव का शरीर उपकारी है।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. शरीर पाँच प्रकार के होते हैं।
2. आपके पास मात्र एक शरीर है।
3. आहारक शरीर के साथ मुनि आहार करते हैं।
4. आपके शरीर में कांति देने वाला तैजस शरीर है।
5. शुभ तैजस दुर्भिक्ष, महामारी आदि को दूर करता है।

अन्यत्र खोजिए -

1. वैक्रियिक शरीर, आहारक शरीर को प्रतिघात रहित क्यों नहीं कहा ? (चिन्तन कीजिए)
2. आहारक शरीर कहाँ तक जा सकता है ? (अढ़ाई द्वीप तक)
3. कौन से आचार्य ने औदारिक शरीर के दो भेद कहे हैं ? विक्रियात्मक और अविक्रियात्मक ?

(ध.पु., 9/328)

अध्याय 53
संहनन

मनुष्य एवं तिर्यञ्च किस संहनन के माध्यम से कौन से स्वर्ग एवं नरक तक जाते हैं। इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. **संहनन नाम कर्म किसे कहते हैं ?**
   जिसके उदय से हड्डियों के बंधन में विशेषता आती है, उसे संहनन नाम कर्म कहते हैं।
2. **संहनन के कितने भेद हैं ?**
   संहनन के छः भेद हैं। 1. वज्रऋषभनाराच संहनन, 2. वज्रनाराच संहनन, 3. नाराच संहनन, 4. अर्द्धनाराच संहनन, 5. कीलक संहनन, 6. असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन।
3. **वज्र, ऋषभ, नाराच और संहनन का क्या अर्थ है ?**
   वज्र - जो वज्र के समान अभेद्य अर्थात् जिसका भेदन न किया जाए उसे वज्र कहते हैं।
   ऋषभ - जिससे बाँधा जाए उसे ऋषभ (बेस्टन) कहते हैं।
   नाराच - नाराच नाम कील का है। जैसे-दरवाजे के कब्जों के बीच लोहे की कील होती है।
   संहनन - हड्डियों का समूह।
4. **संहननों की परिभाषा बताइए ?**
   1. **वज्रऋषभनाराच संहनन** - जिस शरीर में वज्र की हड्डियाँ हों, वज्र का ऋषभ हो और वज्र का नाराच हो, उसे वज्रऋषभनाराच संहनन कहते हैं।
   2. **वज्रनाराच संहनन**-जिसमें वज्र के बंधन न हों, सामान्य बंधन से बाँधा जाए किन्तु कील व हड्डियाँ वज्र की हों, उसे वज्रनाराच संहनन कहते हैं। जैसे-लोहे के सामान को सुतली से बांधना।
   3. **नाराच संहनन**- जिसमें वज्र विशेष से रहित साधारण नाराच से कीलित हड्डियों की संधि हो, उसे नाराच संहनन कहते हैं।
   4. **अर्द्धनाराच संहनन**- जिसमें हड्डियों की सन्धियाँ नाराच से आधी जुड़ी होती हैं, उसे अर्द्धनाराच संहनन कहते हैं।
   5. **कीलक संहनन**- जिसमें हड्डियाँ परस्पर में नोंक व गड्ढे के द्वारा फँसी हों, अर्थात् अलग से कील नहीं रहती, उसे कीलक संहनन कहते हैं।
   6. **असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन** - जिसमें अलग-अलग हड्डियाँ नसों से बंधी हों, परस्पर में कीलित न हों, उसे असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन कहते हैं। (जै.सि.को., 4/155)
5. **नरकगति, देवगति व एकेन्द्रिय जीवों में कौन-सा संहनन रहता है ?**
   नरकगति, देवगति व एकेन्द्रिय जीवों में किसी भी संहनन का उदय नहीं रहता है।
6. **तिर्यञ्चगति में कितने संहनन रहते हैं ?**
   तिर्यञ्चगति में छः संहनन रहते हैं।

7. द्वीन्द्रिय से असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय तक के जीवों में कौन-सा संहनन रहता है ?

द्वीन्द्रिय से असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय तक के जीवों में असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन रहता है।

8. भोगभूमि के मनुष्य एवं तिर्यञ्चों में कौन-सा संहनन रहता है ?

भोगभूमि के मनुष्य एवं तिर्यञ्चों में मात्र वज्रऋषभनाराच संहनन रहता है।

9. मनुष्यगति में कितने संहनन रहते हैं ?

मनुष्यगति में छः संहनन रहते हैं।

10. कर्मभूमि की महिलाओं में कितने संहनन रहते हैं ?

कर्मभूमि की महिलाओं में अंतिम तीन संहनन रहते हैं। (गो.क., 32)

11. कौन-सा संहनन कौन-से गुणस्थान तक रहता है ?

वज्रऋषभनाराच संहनन	–	1 से 13 गुणस्थान तक
वज्रनाराच और नाराच संहनन	–	1 से 11 गुणस्थान तक
अर्द्धनाराच,कीलक संहनन और असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन	–	1 से 7 गुणस्थान तक

12. कौन-से संहनन वाला मरणकर कौन-से स्वर्ग तक जाता है ?

असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन	–	8 वें स्वर्ग तक
कीलक संहनन	–	12 वें स्वर्ग तक
अर्द्धनाराच	–	16 वें स्वर्ग तक
नाराच संहनन	–	नवग्रैवेयक तक
वज्रनाराच	–	नवअनुदिश तक
वज्रऋषभनाराच संहनन	–	सर्वार्थसिद्धि एवं मोक्ष भी (गो.क. 30)

13. कौन-से संहनन वाला मरण कर कौन-सी पृथ्वी (नरक) तक जाता है ?

वज्रऋषभनाराच संहनन वाला	–	सातवीं पृथ्वी तक
वज्रनाराच संहनन से अर्द्धनाराचसंहनन वाला	–	छठवीं पृथ्वी तक
कीलक संहनन वाला	–	पाँचवीं पृथ्वी तक
असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन वाला	–	तीसरी पृथ्वी तक। (गो.क. 31)

14. पञ्चम काल के मनुष्य व तिर्यञ्चों में कितने संहनन होते हैं ?

पञ्चम काल के मनुष्य व तिर्यञ्चों में अंतिम तीन संहनन होते हैं।

अभ्यास

सही या गलत बताइए-

1. जिससे बाँधा जाए उसे ऋषभ कहते हैं।
2. एकेन्द्रिय में असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन रहता है।
3. कर्मभूमि की महिलाओं में प्रारम्भ के 3 संहनन होते हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. कौन-कौन से संहनन का बंध कौन से गुणस्थान तक होता है ? (गो.क., 95-97)
2. अढ़ाईद्वीप की महिलाओं में कितने संहनन होते हैं, नाम सहित बताइए ? (गो.क. 32, 302)

अध्याय 54
संस्थान

कौन–सी गति में कौन–कौन से संस्थान रहते हैं। इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. संस्थान नाम कर्म किसे कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से औदारिक आदि शरीर की आकृति बनती है, उसे संस्थान नाम कर्म कहते हैं।

2. संस्थान कितने प्रकार के होते हैं, परिभाषा सहित बताइए ?

संस्थान छः प्रकार के होते हैं–

1. **समचतुरस्र संस्थान** – जिस नाम कर्म के उदय से शरीर की आकृति बिल्कुल ठीक–ठीक बनती है। ऊपर, नीचे, मध्य में सुन्दर हो, उसे समचतुरस्र संस्थान कहते हैं।
2. **न्यग्रोध परिमंडल संस्थान** – न्यग्रोध नाम वट वृक्ष का है, जिसके उदय से शरीर में नाभि से नीचे का भाग पतला और ऊपर का भाग मोटा हो, उसे न्यग्रोध परिमंडल संस्थान कहते हैं।
3. **स्वाति संस्थान** – स्वाति नाम वल्मीक (सर्प की बाँबी) या शाल्मली वृक्ष का है। जिसके उदय से शरीर में नाभि से नीचे का भाग मोटा और ऊपर का भाग पतला होता है, उसे स्वाति संस्थान कहते हैं।
4. **कुब्जक संस्थान** – जिस कर्म के उदय से जीव का शरीर कुबड़ा हो, उसे कुब्जक संस्थान कहते हैं। या जिस कर्म के उदय से शाखाओं में दीर्घता और मध्य भाग में ह्रस्वता होती है, उसे कुब्जक संस्थान कहते हैं। (ध.पु., 6/71)
5. **वामन संस्थान** – सर्व अङ्ग व उपाङ्गों को जो छोटा बनाने में कारण होता है, उसे वामन संस्थान कहते हैं। या जिस कर्म के उदय से शाखाओं में ह्रस्वता और शरीर के दीर्घता होती है, उसे वामन संस्थान कहते हैं। (ध.पु., 6/72)
6. **हुण्डक संस्थान** – जिसके उदय से शरीर का आकार बेडौल हो, उसे हुण्डक संस्थान कहते हैं। (रा.वा., 8/8)

3. नरकगति में कौन-सा संस्थान रहता है ?

नरकगति में हुण्डक संस्थान रहता है।

4. तिर्यञ्चगति में कितने संस्थान रहते हैं ?

तिर्यञ्चगति में छः संस्थान रहते हैं।

5. एकेन्द्रिय से असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय तक के जीवों में कौन-सा संस्थान रहता है ?

एकेन्द्रिय से असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय तक के जीवों में हुण्डक संस्थान रहता है।

6. मनुष्यगति में कितने संस्थान रहते हैं ?

मनुष्यगति में छः संस्थान रहते हैं।

7. देवगति में कौन-सा संस्थान रहता है ?

देवगति में समचतुरस्र संस्थान रहता है।

8. तीर्थङ्करों के कौन-सा संस्थान रहता है ?

तीर्थङ्करों के समचतुरस्र संस्थान रहता है।

9. भोगभूमि में कौन-सा संस्थान रहता है ?

भोगभूमि में समचतुरस्र संस्थान रहता है।

10. कौन से संस्थान कौन-कौन से गुणस्थानों तक रहते हैं ?

प्रथम गुणस्थान से तेरहवें गुणस्थान तक सभी छः संस्थान होते हैं, किन्तु एक जीव में एक ही संस्थान रहता है।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. सामान्य केवली का हुण्डक संस्थान हो सकता है।
2. हुण्डक संस्थान वाला नरक ही जाता है।
3. समचतुरस्र संस्थान वाला स्वर्ग ही जाता है।
4. समचतुरस्र संस्थान वाला मरणकर हुण्डक संस्थान वाला बन सकता है।
5. चौदहवें गुणस्थान में समचतुरस्र संस्थान भी रहता है।

अन्यत्र खोजिए -

1. आहारक काययोग में कौन-सा संस्थान रहता है ? (गो.क., 315-316)
2. ऐसे कौन-से जीव हैं, जिनका समचतुरस्र संस्थान है एवं मरण के बाद भी समचतुरस्र संस्थान ही मिलेगा ? (चिन्तन कीजिए)

अध्याय 55
लेश्या

लेश्या कितनी होती हैं, उनका लक्षण क्या है, किस गति में कितनी लेश्या होती हैं। इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. लेश्या के मूल में कितने भेद हैं ?

लेश्या के दो भेद हैं–द्रव्य लेश्या और भाव लेश्या।

2. द्रव्य लेश्या किसे कहते हैं ?

वर्णनामकर्म के उदय से उत्पन्न हुआ जो शरीर का वर्ण है, उसको द्रव्य लेश्या कहते हैं। (गो.जी., 494)

3. भाव लेश्या किसे कहते हैं ?

1. ''कषायोदयरंजिता योग प्रवृत्तिरिति कृत्वा औदयिकीत्युच्यते ''। कषाय के उदय से अनुरंजित योग की प्रवृत्ति को भाव लेश्या कहते हैं। इसलिए वह औदयिकी कही जाती है। (रा.वा., 2/6/8)
2. कषाय से अनुरंजित मन,वचन और काय की प्रवृत्ति को भाव लेश्या कहते हैं।
3. ''लिम्पतीति लेश्या''– जो लिम्पन करती है, उसको लेश्या कहते हैं। अर्थात् जो कर्मों से आत्मा को लिप्त करती है, उसको भाव लेश्या कहते हैं।
4. संसारी आत्मा के भावों को (परिणामों को) भाव लेश्या कहते हैं। अन्य दर्शनकार इसे चित्तवृत्ति कहते हैं। वैज्ञानिकों ने इसे आभामण्डल कहा है।

4. द्रव्य एवं भाव लेश्या के भेद कितने हैं ?

द्रव्य एवं भाव लेश्या के छ:भेद हैं –कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म एवं शुक्ल लेश्या। (गो.जी., 493)

5. कृष्णादि भाव लेश्याओं के लक्षण बताइए ?

1. **कृष्ण लेश्या**–तीव्र क्रोध करने वाला हो, शत्रुता को न छोड़ने वाला हो, लड़ना जिसका स्वभाव हो, धर्म और दया से रहित हो, दुष्ट हो, दोगला हो, विषयों में लम्पट हो आदि यह सब कृष्ण लेश्या वाले के लक्षण हैं। (ध.पु., 1/390)
2. **नील लेश्या**–बहुत निद्रालु हो, परवंचना में दक्ष हो, अतिलोभी हो, आहारादि संज्ञाओं में आसक्त हो आदि नील लेश्या वाले के लक्षण हैं।
3. **कापोत लेश्या**–दूसरों के ऊपर रोष करता हो, निन्दा करता हो, दूसरों से ईर्ष्या रखता हो, पर का पराभव करता हो, अपनी प्रशंसा करता हो, पर का विश्वास न करता हो, प्रशंसक को धन देता हो आदि कापोत लेश्या वाले के लक्षण हैं।
4. **पीत लेश्या**–जो अपने कर्त्तव्य–अकर्त्तव्य, सेव्य–असेव्य को जानता हो, दया और दान में रत हो, मृदुभाषी हो, दृढ़ता रखने वाला हो आदि पीत लेश्या वाले के लक्षण हैं।
5. **पद्म लेश्या** – जो त्यागी हो, भद्र हो, सच्चा हो, साधु जनों की पूजा में तत्पर हो, उत्तम कार्य करने वाला हो, बहुत अपराध या हानि पहुँचाने वाले को भी क्षमा कर दे आदि पद्म लेश्या वाले के लक्षण हैं।

6. **शुक्ल लेश्या** - जो शत्रु के दोषों पर भी दृष्टि न देने वाला हो, जिसे पर से राग-द्वेष व स्नेह न हो, पाप कार्यों से उदासीन हो, श्रेयो कार्य में रुचि रखने वाला हो, जो पक्षपात न करता हो और न निदान करता हो, सबमें समान व्यवहार करता हो आदि शुक्ल लेश्या वाले के लक्षण हैं।

6. छः लेश्याओं में से कितनी शुभ एवं कितनी अशुभ हैं ?

कृष्ण, नील, कापोत लेश्याएँ अशुभ एवं पीत, पद्म, शुक्ल लेश्याएँ शुभ हैं।

7. तीव्रतम, तीव्रतर, तीव्र, मन्द, मन्दतर, मन्दतम लेश्याएँ कौन-कौन सी हैं ?

तीव्रतम-कृष्ण लेश्या, तीव्रतर-नील लेश्या, तीव्र-कापोत लेश्या, मन्द-पीत लेश्या,मन्दतर-पद्म लेश्या एवं मन्दतम-शुक्ल लेश्या है। (गो.जी., 500)

8. लेश्याओं के दृष्टान्त क्या हैं ?

छः मनुष्य यात्रा को निकले, खाने को पास में कुछ भी नहीं था। सामने एक वृक्ष दिखा। उनके परिणाम कैसे-कैसे हुए। देखिए-

1. कृष्ण लेश्या वाला कहता है कि जड़ से वृक्ष को उखाड़ो, तब फल खाएंगे।
2. नील लेश्या वाला कहता है कि स्कन्ध (तने) को तोड़ो, तब फल खाएंगे।
3. कापोत लेश्या वाला कहता है कि शाखा को तोड़ो तब फल खाएंगे।
4. पीत लेश्या वाला कहता है कि उपशाखा को तोड़ो तब फल खाएंगे।
5. पद्म लेश्या वाला कहता है कि फलों को तोड़कर खाएंगे।
6. शुक्ल लेश्या वाला कहता है कि जो फल अपने आप जमीन पर गिर रहे हैं, उन्हें खाकर अपनी क्षुधा को शान्त करेंगे। (गो.जी., 507-508)

9. कौन-सी लेश्या कौन-से गुणस्थान तक रहती है ?

कृष्ण, नील और कापोत लेश्या प्रथम गुणस्थान से चतुर्थ गुणस्थान तक एवं पीत और पद्म लेश्या प्रथम गुणस्थान से सप्तम गुणस्थान तक तथा शुक्ल लेश्या प्रथम गुणस्थान से तेरहवें गुणस्थान तक। (ध.पु., 1/137-139,392-393)

10. नरकगति में कौन-कौन-सी लेश्याएँ होती हैं ?

नरकगति में 3 अशुभ लेश्याएँ होती हैं। प्रथम एवं दूसरी पृथ्वी में कापोत लेश्या। तीसरी पृथ्वी में कापोत एवं नील लेश्या। चौथी पृथ्वी में नील लेश्या। पाँचवीं पृथ्वी में नील एवं कृष्ण लेश्या। छठवीं पृथ्वी में कृष्ण लेश्या एवं सप्तम पृथ्वी में परम कृष्ण लेश्या होती है। (स.सि., 3/3/371)

11. देवगति में कौन-कौन सी लेश्याएँ होती हैं ?

देवगति में 6 लेश्याएँ होती हैं।

भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवों में अपर्याप्त अवस्था में कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएँ होती हैं एवं पर्याप्त अवस्था में जघन्य पीत लेश्या होती है। (ध.पु., 2/545)

- सौधर्म एवं ऐशान स्वर्ग के देवों में मध्यम पीत लेश्या होती है।
- सानत्कुमार एवं माहेन्द्र स्वर्ग के देवों में उत्कृष्ट पीत एवं जघन्य पद्म लेश्या होती है।
- ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर, लान्तव-कापिष्ठ एवं शुक्र-महाशुक्र स्वर्ग के देवों में मध्यम पद्म लेश्या होती है।
- शतार एवं सहस्रार स्वर्ग के देवों में उत्कृष्ट पद्म एवं जघन्य शुक्ल लेश्या होती है।
- आनत से नवग्रैवेयक-तक के देवों में मध्यम शुक्ल लेश्या होती है।
- नव अनुदिश एवं पञ्च अनुत्तरों के देवों में उत्कृष्ट शुक्ल लेश्या होती है। (ध.पु., 2/545-567)

विशेष -

1. सौधर्म-ऐशान कल्प में पीत लेश्या होती है। सानत्कुमार-माहेन्द्र कल्प में पीत और पद्म दो लेश्याएँ होती हैं। ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर, लान्तव-कापिष्ठ कल्पों में पद्म लेश्या होती है। शुक्र-महाशुक्र, शतार-सहस्रार कल्पों में पद्म और शुक्ल लेश्या होती हैं। आनत-प्राणत, आरण-अच्युत कल्पों में शुक्ल लेश्या होती है। नवग्रैवेयक में शुक्ल लेश्या होती है। नव अनुदिश एवं पञ्च अनुत्तर विमानों में परम शुक्ल लेश्या होती है। (स.सि., 4/22/485)
2. सौधर्म स्वर्ग से पञ्च अनुत्तर विमानों तक पर्याप्त एवं अपर्याप्त दोनों अवस्था में एक-सी भाव लेश्या होती है।

12. मनुष्यगति में कौन-कौन-सी लेश्याएँ होती हैं ?

मनुष्यगति में सभी छः लेश्याएँ होती हैं।

13. तिर्यञ्चगति में कौन-कौन-सी लेश्याएँ होती हैं ?

तिर्यञ्चगति में सभी छः लेश्याएँ होती हैं किन्तु एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय एवं असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय में 3 अशुभ अर्थात् कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएँ होती हैं। (ध.पु., 1/393)

14. भोगभूमि के मनुष्यों एवं तिर्यञ्चों में कौन-कौन-सी लेश्याएँ होती हैं ?

छः लेश्याएँ होती हैं-विशेष यह है कि पर्याप्त अवस्था में तीन शुभ लेश्याएँ एवं अपर्याप्त अवस्था में तीन अशुभ लेश्याएँ होती हैं।

15. नारकियों की द्रव्य लेश्या कौन-सी होती है ?

सभी नारकी कृष्ण लेश्या वाले होते हैं। (ध.पु. 2/458)

16. पर्याप्त भवनत्रिक के देवों की द्रव्य से कितनी लेश्याएँ होती हैं ?

पर्याप्त भवनत्रिक देवों की द्रव्य से छः लेश्याएँ होती हैं। (ध.पु., 2/547)

17. पर्याप्त वैमानिक देवों में द्रव्य से कौन-सी लेश्या रहती हैं ?

पर्याप्त वैमानिक देवों में द्रव्य एवं भाव लेश्या समान होती हैं। (गो.जी., 496)

18. अपर्याप्त अवस्था में द्रव्य लेश्या कौन-सी होती हैं ?

अपर्याप्त अवस्था में शुक्ल एवं कापोत लेश्या होती है। सम्पूर्ण कर्मों का विस्रसोपचय शुक्ल ही होता है, इसलिए विग्रहगति में विद्यमान सम्पूर्ण जीवों के शरीर की शुक्ल लेश्या होती है। तदनन्तर शरीर को ग्रहण करके जब तक पर्याप्तियों को पूर्ण करता है तब तक छः वर्ण वाले परमाणुओं के पुञ्जों से शरीर की उत्पत्ति होती है, इसलिए उस शरीर की कापोत लेश्या कही जाती है। (ध.पु., 2/426)

19. मनुष्य एवं तिर्यञ्चों में द्रव्य लेश्याएँ कितनी होती हैं ?

मनुष्य एवं तिर्यञ्चों में छः लेश्याएँ होती है। (गो.जी., 496)

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. देवगति में अपर्याप्त अवस्था में छः लेश्याएँ होती हैं।
2. तीव्र क्रोध करना कृष्ण लेश्या का लक्षण है।
3. जड़ सहित वृक्ष को उखाड़ो यह शुक्ल लेश्या का उदाहरण है।
4. पञ्चम गुणस्थान में 6 लेश्याएँ होती हैं।
5. चींटी की शुक्ल लेश्या भी होती है।
6. प्रथम गुणस्थान में छः लेश्याएँ होती हैं।
7. नारकियों की द्रव्य से कृष्ण लेश्या होती है।
8. नव अनुदिशों में परम शुक्ल लेश्या नहीं होती है।
9. जलकायिक में कृष्ण लेश्या भी होती है।
10. भोगभूमि के जीवों में छः लेश्याएँ होती हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. भोगभूमि के सम्यग्दृष्टि जीवों की अपर्याप्त अवस्था में कौन-सी लेश्या रहती है ? (गो.क.जी., 325)
2. जब नवग्रैवेयक का मिथ्यादृष्टि मरण कर मनुष्यों में आता है तब उसकी औदारिक मिश्र अवस्था में कौन-कौन-सी लेश्याएँ सम्भव हैं ? (गो.क., 327)
3. जब सौधर्म स्वर्ग के देव एकेन्द्रिय में आते हैं तब उनकी औदारिक मिश्र अवस्था में कौन-कौन-सी लेश्याएँ संभव हैं ? (गो.क., 327)

अध्याय 56
गुणस्थान

जिस प्रकार शरीर का तापमान थर्मामीटर के द्वारा नापा जाता है, उसीप्रकार संसारी आत्मा का आध्यात्मिक विकास या पतन गुणस्थान रूपी थर्मामीटर के द्वारा नापा जाता है। अर्थात् अपने आत्मा के परिणाम को नापने के थर्मामीटर का नाम गुणस्थान है। ये कितने होते हैं , इनका क्या स्वरूप है। इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. गुणस्थान किसे कहते हैं ?

मोह और योग के निमित्त से आत्मा के परिणामों में प्रति क्षण होने वाले उतार-चढ़ाव को गुणस्थान कहते हैं। (गो.जी., 3)

2. गुणस्थान कितने होते हैं ?

जीवों के परिणाम यद्यपि अनन्त हैं परन्तु उन सभी को चौदह श्रेणियों में विभाजित किया है, अतः गुणस्थान चौदह होते हैं-1. मिथ्यात्व, 2. सासादन, 3.मिश्र या सम्यग्मिथ्यात्व, 4.अविरत सम्यक्त्व, 5.देशविरत या संयमासंयम, 6. प्रमत्तविरत, 7. अप्रमत्तविरत, 8. अपूर्वकरण,9. अनिवृत्तिकरण, 10. सूक्ष्मसाम्पराय, 11. उपशान्तमोह, 12. क्षीणमोह, 13. सयोगकेवली, 14. अयोगकेवली।

3. मिथ्यात्व गुणस्थान किसे कहते हैं ?

मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से होने वाले तत्त्वार्थ के अश्रद्धारूप परिणामों को मिथ्यात्व गुणस्थान कहते हैं। इन परिणामों से युक्त जीवों को मिथ्यादृष्टि कहते हैं। इसके दो भेद हैं (अ) स्वस्थान मिथ्यादृष्टि (ब) सातिशय मिथ्यादृष्टि। जो जीव मिथ्यात्व में ही रचपच रहा है, उसे स्वस्थान मिथ्यादृष्टि कहते हैं एवं सम्यग्दर्शन की प्राप्ति के सम्मुख जीव के जो अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण रूप परिणाम होते हैं, उसे सातिशय मिथ्यादृष्टि कहते हैं।

4. सासादन गुणस्थान किसे कहते हैं ?

1. प्रथमोपशम सम्यक्त्व अथवा द्वितीयोपशम सम्यक्त्व के काल में कम-से-कम एक समय और अधिक-से-अधिक छः आवली शेष रहने पर अनन्तानुबन्धी कषाय के चार भेदों में से किसी एक कषाय के उदय होने से उपशम सम्यक्त्व से च्युत होने पर और मिथ्यात्व प्रकृति के उदय न होने से मध्य के काल में जो परिणाम होते हैं, उसे सासादन गुणस्थान कहते हैं। (जी.का. 19)
2. उपशम सम्यक्त्व से पतित होकर जीव जब तक मिथ्यात्व गुणस्थान में नहीं आता तब तक उसे सासादन सम्यग्दृष्टि कहते हैं। इस गुणस्थान का जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट से छः आवली है।

नोट - इस गुणस्थान में उपशम सम्यग्दृष्टि ही आता है।

5. सम्यग्मिथ्यात्व या मिश्र गुणस्थान किसे कहते हैं ?

1. पूर्व स्वीकृत अन्य देवता के अपरित्याग के साथ– साथ अरिहंत भी देव हैं ऐसा अभिप्रायः वाला पुरुष मिश्र गुणस्थान वाला है। (ध. पु. 1/168)
2. जिस गुणस्थान में सम्यक् और मिथ्यारूप मिश्रित श्रद्धान पाया जाए, उसे सम्यग्मिथ्यात्व या मिश्र गुणस्थान कहते हैं। (ध.पु., 1/11//167)
3. दाल और चावल के मिश्रित स्वाद के समान सम्यक्त्व और मिथ्यात्व से मिश्रित भाव को सम्यग्मिथ्यात्व कहते हैं।

विशेष –

1. सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान में मारणान्तिक समुद्घात नहीं होता है।
2. सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान में मरण नहीं होता है।
3. सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान में आयुबन्ध भी नहीं होता है।
4. सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान का काल अन्तर्मुहूर्त है।
5. सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान वाला संयम को भी प्राप्त नहीं कर सकता है।

6. अविरत सम्यक्त्व गुणस्थान किसे कहते हैं ?

जहाँ सम्यग्दर्शन तो प्रकट हो गया हो किन्तु किसी भी प्रकार का व्रत (संयमासंयम या सकल संयम) न हुआ हो, उसे असंयत सम्यक्त्व या अविरत सम्यक्त्व गुणस्थान कहते हैं। (ध.पु., 1/172)

7. देशविरत या संयमासंयम गुणस्थान किसे कहते हैं ?

इस गुणस्थान का धारक एक ही समय में संयत और असंयत दोनों होता है। वह श्रावक त्रसहिंसा से विरत होने से संयत है और स्थावर हिंसा से विरत न होने से असंयत है, अतः उसे देशविरत या संयमासंयम गुणस्थान कहते हैं। (ध.पु., 1/174-175)

8. प्रमत्तविरत गुणस्थान किसे कहते हैं ?

जहाँ सकल संयम प्रकट हो गया है किन्तु संज्वलन कषाय का तीव्र उदय होने से प्रमाद हो, उसे प्रमत्तविरत गुणस्थान कहते हैं। (ध.पु., 1/176)

9. अप्रमत्तविरत गुणस्थान किसे कहते हैं ?

जहाँ संज्वलन कषाय का मन्द उदय हो जाने से प्रमाद नहीं रहा उस परिणाम को अप्रमत्तविरत गुणस्थान कहते हैं। (ध.पु., 1/179)

10. अप्रमत्तविरत गुणस्थान के कितने भेद हैं ?

अप्रमत्तविरत गुणस्थान के दो भेद हैं -स्वस्थान अप्रमत्तविरत एवं सातिशय अप्रमत्तविरत। जो सातवें गुणस्थान से छठवें में और छठवें गुणस्थान से सातवें में आते-जाते रहते हैं, उनको स्वस्थान अप्रमत्तविरत कहते हैं। जो उपशम अथवा क्षपक श्रेणी के सम्मुख होकर अधःप्रवृत्त करण रूप परिणाम करते हैं, उनको सातिशय अप्रमत्तविरत कहते हैं। (गो.जी., 46-47)

11. अध:प्रवृत्तकरण किसे कहते हैं ?

जहाँ सम-समयवर्ती जीवों के परिणाम भिन्न-समयवर्ती जीवों के परिणामों से समान और असमान दोनों प्रकार के होते हैं, उन्हें अध:प्रवृत्तकरण कहते हैं। इन अध:प्रवृत्तकरण परिणामों की अपेक्षा अप्रमत्तविरत गुणस्थान का अपर नाम अध:करण भी है।

12. अपूर्वकरण गुणस्थान किसे कहते हैं ?

1. अ = नहीं, पूर्व = पहले , करण = परिणाम।

जिस गुणस्थान में आत्मा के जो पूर्व में परिणाम नहीं थे ऐसे अपूर्व– अपूर्व परिणाम उत्पन्न होते हैं वह अपूर्वकरण गुणस्थान है। .

2. इस गुणस्थान में सम-समयवर्ती जीवों के परिणाम समान-असमान दोनों होते हैं, किन्तु भिन्न समय में रहने वाले जीव के परिणाम भिन्न ही होते हैं। यहाँ मुनिराज पूर्व में कभी भी प्राप्त नहीं हुए थे, ऐसे अपूर्व परिणामों को धारण करते हैं इसलिए इस गुणस्थान का नाम अपूर्वकरण गुणस्थान है। (ध.पु., 1/181)

13. अनिवृत्तिकरण गुणस्थान किसे कहते हैं ?

अनिवृत्तिकरण के अन्तर्मुहूर्त काल में से किसी एक समय में रहने वाले अनेक जीव जिस प्रकार शरीर के आकार आदि से परस्पर में भिन्न-भिन्न होते हैं, किन्तु उनके परिणामों में भेद नहीं पाया जाता है,उसे अनिवृत्तिकरण गुणस्थान कहते हैं। (गो.जी., 57)

तीनों करण के उदाहरण निम्नलिखित हैं -

1. **अध:करण का उदाहरण** -1 बजे पाँच मुनिराजों ने विहार किया। वे गति की अपेक्षा से आगे-पीछे हो जाते हैं। एक तो सबसे आगे बढ़ गए तथा तीन पीछे रह गए तथा एक उनसे भी पीछे रह गए। इस प्रकार तीन भेद हो जाते हैं।

   1 बजकर 5 मिनट पर फिर पाँच मुनिराजों ने विहार किया, उनमें से एक की तीव्रगति होने पर वह 1 बजे निकले मुनिराजों में जो सबसे आगे थे उन तक तो नहीं पहुँच पाते लेकिन बीच में जो तीन मुनिराज थे उनकी बराबरी कर लेते हैं और एक जो पीछे वाले थे, तीन उनके साथ हो जाते हैं और एक उनसे भी पीछे रह जाते हैं।

   1 बजे निकले थे और जो 1 बजकर 5 मिनट पर निकले थे उनकी समानता मिल गई। इसी प्रकार जिन्होंने पहले अध:करण को प्राप्त किया उनकी विशुद्धि कम थी और जिन्होंने बाद में अध:करण को प्राप्त किया उनकी विशुद्धि अधिक थी तो पहले वाले के बराबर हो जाए उनसे मिल जाए, उसे अध:करण कहते हैं।

2. **अपूर्वकरण का उदाहरण** - जैसे-पाँच मुनिराजों ने 1 बजे विहार किया और उनमें से एक आगे निकल गए, तीन बीच में रह गए तथा एक उनसे भी पीछे रह गए अर्थात् एक समयवर्ती जीवों के परिणामों में तारतम्यता पाई जाती है। किन्तु 1 बजकर 5 मिनट पर जो पाँच मुनिराजों ने विहार किया तो वे भी आगे-पीछे हो गए लेकिन कितनी भी तीव्रगति से चले तो भी पहले वाले (1 बजे विहार करने वाले) की बराबरी नहीं कर पाएंगे अर्थात् भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणामों में असमानता ही पाई जाती है।

3. **अनिवृत्तिकरण का उदाहरण** - 1 बजे पाँच मुनिराजों ने विहार किया, वे सब एक साथ ही रहे आगे-पीछे नहीं हुए और 1 बजकर 5 मिनट पर जिन पाँच मुनिराजों ने विहार किया तो वे भी आगे-पीछे न होकर एक साथ ही रहे। अतः अनिवृत्तिकरण में एक समयवर्ती जीवों के परिणामों में समानता और पूर्वोतर समयवर्ती जीवों के परिणामों में असमानता ही होती है।

14. ये तीन करण कहाँ-कहाँ होते हैं ?

1. प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन प्राप्त करते समय।
2. द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन प्राप्त करते समय।
3. अन्तानुबन्धी की विसंयोजना करते समय।
4. चारित्र मोहनीय का उपशम करते समय।
5. चारित्र मोहनीय का क्षय करते समय।
6. क्षायिक सम्यग्दर्शन प्राप्त करते समय।

विशेष- क्षायोपशमिक सम्यक्त्व, क्षायोपशमिक चारित्र एवं संयमासंयम से पूर्व आदि के दो करण होते हैं।

15. करण किसे कहते हैं ?

जिस परिणाम विशेष के द्वारा उपशमादि रूप विवक्षित भाव उत्पन्न किया जाता है, वह परिणाम करण कहलाता है। अथवा परिणाम को करण कहते हैं। (ध.पु., 1/181)

16. सूक्ष्म साम्पराय गुणस्थान किसे कहते हैं ?

जिस गुणस्थान में संज्वलन लोभ कषाय का अत्यन्त सूक्ष्म उदय होता है, उसे सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान कहते हैं। सूक्ष्म = छोटा, साम्पराय=कषाय। (गो.जी., 59)

17. उपशांत मोह गुणस्थान किसे कहते हैं ?

समस्त मोहनीय कर्म के उपशम से उत्पन्न होने वाले गुणस्थान को उपशांत मोह गुणस्थान कहते हैं। (ध.पु., 1/189)

18. क्षीण मोह गुणस्थान किसे कहते हैं ?

समस्त मोहनीय कर्म के क्षय से उत्पन्न आत्मा का विशुद्ध परिणाम क्षीण मोह गुणस्थान कहलाता है। (ध.पु., 1/190)

19. सयोग केवली गुणस्थान किसे कहते हैं ?

चार घातिया कर्मों के क्षय हो जाने से जहाँ अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तसुख व अनन्त वीर्य प्रकट हो जाते हैं, उन्हें केवली कहते हैं और उनके जब तक योग रहता है, तब तक उन्हें सयोग केवली कहते हैं। (रा.वा., 9/24)

20. अयोग केवली गुणस्थान किसे कहते हैं ?

सयोग केवली के जब योग नष्ट हो जाते हैं एवं जब तक शरीर से मुक्त नहीं होते हैं, तब तक इनको अयोग केवली कहते हैं। अयोग केवली का काल 5 ह्रस्व अक्षर (अ, इ, उ, ऋ, ऌ) बोलने में जितना समय लगता है, उतना ही है। इनके उपान्त्य समय में 72 एवं अन्तिम समय में 13 प्रकृतियों का क्षय हो जाता है। (रा.वा., 9/1/24)

21. किस गुणस्थान वाला जीव कौन-कौन-से गुणस्थानों में जा सकता है ?

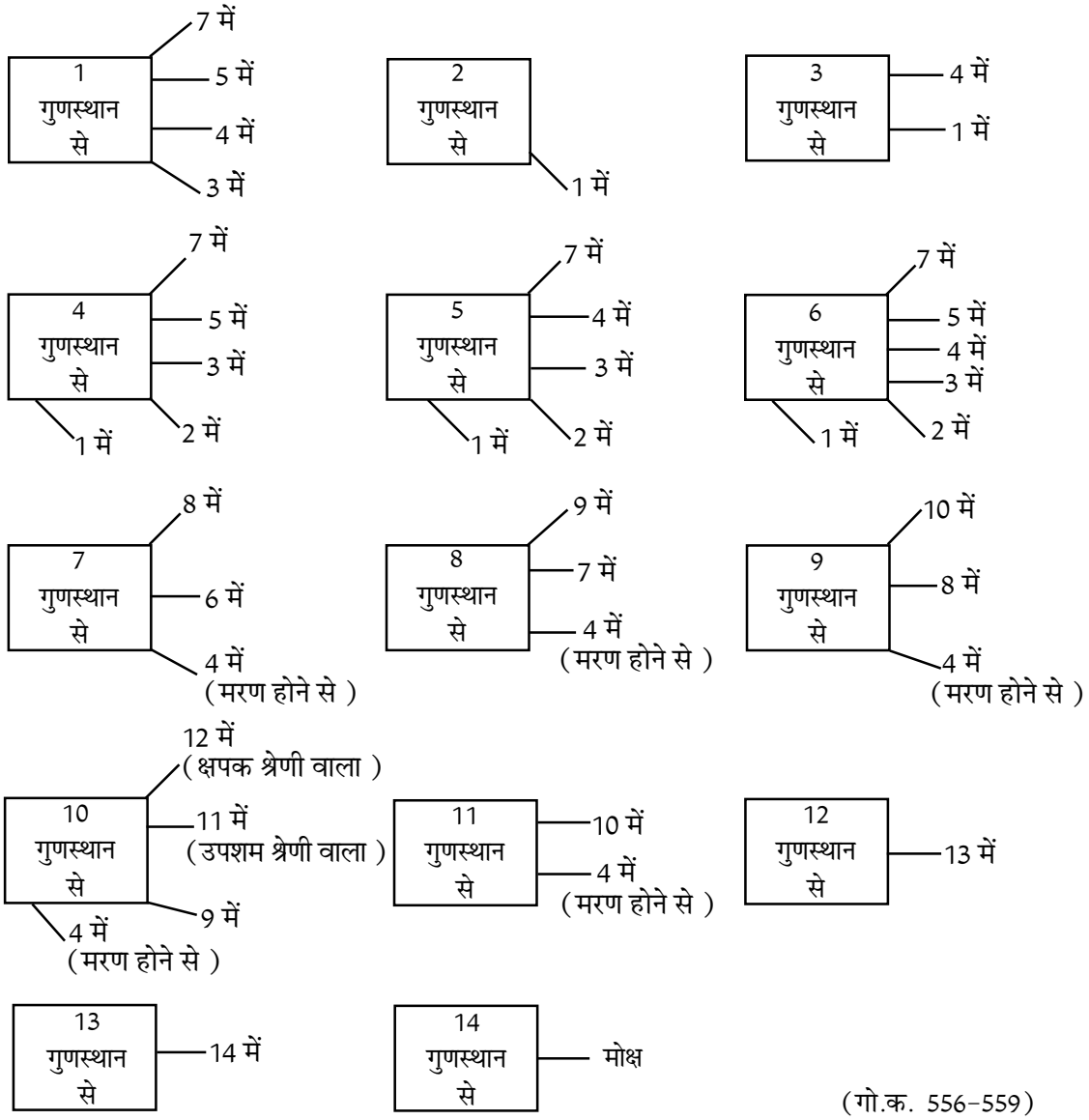

(गो.क. 556-559)

22. उपशम श्रेणी किसे कहते हैं ? इसमें कितने गुणस्थान होते हैं एवं उपशम श्रेणी एक जीव कितने बार चढ़ सकता है ?

जहाँ चारित्र मोहनीय कर्म का उपशम करता हुआ जीव आगे बढ़ता है, वह उपशम श्रेणी है। इसमें 8, 9,10,11 गुणस्थान होते हैं। उपशम श्रेणी वाले ही नीचे के गुणस्थानों में आते हैं एवं मरण भी उपशम श्रेणी वालों का होता है। उपशम श्रेणी अधिक-से-अधिक चार बार चढ़ सकते हैं किन्तु एक भव में दो बार से अधिक नहीं चढ़ सकते हैं। पाँचवीं बार यदि चढ़ेगा तो नियम से क्षपक श्रेणी ही चढ़ेगा। (रा.वा., 9/1/18)

23. क्षपक श्रेणी किसे कहते हैं, इसमें कितने गुणस्थान होते हैं एवं क्षपक श्रेणी कितने बार चढ़ सकते हैं ?

जहाँ चारित्रमोहनीय कर्म का क्षय करता हुआ जीव आगे बढ़ता है वह क्षपक श्रेणी है। इसमें 8, 9,10 एवं 12 वाँ गुणस्थान होता है। इसमें मरण नहीं होता है एवं जीव एक ही बार क्षपक श्रेणी चढ़ता है और मोक्ष को प्राप्त कर लेता है। (रा.वा., 9/1/18)

24. अनादि मिथ्यादृष्टि किसे कहते हैं ?

जिसने अभी तक सम्यग्दर्शन को प्राप्त नहीं किया है, उसे अनादि मिथ्यादृष्टि कहते हैं।

25. सादि मिथ्यादृष्टि किसे कहते हैं ?

जिसने एक बार सम्यग्दर्शन को प्राप्त कर लिया है एवं पुनः मिथ्यात्व में आ गया है, वह सादि मिथ्यादृष्टि है। अनादि मिथ्यादृष्टि प्रथम गुणस्थान से 4, 5 एवं 7 वें गुणस्थान में जाता है एवं सादि मिथ्यादृष्टि प्रथम गुणस्थान से 3, 4, 5 एवं 7 वें गुणस्थान में जाता है।

26. एक जीव की अपेक्षा कौन से गुणस्थान का कितना काल है ?

क्र.	गुणस्थान	जघन्य काल	उत्कृष्ट काल
1.	मिथ्यात्व	अन्तर्मुहूर्त	अनादि अनंत, अनादि सांत और सादि सांत
2.	सासादन	एक समय	6 आवली
3.	मिश्र या सम्यग्मिथ्यात्व	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
4.	अविरत सम्यक्त्व	अन्तर्मुहूर्त	एक समय कम 33 सागर एवं 9 अन्तर्मुहूर्त कम एक पूर्व कोटि
5.	देशविरत या संयमासंयम	अन्तर्मुहूर्त	एक पूर्व कोटि में 3 अन्तर्मुहूर्त कम
6.	प्रमत्तविरत	एक समय (मरण की अपेक्षा)	अन्तर्मुहूर्त
7.	अप्रमत्तविरत	,,	अन्तर्मुहूर्त
8.	अपूर्वकरण	,,	अन्तर्मुहूर्त
9.	अनिवृत्तिकरण	,,	अन्तर्मुहूर्त
10.	सूक्ष्म साम्पराय	,,	अन्तर्मुहूर्त
11.	उपशान्तमोह	,,	अन्तर्मुहूर्त
12.	क्षीण मोह	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
13.	सयोग केवली	,,	1 पूर्व कोटि में 8 वर्ष व 8 अन्तर्मुहूर्तकम
14.	अयोग केवली	,,	अन्तर्मुहूर्त

(ध.पु., 4/324-357)

विशेष– जघन्य और उत्कृष्ट काल के बीच का समय मध्यम काल कहलाता है।

27. मरण किन-किन जीवों के नहीं होता है ?

सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान में, निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था को धारण करने वाले मिश्रकाययोगी, क्षपकश्रेणी में, उपशम श्रेणी चढ़ते हुए अपूर्वकरण गुणस्थान के प्रथम भाग में, प्रथमोपशम सम्यक्त्व में, तेरहवें गुणस्थान में, सप्तम पृथ्वी (नरक) के द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ गुणस्थान में, अनन्तानुबन्धी कषाय की विसंयोजना करके मिथ्यात्व गुणस्थान को प्राप्त होने वाले जीव अन्तर्मुहूर्त तक मरण को प्राप्त नहीं होते हैं एवं कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि का मरण नहीं होता है। जिसने अनन्तानुबन्धी चतुष्क, मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व का क्षय कर दिया है एवं सम्यक् प्रकृति का अनन्त बहुभाग क्षय कर दिया है, उसे कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि कहते हैं। (गो.क., 560-561) आचार्य श्री यतिवृषभ जी के अनुसार कृतकृत्य वेदक का मरण होता है।

विशेष – आचार्य यतिवृषभ के अनुसार कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि के मरण के बारे में दोनों उपदेश हैं। (ज.ध.2/213,215)

28. किस गुणस्थान में कितने जीव हैं ?

1. प्रथम गुणस्थान में अनन्तानन्त जीव हैं। (ध.पु., 3/10)
2. द्वितीय गुणस्थान में पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण जीव हैं।
3. तृतीय गुणस्थान में पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण जीव हैं।
4. चतुर्थ गुणस्थान में पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण जीव हैं।
5. पञ्चम गुणस्थान में पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण जीव हैं। (ध.पु., 3/63)

29. मनुष्यगति के किस गुणस्थान में उत्कृष्ट से कितने जीव हो सकते हैं।

1.	प्रथम गुणस्थान में	–	असंख्यात
2.	द्वितीय गुणस्थान में	–	52 करोड़
3.	तृतीय गुणस्थान में	–	104 करोड़
4.	चतुर्थ गुणस्थान में	–	700 करोड़
5.	पञ्चम गुणस्थान में	–	13 करोड़
6.	छठवें गुणस्थान में	–	5,93,98,206
7.	सातवें गुणस्थान में	–	2,96,99,103
8.	उपशम श्रेणी के अष्टम गुणस्थान में	–	299
	नवमे गुणस्थान में	–	299
	दसवें गुणस्थान में	–	299
	ग्यारहवें गुणस्थान में	–	299
9.	क्षपक श्रेणी के अष्टम गुणस्थान में	–	598
	नवमे गुणस्थान में	–	598
	दसवें गुणस्थान में	–	598
	बारहवें गुणस्थान में	–	598
10.	तेरहवें गुणस्थान में	–	8,98,502
11.	चौदहवें गुणस्थान में	–	598
	छठवें गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक के जीवों की कुल संख्या	–	8,99,99,997

विशेष- कुल मनुष्यों की संख्या, असंख्यात है, वह सम्मूर्छन की अपेक्षा से है। गर्भज मनुष्यों की संख्या 29 अङ्क प्रमाण है। उपशम श्रेणी के प्रत्येक गुणस्थान में 299, 300 एवं 304 जीव भी होते हैं एवं इससे दुगुने क्षपक श्रेणी के प्रत्येक गुणस्थान में 598, 600 एवं 608 जीव भी होते हैं एवं चौदहवें गुणस्थान में भी क्षपक श्रेणी के किसी भी गुणस्थान के समान 598, 600 एवं 608 जीव भी होते हैं। ऐसी तीन मान्यताएँ हैं। (ध.पु., 3/244-252 एवं 3/89, 3/95-97)

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. सादि मिथ्यादृष्टि प्रथम गुणस्थान से तृतीय गुणस्थान में भी जा सकता है।
2. चतुर्थ गुणस्थानवर्ती क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि भी द्वितीय गुणस्थान में आता है।
3. तृतीय गुणस्थान में मरण नहीं होता है।
4. प्रथम गुणस्थान से डायरेक्ट सप्तम गुणस्थान में भी जा सकते हैं।
5. चतुर्थ गुणस्थान से छठवें गुणस्थान में जा सकते हैं।
6. क्षपक श्रेणी के दसवें गुणस्थान का जघन्य काल एक समय है।
7. अयोग केवली का काल अन्तर्मुहूर्त है।
8. क्षपक श्रेणी में तेरहवाँ गुणस्थान भी पाया जाता है।
9. अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में सभी जीवों की आयु एक-सी रहती है।
10. छठवें गुणस्थान से डायरेक्ट प्रथम गुणस्थान में आ सकते हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. प्रथम गुणस्थान में बन्ध योग्य, उदय योग्य एवं सत्त्व योग्य कुल कितनी-कितनी प्रकृतियाँ हैं ?
   (गो.क., 136, 276, 342)
2. छठवें गुणस्थान में किन-किन प्रकृतियों की बन्ध से व्युच्छित्ती होती है ? (गो.क., 98)
3. किन-किन गुणस्थानों को प्राप्त किए बिना मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं ? (2, 3, 4, 5, 11)

अध्याय 57
मार्गणा

मार्गणा कितनी होती है, उनके कितने भेद हैं एवं उनमें कितने गुणस्थान होते हैं। इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. मार्गणा किसे कहते हैं ?

मार्गणा, गवेषणा और अन्वेषण ये तीनों शब्द पर्यायवाची हैं। जिनमें अथवा जिनके द्वारा जीवों की खोज की जाती है, उसे मार्गणा कहते हैं। (ध.पु., 1/132)

2. मार्गणाएँ कितनी होती हैं ?

मार्गणाएँ 14 होती हैं -1. गति मार्गणा, 2. इन्द्रिय मार्गणा, 3. काय मार्गणा, 4.योग मार्गणा, 5. वेद मार्गणा, 6. कषाय मार्गणा, 7. ज्ञान मार्गणा, 8. संयम मार्गणा, 9. दर्शन मार्गणा, 10. लेश्या मार्गणा, 11. भव्यत्व मार्गणा, 12. सम्यक्त्व मार्गणा, 13. संज्ञी मार्गणा, 14. आहारक मार्गणा। (ध.पु., 1/133)

3. गति मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन से गुणस्थान होते हैं ?

जिस कर्म के उदय से जीव नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य और देव पने को प्राप्त होता है, उसे गति कहते हैं। गति की अपेक्षा जीवों का परिचय करना गति मार्गणा है। गति मार्गणा के चार भेद हैं-

1. **नरकगति** - जिस कर्म का निमित्त पाकर आत्मा का नारक भाव होता है, उसे नरकगति कहते हैं। नरकगति में 1 से 4 गुणस्थान तक होते हैं।
2. **तिर्यञ्चगति** - जिस कर्म का निमित्त पाकर आत्मा तिर्यञ्च भाव को प्राप्त होता है, उसे तिर्यञ्चगति कहते हैं। तिर्यञ्चगति में 1 से 5 गुणस्थान तक होते हैं।
3. **मनुष्यगति** - जिस कर्म का निमित्त पाकर आत्मा मनुष्य भाव को प्राप्त होता है, उसे मनुष्यगति कहते हैं। मनुष्यगति में 1 से 14 गुणस्थान तक होते हैं।
4. **देवगति** - जिस कर्म का निमित्त पाकर आत्मा देव भाव को प्राप्त होता है, उसे देवगति कहते हैं। देवगति में 1 से 4 गुणस्थान तक होते हैं। (स.सि., 8/11/755)

4. इन्द्रिय मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?

एकेन्द्रियादि जाति नाम कर्म के उदय से जीव की जो एकेन्द्रिय आदि अवस्था होती है, उसे इन्द्रिय कहते हैं। इन्द्रिय की अपेक्षा जीवों का परिचय करना इन्द्रिय मार्गणा है। इन्द्रिय मार्गणा के पाँच भेद हैं। एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय,चतुरिन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय। एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक मात्र प्रथम गुणस्थान होता है एवं पञ्चेन्द्रिय में 1 से 14 गुणस्थान तक होते हैं। (स.सि., 8/11/755)

5. काय मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?

आत्मा की प्रवृत्ति द्वारा संचित किए गए पुद्गल पिंड को काय कहते हैं। काय की अपेक्षा जीवों का परिचय करना काय मार्गणा है। काय मार्गणा के छः भेद हैं। पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक,

वायुकायिक, वनस्पतिकायिक एवं त्रसकायिक। पञ्च स्थावरों में मात्र प्रथम गुणस्थान होता है एवं त्रसकायिक में गुणस्थान 1 से 14 तक होते हैं। (ध.पु., 1/139)

6. योग मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?

काय, वचन व मन के निमित्त से होने वाले आत्मप्रदेशों के हलन-चलन को योग कहते हैं। योग की अपेक्षा जीवों का परिचय करना योग मार्गणा है। योग मार्गणा के 15 भेद हैं। (स.सि., 6/1/610)

	योग	गुणस्थान
1.	सत्य मनोयोग	1 से 13 तक
2.	असत्य मनोयोग	1 से 12 तक
3.	उभय मनोयोग	1 से 12 तक
4.	अनुभय मनोयोग	1 से 13 तक
5.	सत्य वचनयोग	1 से 13 तक
6.	असत्य वचनयोग	1 से 12 तक
7.	उभय वचनयोग	1 से 12 तक
8.	अनुभय वचनयोग	1 से 13 तक
9.	कार्मण काययोग	1, 2, 4 एवं 13 वाँ
10.	औदारिकमिश्र काययोग	1, 2, 4 एवं 13 वाँ
11.	औदारिक काययोग	1 से 13 तक
12.	वैक्रियिक मिश्रकाययोग	1, 2 एवं 4
13.	वैक्रियिक काययोग	1 से 4 तक
14.	आहारक मिश्रकाययोग	6 वाँ
15.	आहारक काययोग	6 वाँ

7. वचनयोग और मनोयोग के चार-चार भेदों का स्वरूप क्या है ?

पदार्थ को कहने या विचारने के लिए जीव की सत्य, असत्य, उभय और अनुभय रूप चार प्रकार के वचन और मन की जो प्रवृत्ति होती है, उसे क्रम से सत्य वचनयोग, सत्य मनोयोग आदि कहते हैं।

सत्य के विषय में होने वाली मन की प्रवृत्ति को सत्य कहते हैं। जैसे-'यह जल है'। असत्य के विषय में होने वाली मन की प्रवृत्ति को असत्य कहते हैं। जैसे-मृगमरीचिका को जल कहना । दोनों के विषयभूत पदार्थ को उभय कहते हैं। जैसे-कमण्डलु को घट कहना । क्योंकि कमण्डलु घट का कार्य करता है, इसलिए कथंचित् सत्य है और घटाकार नहीं है, इसलिए कथंचित् असत्य है। जो दोनों ही सत्य और असत्य का विषय नहीं होता है ऐसे पदार्थ को अनुभय कहते हैं। जैसे-सामान्य रूप से यह प्रतिभास होना कि ''यह कुछ है'' यहाँ सत्य-असत्य का कुछ भी निर्णय नहीं हो सकता इसलिए अनुभय है। जैसे गुरुवर आचार्य श्री विद्यासागरजी से श्रावक कहें हमारे नगर में आइए ? उत्तर मिलेगा 'देखो'। यह अनुभय वचन योग है। न सत्य है और न असत्य है।

1. **कार्मण काययोग** - जब यह जीव मरण कर नया शरीर धारण करने के लिए विग्रहगति में जाता है तब कार्मण शरीर के निमित्त से आत्म प्रदेशों का जो परिस्पंदन होता है, उसे कार्मण काययोग कहते हैं।

   विग्रहगति के अलावा केवली भगवान् के प्रतर और लोकपूरण समुद्घात में भी कार्मण काययोग होता है।
2. **औदारिकमिश्र काययोग** - औदारिक शरीर की उत्पत्ति प्रारम्भ होने के प्रथम समय से लेकर जब तक शरीर पर्याप्ति पूर्ण नहीं कर लेता तब तक औदारिकमिश्र काययोग होता है। यहाँ वह जीव कार्मण वर्गणाओं से मिश्रित औदारिक वर्गणाओं को ग्रहण करता है।
3. **औदारिक काययोग**- मनुष्य और तिर्यञ्चों के शरीर को औदारिक काय कहते हैं और उसके निमित्त से जो योग होता है, उसे औदारिक काययोग कहते हैं।
4. **वैक्रियिकमिश्र काययोग**-वैक्रियिक शरीर की उत्पत्ति प्रारम्भ होने के प्रथम समय से लगाकर जब तक शरीर पर्याप्ति पूर्ण नहीं कर लेता तब तक वैक्रियिकमिश्र काययोग रहता है। इस काल में वह जीव कार्मण वर्गणाओं से मिश्रित वैक्रियिक वर्गणाओं को ग्रहण करता है, उसे वैक्रियिकमिश्र काययोग कहते हैं।
5. **वैक्रियिक काययोग**-देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियिक काय कहते हैं और उसके निमित्त से जो योग होता है, उसे वैक्रियिक काययोग कहते हैं।
6. **आहारकमिश्र काययोग** -आहारक शरीर की उत्पत्ति होने के प्रथम समय से लगाकर जब तक शरीर पर्याप्ति पूर्ण न हो तब तक आहारकमिश्र काय कहलाता है एवं उसके निमित्त से जो योग होता है, उसे आहारकमिश्र काययोग कहते हैं। इस काल में वह जीव औदारिक वर्गणाओं से मिश्रित आहारक वर्गणाओं को ग्रहण करता है।
7. **आहारक काययोग**- छठवें गुणस्थानवर्ती मुनि के सूक्ष्म तत्त्व के विषय में जिज्ञासा आदि कारण होने पर उनके मस्तक से एक हाथ ऊँचा सफेद रंग का पुतला निकलता है। वह जहाँ कहीं भी केवली अथवा श्रुतकेवली हों, वहाँ अपनी जिज्ञासा का समाधान करके वापस आ जाता है, इसे आहारककाय कहते हैं एवं इसके निमित्त से होने वाला योग आहारक काययोग कहलाता है। (गो.जी., 230-241)

8. **वेद मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?**

''वेद्यत इति वेदः'' जो वेदा जाए, अनुभव किया जाए, उसे वेद कहते हैं। वेद की अपेक्षा से जीवों का परिचय करना वेद मार्गणा है। वेद के मूलतः तीन भेद हैं। स्त्रीवेद, पुरुषवेद एवं नपुंसक वेद। इनमें गुणस्थान 1 से 9 तक होते हैं। द्रव्यवेद और भाववेद की अपेक्षा तीनों वेद दो प्रकार के होते हैं।

वेद नोकषाय के उदय से स्त्री की पुरुषाभिलाषा, पुरुष की स्त्री सम्बन्धी अभिलाषा और नपुंसक की उभय मुखी अभिलाषा को भाव वेद कहते हैं तथा नाम कर्म के उदय से उत्पन्न स्त्री, पुरुष और नपुंसक के बाह्य चिह्नों को द्रव्यवेद कहते हैं। पुरुषवेद तृण की आग के समान, स्त्रीवेद कंडे की आग के समान एवं नपुंसकवेद ईंट पकाने के अवा की आग के समान होता है। (गो.जी., 273-276)

विशेष-कर्मभूमि के मनुष्यों एवं तिर्यञ्चों में द्रव्यवेद व भाववेद में असमानता भी पाई जाती है। जैसे-कोई

द्रव्य से पुरुष वेद है, उसके भाव से तीन में से कोई भी वेद हो सकता है। इसी प्रकार स्त्रीवेद व नपुंसकवेद में भी हो सकता है किन्तु देव, नारकी तथा भोगभूमि के मनुष्यों व तिर्यञ्चों में जैसा द्रव्यवेद होता है वैसा ही भाववेद रहता है। एकेन्द्रिय (रा.वा., 2/22/5) से चार इन्द्रिय तक नियम से द्रव्यवेद व भाववेद नपुंसक ही रहता है। द्रव्य से स्त्री व नपुंसकवेद वालों के गुणस्थान 1 से 5 तक हो सकते हैं तथा द्रव्य पुरुषवेद वाले के सभी 14 गुणस्थान हो सकते हैं।

9. कषाय मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?

जो आत्मा के सम्यक्त्वादि गुणों का घात करें, उसे कषाय कहते हैं। इसके 25 भेद हैं -

1-4. अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ-जो आत्मा के सम्यक्त्व तथा चारित्र गुण का घात करती है। 1 से 2 गुणस्थान तक। (गो.जी., 283)

5-8. अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ-जो कषाय एक देश चारित्र का घात करती है। 1 से 4 गुणस्थान तक।

9-12. प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया,लोभ-जो कषाय सकल संयम का घात करती है। 1से 5 गुणस्थान तक।

13-16. संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ-जो कषाय यथाख्यात संयम का घात करती है। संज्वलन क्रोध, मान, माया में 1 से 9 गुणस्थान तक। संज्वलन लोभ में 1 से 10 गुणस्थान तक।

नो कषाय - नो अर्थात् ईषत् (किंचित्) कषाय का वेदन करावे, उसे नो कषाय कहते हैं।

17. हास्य - जिसके उदय से हँसी आवे। 1 से 8 गुणस्थान तक।

18. रति - जिसके उदय से क्षेत्र आदि में प्रीति हो। 1 से 8 गुणस्थान तक।

19. अरति - जिसके उदय से क्षेत्र आदि में अप्रीति हो। 1 से 8 गुणस्थान तक।

20. शोक - जिसके उदय से इष्ट वियोगज क्लेश उत्पन्न हो। 1 से 8 गुणस्थान तक।

21. भय - जिसके उदय से भय उत्पन्न हो। 1 से 8 गुणस्थान तक।

22. जुगुप्सा - जिसके उदय से ग्लानि उत्पन्न हो। 1 से 8 गुणस्थान तक।

23. स्त्रीवेद - जिसके उदय से स्त्री सम्बन्धी भावों को प्राप्त हो। 1 से 9 गुणस्थान तक।

24. पुरुषवेद - जिसके उदय से पुरुष सम्बन्धी भावों को प्राप्त हो। 1 से 9 गुणस्थान तक।

25. नपुंसकवेद- जिसके उदय से नपुंसक सम्बन्धी भावों को प्राप्त हो। 1 से 9 गुणस्थान तक।

विशेष- जहाँ अनन्तानुबन्धी कषाय है वहाँ नियम से अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण एवं संज्वलन कषाय भी रहेगी। इसी प्रकार जहाँ अप्रत्याख्यानावरण कषाय है, वहाँ प्रत्याख्यानावरण एवं संज्वलन कषाय भी रहेगी एवं जहाँ प्रत्याख्यानावरण कषाय है, वहाँ संज्वलन कषाय भी रहेगी एवं जहाँ मात्र संज्वलन है वहाँ संज्वलन कषाय ही रहेगी। जहाँ हास्य कषाय है वहाँ रति कषाय भी रहेगी। इसी प्रकार जहाँ शोक कषाय है वहाँ अरति कषाय भी रहेगी। भय और जुगुप्सा कषाय में से कोई भी एक या दोनों या दोनों कषायों से रहित भी हो सकता है।

10. ज्ञान मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?

जो जानता है, वह ज्ञान है, ज्ञान की अपेक्षा से जीवों का परिचय करना ज्ञान मार्गणा है। इसके आठ भेद हैं –

1. **कुमतिज्ञान**-सम्यक्त्व के न होने पर होने वाले मतिज्ञान को कुमतिज्ञान कहते हैं।
2. **कुश्रुतज्ञान**-सम्यक्त्व के न होने पर होने वाले श्रुतज्ञान को कुश्रुतज्ञान कहते हैं।
3. **कुअवधिज्ञान**-सम्यक्त्व के न होने पर होने वाले अवधिज्ञान को कुअवधिज्ञान कहते हैं।
4. **मतिज्ञान** - जो ज्ञान पाँच इन्द्रिय और मन के द्वारा होता है, उसे मतिज्ञान कहते हैं। (गो.जी., 306)
5. **श्रुतज्ञान** - मतिज्ञान से जाने हुए पदार्थ का जो विशेष ज्ञान होता है, उसे श्रुतज्ञान कहते हैं। जैसे - ''जीवः अस्ति'' ऐसा शब्द कहने पर कर्ण (श्रोत्र) इन्द्रिय रूप मतिज्ञान के द्वारा ''जीवः अस्ति'' यह शब्द ग्रहण किया। इस शब्द से जो ''जीव नामक पदार्थ है'' ऐसा ज्ञान हुआ सो श्रुतज्ञान है। यह अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है और जो अक्षर के निमित्त से उत्पन्न नहीं होता है, उसे अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान कहते हैं। जैसे- शीतल पवन का स्पर्श होने पर वहाँ शीतल पवन का जानना तो मतिज्ञान है और उस ज्ञान से वायु की प्रकृति वाले को यह पवन अनिष्ट है, ऐसा जानना श्रुतज्ञान है। (गो.जी.जी.प्र, 315)
6. **अवधिज्ञान** - द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की मर्यादा लिए हुए रूपी पदार्थों का इन्द्रियादिक की सहायता के बिना जो प्रत्यक्ष ज्ञान होता है, वह अवधिज्ञान है।
7. **मनःपर्ययज्ञान** -इन्द्रिय और मन की सहायता के बिना ही दूसरे के मन में स्थित रूपी पदार्थों का जो प्रत्यक्ष ज्ञान होता है, वह मनःपर्ययज्ञान है। मनःपर्ययज्ञान का क्षयोपशम 6 से 12 वें गुणस्थान तक रहता है किन्तु इसका प्रयोग छठवें एवं सातवें गुणस्थान में होता है। इसके साथ प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन, आहारक काययोग, आहारक मिश्रकाययोग, परिहार विशुद्धि संयम, स्त्रीवेद एवं नपुंसक वेद नहीं होता है। (रा.वा., 1/9/4)
8. **केवलज्ञान** - जो त्रिकालवर्ती समस्त द्रव्यों की अनन्त पर्यायों को एक साथ स्पष्ट रूप से जानता है, उसे केवलज्ञान कहते हैं। (प्र., 47)

ज्ञान		गुणस्थान
कुमतिज्ञान, कुश्रुतज्ञान एवं कुअवधिज्ञान	-	1 से 2 तक।
मतिज्ञान, श्रुतज्ञान एवं अवधिज्ञान	-	4 से 12 तक।
मनःपर्ययज्ञान	-	6 से 12 तक।
केवलज्ञान	-	13 से 14 तक एवं सिद्धों में।

11. संयम मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?

प्राणियों और इन्द्रियों के विषय में अशुभ प्रवृत्ति का त्याग करना संयम है। संयम की अपेक्षा से जीवों का परिचय करना संयम मार्गणा है। इसके सात भेद हैं-

1. **असंयम**-जहाँ किसी प्रकार के संयम या संयमासंयम का अंश भी न हो, उसे असंयम कहते हैं।

2. **संयमासंयम**-सम्यग्दर्शन के साथ पाँचों पापों का एक देश त्याग करने को संयमासंयम कहते हैं।
3. **सामायिक चारित्र** - सर्वकाल में सम्पूर्ण सावद्य का त्याग करना सामायिक चारित्र है। (ध.पु., 1/371)
4. **छेदोपस्थापना चारित्र** - प्रमाद के निमित्त से व्रतों में दोष होने पर भली प्रकार से उसको दूर कर अपने आप को पुनः उसी में स्थापित करना छेदोपस्थापना चारित्र है। (रा.वा., 9/18/6,7)
5. **परिहार विशुद्धि संयम** - प्राणी वध से निवृत्ति को परिहार कहते हैं। इस युक्त शुद्धि जिस संयम में होती है, उसे परिहार विशुद्धि संयम कहते हैं। इनके शरीर से किसी भी जीव का घात नहीं होता है। इस संयम वाले मुनि तीनों सन्ध्याकालों को छोड़कर प्रतिदिन दो कोस (6 किलोमीटर) विहार करते हैं। रात्रि में विहार (गमन) नहीं करते हैं। परिहार विशुद्धि संयम के साथ आहारक काययोग, आहारकमिश्र काययोग, नपुंसकवेद, स्त्रीवेद, मनःपर्ययज्ञान एवं उपशम सम्यग्दर्शन नहीं रहता है।
   विशेष -जो तीस वर्ष तक घर में रहकर इसके पश्चात् मुनि दीक्षा लेते हैं और तीर्थङ्कर के पादमूल में वर्ष पृथक्त्व तक प्रत्याख्यान पूर्व का अध्ययन करते हैं, ऐसे मुनि के यह परिहार विशुद्धि संयम प्रकट होता है। (रा.वा., 9/18/8)
6. **सूक्ष्मसाम्पराय संयम** - जिस संयम में लोभ कषाय अति सूक्ष्म रह गई हो, उसे सूक्ष्म साम्पराय संयम कहते हैं। (रा.वा., 9/18/9)
7. **यथाख्यात संयम** - समस्त मोहनीय कर्म के उपशम या क्षय से जहाँ यथा अवस्थित आत्म-स्वभाव की उपलब्धि हो जाती है, उसे यथाख्यात संयम कहते हैं। (रा.वा., 9/18/11)

संयम		गुणस्थान
1. असंयम	-	1 से 4 तक।
2. संयमासंयम	-	5 वाँ।
3. सामायिक चारित्र	-	6 से 9 तक।
4. छेदोपस्थापना चारित्र	-	6 से 9 तक।
5. परिहार विशुद्धि संयम	-	6 से 7 तक।
6. सूक्ष्मसाम्पराय संयम	-	10 वाँ।
7. यथाख्यात संयम	-	11 से 14 तक।

12. दर्शन मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन से गुणस्थान होते हैं ?

''विषय विषयि सन्निपाते सति दर्शनं भवति''। विषय और विषयी का सन्निपात होने पर ज्ञान के पूर्व जो सामान्य प्रतिभास होता है, उसे दर्शन कहते हैं। दर्शन की अपेक्षा से जीवों का परिचय करना दर्शन मार्गणा है। इसके चार भेद हैं - (स.सि., 1/15/190)

1. **चक्षुदर्शन** - चक्षु इन्द्रिय से होने वाले ज्ञान के पहले पदार्थ का जो सामान्य प्रतिभास होता है, उसे चक्षुदर्शन कहते हैं।
2. **अचक्षुदर्शन**-चक्षु इन्द्रिय के बिना अन्य इन्द्रियों और मन से होने वाले ज्ञान के पूर्व पदार्थ का जो सामान्य प्रतिभास होता है, उसे अचक्षुदर्शन कहते हैं।

3. **अवधिदर्शन**–अवधिज्ञान के पूर्व होने वाला सामान्य प्रतिभास अवधिदर्शन है।

4. **केवलदर्शन** – केवलज्ञान के साथ होने वाले सामान्य प्रतिभास को केवलदर्शन कहते हैं।

दर्शन		गुणस्थान
1. चक्षुदर्शन	–	1 से 12 तक।
2. अचक्षुदर्शन	–	1 से 12 तक।
3. अवधिदर्शन	–	4 से 12 तक।
4. केवलदर्शन	–	13 से 14 तक एवं सिद्धों में भी।

13. लेश्या मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन से गुणस्थान होते हैं ?

''लिम्पतीति लेश्या''– जो लिम्पन करती है, उसको लेश्या कहते हैं। अर्थात् जो कर्मों से आत्मा को लिप्त करती है, उसको लेश्या कहते हैं। लेश्या की अपेक्षा से जीवों का परिचय करना लेश्या मार्गणा है। इसके छः भेद हैं –

1. **कृष्ण लेश्या** – तीव्र क्रोध करने वाला हो, शत्रुता को न छोड़ने वाला हो, लड़ना जिसका स्वभाव हो, धर्म और दया से रहित हो, दुष्ट हो आदि ये सब लक्षण कृष्ण लेश्या वाले जीव के हैं।
2. **नील लेश्या**–आलसी, मंदबुद्धि, स्त्री लुब्धक, प्रवंचक, कातर, सदामानी आदि ये सब नील लेश्या के लक्षण हैं।
3. **कापोत लेश्या**– शोकाकुल, सदारुष्ट, परनिंदक, आत्म प्रशंसक, संग्राम में माहिर आदि कापोत लेश्या के लक्षण हैं।
4. **पीत लेश्या**–प्रबुद्ध (जागृत), करुणा युक्त, जो कार्य-अकार्य का विचार करने वाला हो, लाभालाभ में समता रखने वाला हो आदि पीत लेश्या के लक्षण हैं।
5. **पद्म लेश्या**–दयाशील हो, त्यागी हो, भद्र हो, साधुजनों की पूजा में निरत हो, बहुत अपराध या हानि पहुँचाने वाले को भी क्षमा कर दे, आदि पद्म लेश्या के लक्षण हैं।
6. **शुक्ल लेश्या**–जो शत्रु के दोषों पर भी दृष्टि न देने वाला हो, जिसे पर से राग-द्वेष व स्नेह न हो, आदि शुक्ल लेश्या के लक्षण हैं।

लेश्या		गुणस्थान
1. कृष्ण लेश्या	–	1 से 4 तक
2. नील लेश्या	–	1 से 4 तक
3. कापोत लेश्या	–	1 से 4 तक
4. पीत लेश्या	–	1 से 7 तक
5. पद्म लेश्या	–	1 से 7 तक
6. शुक्ल लेश्या	–	1 से 13 तक

14. भव्य मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?

भव्य और अभव्य के माध्यम से जीवों का परिचय करना भव्यत्व मार्गणा है। इसके दो भेद हैं–

1. **भव्य** – जिसके सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्र भाव प्रकट होने की योग्यता है, वह भव्य है।
2. **अभव्य**–जिसके सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्र भाव प्रकट होने की योग्यता नहीं है, वह अभव्य है।

आचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी ने समयसार, गाथा 293 में अभव्य जीव के बारे में कहा है–

सद्दहदि य पत्तेदि य रोचेदि य तह पुणो य फासेदि।
धम्मं भोगणिमित्तं ण दु सो कम्मक्खयणिमित्तं॥

अर्थ–अभव्य जीव भोग के लिए ही धर्म की श्रद्धा करता है, उसी की रुचि करता है और उसी का बार-बार स्पर्श करता है, परन्तु यह सब भोग के निमित्त करता है, कर्म क्षय के निमित्त नहीं।

भव्य		गुणस्थान
1. भव्य	–	1 से 14 गुणस्थान तक।
2. अभव्य	–	मात्र प्रथम गुणस्थान।

15. सम्यक्त्व मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?

सात तत्त्वों तथा सच्चे देव, शास्त्र और गुरु का यथार्थ श्रद्धान प्रकट होने पर होने वाली आत्मा की उस शुद्ध परिणति को सम्यक्त्व कहते हैं। सम्यक्त्व की अपेक्षा जीवों का परिचय करने को सम्यक्त्व मार्गणा कहते हैं। इसके छः भेद हैं –

1. **मिथ्यात्व** – मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से होने वाले तत्त्वार्थ के अश्रद्धान रूप परिणामों को मिथ्यात्व कहते हैं।
2. **सासादन** – उपशम सम्यक्त्व के काल में कम-से-कम एक समय और अधिक-से-अधिक छः आवली शेष रहने पर अनन्तानुबन्धी कषाय के चार भेदों में से किसी एक कषाय का उदय होने से उपशम सम्यक्त्व से च्युत होने पर और मिथ्यात्व प्रकृति के उदय न होने से मध्य के काल में जो परिणाम होते हैं, उसे सासादन सम्यक्त्व कहते हैं।
3. **सम्यग्मिथ्यात्व** – जिसमें सम्यक् और मिथ्या रूप मिश्रित श्रद्धान पाया जाए, उसे सम्यग्मिथ्यात्व या मिश्र सम्यक्त्व कहते हैं।
4. **अ. प्रथमोपशम सम्यक्त्व**[1]– दर्शनमोहनीय की मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्प्रकृति और अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ इन सात प्रकृतियों के उपशम से जो सम्यक्त्व होता है, उसे प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहते हैं।

   विशेष – प्रथमोपशम सम्यक्त्व के साथ मरण नहीं होता है एवं आयुबन्ध भी नहीं होता है।

   ब. द्वितीयोपशम सम्यक्त्व–क्षयोपशम सम्यक्त्व के अनंतर जो उपशम सम्यक्त्व होता है, उसे द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कहते हैं। यह भी सात प्रकृतियों के उपशम से होता है। सप्तम गुणस्थानवर्ती मुनि यदि उपशम श्रेणी चढ़े तब उसको क्षायिक सम्यक्त्व या द्वितीयोपशम सम्यक्त्व आवश्यक होता है।

   विशेष–अन्य आचार्यों के मतानुसार द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन चतुर्थ गुणस्थान से सप्तम गुणस्थानवर्ती

1. अनादि मिथ्यादृष्टि तो पाँच प्रकृतियों का उपशम करता है एवं सादि मिथ्यादृष्टि पाँच, छः या सात प्रकृतियों का उपशम करता है।

क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि प्राप्त करता है। (ध.पु.,1/211, का.अ.टी., 484, मू.चा.टी., 205)

5. **क्षयोपशम (वेदक)** - अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ, मिथ्यात्व एवं सम्यग्मिथ्यात्व इन 6 प्रकृतियों के उदयाभावी क्षय व उपशम से तथा सम्यक्प्रकृति के उदय से जो सम्यक्त्व होता है, उसे क्षयोपशम सम्यक्त्व कहते हैं।
6. **क्षायिक सम्यक्त्व** - सात प्रकृतियों के क्षय से जो सम्यक्त्व होता है, उसे क्षायिक सम्यक्त्व कहते हैं।

सम्यक्त्व	**गुणस्थान**
1. मिथ्यात्व	प्रथम
2. सासादन	द्वितीय
3. सम्यग्मिथ्यात्व	तृतीय
4. उपशम सम्यक्त्व के दो भेद हैं -	
अ. प्रथमोपशम सम्यक्त्व	4 से 7 तक।
ब. द्वितीयोपशम सम्यक्त्व	4 से 11 तक।
5. क्षयोपशम सम्यक्त्व	4 से 7 तक।
6. क्षायिक सम्यक्त्व	4 से 14 तक एवं सिद्धों में भी।

16. संज्ञी मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?

संज्ञी और असंज्ञी के माध्यम से जीवों के परिचय करने को संज्ञी मार्गणा कहते हैं। इसके दो भेद हैं-

1. **संज्ञी** - जो जीव शिक्षा, उपदेश, क्रिया और आलाप को ग्रहण करते हैं, उन्हें संज्ञी कहते हैं।
2. **असंज्ञी** - जो जीव शिक्षा, उपदेश, क्रिया और आलाप को ग्रहण नहीं करते हैं, उन्हें असंज्ञी कहते हैं।

संज्ञी	**गुणस्थान**
1. संज्ञी में	1 से 12 तक।
2. असंज्ञी में	प्रथम

17. केवली भगवान् संज्ञी हैं या असंज्ञी हैं ?

केवली भगवान् दोनों से रहित हैं।

केवली भगवान् संज्ञी नहीं होते हैं, क्योंकि ज्ञानावरण, दर्शनावरण कर्म से रहित होने के कारण, केवली मन के अवलम्बन से बाह्य अर्थ का ग्रहण नहीं करते अतः केवली को संज्ञी नहीं कह सकते। केवली असंज्ञी भी नहीं हैं, क्योंकि जिन्होंने समस्त पदार्थों को साक्षात् कर लिया है, उन्हें असंज्ञी मानने में विरोध आता है।

सयोग केवली अनुभय हैं, ये संज्ञी नहीं हैं, क्योंकि भावमन नहीं है और न असंज्ञी हैं, क्योंकि अविवेकी नहीं है। सयोग केवली के यद्यपि द्रव्यमन है, परन्तु भावमन नहीं है।

18. आहारक मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?

आहारक एवं अनाहारक के माध्यम से जीवों के परिचय करने को आहारक मार्गणा कहते हैं। इसके दो भेद हैं -

1. **आहारक** - जो तीन शरीर और छः पर्याप्तियों के योग्य पुद्गल वर्गणाओं को ग्रहण करता है, उसे आहारक कहते हैं।
2. **अनाहारक** - तीन शरीर और छः पर्याप्तियों के योग्य पुद्गल वर्गणाओं को जो ग्रहण नहीं करता है, उसे अनाहारक कहते हैं। विग्रहगति में, तेरहवें गुणस्थान के प्रतर एवं लोकपूरण समुद्घात में एवं चौदहवें गुणस्थान में जीव अनाहारक होता है।

   विशेष-यहाँ पर आहार शब्द से कवलाहार, लेपाहार, ओजाहार, मानसिकाहार, कर्माहार को छोड़कर नोकर्माहार को ही ग्रहण करना है।

आहारक	**गुणस्थान**
1. आहारक में	1 से 13 तक।
2. अनाहारक में	1, 2, 4,13 (प्रतर एवं लोकपूरण समुद्घात में) एवं 14 वाँ।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. प्रथम गुणस्थान में तेरह योग होते हैं।
2. तृतीय गुणस्थान में जीव आहारक होता है।
3. कार्मण काययोग में जीव अनाहारक होता है।
4. छठवें गुणस्थान में 4 ज्ञान भी हो सकते हैं।
5. यथाख्यात संयम में जीव अनाहारक भी होता है।
6. सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान में जीव अनाहारक होता है।
7. परिहार विशुद्धि संयम के साथ द्वितीयोपशम सम्यक्त्व होता है।
8. द्रव्य से स्त्रीवेदी है एवं भाव से पुरुषवेदी के गुणस्थान 1 से 5 तक हो सकते हैं।
9. मनःपर्ययज्ञानी आपकी मुट्ठी में क्या है बता सकते हैं।
10. अचक्षुदर्शन चार इन्द्रिय वाले जीवों को नहीं होता है।

अन्यत्र खोजिए -

1. कौन से आचार्य ने एकेन्द्रिय एवं विकलचतुष्क के अपर्याप्त दशा में द्वितीय गुणस्थान भी माना है और वह किस प्रकार घटित होता है ? (चौ.ठा.)
2. मनुष्यगति में उदय योग्य कितनी कर्म प्रकृतियाँ है ? (गो.क., 298)
3. कार्मण काययोग में द्वितीयोपशम सम्यक्त्व किस गति में जाते समय बनेगा ? (चौ.ठा.)
4. कार्मण काययोग में उदय योग्य कितनी प्रकृतियाँ हैं ? (गो.क., 318)
5. ऋजुमति एवं विपुलमति मनःपर्ययज्ञान किसे कहते हैं ? (स.सि., 1/23/217)
6. ओम् में पाँचों ज्ञान किस प्रकार गर्भित होते हैं ? (चिन्तन कीजिए)
7. अन्तर मार्गणा कौन-कौन-सी हैं ? (प.स., 1/134-135)

अध्याय 58

समुद्घात

समुद्घात किसे कहते हैं, कितने होते हैं, किस गति एवं किस गुणस्थान में कितने होते हैं। इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. समुद्घात किसे कहते हैं ?

अपने मूल शरीर को न छोड़कर, तैजस और कार्मण शरीर के प्रदेशों सहित, आत्मा के प्रदेशों का शरीर के बाहर निकलना समुद्घात कहलाता है। (द्र.सं.टी., 10) जैसे-Current Power House से आता है, तो वह Power House मूल शरीर है। उसे छोड़े बिना Current आपके घर तक आता है, इसे समुद्घात कहते हैं।

2. समुद्घात कितने प्रकार के होते हैं ?

समुद्घात सात प्रकार के होते हैं -1. वेदना समुद्घात, 2. कषाय समुद्घात, 3. विक्रिया समुद्घात, 4. मारणान्तिक समुद्घात, 5. तैजस समुद्घात, 6. आहारक समुद्घात, 7. केवली समुद्घात। (द्र.सं.टी.,10)

3. वेदना समुद्घात किसे कहते हैं ?

वात, पित्तादि विकार जनित रोग या विषपान आदि की तीव्रवेदना से मूल शरीर को छोड़े बिना आत्म प्रदेशों का बाहर निकलना वेदना समुद्घात है। (रा.वा., 1/20/12)

4. वेदना समुद्घात में आत्म प्रदेश कितनी दूर तक फैलते हैं ?

वेदना के वश से जीव प्रदेशों के विष्कम्भ (चौड़ाई)और उत्सेध (ऊँचाई) की अपेक्षा तिगुने प्रमाण में फैलते हैं, किन्तु तिगुने ही फैलें ऐसा नियम नहीं है, एक दो प्रदेश से भी वृद्धि होती है। (ध.पु., 11/18)

5. क्या वेदना समुद्घात सभी को होता है ?

नहीं। निगोदिया जीवों में अतिशय वेदना का अभाव होने से विवक्षित शरीर से तिगुना वेदना समुद्घात संभव नहीं है। (ध.पु., 11/21)

6. कषाय समुद्घात किसे कहते हैं ?

कषाय की तीव्रता से आत्म प्रदेशों का अपने शरीर से तिगुने प्रमाण फैलने को कषाय समुद्घात कहते हैं। जैसे-संग्राम में योद्धा लोग क्रोध में आकर लाल-लाल आँखें करके अपने शत्रुओं को देखते हैं, यह प्रत्यक्ष देखा जाता है। यही समुद्घात का रूप है। (का.अ.टी., 176/115)

7. क्या कषाय समुद्घात में पर का घात हो जाता है ?

इसका नियम नहीं है।

8. विक्रिया समुद्घात किसे कहते हैं ?

शरीर या शरीर के अङ्ग बढ़ाने के लिए अथवा अन्य शरीर बनाने के लिए आत्मप्रदेशों का मूल शरीर को न छोड़कर बाहर निकल जाना विक्रिया समुद्घात है। विक्रिया समुद्घात देव व नारकियों के तो होता ही है, किन्तु विक्रियाऋद्धिधारी मुनीश्वरों के तथा भोगभूमियाँ जीव अथवा चक्रवर्ती आदि के भी विक्रिया समुद्घात होता है। तिर्यञ्चों में भी विक्रिया समुद्घात होता है। (रा.वा, 2/47/4) अग्निकायिक, वायुकायिक जीवों में भी विक्रिया समुद्घात होता है। (गो.जी., 234)

9. विक्रिया समुद्घात में आत्म प्रदेश कहाँ तक फैल जाते हैं ?

जिसका जितना विक्रिया क्षेत्र है और उसमें भी जितनी दूर तक विक्रिया की जा रही है, उतनी दूर तक आत्म प्रदेश फैल जाते हैं।

10. मारणान्तिक समुद्घात किसे कहते हैं ?

मरण के अन्तर्मुहूर्त पहले, मूल शरीर को न छोड़कर, जहाँ उत्पन्न होना है, उस क्षेत्र का स्पर्श करने के लिए आत्म प्रदेशों का शरीर से बाहर निकलना मारणान्तिक समुद्घात है। (द्र.सं. टी., 10) जैसे- सर्विस करने वालों का ट्रांसफर हो गया है तो जहाँ जाना है वहाँ पहले जाकर मकान, आफिस आदि देखकर वापस आ जाते हैं, फिर परिवार सहित सामान लेकर चले जाते हैं।

11. तैजस समुद्घात किसे कहते हैं ?

संयमी महामुनि के विशिष्ट दया उत्पन्न होने पर अथवा तीव्र क्रोध उत्पन्न होने पर उनके दाएँ अथवा बाएँ कंधे से तैजस शरीर का एक पुतला निकलता है, उसके साथ आत्मप्रदेशों का बाहर निकलना तैजस समुद्घात कहलाता है। (द्र.सं. टी., 10)

12. तैजस समुद्घात कितने प्रकार का होता है ?

तैजस समुद्घात दो प्रकार का होता है - शुभ तैजस समुद्घात एवं अशुभ तैजस समुद्घात।

13. शुभ तैजस समुद्घात कब और किसके होता है ?

जगत् को रोग दुर्भिक्ष आदि से दु:खित देखकर जिनको दया उत्पन्न हुई है, ऐसे महामुनि के मूल शरीर को न छोड़कर दाहिने कंधे से सौम्य आकार वाला सफेद रंग का एक पुतला निकलता है, जो 12 योजन में फैले हुए दुर्भिक्ष, रोग आदि को दूर करके वापस आ जाता है। (द्र.सं. टी., 10)

14. अशुभ तैजस समुद्घात कब और किसके होता है ?

तपोनिधान महामुनि के क्रोध उत्पन्न होने पर मन में विचार की हुई विरुद्ध वस्तु को भस्म करके और फिर उस ही संयमी मुनि को भस्म करके नष्ट हो जाता है। यह मुनि के बाएँ कंधे से सिंदूर की तरह लाल रंग का बिलाव के आकार का, बारह योजन लंबा, सूच्यंगुल के संख्यात भाग प्रमाण मूल विस्तार और नौ योजन चौड़ा रहता है। (द्र.सं. टी., 10)

15. क्या, दोनों तैजस समुद्घात में और कोई विशेषता है ?

दोनों छठवें गुणस्थानवर्ती मुनि के होते है एवं इनके साथ उपशम सम्यग्दर्शन, आहारकद्विक एवं परिहारविशुद्धि संयम नहीं होता है। (ध.पु., 4/123 एवं 4/135) तथा गुरु उपदेश के अनुसार यह भाव पुरुष वेद वाले को ही होता है।

16. दोनों समुद्घात में क्या अंतर है ?

विषय	अशुभ	शुभ
वर्ण	सिंदूर के समान लाल रंग	सफेद रंग
शक्ति	12 योजन तक सब कुछ नष्ट कर देता है।	12 योजन तक दुर्भिक्ष, रोग आदि नष्ट कर देता है।
उत्पत्ति	बाएँ कंधे से	दाएँ कंधे से
विसर्पण	इच्छित क्षेत्र प्रमाण अथवा 12 योजन तक	अप्रशस्तवत्
निमित्त	प्राणियों के प्रति रोष	प्राणियों के प्रति अनुकंपा
आकार	बिलाव के आकार का	सौम्य आकार का

17. आहारक समुद्घात किसे कहते हैं ?

आहारक ऋद्धि वाले मुनि को जब तत्त्व सम्बन्धी तीव्र जिज्ञासा होती है, तब उस जिज्ञासा के समाधान के लिए उनके मस्तक से एक हाथ ऊँचा सफेद रंग का पुतला निकलता है, जो केवली, श्रुतकेवली के पादमूल में जाकर, विनय से पूछकर अपनी जिज्ञासा शांतकर मूल शरीर में प्रविष्ट हो जाता है। यह तीर्थवंदना आदि के लिए भी जाता है। (का.अ.टी., 176/111)

यह समुद्घात भाव पुरुषवेद वाले प्रमत्त संयत नामक छठवें गुणस्थानवर्ती मुनि को होता है। इसके साथ उपशम सम्यग्दर्शन, मनःपर्ययज्ञान एवं परिहार विशुद्धि संयम का निषेध है।

18. केवली समुद्घात किसे कहते हैं ?

जब केवली भगवान् की आयु अन्तर्मुहूर्त शेष रहती है एवं शेष 3 अघातिया कर्मों की स्थिति अधिक हो तब आयु कर्म के बराबर स्थिति करने के लिए आत्मप्रदेशों का दण्ड, कपाट, प्रतर और लोकपूरण के माध्यम से बाहर निकलना होता है, उसे केवली समुद्घात कहते हैं। (का.अ., 176)

जैसे-गीली धोती (पंचा) फैला देने से जल्दी सूख जाती है एवं बिना फैलाए जल्दी नहीं सूखती है। वैसे ही आत्मप्रदेश फैलाने से कर्म कम स्थिति वाला हो जाता है, बिना फैलाए उनकी स्थिति घटती नहीं है।

19. केवली समुद्घात का क्या स्वरूप है ?

केवली समुद्घात चार प्रकार से होता है-

1. **दण्ड समुद्घात** - सयोग केवली यदि आसीन हो तो शरीर से तिगुने विस्तार फैलते हैं, खड्गासन में स्थित हो तो शरीर विस्तार चौड़े आत्म प्रदेश निकलते हैं एवं ऊपर से नीचे तक वातवलयों के प्रमाण से कम 14 राजू लंबे फैल जाते हैं।
2. **कपाट समुद्घात** - कपाट का अर्थ दरवाजा है, जैसे-दरवाजा आजू-बाजू खुलता है वैसे ही इसमें आत्म प्रदेश आजू-बाजू में फैलते हैं। यदि केवली भगवान् पूर्वाभिमुख हों तो ऊपर, मध्य में एवं नीचे सर्वत्र वातवलय को छोड़कर 7-7 राजू प्रमाण आत्म प्रदेश फैलते हैं और यदि भगवान् उत्तराभिमुख हो तो वातवलय को छोड़कर ऊपर तो एक राजू, ब्रह्मलोक में 5 राजू, मध्य लोक में एक राजू व नीचे 7 राजू प्रमाण चौड़े हो जाते हैं।
3. **प्रतर समुद्घात** - इस समुद्घात में सामने व पीछे जितना क्षेत्र शेष बचा है, उसमें वातवलय को छोड़कर सबमें फैल जाते हैं।
4. **लोकपूरण समुद्घात** - इस समुद्घात में आत्मप्रदेश वातवलय के क्षेत्र में भी फैल जाते हैं, अर्थात् सम्पूर्ण लोक में फैल जाते हैं।

20. लोकपूरण समुद्घात के बाद प्रवेश विधि किस प्रकार से है ?

लोकपूरण के बाद वापस प्रतर में, प्रतर से वापस कपाट में, कपाट से वापस दण्ड में और दण्ड से वापस मूल शरीर में प्रवेश करता है।

21. समुद्घातों में कितना समय लगता है ?

केवली समुद्घात में आठ समय और शेष सभी समुद्घातों में अन्तर्मुहूर्त लगता है।

22. केवली समुद्घात में आठ समय कैसे लगते हैं ?

दण्ड में एक समय, कपाट में एक समय, प्रतर में एक समय और लोकपूरण में एक समय इसके बाद वापस

होते समय प्रतर में एक समय, कपाट में एक समय, दण्ड में एक समय और मूल शरीर में प्रवेश करते समय का एक समय इस प्रकार कुल आठ समय लगते हैं।

23. दण्ड, कपाट, प्रतर और लोकपूरण समुद्घात में कौन-सा योग रहता है ?

दण्ड में औदारिक काययोग, कपाट में औदारिकमिश्रकाय योग, प्रतर एवं लोकपूरण समुद्घात में कार्मण काययोग रहता है।

24. क्या, सभी केवली समुद्घात करते हैं ?

मोक्ष जाने वाले सभी जीवों के केवली समुद्घात नहीं होता किन्तु जिन केवलियों के आयु कर्म के अलावा शेष तीन कर्मों की स्थिति, आयु कर्म से अधिक होती है, उन केवलियों के तीन कर्मों की स्थिति आयु कर्म के बराबर करने के लिए होता है। (ध.पु. 1/304)

25. ये समुद्घात किस दिशा में होते हैं ?

आहारक और मारणान्तिक समुद्घात में आत्मप्रदेश एक ही दिशा में गमन करते हैं किन्तु शेष पाँच समुद्घात, दसों दिशाओं में गमन करते हैं।

26. किस गति में कितने समुद्घात होते हैं ?

नरकगति	–	वेदना, कषाय, विक्रिया और मारणान्तिक समुद्घात।
तिर्यञ्चगति	–	वेदना, कषाय, विक्रिया (रा.वा., 2/47/4) और मारणान्तिक समुद्घात।
मनुष्यगति	–	सभी।
देवगति	–	वेदना, कषाय, विक्रिया और मारणान्तिक समुद्घात।

27. कौन-सा समुद्घात कौन से गुणस्थानों में होता है ?

कषाय, वेदना और वैक्रियिक समुद्घात 1-6 गुणस्थान तक होता है। मारणान्तिक समुद्घात 1-11 गुणस्थान तक होता है (तीसरे गुणस्थान को छोड़कर)। आहारक और तैजस समुद्घात 6 वें गुणस्थान में होता है तथा केवली समुद्घात 13 वें गुणस्थान के अन्तिम अन्तर्मुहूर्त में होता है।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. देव मारणान्तिक समुद्घात नहीं करते हैं।
2. केवली समुद्घात में सबसे कम समय लगता है।
3. प्रतर समुद्घात में केवली के आत्म प्रदेशों का स्पर्श हम सबसे हो जाता है।
4. सातवें गुणस्थानवर्ती भाव पुरुष वेद वाले मुनिराज आहारक समुद्घात कर सकते हैं।
5. अयोग केवली भगवान् मारणान्तिक समुद्घात नहीं करते हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. कार्मण काययोग में भी वेदना, कषाय समुद्घात होते हैं, ऐसा कौन– से ग्रन्थ में लिखा है ? (ध.पु., 4/110)

अध्याय 59

ध्यान

ध्यान किसे कहते हैं, कितने प्रकार के होते हैं, कौन से ध्यान स्वर्ग एवं मोक्ष के कारण हैं। इसका वर्णन इस अध्याय में है।

1. ध्यान किसे कहते हैं ?

1. ''उत्तमसंहननस्यैकाग्रचिन्ता निरोधो ध्यानमान्तर्मुहूर्तात्'' (त.सू., 9/27) उत्तम संहनन वाले का एक विषय में चित्त की वृत्ति को रोकना ध्यान है, जो अन्तर्मुहूर्त काल तक होता है।
2. निश्चयनयापेक्षा - इष्टानिष्ट बुद्धि के मूल, मोह का छेद हो जाने से चित्त स्थिर हो जाता है। उस चित्त की स्थिरता को ध्यान कहते हैं।
3. ''चित्तविक्षेपत्यागो ध्यानम्''-चित्त के विकल्पों का त्याग करना ध्यान है। (स.सि., 9/20/858)

2. ध्यान कितने प्रकार के होते हैं ?

ध्यान चार प्रकार के होते हैं-आर्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्म्यध्यान एवं शुक्लध्यान।

3. आर्तध्यान किसे कहते हैं एवं इसके कितने भेद हैं ?

आर्त नाम दु:ख का है। दु:खानुभव में चित्त का रुकना आर्तध्यान है, इसके चार भेद हैं। इष्ट वियोगज, अनिष्ट संयोगज, वेदनाजन्य एवं निदान।

1. **इष्ट वियोगज** - इष्ट गुरु, शिष्य, मित्र, भाई, स्त्री, धन, क्षेत्र आदि के वियोग होने से, उसके संयोग के लिए जो निरंतर चिंतित रहता है, उसे इष्ट वियोगज आर्तध्यान कहते हैं।
2. **अनिष्ट संयोगज** - अनिष्ट नेता, वस्तु, क्षेत्र, बंधु आदि के संयोग होने पर उसके वियोग के लिए जो निरंतर चिंतन होता है, उसे अनिष्ट संयोगज आर्तध्यान कहते हैं।
3. **वेदना जन्य** - कैंसर, ब्लडप्रेशर, एड्स, हार्ट अटैक, टी.वी., ट्यूमर आदि महारोग की वेदना होने पर उसे दूर करने के लिए हमेशा चिंतन करता है, उसे वेदना जन्य या पीड़ा चिंतन आर्तध्यान कहते हैं।
4. **निदान** - आगामी भोगों की आकांक्षा से पीड़ित होकर उसकी प्राप्ति के लिए चिंतन करना निदान आर्तध्यान है।

नोट-निदान ध्यान 1 से 5 वें गुणस्थान एवं शेष तीन आर्तध्यान 1 से 6 वें गुणस्थान तक रहते हैं।

4. रौद्रध्यान किसे कहते हैं एवं इसके कितने भेद हैं ?

क्रूर परिणामों से उत्पन्न हुए ध्यान को रौद्रध्यान कहते हैं। इसके चार भेद हैं-

1. **हिसानंद** - हिंसा करने, कराने व अनुमोदना में आनंद मानने को हिंसानन्द रौद्रध्यान कहते हैं।
2. **मृषानन्द** - झूठ बोलने में, दूसरों से झूठ बुलवाने में व झूठ बोलने वाले की अनुमोदना करने में तथा चुगली आदि में आनंद मानने को मृषानंद रौद्रध्यान कहते हैं।

3. **चौर्यानन्द** - चोरी करने में, कराने में, चोरी की अनुमोदना करने में, चोर को न्याय दिलाने में और चोरी का माल खरीदने में आनंद मानने को चौर्यानन्द रौद्रध्यान कहते हैं।
4. **परिग्रहानन्द या विषय संरक्षणानंद** -परिग्रह संचय करके आनंदित होना, विषयभोगों की वस्तुओं का संरक्षण करना, उसके संरक्षण व संचय में आनंद मानना परिग्रहानंद रौद्रध्यान है।

नोट - सभी रौद्रध्यान 1 से 5 गुणस्थान तक होते हैं।

5. धर्म्यध्यान किसे कहते हैं ?

शुभ विचारों में मन का स्थिर होना धर्म्यध्यान है। अथवा सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक् चारित्र को धर्म कहते हैं और उस धर्म से युक्त जो चिंतन होता है, उसे धर्म्यध्यान कहते हैं। (र.क.श्रा., 3) अथवा मोह तथा क्षोभ से रहित जो आत्मा का परिणाम है, वह धर्म कहलाता है। उस धर्म से उत्पन्न जो ध्यान है, उसे धर्म्यध्यान कहते हैं। (त.अ., 52)

इसके चार भेद हैं -

1. **आज्ञाविचय** - जो इन्द्रियों से दिखाई नहीं देते ऐसे बंध, मोक्ष आदि पदार्थों में जिनेन्द्र भगवान् की आज्ञा के अनुसार निश्चय कर ध्यान करना सो आज्ञाविचय धर्म्यध्यान है।
2. **अपायविचय** - संसार में भटकते प्राणी मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान एवं मिथ्याचारित्र से कैसे दूर हों, इस प्रकार निरंतर चिंतन करना अपाय विचय धर्म्यध्यान है।
3. **विपाकविचय** - (अ) कर्मों के उदय से सुख-दुःख होता है, ऐसा चिंतन करना विपाक विचय धर्म्यध्यान है। (ब) जीवों को जो एक, अनेक भव में पुण्य-पाप कर्मों का फल प्राप्त होता है, उसके उदय, उदीरणा,संक्रमण, बंध और मोक्ष का चिंतन करना विपाकविचय धर्म्यध्यान है। (मू., 401)
4. **संस्थानविचय**-तीन लोक के आकार, प्रमाण आदि का चिंतन करना संस्थानविचय धर्म्यध्यान है। धर्म्यध्यान गुणस्थान 4 से 7 तक होते हैं। (स.सि., 9/36/890)

6. धर्म्यध्यान के दस भेद कौन-कौन से हैं ?

1. आज्ञा विचय, 2. अपाय विचय, 3. उपाय विचय, 4. जीव विचय, 5. अजीव विचय, 6. भव विचय, 7. विपाक विचय, 8. विराग विचय, 9. हेतु विचय, 10. संस्थान विचय (भा.पा.टी., 119)

7. संस्थान विचय धर्म्यध्यान के कितने भेद हैं ?

संस्थान विचय धर्म्यध्यान के चार भेद हैं-

(अ) पिण्डस्थ ध्यान - शरीर में स्थित आत्मा का चिंतन करना पिण्डस्थ ध्यान है। इसके पाँच भेद हैं-

1. **पार्थिवीधारणा** - एकान्त में बैठकर साधक विचारे कि-संसार गहन समुद्र है, समुद्र जल से भरा है, यह संसार दुःखों से भरा है। यत्र-तत्र स्वर्गादि विषय सुख रूप कमल खिले हैं। मध्य में 1000 पँखुड़ियों का एक कमल है, ठीक इसके बीच में सुमेरुपर्वत है। उस पर एक आसन है। इस आसन पर मैं आसीन हूँ।

2. **आग्नेयधारणा** – आगे साधक विचार करता है कि अपने नाभिमण्डल में एक कमल विराजमान है, जिसमें 16 पँखुड़ियाँ हैं, जिनमें क्रमशः अ आदि 16 अक्षर लिखे हैं। कमल की कर्णिका में र्हं महामन्त्र विराजमान है जिसमें से मन्द-मन्द धूम (धुएँ) की शिखा निकल रही है, धीरे-धीरे धूम के साथ स्फुलिंगे निकलने लगे हैं। ये पंक्ति बद्ध चिनगारियाँ क्रमशः शनैः-शनैः अग्नि रूप प्रज्वलित होकर कर्मरूपी ईंधन में लग चुकी हैं। अब धीरे-घीरे कर्म वन जलने लगा इसके बाद नोकर्म भी जलने लगा एवं जलकर मात्र भस्म ही शेष बची है।

3. **वायुधारणा** – इसके बाद ध्यानी चिंतन करता है कि महावेगवान वायु पर्वतों को कंपित करती हुई चल रही है और जो शरीरादि की भस्म है उसको इसने तत्काल उड़ा दिया है और वायु शांत हो गई है।

4. **जलधारणा** – इसके बाद ध्यानी चिंतन करता है कि बिजली, इन्द्रधनुष आदि सहित मेघमण्डल चारों तरफ से मूसलाधार वर्षा कर रहा है। यह जल शरीर के जलने से उत्पन्न हुई समस्त भस्म को प्रक्षालित कर देता है।

5. **तत्त्वरूपवतीधारणा** – तत्पश्चात् ध्यानी पुरुष अपने को सप्त-धातु रहित, पूर्णिमा के चन्द्रमा समान प्रभावाला, सिंहासन पर विराजमान, दिव्य अतिशयों से युक्त, कल्याणकों की महिमा सहित, मनुष्यों-देवों से पूजित और कर्मरूपी कलंक से रहित चिंतन करे। पश्चात् अपने शरीर में स्थित आत्मा को अष्ट कर्मों से रहित पुरुषाकार चिंतन करे ।

(ब) पदस्थ ध्यान –

1. एक अक्षर को आदि लेकर अनेक प्रकार के पञ्च परमेष्ठी वाचक पवित्र मन्त्र पदों का उच्चारण करके जो ध्यान किया जाता है, उसे पदस्थ ध्यान कहते हैं। जैसे–ओम्, ह्रीं आदि।
2. जिसको योगीश्वर अनेक पवित्र मन्त्रों के अक्षर स्वरूप पदों का अवलम्बन करके चिंतन करते हैं, उसे पदस्थ ध्यान कहते हैं। किसी नियत स्थान पर जैसे–नासिकाग्र या ललाट के मध्य में मन्त्र को स्थापित कर उसको देखते हुए चित्त को एकाग्र करता है। हृदय में आठ पँखुड़ी वाले कमल का चिन्तन करे और आठ पत्रों में से पाँच पत्रों पर णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं एवं तीन पत्रों में सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र का चिंतन करे।

इसी प्रकार ह्रीं बीजाक्षर में तीर्थङ्कर ऋषभदेव से महावीर तक चौबीस तीर्थङ्कर अपने–अपने वर्णों (रंगों) से युक्त हैं, उनका ध्यान करे।

(स) रूपस्थ ध्यान – समवसरण में विराजमान अरिहन्त परमेष्ठी के स्वरूप का चिंतन रूपस्थ ध्यान है। इस ध्यान में बारह सभाओं के मध्य विराजित अष्ट प्रातिहार्यों और चार अनंत चतुष्टय से सहित अरिहन्त परमेष्ठी के स्वरूप का चिंतन किया जाता है।

(द) रूपातीत ध्यान – अमूर्त, अजन्मा, इन्द्रियों के अगोचर ऐसे परमात्मा सिद्ध परमेष्ठी का ध्यान करता है। पुनः वह योगी अपनी आत्मा को ही शुद्ध, बुद्ध, निरंजन, निर्विकार परमात्मस्वरूप चिंतन करता है। मैं ही सर्वज्ञ हूँ, सर्वव्यापक हूँ, सिद्ध हूँ इत्यादि रूप से अपनी शुद्ध आत्मा का ध्यान करता है।

इस प्रकार ध्यानी रूपातीत ध्यान में सिद्ध परमेष्ठी के ध्यान का अभ्यास करके शक्ति की अपेक्षा से अपने आपको भी उनके समान जानकर और अपने आपको भी उनके समान व्यक्त करने के लिए उसमें (अपने आप में) लीन हो जाता है। तब आप ही कर्मों का नाश करके व्यक्त रूप से सिद्ध परमेष्ठी हो जाता है।

8. ह्रीं आदि का ध्यान किस प्रकार से करना चाहिए ?

ह्रीं का ध्यान – ह्रीं में चौबीस तीर्थङ्कर समाहित हो जाते हैं और अतः उनका स्मरण सामायिक में अलग–अलग रंग में कर सकते हैं। जैसे – सफेद रंग में – चन्द्रप्रभ और पुष्पदन्त। श्याम रंग में नेमिनाथ और मुनिसुव्रतनाथ। हरे रंग में सुपार्श्वनाथ एवं पार्श्वनाथ। लाल रंग में पद्मप्रभ एवं वासुपूज्य। पीत रंग में शेष सोलह तीर्थङ्करों का। प्रत्येक तीर्थङ्कर की स्तुति अथवा अर्घ (बिना द्रव्य के) सामायिक में पढ़ सकते हैं। उनके जन्म का स्थान, मोक्ष का स्थान, चिह्न, आयु, ऊँचाई एवं उनके अनन्त चतुष्टय आदि का भी स्मरण कर सकते हैं। एकाग्रता से शरीर के रोग भागते एवं मन प्रसन्न होता है।

पञ्चपरमेष्ठी का ध्यान –

अरिहन्त परमेष्ठी का श्वेत रंग में, नाभि में सिद्ध परमेष्ठी का लाल रंग में मस्तक में आचार्य परमेष्ठी का पीले रंग में कंठ में, उपाध्याय परमेष्ठी का हरे रंग में हृदय में, साधु परमेष्ठी का, काले रंग में मुख में ध्यान करना चाहिए तथा इनके मूलगुणों आदि का भी चिन्तन किया जा सकता है।

9. तीर्थराज सम्मेद शिखर जी का ध्यान किस प्रकार करना चाहिए ?

सर्वप्रथम अपने आसन को सही तरह से लगाकर, नासा पर दृष्टि रखते हुए दोनों हाथ की हथेली एक के ऊपर एक गोद में रखकर बैठ जाइए। आज अपने को तीर्थराज सम्मेदशिखर जी की वन्दना करना है। वैसे तो सभी तीर्थङ्करों का जन्म अयोध्याजी में एवं मोक्ष शिखरजी से होता है, किन्तु हुण्डावसर्पिणी काल

के कारण जन्म भी अयोध्याजी के अलावा अन्य स्थानों में हुआ। इसी प्रकार मोक्ष भी शिखरजी के अलावा अन्य स्थानों से हुआ। जैसे - ऋषभदेव का कैलाश पर्वत से, वासुपूज्य का चम्पापुर से, नेमिनाथ का गिरनार से एवं महावीर स्वामी का पावापुर से किन्तु शिखरजी में भी इन चार तीर्थङ्करों के चरण चिह्न स्थापित किए हैं। अतः हम सभी शिखरजी में ही चौबीस तीर्थङ्करों के चरण चिह्नों का ध्यान करेंगे।

सर्वप्रथम वन्दना प्रारम्भ करते समय गन्धर्व नाला, सीता नाला पार करते हुए चौपड़ा कुण्ड में पार्श्वनाथ की प्रतिमा के दर्शन करते हुए, गौतम स्वामी के कूट पर पहुँचकर स्तुति अथवा अर्घ (बिना द्रव्य के) पढ़ते हुए क्रमशः कुन्थुनाथ आदि चौबीस तीर्थङ्करों की स्तुति अथवा अर्घ (बिना द्रव्य के) पढ़ते हुए उनके चरण चिह्नों का दर्शन करते हुए ध्यान कर सकते हैं। और वृद्धि करना चाहे तो उन तीर्थङ्करों का चिह्न, शरीर का रंग आदि का भी ध्यान कर सकते हैं। और उस टोंक से जितने मुनि मोक्ष पधारे उनकी संख्या भी मन में स्मरण कर सकते हैं, तथा मन-ही-मन में प्रत्येक टोंक की तीन-तीन परिक्रमा एवं कायोत्सर्ग भी कर सकते हैं।

10. ध्यान के लिए मन्त्रों को शरीर के किन-किन स्थानों पर स्थापित किया जाता है ?

ध्यान के लिए मन्त्रों को शरीर के निम्न स्थानों पर स्थापित करना चाहिए - 1. नेत्र युगल, 2. दोनों कान, 3. नासिका का अग्रभाग, 4. ललाट, 5. मुख, 6. नाभि, 7. मस्तक, 8. हृदय, 9. तालु, 10. दोनों भौंहों का मध्यभाग। इन दस स्थानों में से किसी भी एक स्थान में अपने ध्येय को स्थापित करना चाहिए। (ज्ञा., 30/13)

11. धर्म्यध्यान तो मिथ्यादृष्टियों के भी देखा जाता है ?

यहाँ मोक्षमार्ग का प्रकरण है, मोक्षमार्ग सम्यग्दर्शन के बिना प्रारम्भ नहीं होता है, अतः धर्म्यध्यान के लिए सम्यग्दृष्टि होना अनिवार्य है। मिथ्यादृष्टियों को जो ध्यान होता है, उसे शुभ भावना कहते हैं।

12. ध्यान, अनुप्रेक्षा, भावना व चिंता में क्या अंतर है ?

जिन परिणामों से स्थिरता होती है, उसका नाम ध्यान है और जो मन का एक पदार्थ से दूसरे पदार्थ में चलायमान होना होता है, वह या तो भावना है, या अनुप्रेक्षा है या चिंता है। यहाँ चिंता का अर्थ चिंतन है। ''चिंतनं चिंता'' (स.सि., 1/13/182)

13. शुक्लध्यान किसे कहते हैं एवं इसके कितने भेद हैं ?

मन की अत्यन्त निर्मलता होने पर जो एकाग्रता होती है, उसे शुक्लध्यान कहते हैं।

इसके चार भेद हैं-

1. **पृथक्त्ववितर्क वीचार** - पृथक्-पृथक् अर्थ, व्यञ्जन, योग की संक्रान्ति और श्रुत जिसका आधार है, वह पृथक्त्ववितर्क वीचार ध्यान है।

   वितर्क = श्रुतज्ञान। वीचार = संक्रान्ति। संक्रान्ति तीन प्रकार की होती है-अर्थ संक्रान्ति, व्यञ्जन संक्रान्ति एवं योग संक्रान्ति।

   अर्थ संक्रान्ति - ध्यान करने योग्य पदार्थ में द्रव्य को छोड़कर उसकी पर्याय का ध्यान किया जाता है अथवा पर्याय को छोड़कर द्रव्य का ध्यान किया जाता है।

   व्यञ्जन संक्रान्ति-वचन को व्यञ्जन कहते हैं। एक श्रुतवचन का आलम्बन लेकर दूसरे श्रुतवचन का आलम्बन होता है और उसे भी छोड़कर अन्य वचन का आलम्बन होना व्यञ्जन संक्रान्ति है।

   योग संक्रान्ति-मनोयोग को छोड़कर वचनयोग का ग्रहण करना उसे भी छोड़कर काययोग को

ग्रहण करना योग संक्रान्ति है। (रा.वा., 9/44)

2. **एकत्व वितर्क अवीचार** - जो शुक्ल ध्यान तीन योगों में से किसी एक योग के साथ होता है तथा अर्थ, व्यञ्जन और योग की संक्रान्ति से रहित है, वह एकत्ववितर्क अवीचार शुक्ल-ध्यान है। (स.सि., 9/40/898)
3. **सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति** - जब सयोग केवली भगवान् का आयु कर्म अन्तर्मुहूर्त शेष रहता है तब सब प्रकार के वचनयोग, मनोयोग और बादरकाययोग को त्यागकर मात्र सूक्ष्म काययोग रहता है तब सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति ध्यान होता है। सूक्ष्म=सूक्ष्म। क्रिया =योग। अप्रतिपाति = गिरता नहीं, अर्थात् ऊपर ही जाता है। (स.सि., 9/44/906)
4. **व्युपरतक्रियानिवृत्ति** -वि+उपरत +क्रिया+अनिवृत्ति।
   विशेष रूप से उपरत अर्थात् दूर हो गई है, क्रिया (योग) जिसमें वह व्युपरत क्रिया है। व्युपरत क्रिया हो और अनिवृत्ति हो वह व्युपरतक्रिया निवृत्ति ध्यान है। अर्थात् योग रहित अवस्था में जो ध्यान होता है, उसे व्युपरतक्रियानिवृत्ति ध्यान कहते हैं। (त.सू., 9/39)

शुक्लध्यान	गुणस्थान
पृथक्त्ववितर्क वीचार में	8 से 11 तक।
एकत्ववितर्क अवीचार में	12 वाँ।
सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति में	13 वाँ।
व्युपरतक्रियानिवृत्ति में	14 वाँ।

14. ध्यान का फल क्या है ?

आर्तध्यान और रौद्रध्यान का फल संसार एवं धर्मध्यान और शुक्लध्यान का फल मोक्ष है।

15. ध्यान के विषय में चार अधिकार कौन-कौन से हैं ?

ध्याता	-	ध्यान करने वाला
ध्यान	-	चिन्तन क्रिया
ध्यान का फल	-	संवर एवं निर्जरा
ध्येय	-	चिंतन योग्य पदार्थ (ज्ञा., 4/5)

16. ध्याता कैसा होना चाहिए ?

पञ्चशील का पालन करने वाला हो अर्थात् पाँचों पापों से रहित हो। ध्यान के लिए मौन पथ्य है। मौन कैसा हो ? मन से, वचन से और काय से अर्थात् मन में बोलने के भाव नहीं लाना। वचन से हूँ हूँ भी नहीं करना एवं काय से कुछ भी न करना अर्थात् न इशारा करना, न लिखकर बताना। भोजन एक बार वह भी सीमित मात्रा में एवं भोजन सात्विक हो, अधिक तले, मिर्च मसाले एवं गरिष्ठ पदार्थ न हों, जनसम्पर्क न हो, मन को वश में करने वाला हो, जितेन्द्रिय हो, आसन स्थिर हो, धीर हो अर्थात् उपसर्ग आने पर न डिगे। ऐसे ध्याता की ही शास्त्रों में प्रशंसा की गई है।

17. ध्यान के लिए योग्य स्थान कौन-कौन से हैं ?

ध्यान के लिए योग्य स्थान इस प्रकार हैं-पर्वत, गुहा, वृक्ष की कोटर, नदी का तट, श्मशान, उद्यान, वन, सागर का तट, नदियों का संगम जहाँ होता है, सिद्ध क्षेत्र, अतिशय क्षेत्र, तीर्थक्षेत्र आदि योग्य स्थान हैं एवं

वह स्थान स्त्री, पशु, नपुंसक और कुशील जनों से रहित हो। (रा.वा., 9/44) किन्तु समर्थजनों के लिए क्षेत्र का नियम नहीं है, कहीं भी कर सकते हैं। (ज्ञा., 28/22)

18. ध्यान के लिए दिशा एवं आसन कौन-कौन-सी हों ?

ध्यान के लिए पूर्व और उत्तर दिशा में मुख करके ध्यान करना प्रशंसनीय है। अन्धकार का नाश करने वाले सूर्य का पूर्व दिशा में उदय होता है। अतः पूर्व दिशा प्रशस्त है। सूर्य के उदय के समान हमारे कार्य में भी दिन-प्रतिदिन उन्नति हो ऐसी इच्छा से व्यक्ति पूर्व दिशा की तरफ अपना मुख करके ध्यानादि इष्ट कार्य करते हैं। विदेहक्षेत्र में हमेशा तीर्थङ्कर रहते हैं। विदेहक्षेत्र उत्तर दिशा की ओर है। अतः उन तीर्थङ्करों को हृदय में धारणकर उस दिशा की तरफ मुख करके ध्यानादि इष्ट कार्य करते हैं। (भ.आ.टी., 562)

ध्यान के लिए पद्मासन अथवा कायोत्सर्ग आसन श्रेष्ठ है। विषम आसन से बैठने वाले के शरीर में अवश्य पीड़ा होती है। उसके कारण मन में पीड़ा होती है और उससे आकुलता उत्पन्न होती है। आकुलता उत्पन्न होने पर क्या ध्यान होगा ? नहीं अतः इन्हीं आसनों में ध्यान करना चाहिए। (.म.पु.21/69-72)

विशेष-समर्थजनों के लिए दिशा, आसन का कोई नियम नहीं है। (ज्ञा., 28/24)

ध्यान के दृष्टान्त -

1. सिनेमा देखने के लिए जब आप जाते हैं तब वहाँ सिनेमा घर के दरवाजे, खिड़की, छिद्र बंद कर देते हैं। फिर सिनेमा घर के भीतर की बिजली भी बंद कर देते हैं। तब पर्दे पर दृश्य स्पष्ट दिखाई देते हैं। इसी तरह आत्म दर्शन के लिए सर्वप्रथम इन्द्रियों के दरवाजे, खिड़की, छिद्र, बंद कर देते हैं। फिर मन के संकल्पों-विकल्पों की बिजली बंद की जाती है। तब कहीं जाकर अंदर की पिक्चर अर्थात् आत्मदर्शन होता हैं।
2. घड़ी में तीन काँटे होते हैं, घंटा, मिनट एवं सैकेण्ड का। घंटे का काँटा चलता है किन्तु चलता-सा दिखाई नहीं देता। उसी प्रकार मिनट का काँटा चलता है, किन्तु चलता-सा दिखाई नहीं देता, किन्तु सैकेण्ड का काँटा चलता नहीं भागता है। उसी प्रकार हम सब के पास तीन योग हैं। काययोग घंटे के काँटे के समान। वचनयोग मिनट के काँटे के समान तथा मनोयोग सैकेण्ड के काँटे के समान। जब ध्यान करते हैं तब काय, वचन, तो स्थिर हो जाते हैं, किन्तु मन भागता है। तीनों काँटे 12 बजे मिल जाते हैं और तुरन्त सैकेण्ड का काँटा वहाँ से भाग जाता है। जब घंटे का काँटा, मिनट का काँटा बहुत पुरुषार्थ करता है। तब वह तीनों 1 बजकर 5 मिनट, 2 बजकर 10 मिनट आदि में मिल जाते हैं। उसी प्रकार जब घंटों ध्यान करते हैं तब तीनों मन, वचन और काय एक क्षण के लिए स्थिर हो जाते हैं और वहाँ से मन तुरन्त भाग जाता है। ध्यान के लिए यह भी आवश्यक है कि हम वर्षों की न सोचें, अभ्यास के लिए हम एक वर्ष के बाद की नहीं सोचेंगे, फिर एक माह के बाद की नहीं सोचेंगे। फिर एक पक्ष के बाद की नहीं सोचेंगे फिर एक सप्ताह, फिर एक दिन, एक घंटा ऐसा करते-करते एक समय पर आ जाइए यह भी एकाग्रता के लिए एक कला है।

18. एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय एवं असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय में कितने ध्यान होते हैं ?

दो ध्यान होते हैं। आर्तध्यान एवं रौद्रध्यान होते हैं।

19. पञ्चेन्द्रिय जीवों के कितने ध्यान होते हैं ?

पञ्चेन्द्रिय जीवों के सभी ध्यान होते हैं।

ध्यान सूत्र

1. मैं एक जीव द्रव्य हूँ।
2. मैं पुद्गल द्रव्य नहीं हूँ।
3. मैं धर्म द्रव्य नहीं हूँ।
4. मैं अधर्म द्रव्य नहीं हूँ।
5. मैं आकाश द्रव्य नहीं हूँ।
6. मैं काल द्रव्य नहीं हूँ।
7. मैं ज्ञाता-दृष्टा हूँ।
8. मैं राग-द्वेष से रहित हूँ।
9. मैं क्रोध-मान-माया-लोभ से रहित हूँ।
10. मैं द्रव्य कर्म, भाव कर्म एवं नोकर्म से रहित हूँ।
11. मैं शरीर में हूँ किन्तु मैं शरीर नहीं हूँ।
12. ये आँखें मुझे देख नहीं सकतीं क्योंकि मैं अमूर्तिक हूँ।
13. मैं मन, वचन और काय की क्रिया से रहित हूँ।
14. मैं ख्याति, पूजा, लाभ आदि विभाव भावों से रहित हूँ।
15. मैं शल्यों से रहित हूँ।
16. मैं तीन गारव से रहित हूँ।
17. मैं ज्ञान ज्योति स्वरूप हूँ।
18. मैं परम आनन्द स्वरूप हूँ।
19. बाहर जो कुछ भी दिख रहा है, वह मैं नहीं हूँ और वह मेरा भी नहीं है।
20. मैं चिदानन्द स्वरूप हूँ।
21. मैं निजानन्द स्वरूप हूँ।
22. मैं परम मङ्गल स्वरूप हूँ।
23. मैं केवलज्ञान स्वरूप हूँ।
24. मैं केवलदर्शन स्वरूप हूँ।
25. मैं अष्ट कर्मों से रहित हूँ।
26. मैं अनुपम हूँ।
27. मैं अचिन्त्य हूँ।
28. मैं अक्षय रूप हूँ।
29. मैं नित्य हूँ।
30. मैं शुद्ध स्वरूप हूँ।
31. मैं सिद्ध स्वरूप हूँ।
32. मैं चैतन्य पुंज स्वरूप हूँ।
33. मैं सदानन्द स्वरूप हूँ।
34. मैं स्वयंभू रूप हूँ।
35. मैं जन्म-मरण से रहित हूँ।
36. मैं नौकर नहीं हूँ।
37. मैं स्वामी भी नहीं हूँ।
38. मेरी मृत्यु नहीं होती है।
39. मेरा जन्म नहीं होता है।
40. मैं बालक नहीं हूँ।
41. मैं वृद्ध नहीं हूँ।
42. मैं युवा नहीं हूँ।
43. मैं स्त्री नहीं हूँ।
44. मैं पुरुष नहीं हूँ।
45. मैं नपुंसक नहीं हूँ।
46. मैं भयभीत नहीं हूँ।
47. मैं आधि, व्याधि और उपाधि से रहित हूँ।
48. मैं कभी अजीव नहीं हो सकता हूँ।
49. अजीव कभी जीव नहीं हो सकता।
50. भव्य कभी अभव्य नहीं हो सकता।
51. अभव्य कभी भव्य नहीं हो सकता।
52. मेरा कोई भार नहीं है।
53 मैं गोरा नहीं हूँ।
54. मैं काला नहीं हूँ।
55. मैं कुरूप नहीं हूँ।
56. विश्व को किसी ने बनाया नहीं।
57. विश्व को कोई नष्ट नहीं कर सकता।
58. देखना-जानना मेरा स्वभाव है।
59. संकल्प-विकल्प करना मेरा स्वभाव नहीं है।
60. मैं वासना से रहित हूँ।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. केवली भगवान् को असाता वेदनीय का उदय रहता है। अतः उन्हें भी आर्त्तध्यान होता है।
2. मच्छर को आर्तध्यान भी होता है।
3. नारकी को आज्ञा विचय धर्म्यध्यान होता है।
4. समवसरण में विराजमान तीर्थङ्कर भगवान् को सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति ध्यान होता हैं।
5. गणधर परमेष्ठी को भी इष्ट वियोग होता है।

अन्यत्र खोजिए -

1. धर्म्यध्यान के दस भेद भी होते हैं, उनकी परिभाषा खोजिए ? (मू.प्र., 2043-2065)
2. आर्त्तध्यान का फल तिर्यञ्च आयु किन-किन आचार्यों ने कहा है ? (रा.वा., 9/33/1)
3. अनाहारक मार्गणा में कितने ध्यान होते हैं और क्यों ? (चौ.ठा.)
4. कौन-कौन से आचार्यों ने धर्म्यध्यान दसवें गुणस्थान तक माना है ? (ध.पु., 13/74) (रा.वा., 9/37/3)
5. कौन से आचार्य ने शुक्लध्यान ग्यारहवें गुणस्थान से माने है ? (ध.पु., 13/78)
6. कौन से आचार्य ने ग्यारहवें गुणस्थान में दोनों शुक्लध्यान माने हैं एवं बारहवें गुणस्थान में भी दोनों शुक्लध्यान माने हैं ? (ध.पु., 13/81)

अध्याय 60
नय

जिसे समझे बिना हम अध्यात्म का रहस्य नहीं समझ पाते, ऐसे नयों का वर्णन इस अध्याय में है।

1. नय किसे कहते हैं ?

''सकलादेशः प्रमाणाधीनो विकलादेशः नयाधीनः''। सकलादेश प्रमाण का विषय है और विकलादेश नय का विषय है। (स.सि., 1/6/24) अथवा ज्ञाता के अभिप्राय को नय कहते हैं। अथवा श्रुतज्ञान के विकल्प को नय कहते हैं। अथवा अनन्त धर्मात्मक पदार्थ के किसी एक धर्म को मुख्य और अन्य धर्मों को गौण करने वाले विचार को नय कहते हैं।

2. नय के कितने भेद हैं ?

नय के 7 भेद हैं- नैगमनय, संग्रहनय, व्यवहारनय, ऋजुसूत्रनय, शब्दनय, समभिरूढ़नय तथा एवंभूतनय।

3. नैगमनय किसे कहते हैं ?

अनिष्पन्न अर्थ में संकल्प मात्र को ग्रहण करने वाला नय नैगमनय है। जैसे-रसोई घर में अग्नि जलाते समय कहना मैं भोजन बना रहा हूँ। इसके तीन भेद हैं-

1. **भूत नैगमनय** - जहाँ पर भूतकाल का वर्तमान में आरोपण किया जाता है, उसे भूत नैगमनय कहते हैं जैसे-आज मुकुट सप्तमी को तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ मोक्ष गए।
2. **भावी नैगमनय** - जहाँ पर वर्तमानकाल में भविष्य का आरोपण किया जाता है, वह भावी नैगमनय है। जैसे-अरिहंत भगवान् को सिद्ध कहना, राजकुमार को राजा कहना एवं ब्रह्मचारी जी को मुनि कहना।
3. **वर्तमान नैगमनय** -जो कार्य करना प्रारम्भ कर दिया है, परन्तु अभी तक जो निष्पन्न नहीं हुआ है। कुछ निष्पन्न है, कुछ अनिष्पन्न है उस कार्य को हो गया ऐसा निष्पन्नवत् कथन करना वर्तमान नैगमनय है। जैसे -1. टेलर ने कपड़ा काटा थोड़ा सिला, कह दिया पूरा सिल गया है।
   2. अधपके चावल को चावल पक गया ऐसा कहना।

4. संग्रहनय किसे कहते हैं ?

जो नय अपनी जाति का विरोध नहीं करके एकपने से समस्त पदार्थों को ग्रहण करता है, उसे संग्रहनय कहते हैं। जैसे-द्रव्य कहने से समस्त द्रव्य, जीव कहने से समस्त जीव, मुनि कहने से समस्त मुनि और व्यापारी कहने से समस्त व्यापारी। (स.सि., 1/33/243)

5. व्यवहारनय किसे कहते हैं ?

संग्रहनय के द्वाराग्रहण किए हुए पदार्थों का विधिपूर्वक भेद करना व्यवहारनय है। जैसे-द्रव्य के छः भेद करना। जीव के संसारी-मुक्त दो भेद करना। (स.सि., 1/33/244)

6. ऋजुसूत्रनय किसे कहते हैं ?

वर्तमानकाल को ग्रहण करने वाला ऋजुसूत्रनय है। इसके दो भेद हैं सूक्ष्मऋचुसूत्रनय-जो नय एक समयवर्ती

पर्याय को विषय करता है वह सूक्ष्मऋजुसूत्र नय है। जैसे– सर्व क्षणिक है (सं. नयचक्र,18)

स्थूलऋजुसूत्र नय – जो नय अनेक समयवर्ती स्थूल पर्याय को विषय करता है, वह स्थूलऋजुसूत्र नय है। जैसे – मनुष्य आदि पर्यायें अपनी–अपनी आयु प्रमाण काल तक रहती हैं। (आ.प.,75)

7. शब्दनय किसे कहते हैं ?

1. संख्या, लिंग,कारक आदि के व्यभिचार (दोष) को दूर करके शब्द के द्वारा पदार्थ को ग्रहण करना शब्दनय है। जैसे – आम्रा वनः, आमों के वृक्ष वन हैं । यहाँ आम्र शब्द बहुबचनांत है और वन शब्द एकवचनांत है। यद्यपि व्यवहार में ऐसे प्रयोग होते हैं। तथापि इस प्रकार के व्यवहार को शब्दनय अनुचित मानता है। (स.सि.,1/33/246)

2. पर्यायवाची सभी शब्दों का एक ही अर्थ ग्रहण करता है, वह शब्दनय है। (रा.वा.,4/42/17) जैसे – निर्ग्रन्थ, श्रमण, मुनि आदि।

8. समभिरूढ़नय किसे कहते हैं ?

एक शब्द के अनेक अर्थ होने पर किसी प्रसिद्ध एक रूढ़ अर्थ को शब्द द्वारा कहना समभिरूढ़नय है। जैसे– गो शब्द के पृथ्वी, वाणी, किरण आदि अनेक अर्थ हैं , फिर भी गो शब्द से गाय को ग्रहण करना। (स.सि.1/33/247)

9. एवंभूतनय किसे कहते हैं ?

जिस शब्द का जो वाच्य है, वह तद्रूप (उसी रूप) क्रिया से परिणत समय में ही जब पाया जाता है, उसे जो विषय करता है, उसे एवंभूतनय कहते हैं। जैसे – पूजा करते हुए को पुजारी कहना। राज्य करते समय राजा कहना। दीक्षा, प्रायश्चित्त देते समय आचार्य कहना, पढ़ाते समय शिक्षक कहना आदि। (स.सि., 1/33/248)

10. नौ नय कौन–कौन से होते हैं ?

इन सात नयों में द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिकनय मिला देने से नौ नय हो जाते हैं। (आ.पा.,41)

11. द्रव्यार्थिकनय किसे कहते हैं ?

द्रव्य अर्थात् सामान्य को विषय बनाने वाला नय। (आ.प., 185)

12. पर्यायार्थिकनय किसे कहते हैं ?

पर्याय अर्थात् विशेष को विषय बनाने वाला नय। (आ.प., 191)जैसे–नदी की तरफ सामान्य दृष्टि डालने पर जल के रंग, गंध और स्वाद की ओर ध्यान न जाकर केवल जल की ओर ध्यान जाना। यह द्रव्यार्थिकनय का दृष्टान्त है। किन्तु जब जल के रंग, गंध और स्वाद की ओर ध्यान जाता है तब वह पर्यायार्थिकनय का दृष्टान्त है।

13. उपरोक्त कहे गए सात नयों में कितने नय द्रव्यार्थिकनय एवं कितने नय पर्यायार्थिकनय हैं ?

आदि के तीन नय अर्थात् नैगमनय, संग्रहनय एवं व्यवहारनय, द्रव्यार्थिकनय हैं एवं शेष चार नय अर्थात् ऋजुसूत्रनय, शब्दनय, समभिरूढ़नय एवं एवंभूतनय पर्यायार्थिकनय हैं।

14. इन सात नयों का विषय उत्तरोत्तर सूक्ष्म-सूक्ष्म है, इसके लिए उदाहरण दीजिए ?

1. किसी मनुष्य को पापी लोगों का समागम करते हुए देखकर नैगमनय से कहा जाता है कि यह पुरुष नारकी है।

2. जब वह मनुष्य प्राणीवध करने का विचार कर सामग्री संग्रह करता है, तब वह संग्रहनय से नारकी कहा जाता है।
3. जब कोई मनुष्य हाथ में धनुष और बाण लेकर मृगों की खोज में भटकता-फिरता है, तब उसे व्यवहारनय से नारकी कहा जाता है।
4. जब आखेट स्थान पर बैठकर पापी मृगों पर आघात करता है तब वह ऋजुसूत्रनय से नारकी कहा जाता है।
5. जब जीव प्राणों से विमुक्त कर दिया जाता है, तभी वह आघात करने वाला हिंसा कर्म से संयुक्त पापी शब्दनय से नारकी कहा जाता है।
6. जब मनुष्य नारक (गति व आयु) कर्म का बंधक होकर नारक कर्म से संयुक्त हो जाए तभी वह समभिरूढ़नय से नारकी कहा जाता है।
7. जब वही मनुष्य नरकगति को पहुँचकर नरक के दुःख अनुभव करने लगता है, तभी वह एवंभूतनय से नारकी कहा जाता है। (ध.पु., 7/28-29 में उद्धृत)

अध्यात्म नय

15. अध्यात्म पद्धति से नयों के मूल में कितने भेद हैं ?

अध्यात्म पद्धति से नयों के मूल में दो भेद हैं-

1. **निश्चयनय** - गुण-गुणी में तथा पर्याय-पर्यायी आदि में भेद न करके अभेद रूप से वस्तु को ग्रहण करने वाला नय निश्चयनय कहलाता है।
2. **व्यवहारनय** - गुण-गुणी में, पर्याय-पर्यायी में भेद करके वस्तु को ग्रहण करने वाला नय व्यवहारनय कहलाता है। (आ.प., 216)

16. निश्चयनय के कितने भेद हैं ?

निश्चयनय के दो भेद हैं -शुद्धनिश्चयनय एवं अशुद्धनिश्चयनय। (आ.प., 217)

17. शुद्ध निश्चयनय किसे कहते हैं ?

जो नय कर्म जनित विकार से रहित गुण और गुणी को अभेद रूप से ग्रहण करता है, वह शुद्ध निश्चयनय है। जैसे-जीव केवलज्ञानमयी है। शुद्ध निश्चयनय की अपेक्षा जीव के न बंध है, न मोक्ष है और न गुणस्थान आदि हैं। (आ.प., 218)

18. अशुद्ध निश्चयनय किसे कहते हैं ?

जो नय कर्म जनित विकार सहित गुण और गुणी को अभेद रूप से ग्रहण करता है, वह अशुद्ध निश्चय नय है। जैसे-आत्मा सम्पूर्ण मोह राग-द्वेष रूप भाव कर्मों का कर्ता और भोक्ता है। (आ.प., 202)

19. व्यवहारनय के कितने भेद हैं ?

व्यवहारनय के दो भेद हैं-सद्भूत व्यवहारनय एवं असद्भूत व्यवहारनय। (आ.प., 220)

20. सद्भूत व्यवहारनय किसे कहते हैं ?

एक वस्तु में गुण-गुणी का संज्ञादि की अपेक्षा भेद करना सद्भूत व्यवहारनय का विषय है। जैसे-जीव के ज्ञान, दर्शनादि। (आ.प., 221)

21. सद्भूत व्यवहारनय के कितने भेद हैं ?

सद्भूत व्यवहारनय के दो भेद हैं-

1. **उपचरित सद्भूत व्यवहारनय** - कर्मजनित विकार सहित गुण-गुणी के भेद को ग्रहण करने वाला नय उपचरित सद्भूत व्यवहारनय कहलाता है। जैसे-जीव के मतिज्ञान आदि गुण। (आ.प., 224)
2. **अनुपचरित सद्भूत व्यवहारनय** - कर्म जनित विकार रहित जीव में गुण-गुणी के भेद रूप विषय को ग्रहण करने वाला नय अनुपचरित सद्भूत व्यवहारनय कहलाता है। जैसे-जीव के केवलज्ञानादि गुण। (आ.प., 225)

22. असद्भूत व्यवहारनय किसे कहते हैं ?

भिन्न वस्तु को ग्रहण करने वाला असद्भूत व्यवहारनय हैं। जैसे-जीव का शरीर, मकान आदि। (आ.प., 222)

23. असद्भूत व्यवहारनय के कितने भेद हैं ?

असद्भूत व्यवहारनय के दो भेद हैं-

1. **उपचरित असद्भूत व्यवहारनय** - संश्लेष सम्बन्ध रहित ऐसी भिन्न-भिन्न वस्तुओं का परस्पर में सम्बन्ध ग्रहण करना उपचरित असद्भूत व्यवहारनय है। जैसे-देवदत्त का धन, राम का महल, रावण की लंका आदि। (आ.प., 227)
2. **अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय**-संश्लेष सहित वस्तु के सम्बन्ध को विषय करने वाला असद्भूत व्यवहारनय है। जैसे-जीव का शरीर कहना। (आ.प., 228)

24. उपचरित असद्भूत व्यवहारनय के कितने भेद हैं ?

उपचरित असद्भूत व्यवहारनय के तीन भेद हैं -

1. स्वजातीय उपचरित असद्भूत व्यवहारनय।
2. विजातीय उपचरित असद्भूत व्यवहारनय।
3. स्वजातीय विजातीय उपचरित असद्भूतव्यवहारनय । (आ.प., 88)

25. स्वजातीय उपचरित असद्भूत व्यवहारनय किसे कहते हैं ?

जो नय उपचार से स्वजातीय द्रव्य का स्वजातीय द्रव्य को स्वामी बतलाता है वह स्वजातीय उपचरित असद्भूत व्यवहार नय है। जैसे -शिष्य, पुत्र, पुत्री, स्त्री आदि मेरे हैं। (आ.प., 89)

26. विजातीय उपचरित असद्भूत व्यवहारनय किसे कहते हैं ?

सोना, चाँदी, वस्त्र, पिच्छी, कमण्डलु आदि मेरे हैं, ऐसा कहना विजातीय उपचरित असद्भूत व्यवहारनय है। (आ.प., 90)

27. स्वजातीय-विजातीय उपचरित असद्भत व्यवहारनय किसे कहते हैं ?

देश, राज्य, दुर्ग ये सब मेरे हैं, ऐसा जो नय कहता है वह स्वजातीय-विजातीय उपचरित असद्भूत व्यवहार नय है। क्योंकि देश, राज्य आदि में सचेतन-अचेतन दोनों पदार्थ रहते हैं। (आ.प., 91)

28. नयाभास किसे कहते हैं ?

जो किसी एक धर्म का ही अस्तित्व स्वीकार करता है और शेष समस्त धर्मों का निराकरण करता है, वह नयाभास कहलाता है। नयाभास, दुर्नय, निरपेक्षनय, मिथ्यानय ये सभी एकार्थवाची शब्द हैं।

अध्यात्मनय के लिए निम्नलिखित सारणी प्रस्तुत है-

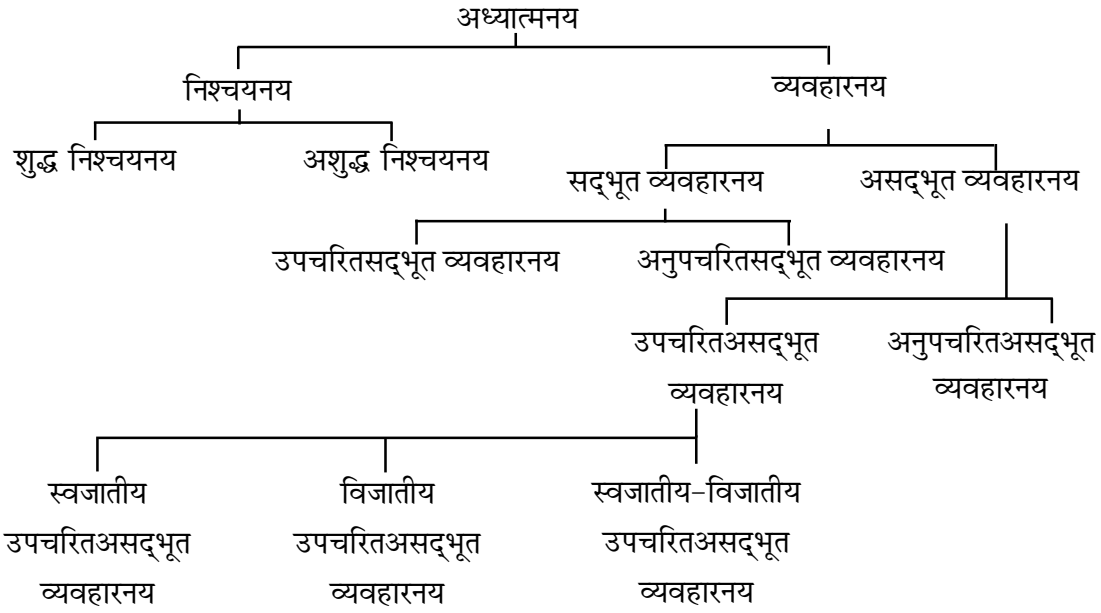

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. जिस समय आप अपने वस्त्र धो रहे हैं, उस समय आप व्यवहारनय से धोबी हैं।
2. जिसने डॉक्टरी करना छोड़ दिया है, उसे भूत नैगमनय से डॉक्टर कहना।
3. गुरु के अनेक शिष्य हैं ऐसा कहना व्यवहारनय नहीं है।
4. चक्रवर्ती छः खण्ड का अधिपति है, ऐसा कहना स्वजातीय- विजातीय उपचरित असद्भूत व्यवहार नय है।
5. पूजा करते हुए व्यक्ति को पुजारी कहना एवंभूतनय है।

अन्यत्र खोजिए -

1. सातों नयों में अर्थनय, ज्ञाननय और शब्दनय कौन-कौन से हैं ? (जै.सि.को., 2/526-527)
2. आगम नय और अध्यात्म नय में क्या अंतर हैं ?

अध्याय 61
अनेकान्त और स्याद्वाद

जैन दर्शन की रीढ़ अनेकान्त एवं स्याद्वाद का वर्णन इस अन्तिम अध्याय में है।

1. अनेकान्त किसे कहते हैं ?

अनेक + अन्त = अनेकान्त। अनेक का अर्थ है एक से अधिक, अन्त का अर्थ है गुण या धर्म। वस्तु में परस्पर विरोधी अनेक गुणों या धर्मों के विद्यमान रहने को अनेकान्त कहते हैं।

2. अनेकान्त के कितने भेद हैं ?

अनेकान्त के दो भेद हैं –

1. **सम्यक् अनेकान्त** – वस्तु के अनेक गुण धर्मों को सापेक्ष रूप से स्वीकार करना।
2. **मिथ्या अनेकान्त** – निरपेक्ष रूप से अनेक गुण धर्मों की कल्पना करना।

3. स्याद्वाद किसे कहते हैं ?

अनेकान्त धर्म का कथन करने वाली भाषा पद्धति को स्याद्वाद कहते हैं। स्यात् का अर्थ है कथंचित् किसी अपेक्षा से एवं वाद का अर्थ है कथन करना।

4. स्याद्वाद के कितने भङ्ग हैं ?

स्याद्वाद के सात भङ्ग हैं, जिसे सप्तभङ्गी के नाम से भी जाना जाता है।

5. सप्तभङ्गी किसे कहते हैं ?

1. ''प्रश्न वशादेकस्मिन् वस्तुन्यविरोधेन विधि प्रतिषेध विकल्पना सप्तभङ्गी''। अर्थ- प्रश्न के अनुसार एक वस्तु में प्रमाण से अविरुद्ध विधि निषेध धर्मों की कल्पना सप्त भङ्गी है। (रा.वा., 1/6/5)
2. सप्त भङ्गों के समूह को सप्तभङ्गी कहते हैं।

6. सप्त भङ्ग के नाम क्या हैं ?

सप्त भङ्ग के नाम इस प्रकार हैं–1. स्यात् अस्ति एव, 2. स्यात् नास्ति एव, 3. स्यात् अस्ति–नास्ति, 4. स्यात् अवक्तव्य एव, 5. स्यात् अस्ति अवक्तव्य, 6. स्यात् नास्ति अवक्तव्य, 7. स्यात् अस्ति–नास्ति अवक्तव्य। (रा. वा., 4/42/15)

1. **स्यात् अस्ति एव** – किसी अपेक्षा से है। जैसे–सीताजी रामचन्द्रजी की अपेक्षा से धर्मपत्नी ही हैं।
2. **स्यात् नास्ति एव** – किसी अपेक्षा से नहीं है। जैसे–सीताजी रामचन्द्रजी के अतिरिक्त अन्य पुरुष की अपेक्षा से धर्मपत्नी नहीं है।
3. **स्यात् अस्ति–नास्ति** – किसी अपेक्षा से है, किसी अपेक्षा से नहीं है। जैसे–सीताजी रामचन्द्रजी की अपेक्षा से धर्मपत्नी है, अन्य पुरुषों की अपेक्षा से धर्मपत्नी नहीं है।

4. **स्यात् अवक्तव्य एव** - किसी अपेक्षा से अवक्तव्य है। (नहीं कहा जा सकता है) जैसे-सीताजी रामचन्द्रजी की अपेक्षा से धर्मपत्नी है, अन्य पुरुषों की अपेक्षा से ही, इन दोनों अपेक्षाओं को एक साथ नहीं कहा जा सकता है। अतः युगपत् अपेक्षा अवक्तव्य है।
5. **स्यात् अस्ति अवक्तव्य** - किसी अपेक्षा से है, पर अवक्तव्य है। जैसे-सीताजी रामचन्द्रजी की अपेक्षा से धर्मपत्नी है एवं उसी समय रामचन्द्रजी एवं अन्य पुरुष इन दोनों की अपेक्षाओं से एक साथ नहीं कहा जा सकता है।
6. **स्यात् नास्ति अवक्तव्य** -किसी अपेक्षा से नहीं है, पर अवक्तव्य है। जैसे-सीताजी अन्य पुरुषों की अपेक्षा से धर्मपत्नी नहीं है एवं उसी समय रामचन्द्रजी एवं अन्य पुरुष इन दोनों अवस्थाओं का कथन युगपत् संभव नहीं है, अतः नास्ति अवक्तव्य है।
7. **स्यात् अस्ति-नास्ति अवक्तव्य** -किसी अपेक्षा से है, नहीं भी है, पर अवक्तव्य है। जैसे-सीता जी रामचन्द्र जी की अपेक्षा से धर्मपत्नी है, अन्य पुरुष की अपेक्षा से धर्मपत्नी नहीं है एवं उसी समय तीनों अवस्थाओं का कथन युगपत् संभव नहीं है, अतः अस्ति-नास्ति अवक्तव्य है।

7. सप्तभङ्गी का सैद्धांतिक उदाहरण आचार्य श्री ज्ञानसागरजी ने कौन-सा दिया था ?

1. प्रथम गुणस्थानवर्ती अस्ति मिथ्यादृष्टि होता है।
2. क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव नास्ति मिथ्यादृष्टि होता है।
3. तीसरे गुणस्थान वाला जीव अस्ति-नास्ति मिथ्यादृष्टि होता है।
4. दूसरे गुणस्थान वाला जीव अवक्तव्य मिथ्यादृष्टि होता है।
5. क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि जीव अस्ति अवक्तव्य मिथ्यादृष्टि है।
6. उपशम सम्यग्दृष्टि नास्ति अवक्तव्य मिथ्यादृष्टि है।
7. करण लब्धि वाला जीव अस्ति-नास्ति अवक्तव्य मिथ्यादृष्टि है।

8. अनेकान्त हमारे नित्य व्यवहार की वस्तु किस प्रकार से है ?

अनेकान्त हमारे नित्य व्यवहार की वस्तु है, इसे स्वीकार किए बिना हमारा लोक व्यवहार एक क्षण भी नहीं चल सकता। लोक व्यवहार में देखा जाता है। जैसे-एक ही व्यक्ति अपने पिता की अपेक्षा से पुत्र कहलाता है, वही अपने पुत्र की अपेक्षा से पिता भी कहलाता है। इसी प्रकार अपने भांजे की अपेक्षा से मामा एवं अपने मामा की अपेक्षा से भांजा। इसी प्रकार श्वसुर की अपेक्षा से दामाद एवं अपने दामाद की अपेक्षा से श्वसुर कहलाता है। इसी प्रकार अपने गुरु की अपेक्षा से शिष्य एवं शिष्य की अपेक्षा से गुरु कहलाता है। जिस प्रकार एक ही व्यक्ति में अनेक रिश्ते संभव हैं, उसी प्रकार एक वस्तु में अनेक धर्म विद्यमान हैं। कोई कहे हमारे मामा हैं तो सबके मामा हैं, सब मामा कहो तो यह एकान्त दृष्टि है, झगड़े का कारण है, अनेकान्त समन्वय की वस्तु है।

9. क्या वस्तु में सात ही भङ्ग होते हैं ?

जिज्ञासा सात प्रकार से ज्यादा नहीं हो सकती एवं उनका समाधान भी सात प्रकार से किया जाता है, अतः प्रत्येक वस्तु में भङ्ग 7 ही होते हैं।

10. सप्तभङ्गी के मूल में कितने भङ्ग हैं ?

सप्तभङ्गी के मूल में तीन भङ्ग हैं- स्यात् अस्ति एव, स्यात् नास्ति एव एवं स्यात् अवक्तव्य एव इन तीन भङ्गों से चार संयुक्त भङ्ग बनकर सप्त भङ्ग हो जाते हैं।

11. क्या अनेकान्त छल है ?

नहीं। छल में तो दूसरों को धोखा दिया जाता है किन्तु अनेकान्त में अनेक धर्म हैं। वक्ता किस धर्म को कहना चाह रहा वह अनेकान्त है। जैसे-''नव कम्बलो देवदत्तः'' यहाँ नव शब्द के दो अर्थ होते हैं। एक 9 संख्या और दूसरा नया। इसके पास 9 कम्बल हैं 3, 4, नहीं। श्रोता ने अर्थ किया इसका नया कम्बल है पुराना नहीं। (रा.वा., 1/6/8)

12. बनारस के पंडित गङ्गारामजी से मित्र ने पूछा आप जैन धर्मावलंबियों में पैदा नहीं होकर भी इस धर्म में इतना अनुराग क्यों रखते हैं ?

पंडितजी ने अपने मकान के चारों ओर से लिए हुए 4 फोटो उठाए। चारों दिशाओं के लिए थे। फोटो दिखाकर पंडितजी ने कहा किसके मकान के फोटो हैं, पंडितजी ये तो आपके मकान के फोटो हैं, पंडित जी बोले यही तो स्याद्वाद है। मकान तो एक है परन्तु चारों ओर से देखने पर चारों भिन्न-भिन्न लगते हैं। इसी तरह किसी भी वस्तु को उसमें जितने गुण धर्म तथा पर्यायें हैं उतनी दृष्टियों से उसको बताना ही स्याद्वाद है। स्याद्वाद के बिना एकान्तवाद से किसी वस्तु का सम्पूर्ण व यथार्थ बोध नहीं हो सकता।

13. झगड़ते हुए एकान्तवादियों को अनेकान्तवादी ने किस प्रकार समझाया ?

एक नगर में हाथी आया। छः सूरदासों ने सुना तो सभी हाथी के पास पहुँचे। उनमें से एक ने पूँछ को छुआ और कहा कि ''हाथी रस्सी की तरह है''। दूसरे ने उसके पैर को छुआ और कहा कि ''हाथी तो खम्भे की तरह है''। तीसरे ने हाथी की सूँड को छुआ और कहा ''यह तो मूसल के समान है''। चौथे ने हाथी के पेट को छुआ और कहा ''यह तो दीवार के समान है''। पाँचवें ने उसके कान को छुआ और कहा ''यह तो सूप के समान है'' छठवें सूरदास ने दाँत को छुआ और कहा ''यह तो धनुष के समान है''। छः सूरदास एक स्थान पर बैठकर हाथी के विषय में झगड़ने लगे, सब अपनी-अपनी बात पर अड़े थे वहाँ से एक व्यक्ति निकला उसने उनके विवाद का कारण जानकर कहा, क्यों झगड़ते हो? तुम सबने हाथी के एक-एक अङ्ग का स्पर्श किया है, सम्पूर्ण हाथी का नहीं। इसलिए आपस में झगड़ रहे हो। ध्यान से सुनो-मैं तुम्हें हाथी का पूर्ण रूप बताता हूँ। पूँछ, पैर, सूँड, पेट, कान, दाँत आदि सभी अङ्ग मिलाने से हाथी का पूर्ण रूप होता है। सूरदासों को बात समझ में आ गई। उन्हें अपनी-अपनी एकान्त दृष्टि पर पश्चात्ताप हुआ।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. स्यात् अवक्तव्य एव में दिन-रात नहीं कह सकते हैं।
2. प्रत्येक जीव ज्ञानादि गुणों की अपेक्षा अस्ति रूप ही है।
3. एक वस्तु में 8 भङ्ग हो सकते हैं।
4. एक ही व्यक्ति नाना और दादा हो सकता है।
5. प्रत्येक वस्तु पर चतुष्टय की अपेक्षा नास्ति रूप ही है, इसे स्यात् नास्ति एव कहते हैं।

प्रशस्ति

श्रावण कृष्ण प्रतिपदा वीर शासन जयन्ती को गंजबासौदा के महावीर विहार में 25.07.2002 दिन गुरुवार से प्रारम्भ हुआ एवं ज्येष्ठ शुक्ल पञ्चमी (श्रुत पञ्चमी) वि.सं. 2063 को अशोकनगर के शान्तिनगर मन्दिर में 12.06.2005 दिन रविवार को पूर्ण हुआ।

शान्तिनाथ की महिमा न्यारी, शान्तिनाथ का मैं आभारी।
श्री विद्यागुरु की कृपा रही, जिनसरस्वती सम्पन्न हुई।।